"नो हीणे ।" व्यक्ति हिंसा दूसरों की ही नहीं करता, अपितु स्वयं की भी करता है । अपने प्रति हीनता की अनुभूति करने वाला प्रतिक्षण अपनी हिंसा करता रहता है वह यह भूल जाता है कि उसमे अनन्त प्रकार की ऊर्जाए है और उनके प्रस्फोट से अनिर्वचनीय सिद्धिया प्राप्त की जा सकती है । किन्तु स्वय को हीन समझने वाला व्यक्ति अपनी ही शक्तियो मे अज्ञात अन्यमनस्कता मे पगा रह कर क्षण-क्षण अवसाद को प्राप्त होता रहता है जो हिंसा का ही अ ग पर्याय है । अहिंसक व्यक्ति किसी भी परिस्थिति मे हीनता की अनुभूति नहीं करेगा । वह अपने पुरुषार्थ का पूर्ण रूपेण उपयोग करेगा ।

"नो अइरित्ते ।" बहुत सारे व्यक्ति अपने को महान् मान कर अन्य व्यक्तियो की अवहेलना करते रहते है । वहा उनमे अह छलकता रहता है । स्वय सब कुछ है, अन्य कुछ भी नहीं है इस अनुभूति मे स्वय को अतिरिक्त तथा अन्य को यथार्थ से विरहित मानकर वास्तविकता को झुठलाने का प्रयत्न करते हैं । अहिंसा को सदैव वास्तविकता ही मान्य है । वहा स्वय को महान् मानने वाले को अवकाश नहीं है ।

जिस प्रकार सचेतन प्राणियो को कष्ट पहुचाना हिंसा है, उसी प्रकार किसी जड के प्रति दुर्व्यवहार करना भी हिंसा है । राह चलता हुआ व्यक्ति किसी पत्थर को ठोकर मारता है तो वह असत् प्रवृत्ति करता है और वह हिंसा ही है । इसलिए जड़ पदार्थों के प्रति भी किसी भी प्रकार का असयत व्यवहार नहीं होना चाहिए ।

ज्ञान

दर्शन

णमो अरिहंताणं।

णमो सिद्धाणं।

णमो आयरियाणं।

णमो उवज्झायाणं।

णमो लोए सव्व साहूणं।

एसो पंच णमोक्कारो सव्व-पावप्पणासणो।

मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

वीर संवत् २४८७-२५१२ • रजत जयन्ती • विक्रम संवत् २०१५-२०४४

चारित्र

तप

श्रमणोपासक

रजत जयन्ती विशेषांक

२५ सितम्बर १९८७

△

संयोजक

सरदारमल कांकरिया

भूपराज जैन

△

सम्पादक मण्डल

जुगराज सेठिया

डा. नरेन्द्र भानावत गणेश ललवानी

भूपराज जैन डा. शान्ता भानावत

जानकीनारायण श्रीमाली

प्रकाशक :

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, बीकानेर–३३४००१

☐ श्रमणोपासक

रजत-जयन्ती विशेषांक

- २५ सितम्बर १९८७ वीर निर्वाण सं. २५१२
- वर्ष २५ अक १८ वि स २०४४
- रजिस्ट्रेशन सख्या आर एन 7387/63
- रजि न आर जे 1517, पहले डाक व्यय बिना दिये अक भेजने की अनुमति स BIK-2

☐ शुल्क

- आजीवन सदस्यता . २५१ रुपया
- वार्षिक शुल्क : २० रुपया
- वाचनालय एवं पुस्तकालय के लिये
  वार्षिक शुल्क : १५ रुपया
  विदेश मे वार्षिक शुल्क . १५० रुपया
- इस अक का मूल्य : ५० रुपया

☐ प्रकाशक

- श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ, समता भवन
  रामपुरिया मार्ग, बीकानेर-३३४००१ (राजस्थान)
- तार-साधुमार्गी, फोन ४५२७

☐ मुद्रक

- जैन आर्ट प्रेस, समता भवन, बीकानेर (राज)

नोट : यह आवश्यक नही कि लेखकों के विचारों से सघ अथवा सम्पादक की सहमति हो ।

धर्मपाल प्रतिबोधक

परम श्रद्धेय

आचार्य श्री नानालालजी महाराज

के

युगान्तकारी कृतित्व

एवं

ओजस्वी व्यक्तित्व

को

सादर

सविनय

सर्मपित

संयोजकीय

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ अपनी अढाई दशक की यात्रा सम्पूर्ण कर २६वे वर्ष में प्रवेश कर रहा है। बचपन एवं केशौर्य को पारकर यौवन की दहलीज पर खड़े एक युवक की भांति सघ भी मार्ग के कष्ट-काठिन्य, घात-प्रतिघात एवं प्रबल झंझावतो पर अपने संघ नायक परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर के पुण्य प्रताप एवं सर्वतोभावेन समर्पित संघनिष्ठ सदस्यो के अविचल आत्मबल से विजय प्राप्त कर निरन्तर आगे ही आगे बढते रहने के प्रबल सकल्प पूर्वक सन्नद्ध है। संघर्षों की उस वेला मे संघ चरणों को अप्रतिहत एवं अव्याहत रूप से आगे बढने की जिनसे प्रेरणा मिलती रही है, उनको हमारा सश्रद्ध वन्दन-अभिवन्दन, अशेष प्रणाम।

विगत अधिवेशन मे श्रद्धेय आचार्य पद एवं सघ की अढाई दशक की यशस्वी जीवन यात्रा की सम्पूर्ति के उपलक्ष्य में समता साधना वर्ष एव रजत-जयन्ती वर्ष मनाने का निश्चय किया गया। आचार्य पद एवं सघ की महिमा तथा गरिमा के अनुरूप संघ के मुख-पत्र श्रमणोपासक के रजत जयन्ती विशेषांक के प्रकाशन का निश्चय कर इसका दायित्व हमे सौपा गया। समग्र देश को विभिन्न क्षेत्रो मे विभाजित कर क्षेत्रीय सयोजक मनोनीत किये गये तथा प्रत्येक क्षेत्र से विज्ञापन संग्रह का लक्ष्य निर्धारित कर उनके संयोजन एव प्रकाशन का दायित्व भी हमे दिया गया। इस विशाल एव उदात्त कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने हेतु हमने अपने माननीय सघ सदस्यो को उत्साहपूर्वक जुट जाने के लिए श्रमणोपासक एवं अनुरोध पत्रो के माध्यम से आह्वान किया। हमे प्रसन्नता है कि हमारे क्षेत्रीय सयोजको एवं उनके सहयोगियो के अथक प्रयास, प्रबल श्रम एवं अविश्रांत लगन से लक्ष्य से कही अधिक विज्ञापन सग्रहित किये गये। हम उन सबके प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते है।

महाराष्ट्र क्षेत्र के क्षेत्रीय सयोजक श्री सुन्दरलाल जी कोठारी एव सघ अध्यक्ष श्री चुन्नीलाल जी मेहता ने अस्वस्थ होते हुए भी अपने सहयोगियो को सतत प्रेरणा प्रदान कर दो लाख रुपये से अधिक विज्ञापन सग्रह कर सघ इतिहास मे एक कीर्तिमान स्थापित किया। इससे प्रेरणा प्राप्त कर पूर्वाचल क्षेत्र मे भी श्री शिखरचन्द जी मिन्नी, श्री भवरलाल जी बैद, श्री जसकरण जी बोथरा, श्री केशरीचन्द जी गोलछा, आदि के सहयोग से महाराष्ट्र क्षेत्र के बराबर विज्ञापन राशि सग्रहित कर अनुकरणीय एव प्रशसनीय कार्य किया है। इसी प्रकार श्री सोहनलाल जी सिपानी बैंगलोर, श्री उगमराज जी मूथा, मद्रास आदि ने भी निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति कर अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया, उनके प्रति भी हम हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते है एव जिन क्षेत्रो के लक्ष्य अभी भी पूर्ण नही हुए उनके सयोजको को शीघ्र लक्ष्य पूर्ति हेतु आग्रह करते है। हम उन समस्त विज्ञा-

पनदाताओ के प्रति भी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं जिन्होंने उदारतापूर्वक हमें विज्ञापन दिये है ।

हम उन विद्वानो, मनीषियो एवं चिन्तको के भी हार्दिक आभारी है जिन्होंने अपने विद्वतापूर्ण आलेख से इस विशेषाक को पठनीय एव सग्रहणीय बनाने मे योगदान किया है ।

जैन दर्शन के प्रसिद्ध विद्वान श्री गणेश जी ललवाणी के निर्देशन एव गहन गम्भीर मार्गदर्शन ने इस विशेषाक को भव्य एव गरिमामय बनाया है । विज्ञापनो एव रिक्त स्थानो पर जो विचार प्रधान सामग्री मुद्रित की गई है वह भी हमे श्री ललवाणीजी से मिली है । इसके आमुख पर मथुरा के ककाली टीले से पुरातात्विक खुदाई मे प्राप्त अवशेष की जो भव्य एव कलात्मक अनुकृति मुद्रित की गई है, वह भी श्री ललवाणी जी के सौजन्य से प्राप्त हुई है । तदर्थ हम उनके प्रति राशि-राशि आभार मे श्रद्धानत है । श्री विभूति दा की तूलिका ने नवकार मन्त्र की छवि को आकर्षक, प्रभविष्णु एवं भव्य बनाया है, उन्हें भी आन्तरिक धन्यवाद ज्ञापन करते हैं ।

विशेषांक को चार खण्डो मे विभाजित कर इसे उपयोगी एवं सग्रहणीय बनाने का हमारा प्रयास कितना सफल हुआ है यह तो सुधी पाठक वृन्द के हाथो मे पहुंचने पर ही हमे ज्ञात हो सकेगा । खण्डो के सम्बन्ध मे सम्पादकीय अभिलेख मे प्रकाश डाला गया है । हमने सघ एव आचार्य पद के अढाई दशक के इतिवृत्त को प्रामाणिकता पूर्वक देने का प्रयत्न किया है । सचित्र वीथिका द्वारा संघ के इतिहास को चित्रो के माध्यम से सजीव करने का प्रयास भी किया है । फिर भी त्रुटि सम्भावित है तदर्थ हम क्षमाप्रार्थी हैं । सहृदयता पूर्वक उस ओर ध्यान आकर्षित करने पर हम उसके परिष्कार का प्रयत्न करेंगे ।

विगत पच्चीस वर्षो मे श्रमणोपासक के अंको मे जो जैन दर्शन, साहित्य एव सस्कृति से सम्बन्धित लेख प्रकाशित हुए हैं, उनकी एक सूची भी इसमे प्रकाशित की है । विश्वास है कि जैन दर्शन, साहित्य एवं सस्कृति के शोधकर्त्ताओ के लिए यह सूची उपयोगी होगी ।

हम सघ पदाधिकारियो, सम्पादक मण्डल, कार्यालय कार्यकर्त्ताओ के भी आभारी है जिनके सहयोग से यह विशेषाक आपके हाथो मे पहुच रहा है ।

हम श्री जैन आर्ट प्रेस के मैनेजर श्री सरल विशारद तथा प्रेस के समस्त कर्मचारियो को हार्दिक धन्यवाद देते है जिनके अनथक परिश्रम एवं लगन के कारण यह विशेषाक अनेक कठिनाइयो के बावजूद समय पर मुद्रित हो सका ।

सरदारमल कांकरिया

भूपराज जैन

निरन्तर विकासशील जीवन्त-यात्रा

श्रमण भगवान् महावीर द्वारा निर्दिष्ट साधना-मार्ग पर चलने वाले वर्तमान संगठनों मे श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि संगठनात्मक स्तर पर इसकी स्थापना आज से २५ वर्ष पूर्व सवत् २०१९ मे आश्विन शुक्ला द्वितीय को की गई, पर वैचारिक संवेदना के स्तर पर इसका संबध आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव से लेकर चरम तीर्थंकर भगवान महावीर से जोड़ा जा सकता है। इन सभी तीर्थंकरों ने अपने-अपने समय में विशुद्ध साधु धर्म अर्थात् समता धर्म, शुद्ध आत्म-धर्म, अहिंसा, सयम, तप, वीतराग धर्म का प्रवर्तन किया और तत्कालीन युग मे व्याप्त विभावो, विकृतियो व विषमताओ के खिलाफ, विचार और आचार दोनो स्तरो पर, क्राति कर सच्ची साधुता-सज्जनता-सात्विकता का मार्ग प्रशस्त किया। उसी परम्परा की विचार-ऊर्जा और आचार-निष्ठा को अपने में समाहित किये हुए साधुमार्गी संघ आज भी जीवन्त है।

यह सही है कि भगवान् महावीर के बाद विचार और आचार के स्तर पर तथाकथित मतभेदो को लेकर जैन धर्म विभिन्न सम्प्रदायो, मत-मतान्तरो और गच्छो मे विभक्त हो गया। एक विचारधारा तीर्थंकरों द्वारा उपदिष्ट और भगवान् महावीर द्वारा निरूपित साधना-मार्ग को अपने विशुद्ध स्वरूप मे आत्मसात् करके चलने वाली रही तो दूसरी विचारधारा सम-सामयिक परिस्थितियों के अनुरूप अपने को ढालने में प्रगति और विकास मानती, देखती रही। परिणाम स्वरूप एक धारा मे निवृत्ति की प्रधानता रही तो दूसरी मे प्रवृत्ति मुख्य बनती गई। निवृत्ति और प्रवृत्ति की मुख्यता, गौणता को लेकर समय-समय पर कई क्रांतिकारी परिवर्तन हुए और यह सिलसिला आज भी चालू है।

मध्ययुग मे सुदीर्घकालीन यहा तक कि १२-१२ वर्षो तक के कई दुष्काल पड़े। उन विकट-विषम परिस्थितियो मे निरतिचारपूर्वक साधु-धर्म का पालन कठिन हो गया और साधु-समुदाय अलग-अलग घटकों मे बंटकर केन्द्रीय स्थान से अलग-अलग दिशाओ मे चल पड़ा। समय पाकर कई सगठनों मे बाह्य आडम्बर, प्रदर्शन, पद प्रतिष्ठा लोक रुचि और यशोलिप्सा का भाव प्रमुख बन गया तथा आत्म-साधना का पक्ष पीछे छूट गया। परिणामस्वरूप साधुमार्ग उतना पवित्र, सात्विक और तेजस्वी न रह सका। पर जो आत्मनिष्ठ साधक थे, वे अपनी सुदृढ़ चारित्रनिष्ठा और सयम धारणा के प्रति सचेत रहकर बाह्य क्रियाकाण्डो और पूजा-प्रतिष्ठानों के खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द करते रहे तथा साधुमार्ग की पवित्रता को अक्षुण्ण बनाये रखने मे अपने आत्मतेज का उपयोग करते रहे।

-

इसी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे सोलहवी शती मे धर्मवीर, क्रांतिकारी लोंकाशाह हुए जिन्होने यति वर्ग मे प्रचलित तत्कालीन बाह्य क्रियाकाण्ड एव शिथिलाचार के खिलाफ क्रांति की और विशुद्ध साधुमार्ग का प्रतिपादन किया । उनसे प्रेरणा पाकर ४५ श्रावक दीक्षित हुए, जो भाणजी ऋषि, रूपजी ऋषि, जीवराजजी ऋषि आदि की आचार्य परम्परा मे आगे चलकर आचार्य श्री लालचन्दजी महाराज हुए । उनके नो शिष्यो मे पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज सुदृढ, आचार निष्ठ, विद्वान सन्त थे ।

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म. सा ने तत्कालीन समाज मे व्याप्त शिथिलाचार को दूर करने के लिए विशुद्ध साधुमार्ग के पालनार्थ, कई मर्यादाये निश्चित की और सयम-साधना के कठोर नियम बनाये । दूसरे शब्दों मे कहे कि आपने महान् क्रियोद्धार किया और आपके नाम से एक अलग परम्परा ही चल पडी । इस नाते मे आप साधुमार्गी जैन सघ के मार्गदर्शक पूज्य पुरुष है आपने साधुमार्ग का जो शुद्ध, सात्विक, निर्मल स्वरूप प्रस्तुत किया, उसे जन, जन तक व्याप्ति देने मे आचार्य श्री शिवलालजी म. सा., आचार्य श्री उदयसागरजी म सा., आचार्य श्री चौथमलजी म. सा , आचार्य श्री श्रीलालजी म. सा., आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा., आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. एव वर्तमान आचार्य श्री नानालालजी म. सा. का ऐतिहासिक योगदान रहा है । आचार्य श्री श्रीलालजी म. सा. ने जागीरदारो, सामन्तो, नवाबो आदि को अपनी अहिंसामयी अमृतवाणी से प्रेरणा देकर पशु-बलि बन्द कराने मे महत्वपूर्ण योगदान दिया । आपके उपदेशो से प्रभावित होकर कई राजा-महाराजाओ, मुसलमान नवाबो, राजपूतो, मीणो आदि ने मद्य-मास का त्याग किया एव व्यसन–मुक्त सात्विक जीवन जीने की प्रतिज्ञाए की ।

आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. क्रान्तद्रष्टा वाग्मी महापुरुष थे । आपने आगमक धरातल पर आत्म-धर्म के साथ-साथ समाज धर्म की, राष्ट्र धर्म की व्याख्या प्रस्तुत कर, देश की स्वतंत्रता के लिए किये जाने वाले अहिसक सघर्ष को विशेष शक्ति, स्फूर्ति और प्रेरणा दी । आपने अल्पारम्भ महारम्भ की व्याख्या प्रस्तुत कर कृषि आधारित भारतीय अर्थ-व्यवस्था, स्वदेशी आंदोलन, राष्ट्रभाषा हिन्दी, अछूतोद्धार खादी-धारण, गो–पालन, व्यसन-मुक्ति, सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन जैसे राष्ट्रीय कार्यक्रमो की उचितता धार्मिक परिप्रेक्ष्य मे प्रतिपादित की और इस प्रकार धार्मिक क्षेत्र मे व्याप्त जडता और निष्क्रियता का उन्मूलन कर, धर्म निहित तेजस्विता, उत्सर्गमयी बलिदान भावना, त्याग-तपस्या व संयम-साधना का ओजस्वी रूप समग्र राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत किया ।

आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. शान्त-क्रान्त, सरल आत्मा थे । उनके व्यक्तित्व में सेवा, विनम्रता, कर्तव्य-परायणता, कष्ट–सहिष्णुता और सत्यनिष्ठा का विरल संयोग था । समाज के बिखरे सगठनो को एक करने मे, श्रमण सघ के गठन और निर्माण मे आपकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही और आप उसके उपाचार्य मनोनीत किये गये, पर संयमी मर्यादा की शिथिलता से आपने कभी समझौता नही किया और जब ऐसा अवसर आया तब साधुमार्ग की शुद्धता की रक्षा के लिए पद-प्रतिष्ठा को तिलाजलि देकर, आप अपने चारित्र और सयम में सुस्थिर हो गये । समाज में बढते हुए परिग्रह, शोषण, प्रदर्शन, आडम्बर और हिंसा के खिलाफ आपने सदैव अपनी आवाज बुलन्द की ।

वर्तमान आचार्य श्री नानेश साधुमार्ग की परम्परा को और उसमे निहित समता तत्व को विश्व व्यापी बनाने में निष्काम भाव से समर्पित है। आपने एक ओर अस्पृश्य समझे जाने वाले हजारों लोगो को शुद्ध धर्माचार का उपदेश देकर धर्मपाल बनाया है तो दूसरी ओर विषमता, व्यग्रता, तनाव और अशाति से बेचैन व्यक्तियो को समता दर्शन और समीक्षण ध्यान के माध्यम से अन्तरावलोकन व अन्तर्निरीक्षण की प्रेरणा दी है। आपके समता निष्ठ शान्त-गभीर व्यक्तित्व का ही प्रभाव है कि आज के भौतिक युग की सुख-सुविधाओ को और विषय-भोगो को निस्सार और निरर्थक समझकर, २२५ से अधिक मुमुक्षु आत्माओ ने श्रमण दीक्षा स्वीकार की है।

साधुमार्ग का अर्थ है—साधु परम्परा से जो मार्ग आया है, साधु ने जो मार्ग बताया है साधु का जो मार्ग है। यह मार्ग प्रकारान्तर से वीतराग-मार्ग है, समता मार्ग है, सम्यक् दर्शन, ज्ञान और चारित्र की साधना का मार्ग है। इस मार्ग पर चलकर जिसने अपने राग-द्वेष आदि विकारो को जीत लिया है, वह जैन है और ऐसे लोगो का समुदाय या संगठन जिसका स्वरूप किसी एक क्षेत्र विशेष तक सीमित नही, वरन् सम्पूर्ण भारत का है, ऐसा सघ है-श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन सघ।

संघ सामान्य भीड या समूह का नाम नही है। तीर्थंकर भगवान् अपनी धर्म साधना के लिए, लोकोपकार की भावना से साधु साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चार तीर्थो की स्थापना करते है। इन्हे चतुर्विध सघ कहा गया है। संघ एक प्रकार का धार्मिक, सामाजिक संगठन है, जो आत्म-साधना के साथ-साथ लोक-कल्याण का पथ प्रशस्त करता है। नन्दीसूत्र की पीठिका में संघ को नगर, चक्र, रथ, कमल, चन्द्र, सूर्य, समुद्र और पर्वत की उपमा दी गई है। इन आठ उपमाओ से उपमित करते हुए उसे नमन किया है। सघ ऐसा नगर है जिसमे सद्गुण और तपरूप अनेक भवन है, विशुद्ध श्रद्धा की सडके हैं। सघ ऐसा चक्र है जिसकी धुरा सयम है और सम्यक्त्व जिसकी परिधि है। सघ ऐसा रथ है, जिस पर शील की पताकाये फहरा रही है और तप-सयम रूप घोड़े जुते हुए है। संघ ऐसा कमल है, जो सासारिकता से उत्पन्न होकर भी उससे ऊपर उठा है। सघ ऐसा चन्द्र है जो तप-संयम रूप मृग के लाछन से युक्त होकर सम्यक्त्व रूपी चांदनी से सुशोभित है। सघ ऐसा सूर्य है, जो ज्ञान रूपी प्रकाश से आलोकित है। संघ ऐसा समुद्र है जो उपसर्ग और परीषह से अक्षुब्ध और धैर्य आदि गुणो से मंडित मर्यादित है। सघ ऐसा पर्वत है, जो सम्यक् दर्शन रूप वज्र पीठ पर स्थित और शुभ भावो की सुगन्ध से आप्लावित है।

चतुर्विध संघ के प्रमुख अंग 'श्रमण' (साधु) को भी बारह उपमाओ से उपमित किया गया है। ये उपमाये है:-सर्प, पर्वत, अग्नि, सागर, आकाश, वृक्षपंक्ति, भंवर, मृग, पृथ्वी, कमल, सूर्य और पवन। ये सभी उपमाये साभिप्राय दी गयी है। सर्प की भांति श्रमण भी [illegible] कोई घर (बिल) नही बनाते। पर्वत की भाति ये परीषहो और उपसर्गो की आंधी से [illegible] नही होते। अग्नि की भांति ज्ञानरूपी ईंधन से ये तृप्त नही होते। समुद्र की भांति [illegible] को प्राप्त कर भी ये मर्यादा का अतिक्रमण नही करते। आकाश की भांति ये [illegible] होते हैं, किसी के अवलम्बन पर नही टिकते। वृक्ष की भाति सम[illegible] करते हैं। भंवर की भाति किसी को विना पीडा पहुंचाये शरीर [illegible]

है। मृग की भांति पापकारी प्रवृत्तियों के सिंह से दूर रहते हैं। पृथ्वी की भांति क्षमाशील बन शीत-ताप, छेदन-भेदन आदि कष्टों को समभाव पूर्वक सहन करते हैं। कमल की भांति वि वासना के कीचड़ और लौकिक वैभव के जल से निर्लिप्त रहते हैं। सूर्य की भांति स्वसाधना लोकोपदेशना के द्वारा अज्ञानान्धकार को नष्ट करते हैं।

ऐसे श्रमण संघ के वर्तमान आचार्य हैं-श्री नानेश और उनके अनुगामी और उपा है श्रावक-श्रमणोपासक। इन सब का संघ है-"साधुमार्गी जैन संघ"। इस संघ की औपचारि स्थापना हुए २५ वर्ष हो गये हैं। इस दृष्टि से यह वर्ष इस संघ का रजत जयन्ती वर्ष है इस संघ के धर्म-नायक आचार्य श्री नानेश को आचार्य पद ग्रहण किये २५ वर्ष पूर्ण होने जा है। इस दृष्टि से उनकी समता-साधना के अनुरूप यह वर्ष "समता-साधना वर्ष" है। इस वर्ष मनाने के लिए संघ के केन्द्रीय कार्यालय की ओर से समता साधना मूलक, सामाजिक चेतनामू और धर्म जागृतिमूलक जो कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया है, उसे संघ की विभिन्न शाखाओं के माध्य से क्रियान्वित करने का यथाशक्ति प्रयत्न हुआ है और हो रहा है।

रजत जयन्ती वर्ष एवं 'समता साधना वर्ष' के जीवन्त प्रतीक के रूप में यह विशेष पाठकों के हाथों में सौंपते हुए हमें प्रसन्नता है। इस विशेषांक में एक ओर संघ की सम्यक् ज्ञा दर्शन और चारित्र के क्षेत्र में संचालित विविध प्रवृत्तियों का परिचय, प्रगति-विवरण प्रस्तुत कि गया है तो दूसरी ओर संघ के धर्मनायक आचार्य श्री नानेश के जीवन, व्यक्तित्व और देन सम्बन्धित कतिपय प्रेरक प्रसंग, संस्मरण और उनके सत्संग में बीते अनुभव-क्षणों की झाकियां हैं उनका व्यक्तित्व असीम और अमाप है, उसे शब्दों में बांधना संभव नहीं है। फिर भी जो कु शब्दार्चन है, वह श्रद्धा-भक्ति के भाव रूप में ही। विशेषांक का एक महत्वपूर्ण खण्ड वैचारिक खण्ड जिसमें प्रमुख विद्वानों, चिन्तकों और साधकों के धर्म, दर्शन, इतिहास, समाज और संस्कृति विषय महत्वपूर्ण विचार बिन्दु संकलित हैं।

"श्रमणोपासक" श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ का मुख पत्र है। संघ की स्थापन के साथ ही इसके आविर्भाव की कथा जुड़ी हुई है। इस दृष्टि से यह वर्ष 'श्रमणोपासक' का भ "रजत जयंती" वर्ष है इन वर्षों में 'श्रमणोपासक' ने न केवल संघ की गतिविधियों को पाठकों समक्ष प्रस्तुत किया है वरन् समाज और राष्ट्र की धड़कनों और स्पन्दनों को भी वैचारिक स्त पर अभिव्यंजित, प्रेरित और प्रभावित किया है। वैयक्तिक आचार-निष्ठा, सामाजिक मर्यादा राष्ट्रीय चेतना और विश्व-बन्धुत्व की भावना जागृत करने, विषमता में समता भाव स्थापित करने, अहिंसा-शाकाहार और सद् संस्कार निर्माण में यह सदैव अपनी वैचारिक भूमिका निभाता रहा है। व्यावसायिक पत्रकारिता से दूर 'श्रमणोपासक' विशुद्ध जीवन मूल्यवाही पत्र है। 'श्रीमद् जवाहराचार्य' 'बाल शिक्षा-संस्कार', 'समता' और 'धर्मपाल' आदि विशेषांकों के माध्यम से इसने पाठकों और बौद्धिक वर्ग के बीच अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित की है। इसी शृंखला में यह विशेषांक एक विनम्र भेंट है। संघ एक निरन्तर विकासशील जीवन्त यात्रा है। यह यात्रा ऊर्ध्व मुखी-चेतना के शिखर पर प्रतिष्ठित हो, इसी मंगल कामना के साथ चतुर्विध संघ का अभिवन्दन-अभिनन्दन।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत

आचार्य श्री नानालालजी म सा
का सम्पादित प्रवचन

निर्ग्रन्थ-संस्कृति और शांत क्रान्ति

आज का यह दिवस वीतराग देवों की निर्ग्रन्थ सस्कृति की पवित्र/पावन अवस्था का प्रतीक है । क्योकि करीब पच्चीस वर्ष पूर्व आज ही के रोज, शांत क्राति के जन्मदाता स्व. गणेशाचार्य ने एक बार फिर से शात क्रांति के रथ को जोश एव होश के साथ आगे बढ़ाया था । पवित्र श्रमण-सस्कृति के बुझते दीपक मे तेल डालकर उसे अधिकाधिक रूप से प्रज्वलित किया था । एक शिक्षा-दीक्षा-प्रायश्चित व चातुर्मास की पूर्ण क्रियान्विति के साथ यह रथ गतिमान हुआ था । यद्यपि उनके सामने बीहड–जगल एव कटकाकीर्ण पथ आया, तथापि उस महापुरुष के सत्साहस के सामने सब पार होता चला गया । आज हम जिस शुभ्र प्रकाश एवं शीतल छाया की अनुभूति कर रहे है, वह सब उन्ही के द्वारा कृत साहसिक शात–क्रांति की देन है ।

आज के इस उत्साहप्रद प्रसंग पर लेखको और कवियो ने अपनी शुभ भावनाओ का प्रकटीकरण किया है । उन भावनाओ को जरा गहराई से आप भी अपने अन्त करण में उतारे एव निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के भव्य स्वरूप को ध्यान मे ले तो इसकी सुरक्षा के प्रति कटिबद्धता आपके हृदय मे भी जागृत हो सकेगी ।

दो बीज, राग–द्वेष :

आज द्वितीया तिथि है । दूज को जो चन्द्रमा उदय होता है, वह अपनी कलाओ को अभिवृद्ध करता हुआ पूर्ण चन्द्र का स्वरूप ग्रहण करता है । आज की यह सामान्य शुक्लता शीतल तेजस्विता को धारण करती हुई पूर्णिमा के दिन पूर्ण शुक्लता को प्राप्त होती है । ठीक इसी प्रकार द्वितीया का वह दिवस भी निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति रूप चन्द्रमा की कला को निरन्तर विकसित करता गया है । तभी तो गत पच्चीस वर्ष की सुदीर्घ यात्रा ने वीतराग सिद्धातों को जन-जन तक पहुचाने के भगीरथ कार्य मे एक महत्वपूर्ण भूमिका अदाकर जनमन को सुखद प्रकाश से आलोकित किया है ।

आत्मस्वरूप को जानने के लिये यह एक निमित्त है, जिससे आंतरिक विकृतियो का पता लगावे और आत्म–शुद्धि का प्रयास प्रगतिशील हो । वस्तुस्थिति की दृष्टि से चिन्तन करे तो स्पष्ट रूप से विदित होगा कि आत्मकल्याण का जो मार्ग वीतराग देवो ने प्रशस्त किया है, वही मार्ग महत्वपूर्ण, शुद्ध एव पवित्र है । यह ऐसा मार्ग है जिस पर चलकर प्रत्येक भव्य–प्राणी अपनी अन्तश्चेतना के विकास के साथ अपने लक्ष्य तक पहुच सकता है ।

आत्मा की शुद्धि मे तथा इस आत्मशुद्धि के चरम विकास मे बाधक तत्वो की दृष्टि से दो मुख्य तत्व बताये है और वे है राग और द्वेष । उत्तराध्ययन सूत्र मे भगवान महावीर ने

है । मृग की भांति पापकारी प्रवृत्तियों के सिंह से दूर रहते है । पृथ्वी की भांति क्षमाशील बनकर शीत-ताप, छेदन-भेदन आदि कष्टो को समभाव पूर्वक सहन करते है । कमल की भांति विषय वासना के कीचड़ और लौकिक वैभव के जल मे अलिप्त रहते हैं । सूर्य की भांति स्वसाधना और लोकोपदेशना के द्वारा अज्ञानान्धकार को नष्ट करते है ।

ऐसे श्रमण सघ के वर्तमान आचार्य है-श्री नानेश और उसके अनुयायी और उपासक है श्रावक-श्रमणोपासक । इन सब का सघ है-'साधुमार्गी जैन सघ" । उस सघ की औपचारिक स्थापना हुए २५ वर्ष हो गये है । इस दृष्टि से यह वर्ष उस सघ का रजत जयन्ती वर्ष है और इस सघ के धर्म-नायक आचार्य श्री नानेश को आचार्य पद ग्रहण किये २५ वर्ष पूर्ण होने जा रहे है । इस दृष्टि से उनका समता-साधना के अनुरूप यह वर्ष **"समता-साधना वर्ष"** है । इस वर्ष को मनाने के लिए संघ के केन्द्रीय कार्यालय की ओर से समता साधना मूलक, सामाजिक चेतनामूलक और धर्म जागृतिमूलक जो कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया है, उसे सघ की विभिन्न शाखाओं व माध्यम से क्रियान्वित करने का यथाशक्ति प्रयत्न हुआ है और हो रहा है ।

रजत जयन्ती वर्ष एव 'समता साधना वर्ष' के जीवन्त प्रतीक के रूप मे यह विशेषांक पाठको के हाथो मे सौपते हुए हमे प्रसन्नता है । इस विशेषांक मे एक ओर सघ की सम्यक् ज्ञान दर्शन और चारित्र के क्षेत्र मे संचालित विविध प्रवृत्तियो का परिचय, प्रगति-विवरण प्रस्तुत किया गया है तो दूसरी ओर संघ के धर्मनायक आचार्य श्री नानेश के जीवन, व्यक्तित्व और देन से सम्बन्धित कतिपय प्रेरक प्रसग, संस्मरण और उनके सत्सग मे बीते अनुभव-क्षणो की झांकिया है। उनका व्यक्तित्व असीम और अमाप है, उसे शब्दों मे बाधना सभव नही है । फिर भी जो कुछ शब्दार्चन है, वह श्रद्धा-भक्ति के भाव रूप मे ही । विशेषाक का एक महत्वपूर्ण खण्ड वैचारिक खण्ड है जिसमे प्रमुख विद्वानो, चिन्तकों और साधको के धर्म, दर्शन, इतिहास, समाज और सस्कृति विषयक महत्वपूर्ण विचार बिन्दु संकलित है ।

"श्रमणोपासक" श्री अ. भा साधुमार्गी जैन सघ का मुख पत्र है । सघ की स्थापना के साथ ही इसके आविर्भाव की कथा जुडी हुई है । इस दृष्टि से यह वर्ष 'श्रमणोपासक' का भी "रजत जयंती" वर्ष है इन वर्षो में 'श्रमणोपासक' ने न केवल सघ की गतिविधियो को पाठको के समक्ष प्रस्तुत किया है वरन् समाज और राष्ट्र की धडकनो और स्पन्दनों को भी वैचारिक स्तर पर अभिव्यंजित, प्रेरित और प्रभावित किया है । वैयक्तिक आचार-निष्ठा, सामाजिक मर्यादा, राष्ट्रीय चेतना और विश्व-बन्धुत्व की भावना जागृत करने, विषमता में समता भाव स्थापित करने, अहिसा-शाकाहार और सद् सस्कार निर्माण में यह सदैव अपनी वैचारिक भूमिका निभाता रहा है। व्यावसायिक पत्रकारिता से दूर 'श्रमणोपासक' विशुद्ध जीवन मूल्यवाही पत्र है। 'श्रीमद् जवाहराचार्य' 'बाल शिक्षा-सस्कार', 'समता' और 'धर्मपाल' आदि विशेषाको के माध्यम से इसने पाठको और बौद्धिक वर्ग के बीच अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित की है । इसी शृ खला मे यह विशेषाक एक विनम्र भेंट है । सघ एक निरन्तर विकासशील जीवन्त यात्रा है । यह यात्रा ऊर्ध्व मुखी-चेतना के शिखर पर प्रतिष्ठित हो, इसी मगल कामना के साथ चतुर्विध सघ का अभिवन्दन-अभिनन्दन ।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत

आचार्य श्री नानालालजी म. सा
का सम्पादित प्रवचन

निर्ग्रन्थ-संस्कृति और शांत क्रान्ति

आज का यह दिवस वीतराग देवो की निर्ग्रन्थ सस्कृति की पवित्र/पावन अवस्था का प्रतीक है । क्योकि करीब पच्चीस वर्ष पूर्व आज ही के रोज, शांत क्राति के जन्मदाता स्व गणेशाचार्य ने एक बार फिर से शात क्रांति के रथ को जोश एव होश के साथ आगे बढाया था । पवित्र श्रमण-संस्कृति के बुझते दीपक मे तेल डालकर उसे अधिकाधिक रूप से प्रज्वलित किया था । एक शिक्षा-दीक्षा-प्रायश्चित व चातुर्मास की पूर्ण क्रियान्विति के साथ यह रथ गतिमान हुआ था । यद्यपि उनके सामने बीहड़—जगल एव कंटकाकीर्ण पथ आया, तथापि उस महापुरुष के सत्साहस के सामने सब पार होता चला गया । आज हम जिस शुभ्र प्रकाश एव शीतल छाया की अनुभूति कर रहे है, वह सब उन्ही के द्वारा कृत साहसिक शात—क्रांति की देन है ।

आज के इस उत्साहप्रद प्रसंग पर लेखकों और कवियो ने अपनी शुभ भावनाओ का प्रकटीकरण किया है । उन भावनाओ को जरा गहराई से आप भी अपने अन्त करण मे उतारे एव निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति के भव्य स्वरूप को ध्यान मे ले तो इसकी सुरक्षा के प्रति कटिबद्धता आपके हृदय मे भी जागृत हो सकेगी ।

दो बीज, राग—द्वेष :

आज द्वितीया तिथि है । दूज को जो चन्द्रमा उदय होता है, वह अपनी कलाओ को अभिवृद्ध करता हुआ पूर्ण चन्द्र का स्वरूप ग्रहण करता है । आज की यह सामान्य शुक्लता शीतल तेजस्विता को धारण करती हुई पूर्णिमा के दिन पूर्ण शुक्लता को प्राप्त होती है । ठीक इसी प्रकार द्वितीया का वह दिवस भी निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति रूप चन्द्रमा की कला को निरन्तर विकसित करता गया है । तभी तो गत पच्चीस वर्ष की सुदीर्घ यात्रा ने वीतराग सिद्धातों को जन-जन तक पहुचाने के भगीरथ कार्य मे एक महत्वपूर्ण भूमिका अदाकर जनमन को सुखद प्रकाश से आलोकित किया है ।

आत्मस्वरूप को जानने के लिये यह एक निमित्त है, जिससे आंतरिक विकृतियो का पता लगावे और आत्म—शुद्धि का प्रयास प्रगतिशील हो । वस्तुस्थिति की दृष्टि से चिन्तन करे तो स्पष्ट रूप से विदित होगा कि आत्मकल्याण का जो मार्ग वीतराग देवो ने प्रशस्त किया है, वही मार्ग महत्वपूर्ण, शुद्ध एव पवित्र है । यह ऐसा मार्ग है जिस पर चलकर प्रत्येक भव्य—प्राणी अपनी अन्तश्चेतना के विकास के साथ अपने लक्ष्य तक पहुंच सकता है ।

आत्मा की शुद्धि मे तथा इस आत्मशुद्धि के चरम विकास मे बाधक तत्वो की दृष्टि से दो मुख्य तत्व बताये है और वे हैं राग और द्वेष । उत्तराध्ययन सूत्र में भगवान महावीर ने

बतलाया है:—

रागो य दोसो वि य कम्म—बीयं कम्मं च मोहप्पभवं वयति ।

कम्मं च जाई मरणस्स मूल, दुक्खं च जाई मरण वयति ॥

उ० सू० अ० ३२ गा० ७

राग और द्वेष के ही बीज आत्मा के धरातल पर अंकुरित होकर इस चतुर्गति संसार में विशाल वृक्ष का रूप धारण करते है, जिसकी टहनियो और पत्तो पर मदान्ध आत्माएं अपने निज स्वरूप के प्रति संज्ञाहीन बनकर परिभ्रमण करती रहती है । इस परिभ्रमण मे अनेक तरह के कष्टो, दुखो एवं दुविधाओं का सामना करते रहने पर भी यह विडम्बना का विषय है कि आत्माएं इन बाधक तत्वों के घातक रूप को नही समझ पाती है । विरली ही आत्माएं होती है जो राग-द्वेष की जटिल ग्रथियो को यथावत् जान पाती है और उनसे छुटकारा पाने के उपाय सोचती है । ऐसी आत्माएं जब मुमुक्षु बनती है—ग्रथियो को हटाकर निर्ग्रन्थ बनना चाहती है तभी ऐसे प्रसग उपस्थित होते है । महावीर प्रभु के इस शासन काल मे उनकी वीतरागता की वह पवित्र धारा अपने अजस्र प्रवाह के साथ दीर्घकाल से प्रवाहित होती हुई चल रही है, जिसमे भव्य आत्माएं मुण्डित होकर अवगाहन करती रहती है ।

समय—समय पर राग और द्वेष के बीजो ने अपने विभिन्न रूप लेकर मानवो के मन को भी प्रभावित करने की चेष्टा की और कभी-कभी साधक आत्माएं भी राग-द्वेष के लुभावने दृश्यो में उलझने लग गई । परिणामस्वरूप वीतराग देवो की पवित्र सस्कृति कुछ ओझल-सी होने लगी । धीरे-धीरे राग-द्वेष और काम-क्रोध की छिपी हुई लालसाए धार्मिक क्षेत्र मे भी यदा-कदा व्याप्त-सी होने लगी । उस समय मे जागृत आत्माओ ने अगड़ाई ली—अपने जागृत स्वर को उन्होने बुलन्द किया । उन्होने अपना ध्यान निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की सुरक्षा पर भी केन्द्रित किया तथा राग-द्वेष की आंतरिक ग्रथियां किन-किन रूपो मे उभरती हैं—इसका भली-भांति विश्लेषण किया और इस पवित्र सस्कृति की सुरक्षा के लिये अपने जीवन का बहुत बड़ा योगदान दिया । उनकी यह जागृति आत्मशुद्धि के परिणामस्वरूप प्राप्त हुई ।

निर्ग्रन्थ संस्कृति और एकता :

यह आत्म-जागृति का पवित्र प्रवाह सतत प्रवाहित होता चला आ रहा है, जो कि महावीर प्रभु के शासन की शुभ्र धारा में उभरता रहा है । आधुनिक समय में क्रांति के जो कुछ स्वर उभरे, उसमें आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा. ने इस सस्कृति की पवित्रता की सुरक्षा के लिये अपने जीवन मे एक ज्वलन्त आदर्श उपस्थित किया तथा उनके पीछे एक के बाद एक महापुरुष ने इस पावन आध्यात्मिक दीप शिखा को सतत प्रज्वलित रखते हुए अपने जीवन की अर्पणा की ।

अभी-अभी कुछ वर्ष पूर्व भी ऐसा समय आया था, जब राग और द्वेष की कुटिल प्रवृत्तिया, न मालूम प्रचार-प्रसार के नाम से अथवा अहं लिप्सा की दृष्टि से या यश कीर्ति की

कामना से कुछ साधकों का मन मस्तिष्क झक-झोरने लगी थी और ऐसा लगने लगा था कि कई साधक अपनी प्रतिष्ठा और अपने सत्कार सम्मान के लिये राग-द्वेष की प्रवृत्तियो मे उलझ रहे है। तब एक ऐसी दिव्य आत्मा ने अगड़ाई ली कि जिसका शरीर दीखने में वृद्ध था किन्तु भीतर की चेतना तरुणाई से भरी हुई थी। शारीरिक कमजोरी मे भी इस महापुरुष ने निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा के लिये अपनी आतरिक आवाज बुलन्द की और यह स्पष्ट किया कि मुझे अपने मानसम्मान और विरुदावली की कोई कामना नही है—मेरी तो यही आकांक्षा है कि निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की पवित्रता सुरक्षित रहे। मुझे तो आत्मा का शुद्ध स्वरूप तथा वीतराग देव की पावन सस्कृति चाहिये। मुझे संख्या की विपुलता की आवश्यकता नही है, अपितु शुद्धतर चारित्रिक जीवन की अपेक्षा है।

उस नरपुंगव के आत्मघोष से वातावरण ने नया मोड़ लिया और राग-द्वेष की ग्रंथियो का विमोचन होने लगा तथा निर्ग्रन्थ सस्कति का विस्तार। चारित्रिक शुद्धता की एक नई लहर चल पडी। परन्तु कई भद्रिक लोग उनके लिये यह कहने लगे कि हमारे समाज की एकता बन गई है, इसमे ये नई बात क्यों कर रहे है ? लेकिन उस विशिष्ट पुरुष ने अपने अन्त करण की आवाज को सुनने की कोशिश की और उसके अनुसार ही वे चले। वे जान रहे थे कि ये भद्रिक लोग गहराई से नही सोच रहे है और आध्यात्मिक जीवन मे राग-द्वेष की प्रवृत्तियो के प्रचलन से होने वाले घातक कुप्रभाव का अनुमान नही लगा पा रहे है। इसीलिये निर्ग्रन्थ सस्कृति से विमुख वनकर भी एकता का राग अलापा जा रहा था। उस महापुरुष ने यथार्थ अनुभव कर लिया था कि एकता मुख्य नही है—मुख्य है चारित्रिक शुद्धता, जीवन शुद्धि। चारित्रिक शुद्धि के अनुरूप ही एकता आवश्यक है। अत. जो एकता करनी है, वह चारित्रिक शुद्धता के धरातल पर ही की जानी चाहिये। चारित्रिक दृष्टि से पीछे हटकर जो एकता की जायेगी, उससे दुतरफा हानि होगी। साधु चरित्र भी विकृत बनेगा और विकृत चरित्र पर बनी एकता भी टिक नही सकेगी।

इस दृष्टिकोण के साथ उस विशिष्ट पुरुष ने एक सुझाव दिया—एक संशोधन दिया कि एकता हो लेकिन साधु आचार के चारित्रिक धरातल पर सैद्धान्तिक स्थिति के साथ एकता का निर्माण किया जाय। उस एकता मे साधु के शुद्ध आचार पर बल रहे और जीवन के शुद्धिकरण का सूत्र अटूट बने। यह न हो कि एकता के आचरण के पीछे आत्मशुद्धि के लक्ष्य को ओझल कर दिया जाय - वीतराग वाणी का हनन कर दे। यदि ऐसा कर देते है तो न इधर के रहते है और न उधर के। अत निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की सुरक्षा जरूरी है और उसके लिये आत्म जागृति जरूरी है। ऐसा तुमुल उद्घोष था शात-क्राति के जन्मदाता श्री गणेशाचार्य का।

चारित्रिक एकता और उसके हिमायती

स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म.सा. ने स्पष्ट कहा कि मै एकता का पक्षपाती हू किन्तु उससे भी पहले शुद्ध साधु आचार का पक्षपाती हू। आचार-शुद्धि के साथ मैंने एकता का

प्रयत्न किया है और करूंगा । भव्यो के लिये एकता के सूत्र के सभी द्वार खुले रखकर यह बात कहना चाहता हूं कि वीतराग देवों के उस पवित्र मार्ग की पवित्रता बनाये रखने मे सभी भव्य जन अपना पूरा-पूरा योगदान दे ताकि भव्य आत्माए अपने कल्याण पथ पर जीवन-शुद्धि के साथ आगे बढ सकें । उस दिव्य पुरुष ने साहस करके एक व्यवस्थित एव सैद्धातिक धरातल का मार्ग-दर्शन दिया तथा निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा के लिये शातक्राति का कदम उठाया ।

इस क्रांति का चरण जिस दिन उठा, वह भी दूज का ही दिन था । आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा द्वारा जिनको आप सब जानते है उस शातक्राति का अकुर द्वितीया के दिन प्रादुर्भूत हुआ था जो कि निरन्तर प्रगतिशील है । इसका प्रतिफल जब जनमानस की समझ मे आया, तब उसके महत्त्व को उसके आलोचक भी समझने लगे । भव्य और मुमुक्षु जन, निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति के प्रेमी और वीतराग देवो के उपासक साधकगण उस शातक्रांति का अनुसरण करने लगे ।

रागद्वेष की विषैली ग्रन्थिया बीज रूप से पनप कर किस प्रकार वृक्ष रूप मे फैलती है और सारे वातावरण को कलुषित बनाती है—इसको भी सामाजिक दृष्टि से सभी लोगो ने देखा । लेकिन उसके बाद लोगो ने इस शान्तक्रान्ति के परिणामो को भी देखा है कि चारित्र्य शुद्धि के साथ मे एकता की अवस्था कितनी सुदृढ एवं सहकार पूर्ण होती है और चारित्रिक व सयमीय शिथिलता से थोथी एकता की भी क्या अवस्था बनती है । इस परिवर्तन को देखकर आप सबका संकल्प जागना चाहिये कि रागद्वेप के बीज को समझकर उसको पनपने न दे तथा आत्मसिद्धांत के साथ सम्यक् दर्शन, ज्ञान एव चारित्र्य का संबल लेकर निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की सुरक्षा के लिये आगे बढे । सम्पूर्ण समाज मे ऐसा जनमानस भी बनावे कि श्रमण संस्कृति की सुरक्षा के साथ सुदृढ एकता का निर्माण हो । इस प्रकार की पवित्र स्मृति का सयोग आज इस प्रदेश मे भी दूज के दिन आया है ।

संस्कृति रक्षा का सेतु 'रत्नत्रय'.

रागद्वेष की ग्रन्थियो को जीतने के लिये सम्यक् दर्शन,सम्यक् ज्ञान एव सम्यक् चारित्र्य की शुद्ध आराधना की आवश्यकता होती है तथा इसी आराधना से निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा की जा सकती है । जहा रागद्वेप की ग्रन्थियां रहे, वहा निर्ग्रन्थ सस्कृति कैसे सुरक्षित रह सकती है और पनप सकती है ? ग्रन्थिया खुलेगी तभी तो निर्ग्रन्थ अवस्था आ सकेगी । ग्रथिया खोलने और निर्ग्रन्थ अवस्था को प्राप्त करने के लिये आत्मबल का विकास करना पडेगा और आत्मबल की सहा-यता से समाज मे सैद्धातिक, मानसिक, वाचिक और कायिक चारित्र की एकता स्थापित की जा सकेगी ।

निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा का मूलाधार इस दृष्टि से सम्यक् दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र की शुद्ध आराधना पर टिका हुआ रहता है । उसको सुरक्षित रखने के लिये स्व. आचार्य श्री ने नौ सूत्रो का एक योजना भी रखी थी । उनके उस कदम को तत्क्षण जनता समझ पाई अथवा नही, लेकिन जैसे-जैसे समय बीत रहा है, वैसे–वैसे जनता अनुभव कर रही है कि वस्तुत उस दिव्य पुरुष मे कैसा ज्ञान था आज उस शान्तक्राति का वह चरण भव्य रूप मे समझा जा रहा है ।

यह स्वाभाविक है कि जब कोई शांतक्रान्ति का कदम उठाया जाता है तो प्रारम्भ में जनता उसको कम ही समझ पाती है। जैसे-जैसे चरण आगे बढते है, वैसे-वैसे उनकी प्राभाविकता समझ मे आती है। अब अधिकाश लोगो का यह मत बन गया है कि उस समय जो कदम उठाया गया था, वह एकदम सही कदम था और उससे श्रमण सस्कृति की सुरक्षा का सयोग बना। उस समय तो वे इस वस्तु स्थिति को पूर्णरूप से नही समझ पाये किन्तु आज उन दिव्य पुरुष की लगाई हुई फुलवाडी की सुगन्ध दिन प्रतिदिन महकती जा रही है—जिसे देखकर उसकी उपयोगिता का अनुभव किया जा रहा है।

रागद्वेष की ग्रन्थियो का सशोधन :

नौ सूत्री योजना के साथ नौवा तत्त्व मोक्ष जुड सकता है लेकिन उसके लिये रागद्वेष की ग्रन्थिया खोलनी पडेगी अर्थात् आत्मा से अलग करनी होगी। इन ग्रन्थियो मे जितनी जटिलता होगी, उतने ही अधिक आत्मबल की आवश्यकता पडेगी। आज के प्रसग से इन आतरिक ग्रन्थियो को खोलने की तथा निर्ग्रन्थ बनने के लिये आगे बढने की प्रेरणा ग्रहण करे। ग्रथिया खोलने का प्रयास करेगे तभी शुद्ध श्रावक धर्म का निर्वाह कर सकेगे और ज्यो-ज्यो ग्रन्थिया खुलती जायेगी, आपकी गति निर्ग्रन्थ अवस्था प्राप्त करने की दिशा मे आगे-से-आगे बढती जायेगी। जीवन की इसी गति के साथ निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की भव्य सुरक्षा हो सकेगी, बल्कि अपने आदर्श उदाहरण से इस सस्कृति का इतर जन जो परिचय प्राप्त करेगे, वह सीधा प्रचार अधिक से अधिक लोगो को इस सस्कृति की तरफ आकर्षित करेगा। ऐसी आचार शुद्धि तथा सुदृढ एकता से इस भव्य सस्कृति की जो प्रभावना हो सकेगी, वह अतुलनीय होगी।

किसी व्यक्ति-पिड को नही लेना है किन्तु विराट जीवन को मस्तिष्क मे रखिये। वीतराग देवो ने जाति, व्यक्ति आदि के सभी भेदभावो को दूर करके समग्र जीवन को गुणाधारित बनाने की श्रेष्ठ प्रेरणा दी है, उस प्रेरणा को सदा याद रखे तथा जीवन को तदनुरूप ढालने की चेष्टा करे। निर्ग्रन्थ सस्कृति की उपासना करके ही जीवन की साधना को सफल बना सकते हैं तथा मोक्ष प्राप्ति के चरम विकास को प्राप्त कर सकते हैं।

आन्तरिक ग्रन्थियो को खोलने के सम्बन्ध मे यह तो धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्र की बात कही गई है, लेकिन सासारिक जीवन जितना अधिक इन ग्रन्थियो से ग्रस्त रहेगा, तब तक इस धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्र का वातावरण भी सर्वागत सुन्दर नही बन सकेगा क्योकि आखिर इस क्षेत्र मे जो साधक प्रविष्ट होते है, ये ससार के क्षेत्र से ही तो आते हैं। इस दृष्टि से मूल बिन्दु के रूप मे सोचना यह भी है कि आपके अपने सासारिक जीवन मे राग और द्वेष की ग्रन्थियां कम हो तथा आपके अपने व्यवहार मे भी निर्मल अन्त करण का वातावरण अधिक बने। रागद्वेप की ये ग्रन्थिया कही भी रहे, ये उस व्यक्ति के, उसके जीवन तथा उसके आसपास के वातावरण को कलुषित बनाये बिना नही रहती है। यही कलुष जब तीव्र रूप धारण करता है तो सारे समाज और राष्ट्र मे फैलता जाता है और कई प्रकार से विषम परिस्थितियां उत्पन्न कर देता है। इसलिये रागद्वेप जहा तक बीज रूप मे रहते है तभी उन्हे शमित करने का प्रयास किया जाय तो रागद्वेष पूर्ण प्रवृत्तियो की बढोतरी रुक जायगी और कलुष का विस्तार नही होगा।

इसलिये इन आतरिक ग्रन्थियो को नये रूप में बनने से रोकें तथा बनी हुई ग्रन्थियो को भी हृदय में सरलता लाकर खोलते रहे। धीरे-धीरे अन्तःकरण ग्रन्थिहीन होकर सरलता के शुद्ध वातावरण मे ढल जायगा। आत्मा को ग्रन्थहीन बनाने के लिये निर्ग्रन्थ जीवन एक आदर्श प्रतीक होता है। इस निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की सर्वोत्कृष्ट विशेषता यह है कि राग-द्वेष की ग्रन्थियो को समूल नष्ट करो। इसीलिए यह सर्वोत्कृष्ट संस्कृति है तथा इस सर्वोत्कृष्ट संस्कृति की सुरक्षा के लिये इसके अनुयायियो को किसी प्रकार का समर्पण करने में हिचकना नही चाहिये सुरक्षा के प्रयत्नो मे कभी ढील नही आने देनी चाहिये दृढ़ता से बढिये।

ध्यान रखे कि यह शात क्रान्तिकारी कदम जो स्व. आचार्य श्री के साहसपूर्ण नेतृत्व मे प्रगतिमान हुआ, वह कभी भी पीछे नही हटा, बल्कि यह कदम आगे से आगे ही बढता रहा और निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति को देदीप्यमान बनाता रहा। जो भी भाई-बहिन निष्ठापूर्वक इस पवित्र संस्कृति को अक्षुण्ण रखना चाहते है, वे इस शात क्रान्ति मे सम्मिलित होकर आत्मशुद्धि एवं संस्कृति रक्षा के मार्ग पर अग्रसर बन सकते है। आप श्रावक-श्राविका अपने स्थान पर रहते हुए साधु-साध्वियों को भी अपने शुद्ध मार्ग पर चलने दीजिये—उनको नीचे मत उतारिये। राग-द्वेष की ग्रन्थियों को कही पनपने मत दीजिये।

सस्कृति की सुरक्षा के मार्ग पर सबको दृढतापूर्वक आगे बढने दीजिये। किसी प्रकार से भय या आकाक्षा से चलना हुआ तो वीतराग मार्ग पर प्रगति नही हो सकेगी। जीवन छोटा है और साधना बहुत बड़ी है, इसलिये न तो बेभान रहिये और न असावधान। त्याग वृत्ति का ऐसा विकास करिये कि सस्कृति की सुरक्षा के लिये सर्वस्व तक के अर्पण की तैयारी रहे।

Mafatlal
Fabrics
®

...From

SUN GRACE FABRICS
...HIR
...TILES
MATULYA
MILLS
MANGALYA
TEXTILES
तमसो मा ज्योतिर्गमय।

अनुक्रमणिका

णमो आयरियाणं : आचार्य खंड

चिन्तन मनन खण्ड

संघ–दर्शन

जय

गुरु

नाना

णमो आयरियाणं

आचार्य श्री नानालालजी म. सा. विहंगम दृष्टि में

जन्म नाम	गोवर्द्धनलाल
जन्म स्थान	दाता जिला चित्तौड़गढ़ (राज.)
जन्म तिथि	वि. सं. १९७७ ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया
पिता	श्री मोड़ीलालजी पोखरना
माता	श्रीमती शृंगार बाई
दीक्षा तिथि	वि. स. १९९६ पौष शुक्ला अष्टमी
दीक्षा स्थान	कपासन (राज.)
दीक्षा गुरु	आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा.
युवाचार्य पद तिथि	वि स. २०१९ आश्विन शुक्ला द्वितीया
युवाचार्य पद स्थान	उदयपुर (राज)
आचार्य पद तिथि	वि. सं. २०१९ माघ कृष्णा द्वितीया
आचार्य पद स्थान	उदयपुर (राज.)

आचार्य पद पूर्व चातुर्मास

क्र. स.	सवत्	स्थान	क्र सं.	संवत्	स्थान
१.	१९९७	फलौदी	१२.	२००८	दिल्ली
२.	१९९८	बीकानेर	१३.	२००९	उदयपुर
३.	१९९९	ब्यावर	१४.	२०१०	जोधपुर
४.	२०००	बीकानेर	१५.	२०११	कुचेरा
५.	२००१	सरदारशहर	१६.	२०१२	बीकानेर
६.	२००२	बगड़ी	१७	२०१३	गोगोलाव
७.	२००३	ब्यावर	१८	२०१४	कानोड
८.	२००४	वड़ीसादडी	१९	२०१५	उदयपुर
९.	२००५	रतलाम	२०.	२०१६	उदयपुर
१०.	२००६	जयपुर	२१.	२०१७	उदयपुर
११.	२००७	दिल्ली	२२.	२०१८	उदयपुर
			२३.	२०१९	उदयपुर

आचार्य पद के पश्चात् चातुर्मास

क्र. सं.	स्थान	वर्ष संवत्	सन्	संत ठाणा
१	रतलाम	२०२०	१९६३	९
२.	इन्दौर	२०२१	१९६४	९
३.	रायपुर (म.प्र.)	२०२२	१९६५	८
४.	राजनादगांव	२०२३	१९६६	७
५.	दुर्ग	२०२४	१९६७	११
६	अमरावती	२०२५	१९६८	६
७.	मन्दसौर	२०२६	१९६९	६
८.	बड़ीसादड़ी	२०२७	१९७०	८
९.	ब्यावर	२०२८	१९७१	८
१०.	जयपुर	२०२९	१९७२	१०
११	बीकानेर	२०३०	१९७३	१२
१२	सरदारशहर	२०३१	१९७४	१२
१३	देशनोक	२०३२	१९७५	१४
१४.	नोखा मण्डी	२०३३	१९७६	१३
१५.	भीनासर	२०३४	१९७७	१२
१६.	जोधपुर	२०३५	१९७८	९
१७.	अजमेर	२०३६	१९७९	९
१८	राणावास	२०३७	१९८०	१४
१९.	उदयपुर	२०३८	१९८१	१४
२०.	अहमदाबाद	२०३९	१९८२	११
२१.	भावनगर	२०४०	१९८३	११
२२	बोरीवली (बम्टई)	२०४१	१९८४	१२
२३.	घाटकोपर (बम्बई)	२०४२	१९८५	९
२४.	जलगाव	२०४३	१९८६	८
२५	इन्दौर	२०४४	१९८७	१२

युगप्रधान युगपति नानेश

□ सुमन्त भद्र

व्यसन-मुक्ति के प्रबल पुरोधा,
मानवता के करुणाधार ।
धर्मजगत के तीर्थ सुनिर्मल,
शुचिता मार्दव के अवतार ।
महाव्रात्य अभिराम तथागत,
पीडा के श्रमहारी बन्धु ।
शरणागतवत्सल अभिभावक,
सुष्ठु प्रभावक आगमसिन्धु ।
वैय्यावृत्य-विनय के संगम,
परम अकिञ्चन श्रमण महान् ।
जीवजगत के रवि ज्योतिर्धर,
ऋजुता के शाश्वत दिनमान ।
वशी वरेण्य वसुन्धर अक्षर,
वचनसिद्ध अतिशय अवदात ।
शीलसद्म पावन अभयंकर,
स्वस्ति पुरुष, निष्कलुष सुगात ।
युगाधार युगपुरुष युगंकर,
युगाराध्य युगशीर्ष युगांक ।
दर्शन-ज्ञान चारित्र-समन्वित,
मुक्ति-कौमुदी-सेतु मृगांक ।
प्रज्ञापुरुष प्रवण लोकोत्तम,
लोकोद्योत प्रथित आचार्य ।
योगक्षेमंकर धर्मधुरन्धर,
संघसारथी प्रभु परमार्य ।
स्तवन कोटि अभिवन्दन भगवन्,
युगप्रधान युगपति नानेश ।
पराऽपरा के सिद्ध कल्पतरु,
सारस्वत अभिषेक महेश !

—१२ भगतसिंह मार्ग, नई दिल्ली

समता का करे नित जयघोष

शिवदत्त पाठक

(१)

श्रमणोपासक विशेषांक मे
मानव का हो निज कल्याण ।
जन-मानस पथ आलोकित कर,
सकल मिटे तिमिर-अज्ञान ।

(२)

समतामयी जीवन की शिक्षा,
जिसका बने मुख्य आधार ।
माया, ममता, मद, क्रोध पर,
सजग रूप से करे प्रहार ।

(३)

जीवन परम नाशवान, नश्वर है,
इसकी मिले मुख्य शिक्षा,
समाज हित मानव सेवा की
जिससे मिले मुख्य दीक्षा ।

(४)

गुरु नानालाल की ज्ञान रश्मि
पहुंचाये घर आगन द्वार,
अहिसा, समता, सत्य, अचौर्य का,
सही-सही समझाए परिपूर्ण सार ।

(५)

ज्ञान सूर्य बन, नष्ट कर–
रूढि, आडम्बर, अन्धविश्वास ।
जनमानस का श्रमहर, तमहर,
हरे कष्टमय प्रभूत निश्वास ।

(६)

सादा जीवन, उच्च विचार का
जीवन मे, श्रम का हो हामी ।
अहंकार, क्रोध, माया, ममता
मेटे मानव मन की खामी ।

(७)

काम, क्रोध, मोह, मद, लोभ से,
मुक्त करे मानव जीवन ।
परहित, परोपकार भावो का,
मन मानस मे नित पूजन,

(८)

सम्यग् ज्ञान सम्मत क्रिया का,
नित-नियमित करे उद्घोष ।
शात-क्राति, धर्म, अहिसा,
समता का करे नित जय घोष ।

—श्री जैन जवाहिर पुस्तकालय, नोखा (बीकानेर)

शुभ-कामना

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ [illegible] श्रमणोपासक व पूज्य आचार्यश्री नानालालजी महाराज साहब के आचार्य पद की रजत जयन्ती इस वर्ष मनाई जा रही है । आचार्य श्री के मैंने दर्शन किये थे । उनके तप.पूत साधु-जीवन और श्रेष्ठतम मुनित्व की अक्षय छाप मेरे मन और मस्तिष्क पर पड़ी । वे जैन धर्म सिद्धांतों और उसकी संस्कृति की साक्षात् मूर्ति है । आज जब चारों ओर वातावरण दूषित और [illegible] हो रहा है, ऐसे ही आचार्य-प्रवर समाज और व्यक्ति को मार्ग दर्शन दे रहे हैं। [illegible] मंगल है । वे नि.संग आत्मजयी आचार्य है । शील द्रष्टा और सत्प्रेमी [illegible] और अपरिग्रह के आचरण से वे समस्त समाज को अभिप्रेरित करते हैं [illegible] उन्हें मेरी अशेष वन्दना ।

'श्रमणोपासक' जैन समाज और सस्कृति का एक प्रमुख [illegible] है । इस पत्र ने इस दृष्टि से ऐतिहासिक योगदान दिया है । मेरा [illegible] जीवन को उच्चतर भूमि पर अग्रसर करता है उसी प्रकार [illegible] कराते हुए शांत, दांत और इन्द्रियजेता बनने की ओर प्रेरित करते हैं [illegible] ही पत्र है । उसे मेरी मगल-कामनाएं ।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन [illegible] पच्चीस वर्षो मे धार्मिक चेतना और निःश्रेयस [illegible] जैन दर्शन, अध्यात्म और सिद्धातों के प्रतिपादन [illegible] नवोत्थान का कार्य किया है, वह सर्वविदित है [illegible] संकल्पों को और अधिक पुष्ट और क्रियान्वित [illegible] **सत्यं**, सत्य वही है जिसमे समाज [illegible] श्री सघ को मेरा सश्रद्ध अभिवादन ।

१५-७-८८

[illegible]

यह जान कर [illegible] अढाई दशक की मगलमय [illegible] अपनी बहुआयामी प्रवृत्ति [illegible] के अहिंसा/अपरिग्रह [illegible]

श्री नानालालजी महाराज के आचार्य पद के २५ वर्ष पूर्ण हो रहे हैं, यह सोने मे सुगंध जैसा संयोग है । उन चारित्र आत्मा ने धर्म प्रचार एवं सर्वविरति चारित्र आत्माओ की वृद्धि का प्रशस्त रिकार्ड स्थापित किया है । संघ का सम्मिलित प्रयत्न देश मे बढ़ती हिंसा को बन्द करने में सफलता प्राप्त करे जिससे मूक जीवो के आशीर्वाद से भारत उन्नति के शिखर पर आरूढ हो । समाज में पारस्परिक प्रेम एकता की वृद्धि हो । आचार्य महाराज शतायु हो, इसी शुभ-कामना के साथ—

२३-७-८७ —भंवरलाल नाहटा, कलकत्ता

□

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ की रजत-जयन्ती के शुभ अवसर पर हार्दिक अभिनन्दन स्वीकार करे । साधुमार्गी जैन सघ ने पिछले पच्चीस वरसो मे समाज और साहित्य की जिस प्रतिबद्ध भाव से सेवा की है, वह आने वाले वर्षो मे भी सबको प्रेरित करती रहेगी । यह शुभ और सुखद संयोग है कि श्रद्धेय आचार्य-प्रवर श्री नानालालजी म. सा. के आचार्य-पद का पच्चीसवां वर्ष भी इसी समय पूर्ण होने जा रहा है । वस्तुत. यह रजत–जयन्ती वर्ष हम सबके लिए श्रद्धा, भक्ति, सेवा, सहयोग और समर्पण का वर्ष है । इस मगलमय अवसर पर मै अपनी पूर्वरचित कविता की इन पक्तियो से आचार्य श्री के प्रति अपनी श्रद्धा निवेदित कर कृतार्थ होने की विनम्र भावना प्रकट करता हूं :—

वीतरागता के आराधक,
समता के हो साधक ज्योतित !
महिमा मंडित जिन शासन तव,
ज्ञान-ध्यान, तप-करुणा-पोषित !
विमल यशस्वी, लोकोद्धारक,
आत्म-ज्ञान के साधु प्रचारक,
हे रत्नत्रयी के संधायक,
जन-गण-मन स्वीकार्य नमो !
परमेष्ठि तीसरे आचार्य नमो !
आचार्य नमो ! आचार्य नमो !

३०-७-८७ डॉ. इन्दरराज बैद 'अधीर', पटना

□

आपके भेजे कृपा पत्र से यह जानकर बहुत आनन्द हुआ है कि इसी वर्ष की शरद् ऋतु मे, यह अभिनव श्रावक श्राविका संगठन अपने जीवन के २६ वे वर्ष मे प्रवेश करेगा और आप श्रमणोपासक पत्रिका का भी विशेषांक निकालने जा रहे है । साधुवाद । और आचार्य

प्रवर श्री नानालालजी म. सा. के आचार्य पद को विभूषित करने के २५ वर्ष पूर्ण होने जा रहे है—यह सूचना आपके उपक्रम को और भी अधिक आकर्षक बना डालती है।

जैन धर्म का चतुर्विध श्री संघ चिर-तरुण है और हजारो साल पुराना है ! इस कथन मे कोई विरोधाभास नही। स्वय भगवान् महावीर की सकल्पना से सुसज्जित हो, श्रावक और श्राविकाएं इस धर्म संगठन मे प्राण फूंकते है और सम्यक् श्रावक-श्राविका बने रहने के लिये हम सब स्वाध्याय और धर्माचरण के यम-नियमो का निर्वाह कर, इस संगठन को नित-नवीन और चिरयुवा और अन्तत: चिरजीवी बना पाते है ! साधुमार्गी जैन श्री सघ को, इसीलिये, केवल २५ बरसों की आयु का कहना व्यावहारिक रूप से भले ही सही हो परन्तु धार्मिक अर्थों मे तो हम हजारों बरस पुराने है।

और अभी प्राचीन और फिर भी निरन्तर तरुण रहने का मन्त्र बहुत सरल और अत्यन्त दुष्कर है—गतानुगति को तिलाजलि परन्तु प्रामाणिक परम्परा से अनवरत अनुशासित ! साधुमार्गी जैन श्रीसघ पर यही उत्तरदायित्व है और वह बहुत सौभाग्यशाली है कि उसे इन ढ़ाई दशको में श्री आचार्य प्रवर से श्रमण-गौरव और श्रमण-शिरोमणि का सान्निध्य और पथ निर्देश मिला है।

यह तो कोई नही कहेगा कि २५ बरसो का यह श्रीसघ का इतिवृत्त सदैव त्रुटिहीन रहा है। हमारी उपलब्धियां जरूर महत्वपूर्ण है परन्तु रजत-जयन्ती हमे सही सिहावलोकन का अवसर देती है जिससे हमारी कमियों और कमजोरियों को आने वाले कालखण्ड में भरा जा सके। मुझे विश्वास है, आपका यह प्रशसनीय रजत-जयन्ती संयोजन इस बारे मे सम्पूर्ण सफल होगा। शुभ-कामनाओं के साथ—

३-८-८७ —जवाहरलाल मूणोत, बम्बई

□

मेरे-गुरुदेव

पूज्यपाद, समता विभूति, आराध्यदेव, आचार्य प्रवर मेरे महान् उपकारक है। मेरे जीवन प्रवाह की सघ की ओर प्रवाहित गति आपके सदुपदेश का ही परिणाम है।

उदयपुर मे आपके निकट सम्पर्क मे आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और प्रथम सम्पर्क में ही एक विचार कौंधा कि जिनकी खोज थी, उन्हे पा लिया। समझ एवम् विवेकपूर्ण समकित दिलाने की प्रार्थना की, जिसे स्वीकृत करके मुझे अनाथ से सनाथ बनाया। गुरुदेव के लिये जिस श्रद्धा को हृदय मे संजोये हुवे हू, उसे प्रकट करने की भाषा तो मैं नही जानता, मगर यह जानता हूं कि मेरा यह जीवन पूर्ण सार्थकता की सीमा मे नही है तो निरर्थक भी नही है। सच्चे गुरु का साधक ही साधना-पथ पर प्रगतिशील रहता है, चाहे वह गति मन्द क्यो न हो। समर्पित हू, और समर्पित रहूगा, यही आकांक्षा है। मेरी श्रद्धा जीवन-पर्यन्त अखण्डित रहे, यही हार्दिक कामना है।

शात, सौम्य-मुद्रा पाण्डित्यपूर्ण प्रवचन, सगम-निष्ठा का प्रभाव आज भी अमिट है। शास्त्र सम्मत श्रमणचर्या अनुकरणीय है ।

शतशत वन्दन !

—जुगराज सेठिया

□

"यतो धर्मस्ततो जय."

अनन्त श्री विभूषित श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री नानालालजी महाराज साहब के आचार्य-पद पर विभूषित, २५ वे वर्ष के उपलक्ष्य मे रजत-जयन्ती महोत्सव मे समता-साधना का आयोजन, जैन-धर्म और समाज की महान् उपलब्धि है। जिन-धर्म प्राण, जन-उर-प्रेरक आचार्य श्री की दिव्य वाणी और उनके धर्मोपदेश मे विद्युत शक्ति का सचार है, जिसमे श्रावक-धर्म, उपासना तथा सिद्धात क्षेत्र मे महान् धार्मिक चेतना, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र का सहारा लेकर प्रतिफलित हो रही है, ऐसे सिद्ध तपस्वी आचार्य का आचार्यत्व-पद स्वतः गौरवान्वित है। परम पूज्य आचार्य श्री अपने अनिर्वचनीय प्रवचनो द्वारा जिस प्रकार सामाजिक, धार्मिक और राष्ट्रीय जीवन मे आमूल परिवर्तन लाकर इस सक्रान्ति काल मे, जन-जीवन मे सर्वागीण-समुन्नत-संस्कार निष्ठ धार्मिक प्रतिष्ठा की स्थापना करने मे निरत है, यह धर्म और समाज के लिए महान् वरदान है। प्रात स्मरणीय आचार्य श्री धर्म और समता दर्शन के प्रचार-प्रसार मे जो महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है, यह समय और समाज के लिए परम सौभाग्य का परिचायक है।

समता विभूति धर्मस्थ "आचार्य-पद" के शुभ जयन्ती वर्ष को समता-साधना वर्ष के रूप मे प्रतिपालन करना, मनसा, वाचा-कर्मणा से शिव-संकल्प है। श्रमण-धर्म के प्रकाश और मानव विकास के लिए यह अमोघ सफल प्रयास है।

आचार्य श्री की क्रातिकारी, मानव-धर्म के उन्नयन और विकास की अमोघ वाणी को श्रवण एवं हृदयंगम कर गुरडिया मे ८२ गावो के ७६३ परिवारो के सैकड़ों व्यक्तियो ने व्यसनो और विकारो के त्याग की शपथ ली है। आचार्य श्री ने उन्हे 'धर्मपाल' की संज्ञा से अभिहित कर सामाजिक जीवन मे विशेष प्रोत्साहित किया है, यह सास्कृतिक क्षेत्र का अभिनव प्रयोग है और भारतीय संविधान का सर्वमान्य समतावादी सिद्धात है। दो दशाब्दियो से भी अधिक समय से निरन्तर संघर्षो से गुजरती हुई यह प्रवृत्ति अक्षय, अक्षीण एवं अवाध गति से प्रगति पथ पर अग्रसर है।

समीक्षण ध्यान के प्रणेता, धर्म-प्राण, जन-जन के प्रेरणा स्रोत, अनन्त श्री विभूषित म सा के पाद-पद्मो मे प्रणति, स्तवन-वन्दन-सुमनान्जलि समर्पित है।

—माणकचन्द रामपुरिया, कलकत्ता

❀ आचार्य श्री नानेश ❀

प्रस्तोता–पं. दिलीपकुमार वया 'अमित'

(प्रश्नोत्तर के माध्यम से आचार्य श्री की जीवन झांकी)

प्रश्न—श्री नानालालजी ने ग्यारह वर्ष की उम्र मे ही किराना का धन्धा शुरू किया । बाद मे लगभग १३ वर्ष की आयु मे अपने मित्र एव चचेरे भाई श्री कन्हैयालालजी के साथ कपडे का व्यवसाय प्रारभ किया । व्यवसाय के दौरान कही मित्रता मे व्यवधान न पड जाए, एतदर्थ अपने मित्र से एक प्रतिज्ञा करवा ली, जो आपकी तत्कालीन सूझ-बूझ और बुद्धिमता की परिचायक तो है ही, प्रवल प्रमाणभूत भी है, वह प्रतिज्ञा क्या थी ?

उत्तर—"यदि किसी प्रकरण को लेकर मुझे आवेश (क्रोध) आ जाए तो कुछ समय के लिये आप मौन कर लेवे और आपको आ जावे तो मैं वैसा कर लूगा । आवेश शात हो जाने पर हम शात वातावरण मे, शात मस्तिष्क से सन्दर्भित विषय पर विचार–विनियम कर लेगे, ताकि हमारे व्यवसाय के कारण मित्रता एव भ्रातृत्व–भावना मे कभी स्खलना न होने पावे ।"

प्रश्न—श्री नानालालजी म सा मे वह कौनसा गुण विशेष है, जिससे प्रभावित होकर महान् अध्यात्म-साधक स्थविर पद विभूषित खरवा वाले श्री घासीलालजी म सा आप (नानालालजी म सा) को तो घण्टा–घर की उपमा एव स्वय को मन्दिर की झालर की उपमा दिया करते थे ?

उत्तर—अल्पभाषिता का गुण । वे कहा करते—"हम तो मन्दिर की झालर के समान विना कारण वार–वार बोलते रहते है, हमारी वाणी की कोई कीमत नही है, किन्तु तुम तो घण्टाघर की घडी के समान हो, जो समय पर नियमित–परिमित बोलते हो, तुम्हारी वाणी सुनने के लिये छोटे-वडे सभी सन्त लालायित रहते है ।"

प्रश्न—एक घटना सुनिये —"उडीसा प्रात मे विचरण करते हुए एक वार आचार्य श्री नानेश अक्षय तृतीया के प्रसग पर खरियार रोड पधारे । अनेक तपस्वी जनो के समान ही वडावदा निवासी सेठ श्री सौभागमलजी साड अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सूरजवाई को पारणा करवाने हेतु उपस्थित हुए । पारणे के प्रसग पर आचार्य श्री जव वहिन सूरजवाई के यहा भिक्षा हेतु पधारे तो आहार दान के समय तपस्विनी वहन एक साथ पाच लड्डू वहराने का आग्रह करने लगी ।

आचार्य देव ने निषेध करते हुए अपनी साध्वोचित भाषा मे कहा—"वाईजी इतने लड्डू नही खपते है, आप एक लड्डू वहरा दीजिये ।"

तपस्विनी वहन भावपूर्ण शब्दो मे कहने लगी—"अन्नदाता, मेरे अपशकुन मत करिए । मैं पूरे पाच लड्डू वहराऊगी ।"

आचार्य श्री ने पूछा—"सन्तो को जितना खपता है, उतना ही तो हम ले सकते है । इसमे अपशकुन की कल्पना नही करनी चाहिये ।"

अव आप वताइये—उस वहिन ने तव क्या उत्तर

दिया ? पाच लड्डू एक साथ बहराने के पीछे उसका क्या भाव थे ?

उत्तर—उसने उत्तर दिया "नही अन्नदाता, मेरी भावना दूसरी है । मै जैसे आज पांच लड्डू एक साथ बहरा रही हू, वैसे ही मेरी भावना है कि मेरे घर से एक साथ पाच दीक्षाए हो । इस हेतु मै अपने बच्चे बच्चियो मे सस्कार भरने का प्रयास कर रही हू । आप मेरी भावनाओ को साकार होने का आशीर्वाद प्रदान करे ।"

(और प्रशंसनीय है कि उस माता ने अपनी भावनाओ को केवल भावना तक ही सीमित नहीं रखा वरन् यथार्थ की भूमिका का स्पर्श भी दिया । पांच ही नहीं, पतिदेव, एक पुत्र, तीन पुत्रियां और स्वयं सहित छः-छः व्यक्तियो को संस्कारो से पोषित कर शासन-सेवा मे अर्पित कर दिया) ।

प्रश्न—वैरागी अवस्था मे ही नानालालजी ने दृढ तपस्या आरम्भ कर दी थी । आप बताइये—"वह तपस्या क्या थी और किसे देखकर उन्होने इस प्रकार की तपस्या ग्रहण की थी ?"

उत्तर—जवाहराचार्य के बारे मे जानकर उन्होने सोचा—"जवाहरलालजी म सा यदि केवल दुग्धादि पर रह सकते है तो क्या मैं केवल पानी के आधार पर नही रह सकता ?" ऐसा सकल्प कर उसी दिन से अपने भोजन की मात्रा घटाना आरम्भ कर दिया । कुछ दिनो तक आप केवल एक रोटी पर रहे । फिर कई दिनो तक आधी रोटी सुबह और पाव रोटी शाम को और दीक्षा से पूर्व अन्तिम कुछ दिनो तक केवल एक चौथाई रोटी खाकर पानी पीकर रहे । इस प्रकार आपने ऊणोदरी तप की आराधना की ।

प्रश्न—वह क्या कारण बना कि नानालालजी म सा को इन्जेक्शन लगाने एव सूगर टेस्ट करने की विधि सीखनी पडी ? यह बात कब की है ?

उत्तर—यह घटना स २००९ के वृहत् साधु-सम्मेलन सादडी के तुरन्त बाद की है । श्री गणेशला अस्वस्थ थे । सम्मेलन मे बम्बई का एक डॉक्टर आ था । उसके अनुसार आचार्य श्री गणेशीलालजी म को शुगर (मधुमेह) की बीमारी थी । रोग पु होने से तत्काल ध्यान देना आवश्यक था अन्यथा रोग भी उत्पन्न हो सकते थे । छोटे-छोटे गाँ डॉक्टरो का सयोग नही मिलता अत डॉक्टर सा पास से मुनि श्री नानालालजी ने यह विधि सीख

प्रश्न—'आहारे व्यवहारे स्पष्ट वक्ता भवेत ।' यह नीति वाक्य आज भी आचार्य श्री श्रीमुख से यदा-कदा सुनने को मिल जाता है । बताइये कि यह नीति-शिक्षा आचार्य श्री को और क्यो दी थी ?

उत्तर—(तत्कालीन) युवाचार्य श्री गणेशीला म सा ने । हुआ यो कि फलोदी के प्रथम वर्षा मे सेवाभावी मुनिश्री रतनलालजी म सा (जो तेज प्रकृति के थे) नानालालजी म सा की अक्रो वृत्ति (क्षमाशीलता) से बहुत प्रभावित हुए एव गो के वक्त अपने हिस्से की श्रेष्ठ सामग्री नानालालजी हिस्से मे डालने लगे । नानालालजी म सा उ आदर करने की दृष्टि से नही भाते हुए भी यह (अधिक) आहार करने लगे । फलस्वरूप उन्हे पे की शिकायत हो गई और दुर्बल शरीर पर मले ने आक्रमण कर दिया । जब वस्तुस्थिति युवाचार्य को ज्ञात हुई तो उन्होने उपरोक्त नीति-शिक्षा वाक्य कहा ।

प्रश्न—जब नानालालजी म. सा को आचार्य एक वर्ष भी नही हुआ था कि उस समय कुछ अ साम्प्रदायिक तत्वो द्वारा आचार्य श्री पर यह आ लगाया जा रहा था कि नानालालजी म सा साम दायिक तत्त्वो को प्रेरित करते है, वे अन्य सम्प्रद वाले किसी से भी प्रेम सम्बन्ध नही रखते, आदि किन्तु उनकी यह भ्राति आपके रतलाम के प्रथम चा

...स के मगल-प्रवेश के दिन ही किस प्रकार निर्मूल ... गई ?

उत्तर—मगल-प्रवेश के दिन ही आपको जब ज्ञात ...आ कि नीमचौक के धर्मस्थान मे विराजित स्वर्गीय ...न दिवाकर श्री चौथमलजी म सा के शिष्य मुनिश्री ...म्पालालजी म सा विगत कुछ दिनो से अधिक ...स्वस्थ है, तो आपश्री उसी समय (मध्याह्न मे) सत ...मुदाय के साथ नीम चौक स्थानक मे पधार गए ...ौर स्नेह-मिलन के साथ वार्तालाप हुआ। वही ...ापको यह ज्ञात हुआ कि दूसरी मजिल पर श्री मगन-...लजी म सा भी अस्वस्थ है, तो आपश्री ऊपर ...धार कर उनसे भी मिले।

प्रश्न—आज जहा हमारे जैन सन्त-सतियो मे भी ...ेन-केन प्रकारेण अपनी शिष्य सम्पदा बढाने की ...उत्कठा रहती है, वहा पूज्य युवाचार्य श्री गणेशीलालजी ...म सा की निस्पृह भावना काबिले तारीफ थी। जब ...श्री नानालाल (वर्तमान आचार्य श्री) वैरागी अवस्था ...मे सर्वप्रथम युवाचार्य श्री के दर्शन करने कोटा गये ...तो वहा उन्होने युवाचार्य श्री से निवेदन किया—'मुझे ...अपनाने की महती कृपा करे। मै आपश्री के चरणो ...मे सयम-आराधना करता हुआ आत्म-कल्याण करना ...चाहता हू।' आप बताइये—ये शब्द सुनकर युवाचार्य ...श्री ने क्या उत्तर दिया ?

उत्तर—'भाई! साधु बनना कोई हसी-खेल नही ...है। साधु बनने से पूर्व साधुता को समझने का प्रयास ...करो। त्याग एव वैराग्य को स्थायी एव सबल बनाते ...हुए सन्त-जीवन को सूक्ष्मता पूर्वक परखो। चित्त की ...चचलता के साथ भावावेश मे किसी भी मार्ग पर बढ ...जाना श्रेयस्कर नहीं माना जा सकता है। यदि ...कल्याण मार्ग का अनुकरण करना है तो गुरु का भी ...परीक्षण कर लो।'

प्रश्न—इस पक्ति को सुनिये—'इस प्रकार यह यात्रा अन्धकार से प्रकाश की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर, सुषुप्ति से जागृति की ओर ले जाने वाली एक यात्रा ही नही, महायात्रा रही।' यह पक्ति प र श्री शान्ति मुनिजी ने अपनी पुस्तक 'अन्तर्पथ के यात्री आचार्य श्री नानेश' मे लिखी है। आप यह बताइये कि श्री नानालालजी की वह कौनसी एव कितनी लम्बी यात्रा थी, जिससे उनके सम्पूर्ण जीवन का मार्ग ही बदल गया ?

उत्तर—भादसोडा से भदेसर की यात्रा (लगभग १० मील की), जो उन्होने घोडे पर तय की।

[भादसोडा मे जैन मुनि का (छ आरो पर) व्याख्यान सुनकर अपनी माताजी से मिलने हेतु ननि-हाल (भदेसर) पहुचे। रास्ते मे चिन्तन चला और जीवन का मार्ग बदल गया, वे बाह्य पथ को छोडकर अन्तर्पथ के यात्री बन गये।]

प्रश्न—एक घटना सुनिये—दि २२-१-६३ माघ कृष्णा १२ को वैराग्यवती सुश्री सुशीला कुमारी की दीक्षा सम्पन्न होने वाली थी। उसके एक दिन पूर्व एक अनोखी घटना घट गयी। हुआ यह कि एक वैरागी भाई के पिता उस दिन सन्तो की सेवा मे बैठे हुए थे। वार्तालाप के दौरान सन्तो ने कहा—'श्रावक जी, आपके लडके को दीक्षा की आज्ञा क्यो नही देते ?'

श्रावकजी बोले—'उसे आज्ञा दू तो मुझे वन्दना करनी पडेगी।'

'तो फिर आप पहले तैयार हो जाइये।' सन्तो ने विनोद भरे स्वर मे कहा।

'हा, महाराज श्री मै भी यही सोच रहा हू। कल होने वाली दीक्षा के साथ मुनिवेश पहन लूगा।' गम्भीर स्वर मे श्रावकजी बोले।

मुनिश्री ने इसे विनोद समझा और कहने लगे—'जिसे आगे बढना है, वह कल नही देखता. लेना है तो आपके लिये आज का मुहूर्त ही अच्छा है।'

'तो ठीक है, मैं अभी जाकर ओघा, पातरा और वस्त्र ले आता हू।' कहते हुए श्रावकजी उठ गए।

मुनिश्री अभी इसे विनोद ही समझ रहे थे कि ६७ वर्ष के वृद्ध व्यक्ति क्या दीक्षा लेंगे। किन्तु श्रावकजी घर जाकर मुनिवेश पहन रजोहरण आदि लेकर आचार्य श्री के समक्ष उपस्थित हो निवेदन करने लगे—'गुरुदेव, मुझे दीक्षा पचक्खाने की कृपा करें।'

गुरुदेव ने बहुत समझाया और साफ मना कर दिया कि बिना आपके पारिवारिक-जनो की आज्ञा के हम दीक्षा नही पचक्खा सकते है।

श्रावकजी ने गुरुदेव से मगलपाठ सुना और फिर एक तरफ जाकर 'करेमि भंते' के पाठ से स्वयं ही दीक्षा पचक्ख ली।

बाद मे दि २७-१-६३ को उनकी विधिवत् भागवती दीक्षा सम्पन्न हुई और आगे चलकर उनके वैरागी पुत्र ने, पुत्रवधू ने तथा पौत्री ने भी सयम पथ स्वीकार किया।

आप बताइये कि उन पिता-पुत्र के नाम क्या थे?

उत्तर—श्री वृद्धिचन्दजी पामेचा—पिता
श्री अमर कुमारजी—पुत्र

प्रश्न—राजनादगाव का आचार्य श्री का वर्षावास अन्य विगत वर्षावासो की अपेक्षा कुछ अधिक ही सौरभमय रहा। उसी वर्षावास मे आचार्यदेव की चारित्रिक गरिमामय सौरभ से आकृष्ट मद्रास निवासी एक दम्पत्ति, जिन्हे विवाह किये अभी दो-ढाई माह ही हुए थे, मद्रास से राजगादगाव उपस्थित हुए और दोनो ने अपने दीक्षा लेने की भावना से आचार्य श्री को अवगत कराया एव वही आजीवन ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

बाद मे यथासमय रायपुर नगर मे उनकी दीक्षा सम्पन्न हुई। वे अपनी मा के इकलौते लाडले थे।

आपको बताना है कि उन व्यक्ति एव उनकी पत्नी के गृहस्थावस्था के नाम क्या थे ?

उत्तर—श्री धर्मप्रकाशजी धोका एव श्रीमती जयश्री बाई।

प्रश्न—गणेशाचार्य श्री को उदयपुर मे हिडनी(कि का आॅपरेशन होने के बाद दैहिक दुर्बलता से … दिन सहसा प्रात:काल मूर्च्छा ने आ घेरा तथा … ही समय मे वह मूर्च्छा बेहोशी (अचेतनावस्था) बदल गई। मुनि नानालालजी ने सागारी संथ… करवा दिया। बेहोशी मे लगभग तीन दिन नि… गये। डॉक्टर भी उनके जीवन के प्रति सशय … हो गये थे। तब स्थित सतो एव प्रमुख श्राव… का यह दबाव एवं अत्यन्त आग्रह था कि अब साग… नही, यावज्जीवन-सथारे के प्रत्याख्यान करवा … चाहिये। लेकिन नानालालजी म सा ने श्री गणेशाच… जी की नाड़ी की गति देखी, फलत उन्हे पूरा विश्… हो गया कि अभी पूर्ण सथारा पचक्खाने का स… नही आया है, और उन्होने नही पचक्खाया। आ… तीन दिन के बाद उनकी सचेतना पुन लौट आयी।

अब आप यह बतायेंगे कि इसके बाद गणेशाचा… कितने समय तक इस भू-मण्डल पर जीवित रहे?

उत्तर—तीन वर्ष लगभग।

प्रश्न वैराग्योत्पत्ति के कारणो को हम मुख्यत… तीन विभागो मे विभक्त कर सकते हैं, कौन-कौन से… आचार्य श्री का वैराग्य उनमे से किस कोटि का था

उत्तर—१. दु ख गर्भित वैराग्य (सासारिक दु… से विरक्ति)

२ मोह गर्भित वैराग्य (प्रियजन … वियोग से उत्पन्न विरक्ति)

३ ज्ञान गर्भित वैराग्य (ससार … असारता का ज्ञान करके उत्पन… विरक्ति)।

आचार्य श्री का वैराग्य 'ज्ञान गर्भित वैराग्य' की कोटि मे आता है।

प्रश्न—'शासन प्रभावना एव आचार्यत्व के प्रभा… को अभी क्या देख रहे हो ? महान् तपोमूर्ति श्री हुक्मीचन्दजी म सा की इस गौरवमयी पाट-परम्परा…

के आठवे पाट को देखना । वह किस प्रकार निर्मल यश का अर्जन करता हुआ शासन की विशेष प्रभावना करेगा ।'

यह भविष्यवाणी किसने, किसके समक्ष और किसके लिये की थी ?

उत्तर—आचार्य श्री श्रीलालजी म सा ने महासती श्री तेजकवरजी के समक्ष । आचार्य श्री नानालालजी म सा के विषय मे ।

प्रश्न—'ध्वनिवर्धक यन्त्र मे बोलना मुनिधर्म की परम्पराओ मे नही है । अपवाद मे बोलना पडे तो उसका प्रायश्चित लेना होगा । स्वच्छन्दता से इसका प्रयोग न किया जाय ।' यह प्रस्ताव सं २०१२ के भीनासर वृहत् साधु-सम्मेलन मे कुछ मतो का विरोध होने से सर्वानुमति से पारित न होकर बहुमत के आधार पर पारित किया गया । आपको बताना है कि वे कुल कितने और किन-किन के मत थे, जो प्रस्ताव के विरोध मे थे ?

उत्तर—कुल तीन मत । प मुनिश्री लालचन्दजी म सा का एक मत एव प रत्न श्री नानालालजी म सा के दो मत (क्योकि प रत्न श्री पन्नालालजी म सा का प्रतिनिधित्व भी नानालालजी म सा ही कर रहे थे, अत आपके पास दो मत थे) ।

प्रश्न—स २०२६ वैशाख शुक्ला ७ को, जिस दिन आचार्य देव की ससारपक्षीया भगिनी श्रीमती छगन कवरजी की दीक्षा कानोड मे हुई, उसी दिन ब्यावर मे भी एक वीरागंना बहन की दीक्षा सम्पन्न हुई ।

उसकी विशेषता यह थी कि उन्होने अपनी अष्ट वर्षीया पुत्री कु मनोरमा को छोडकर तथा अपने ही हाथो से अपने पतिदेव की दूसरी शादी करके सयम मार्ग पर कदम बढाया था ।

आप रतलाम निवासी उस वीरागना बहन का नाम बताइये ?

उत्तर—श्रीमती चन्द्रकान्ता बाई मेहता ।

प्रश्न—'साधु को जो भी वस्तु चाहिये, वह गृहस्थ से याचना करके लाता है और पुन लौटाने योग्य वस्तु को उपयोग के बाद लौटा देता है ।'

एक बार यो हुआ कि आचार्य श्री अपने सन्तो सहित बदनावर से कानवन की ओर विहार कर दो मील पधार गये थे कि सेवाव्रती तपस्वी मुनिश्री अमरचन्दजी म सा. को कुछ स्मरण आया और उन्होने आचार्य श्री से निवेदन किया—'मैं आज सुबह एक गृहस्थ के घर से एक छोटी वस्तु लेकर आया था, लेकिन वह स्थानक मे ही रह गयी है, मैं उसे लौटाना भूल गया हू ।'

आचार्य श्री ने कहा—एक भाई के साथ जाकर तुम स्वय यथास्थान लौटाकर आओ ।' विहार मे साथ आये श्रावको ने कहा—'इतनी छोटी-सी चीज के लिये मुनिजी को चार मील का चक्कर देना अच्छा नही होगा । हम जायेगे तो ढू ढकर यथास्थान लौटा देगे ।' आचार्य श्री ने कहा—'आपकी भावना प्रशस्त है, लेकिन सन्तो को अपनी मर्यादा के अनुसार चलना ही चाहिये ।'

अमरचन्दजी म सा खुद जाकर वह वस्तु लौटाकर आये ।

अब आपको यह बताना है कि वह छोटी-सी वस्तु क्या थी, जिसको लौटाने हेतु चार मील का चक्कर लगाने वाली यह घटना सयम के प्रति सजगता का आदर्श बन गई ?

उत्तर—सूई, जो सिलाई हेतु लाई गई थी ।

प्रश्न—आचार्य श्री के उपदेशो से प्रवाहित हुई एक महान् सामाजिक क्रान्ति—'मालवा के बलाई जाति के हजारो लोगो का व्यसन मुक्त होकर धर्मपाल जैन बन जाना ।'

एक बार आगत धर्मपाल बन्धुओ की विनती

स्वीकार कर आचार्य श्री ने उनके गाव की ओर प्रस्थान कर दिया। अन्य गावो की तरह यहा भी ७० गावो के प्रतिनिधियो के भावुक हृदयो पर आचार्यदेव के जादू भरे प्रवचन का प्रभाव हुआ और सभी व्यक्तियो ने 'धर्मपाल व्रत' ग्रहण किया एव अपनी सामान्य बुद्धि के आधार पर एक प्रस्ताव भी पास किया—'इस गाव मे उपस्थित होने वाले ७० गावो के करीब ११०० प्रतिनिधि लोग मास, मदिरा, शिकार आदि दुर्व्यसनो का परित्याग करते हैं और साथ ही यह भी घोषणा करते है कि हमारी इस जाति मे जो भी इन अभक्ष्य वस्तुओ का सेवन करेगा, जाति का अपराधी माना जायेगा।'

इस प्रकार इस गाव से सामाजिक बन्धन के रूप मे इस हृदय-परिवर्तनकारी उत्क्रान्ति ने नया मोड ले लिया।

अब आप बताइये, उस गाव का क्या नाम है ?

उत्तर—गुराडिया (मालवा)।

प्रश्न नानालालजी म सा ने अपने आराध्यदेव गणेशाचार्य की विद्यमानता के २४ वर्षो मे कितने वर्ष उनकी सेवा मे ही व्यतीत किये ?

उत्तर—लगभग २१ वर्ष।

प्रश्न—दीक्षा लेते ही 'आचार्य श्री' ने अपनी साधना के तीन कोण निश्चित किये, कौन-कौन से ?

उत्तर—१ ज्ञान आराधना २ सयम साधना ३ सेवा (तपो) भावना।

प्रश्न—नानालालजी म सा को युवाचार्य की चादर कब ओढाई गयी ?

उत्तर—दि ३०-९-६२, स २०१९ आसोज शुक्ला द्वितीया रविवार।

प्रश्न—श्री गणेशाचार्य ने यावज्जीवन का सथारा ग्रहण करने के तीन दिन पूर्व ही अपनी आलोचना पूरी कर ली थी। आलोचना किसके समक्ष की थी ?

उत्तर—स्थविर पं मुनिश्री सुन्दरमलजी म सा के समक्ष।

प्रश्न—आचार्य तीन प्रकार के होते है? शिक्षाचार्य, कलाचार्य व धर्माचार्य।

आचार्य के ये भेद कौनसे सूत्र मे बताए गए है ?

उत्तर—ठाणाग सूत्र मे।

प्रश्न—आपका जन्म का नाम क्या था तथा 'नाना' नाम कैसे रखा गया ?

उत्तर—गोवर्धनलाल। आठ भाई-बहनो मे सभी से छोटे होने के कारण प्रेम से 'नाना' नाम रख दिया गया।

प्रश्न—आचार्य श्री के वैराग्य उत्पत्ति मे मूल निमित्त क्या बना ?

उत्तर—भादसोड़ा मे मेवाडी मुनि श्री चौथमलजी म सा का व्याख्यान।

प्रश्न—नानालालजी म सा की दीक्षा कौनसी तिथि को हुई ?

उत्तर—सवत् १९९६ पौष शुक्ला अष्टमी।

प्रश्न—आचार्य श्री के अन्तेवासी उन तपस्वी सत का नाम बताओ जिन्होने मात्र छाछ के आधार पर एक साथ २५१ दिन के तप का प्रत्याख्यान कर एक कीर्तिमान स्थापित किया था ?

उत्तर—तपोनिष्ठ श्री कवरलालजी म सा (बडे)।

प्रश्न—नानालालजी म सा को युवाचार्य चादर प्रदान करने की विधि मे नवकार मत्र के उच्चारण के साथ सर्वप्रथम कौनसे सूत्र का वाचन किया गया था ?

उत्तर—नदी सूत्र।

प्रश्न—श्री नानेशाचार्य के प्रथम शिष्य व शिष्या बनने का सौभाग्य किसे प्राप्त हुआ ?

उत्तर—श्रीसेवन्तकुमारजी, सुश्री सुशीलाकुमारीजी।

प्रश्न—वर्तमान आचार्य श्री के वह शिष्य मुनि कौन है, जिन्हे अपनी वैरागी अवस्था मे स्वर्गीय गणेशाचार्य के पार्थिव शरीर को दो मील की यात्रा तक कधा लगाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था ?

उत्तर—प र श्री शातिमुनिजी म सा ।

प्रश्न—पूज्य गणेशाचार्य द्वारा प र श्री नानालालजी म सा के युवाचार्य होने की विधिवत् घोषणा कौनसी तिथि या तारीख को की गई थी ?

उत्तर—आसोज कृष्णा ६, स २०१९ (तारीख—२२ सितम्बर १९६२) ।

प्रश्न—आचार्य श्री को सस्कृत भाषा एव साहित्य का ज्ञान कराने मे प्रमुख भूमिका निभाने वाले सस्कृत के उद्भट् विद्वान् का नाम बताओ ?

उत्तर—पं श्री अम्बिकादत्त ओझा ।

प्रश्न—'उन्होने अल्पारम्भ एव महारम्भ की व्याख्या के विषय में समाज को विलक्षण देन दी है ।

वे स्वय एक समृद्ध धार्मिक-राष्ट्रीय विचारधारा के युग-पुरुष है । स्थानकवासी समाज मे उन्होने क्राति के कुछ मौलिक सूत्र प्रस्तुत किये है ।' ये पक्तियां अष्टाचार्यो मे से किसके लिये कहा जाना उपयुक्त लगता है ?

उत्तर—जवाहराचार्य के लिये ।

—श्री दक्षिण भारत जैन स्वाध्याय सघ,
३४८, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास-६०००७९

यदि हम अपनी आंखे खुली रखे और मस्तिष्क को चिन्तनशील, तो हम पाएंगे कि ससार की हर वस्तु हमें कोई न कोई प्रेरणा देती है । उपनिषदो मे तो सूर्य, पेड, नदी, बगुला आदि से ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने वाले साधको की कथाए आती ही है । ऐसी ही एक प्रेरणादायी गाथा अर्हतर्पि हरिगिरि की है । वे कहते है—

वण्हिं रविं ससंक च, सागरं सरिय तहा ।
इदज्झय अणीय च, सज्जमेह च चिंतए ।।

अग्नि, सूर्य, चन्द्र और सागर एवं सरिता इन्द्रध्वज, सेना व नए मेघ का हमे चितन करना चाहिए । अग्नि तेजस्वी है, तेज और प्रकाश उसका गुण है । उसे राजमहल मे जलाया जाए या गरीब के झोपडे मे, वह प्रकाश देगी ही । हमे चाहिए यह प्रकाशत्व और तेजस्विता हम अग्नि से ग्रहण करे । सूर्य व चन्द्र से हम क्रमश. तेजस्विता और शीतलता ग्रहण करे । साथ ही साथ कर्तव्य मे नियमितता का भी पाठ सीखे । सागर और सरिता से गभीरता एवं जीवन का कण-कण लुटा देने का स्वभाव ग्रहण करे । इन्द्रध्वज व सेना से हम प्रेरणा व पुरुषार्थ सीखे तथा नए मेघ से आभा व परहित मे सम्पत्ति व्यय करने की प्रेरणा प्राप्त करे ।

मनुष्य का हृतपिण्ड भी हमे एक प्रेरणा देता है । हम जाग्रत हो या सुप्त, वह निरन्तर कार्यरत रहता है । यह निरलस कर्म की प्रेरणा देता है और यह भी कहता है हमारा भेद-विज्ञान 'मैं आत्मा हू' यह जाग्रत व सुसुप्त दोनो ही अवस्था मे वर्तमान रहे ।

समता जोगी : आचार्य नानेश

△ डा. प्रेमसुमन जैन

श्रमण परम्परा का मूल मन्त्र समता है। इसी समता से जैन धर्म एव दर्शन के विभिन्न सिद्धांतो का विकास हुआ है। समता की साधना के लिए ही जैन धर्म मे मुनि धर्म एव श्रावक धर्म की विभिन्न आचार्य संहिताए विकसित हुई है। श्रमण का सच्चा स्वरूप साम्यभाव की प्राप्ति करना है। राग-द्वेष से ऊपर उठकर इष्ट-अनिष्ट, सुख-दुःख, ऊंच-नीच, सम-विषम परिस्थितियो मे मन की स्थिरता को बनाये रखकर आत्म-कल्याण के मार्ग मे प्रवृत्त होना सच्चे साधु की सही जीवनचर्या है। मेवाड की धरती के सपूत आचार्य श्री नानेश समता के प्रतिपालक होने के कारण सच्चे श्रमण है। उन्होने समता-दर्शन की सैद्धांतिक व्याख्या ही नही की है, अपितु उसे व्यवहार के धरातल पर उतारा है। ऐसे समता जोगी आचार्य श्री नानेश को इस वर्ष आचार्य-पद सम्हाले हुए २५ वर्ष पूरे हो रहे है। इस अवधि मे उन्होने जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे समता को प्रतिष्ठित किया है। आचार्यश्री के व्यक्तित्व के नाना आयाम है, इसलिए वे नानेश है।

प्राचीन जैन ग्रन्थो मे आचार्य के कई गुणो एव प्रवृत्तियो का बखान किया गया है। सक्षेप मे कहा गया है कि जैन आचार्य आगम सूत्रो एव उनके अर्थ को जानने वाला, लक्षण-युक्त, सघ के लिए केन्द्र-बिंदु, सघ के व्यवस्था भार से निर्लिप्त एव मधुर अर्थ-युक्त वाणी बोलने वाला होता है—

सुत्तत्थविऊ लक्खणजुत्तो, गच्छस्स मेढिभूओ य।
गणतत्ति-विप्पमुक्को, अंथवाएओ आयरिओ ॥

आचार्य नानेश के व्यक्तित्व मे जैन आचार्य के ये सभी गुण विद्यमान है। आचार्यश्री से विगत २० वर्षो मे कई बार उनके दर्शन करने एव चर्चा करने का लाभ प्राप्त हुआ। उनके व्यक्तित्व की अमिट छाप उनके सम्पर्क मे आने वाले व्यक्ति के मन पर पडती है। जब विद्वानो के साथ उनका विचार-विमर्श होता है तो जैन आगमो के कई गूढार्थ आचार्यश्री की वाणी से स्पष्ट हो जाते है। आगम-सूत्रो की नये सन्दर्भो मे व्याख्या आपके दार्शनिक ज्ञान की विशेषता है। ज्ञान के कार्य के लिए आचार्यश्री की प्रेरणा सतत् प्रवाहित होती है। उदयपुर चातुर्मास मे आपकी प्रेरणा एव आशीष से ही 'आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान का शुभारम्भ हो सका है। आपके प्राकृत-प्रेम के कारण सघ मे ऐसा वातावरण बना हुआ है कि सघ प्राकृत भाषा एव साहित्य के अध्ययन, शिक्षण, अनुसन्धान आदि कार्यो के लिए कई सस्थाओ को सहयोग प्रदान करता है। सुखाडिया विश्वविद्यालय में जैन विद्या एव प्राकृत विभाग के सचालन मे प्रारम्भ से ही सघ का सहयोग प्राप्त है। ज्ञान के प्रचार-प्रसार के कार्यो मे आचार्यश्री के प्रभावक उपदेश ने उन्हे सच्चे अर्थो मे 'सुत्तत्थविउ' बना दिया है।

आचार्यश्री के व्यक्तित्व मे कथनी और करनी की एकरूपता है। वे समता के उद्घोषक है तो उनके जीवन मे कही विषमता देखने को नही मिलती। वे सरलता की प्रतिमूर्ति है, तो सहज ढग से, सादी व्यवस्था मे उनके सभी समारोह होते देखे

जा सकते है। वे ऊंच—नीच के भेदभाव को मिटाने की बात करते हैं तो स्वयं म प्र की बलाई जाति के सैंकड़ो लोगों के बीच जाकर उन्हे धार्मिक जीवन जीने का वे अधिकारी घोषित करते है। उत्तराध्ययन सूत्र मे साधु के लिए **जहावाइ तहाकारी** कहा गया है। आचार्य नानेश इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

दशवैकालिक मे कहा गया है कि साधु अल्प-भापी एव वाग्सयमी होता है **अप्पं भासेज्ज संजए**। आचार्य नानेश के सम्पर्क मे जो लोग आये है वे जानते है कि आचार्यश्री थोडे शब्दो मे सार की बात करने मे कुशल है। सुनने की अपूर्व क्षमता उनमें हैं। वे सवकी सुनेंगे, किन्तु मतलव की बात ग्रहण कर बाकी सब भूल जायेंगे। देशव्यापी इतना बडा सघ उनके अधीन है। प्रतिदिन सैंकड़ो समस्याए व्यवस्था सम्वन्धी होती हैं किन्तु साधुमर्यादा मे रहते हुए आचार्यश्री जो समाधान देते है, उससे सभी पक्ष सतुष्ट हो जाते हैं। व्याख्यान मे भी आचार्यश्री सूत्र शैली का प्रयोग करते है। कम शब्दो मे कीमती बात कह जाते है। उनके भीतर का जोगी बाहर प्रकट हो जाता है।

समता जोगी होने के नाते आचार्यश्री नानेश ने समता—दर्शन को जन-मानस मे विकीर्ण किया है। वे कहते है कि बाहर की विषमता कोई भारी समस्या नही है। वह तो सूचना है कि जग के भीतर विप-मता की जडे गहरी होती जा रही है। क्रोध, मान, माया, लोभ, मोह आदि कषायो ने प्राणी के साम्य—भाव को आच्छादित कर रखा है। अत इन कषायो के आवरण को हटाना होगा। इसके लिए बाहरी जीवन मे जितनी सादगी, साधना और सरलता आव-श्यक है, आन्तरिक जीवन मे उतनी साधना भी जरूरी है। सयमित जीवन हमे इस मार्ग तक ले जा सकता है। सामाजिक एव व्यक्तिगत जीवन मे जितनी शुद्धता एव सरलता रहेगी, उतनी जल्दी ही व्यक्ति आतरिक जीवन की विषमता को मिटा सकेगा। इस यात्रा की पूरी एक व्यवस्था है। आचार्यश्री ने अपनी पुस्तको मे समता—मार्ग को प्रशस्त किया है। उपदेशो मे उसकी व्यावहारिकता को उजागर किया है। समता—दर्शन एव समीक्षणध्यान आचार्यश्री की जीवन-पद्धति के दो नेत्र है, जिनसे लोक-अलोक, बाहर-भीतर, गृहस्थ-मुनि, ज्ञान एवं श्रद्धा के सभी पक्षो के वास्तविक स्वरूप को पहिचाना जा सकता है।

हमारा यह सौभाग्य है कि हम ऐसे समदर्शी आचार्य के जीवन के प्रत्यक्षदर्शी है। आचायश्री ने शास्त्र एव लोक के अपने व्यापक अनुभव की थाती जो हमें सौंपी है, उसका सरक्षण, प्रचार—प्रसार एव व्यावहारिक प्रयोग की दिशा मे सघ के हर घटक को सक्रिय होना चाहिए। जैन सन्तो की परम्परा मे आचार्यश्री ने साधना, सयम, ज्ञान और वैचारिक उदा-रता के जो मानदण्ड स्थापित किये है, उनसे सारा विश्व लाभान्वित हो, यही कामना है। समता जोगी आचार्यश्री नानेश का सयमी जीवन दीर्घायु हो, इस भावना के साथ उन्हे अनन्त प्रणाम। शत-शत वन्दना।

२९, सुन्दरवास, उदयपुर (राज.)

महिमावान व्यक्तित्व

☐ डा. कमलचन्द सोगानी

पूज्य आचार्य श्री नानालालजी महाराज साहब के उदयपुर चातुर्मास के अवसर पर श्री फतहलालजी हिंगड ने आचार्यश्री से मेरा परिचय करवाया था। मैने आचार्यश्री के पहली बार ही दर्शन किये थे। चर्चा के दौरान आचार्यश्री के व्यक्तित्व का मेरे ऊपर गहरा प्रभाव पडा और मुझे समणसुत्त की निम्न गाथाए याद आई —

पंचमहव्वयतुंगा, तक्कालिय-सपरसमय-सुदधारा।
णाणागुणगण भरिया, आइरिया मम पसीदंतु ॥६॥

ससमय-परसमयविऊ, गंभीरो दित्तिमं सिवो सोमो।
गुणसयकलिओ जुत्तो, पवयणसारं परिकहेउं ॥२३॥

जह दीवा दीवसयं, पइप्पए सो य दिप्पए दीवो।
दीवसमा आयरिया, दिप्पंति पर च दीवेंति ॥१७६॥

(पाच महाव्रतो से उन्नत, उस समय सम्बन्धी अर्थात् समकालीन स्व-पर सिद्धात के श्रुत को धारण करने वाले तथा अनेक प्रकार के गुण-समूह से पूर्ण आचार्य मेरे लिए मगलप्रद हो।

जो स्वसिद्धात तथा पर सिद्धात का ज्ञाता है, जो सैकडो गुणो से युक्त है, जो गम्भीर आभायुक्त, सौम्य तथा कल्याणकारी है, वह ही अरहत के द्वारा प्रतिपादित सिद्धात के सार को कहने के लिए योग्य होता है।

जैसे एक दीपक से दीपको की बडी सख्या जलती है, और वह दीपक भी जलता है, वैसे ही दीपक के समान आचार्य स्वय प्रकाशित होते है तथा दूसरो को प्रकाशित करते है।)

चातुर्मास के अवसर पर कई बार आचार्यश्री से मिलना हुआ। श्री हिंगड साहब बार-बार कहते थे कि आचार्यश्री के उदयपुर चातुर्मास की स्मृति स्थायी बनायी जाये और कोई ठोस कार्य किया जावे। काफी विचार-विमर्श चलता रहा। एक योजना की ओर जब ध्यान आकर्षित किया गया, तो आचार्यश्री से इस विषय मे बातचीत करने का निश्चय किया गया। जब आचार्यश्री से बात हुई तो मैंने कहा— "आपके श्रावक अनुयायियो ने श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर के माध्यम से प्राकृत के अध्ययन के लिए जैन विद्या एव प्राकृत विभाग की सुखाडिया विश्वविद्यालय मे स्थापना करके एक ऐतिहासिक कदम उठाया है। इस कार्य मे मेरा भी तुच्छ योगदान रहा है। किन्तु यहा से अध्ययन करके निकले हुए विद्यार्थियो का भविष्य उज्ज्वल नही होगा तो प्राकृत व आगम का प्रचार कैसे होगा? अत उदयपुर मे एक सस्थान खोला जाए जिससे विश्वविद्यालय मे प्राकृत का अध्ययन किए हुए योग्य विद्यार्थियो का समाज मे प्राकृत व आगम का कार्य करने के लिए उपयोग किया जा सके।" आचार्यश्री को यह विचार पसन्द आया और उन्होने इसकी विस्तृत योजना जाननी चाही। योजना बनाने का कार्य मुझे सौंपा गया। विस्तृत योजना बनाकर पूज्य आचार्यश्री के सामने रक्खी गई। योजना मे सस्थान का नाम 'आगम अहिंसा एव प्राकृत सस्थान' रक्खा गया था। आचार्यश्री ने नाम मे 'समता' शब्द पर बल दिया। तुरन्त सस्थान के नाम मे 'समता' शब्द जोड दिया गया और

आचार्यश्री के चातुर्मास के कुछ वर्ष पूर्व ही मैंने आचाराग का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया था। जैसे-जैसे आचाराग के गहन समुद्र मे गोते लगाने लगा, तो मोती हाथ आने लगे। आचाराग का महत्त्व मन मे उतरने लगा। 'समियाए धम्मे' (समता मे धर्म होता है) सूत्र ने मुझे बहुत ही प्रभावित किया। जब मुझे आचार्यश्री से मिलाया गया था, तो उनकी समता मे आस्था की चर्चा भी की गई थी। मुझे लगा कि आचार्यश्री आचाराग की अहिंसा के साथ समता के विभिन्न आयामो को प्ररूपित कर रहे हैं।'समता' को हमने भुला दिया था। किंतु यहा एक महान् व्यक्ति है जो 'समता'को भी अहिंसा के समान ग्रहणीय मानता है। मेरे ऊपर आचाराग के परिप्रेक्ष्य मे इसका बहुत प्रभाव पडा और मैं आचार्यश्री की तरफ आकर्षित होने लगा।

एक बार मैंने उनसे आचाराग के विषय मे चर्चा की और कहा कि प्रतिदिन यदि आचाराग के सूत्रो को प्रार्थना मे जोड लिया जाए और सभी लोग आचाराग के सूत्रो को गा कर बोलें तो महावीर की वाणी जन-जन तक पहुच सकती है। आचार्यश्री को यह विचार पसन्द आया और उन्होने मुझे प्रार्थना के लिए आचाराग से सूत्रो का चयन करने के लिए कहा। कुछ ही दिनो मे मैं सूत्रो का चयन करके आचार्यश्री के पास ले गया। चयन मे प्रत्येक दिन के लिए सात सूत्र थे और सात दिन के लिए अलग-अलग सात सूत्र थे। इस तरह से आचाराग से ४९ सूत्रो का चयन हुआ था। आचार्यश्री ने करीब-करीब सभी सूत्रो को स्वीकृति प्रदान कर दी थी और कुछ साधु-साध्वियो को बुला कर उन्हे गाने के लिए अभ्यास करने को कहा। सूत्र छपा लिए गए और सूत्रो की प्रार्थना शुरू हुई। मै भी कुछ दिन प्रार्थना मे सम्मिलित हुआ। छोटे-छोटे बच्चो ने भी सूत्रो को बोलना शुरू कर दिया था।

आचार्यश्री उदयपुर मे विराजे तब तक यह क्रम चलता रहा और महावीर की सूत्रमय वाणी इसका नाम 'आगम अहिंसा-समता एव प्राकृत संस्थान' सुझाया गया। आचार्यश्री को यह नाम अच्छा लगा। आगमो के गृहस्थ विद्वान् बनाने की योजना आचार्यश्री ने उचित बताई पर जब तक श्रावक वर्ग इस योजना को न मानले, तब तक धन-राशि आदि की समस्या का हल कैसे हो ? इसी अवसर पर श्री सरदारमल जी काकरिया आचार्यश्री के दर्शनार्थ उदयपुर पधारे। उनके सामने सारी बात रक्खी गई। उनको भी योजना पसन्द आई। उन्होने इस योजना को मद्रास मे श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ की कार्य-कारिणी की बैठक मे रखने का सुझाव दिया। उदय-पुर सघ ने मुझे व श्री हिंगड साहब को मद्रास जाने के आदेश दिए। मद्रास मे यह योजना जब रक्खी गई तो प्राय सभी ने इसे पसन्द किया, किन्तु श्री गणपतराजजी बोहरा ने इसमे विशेष रुचि दिखाई। मद्रास मे यह निश्चय किया गया कि इस योजना को वार्षिक सम्मेलन के अवसर पर उदयपुर मे सघ के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। योजना विस्तार से सम-झाई गई पर उदयपुर मे इसका कडा विरोध हुआ। मैं भी इस योजना को समझाते-समझाते थक चुका था। आचार्यश्री तक सारी बात पहुंची और आचार्य श्री को मैंने निवेदन किया "आपने जो दायित्व मुझे सौंपा था उसे मैंने यथाशक्ति पूरा कर दिया है। अब तो सारी बात समाज पर ही है।" आगे क्या हुआ मुझे मालूम नही है। किंतु मुझे खुशी हुई कि जिस दिन आचार्यश्री का विहार होने वाला था, उसी दिन सस्थान की योजना को कार्य रूप मे परिणत करने की घोषणा कर दी गई। मुझे यह देखने को मिला कि आचार्यश्री पर समाज की अटूट श्रद्धा है। इतने विरोध के बावजूद सस्थान बना, इससे आचार्यश्री के महिमावान व्यक्तित्व की छाप मेरे मन पर हमेशा के लिए अंकित हो गई। समाज को सही राह पर ले जाने वाले इतने गौरवमय व्यक्तित्व को शत्-शत् प्रणाम।

आकाश मे गूंजती रही । अब भी मेरी इच्छा रहती है कि हजारो-हजारो लोग वेद मन्त्रो की तरह आचा-राग के सूत्रो को बोलें । विशेष सम्मेलनो मे यह अवश्य किया जाए, ऐसा मेरा आचार्यश्री से निवेदन है । मेरा विश्वास है कि इस तरह से महावीर हमारे जीवन मे आ सकेंगे और हम स्व-पर कल्याण में अग्रसर होने की प्रेरणा ग्रहण कर सकेंगे ।

चातुर्मास समाप्त होने के पश्चात् सुखाडिया विश्वविद्यालय के सामाजिक विज्ञान एव मानविकी महाविद्यालय में आचार्यश्री के प्रवचन का आयोजन किया गया । विश्वविद्यालय के प्राध्यापको एव विद्या- र्थियो ने आपके प्रवचन को सम्प्रदायातीत बताया औ कहा कि भारत जैसे देश का कल्याण ऐसे ऋषियो हो हो सकेगा । प्रवचन समाप्त होने के पश्चात् सुख वास जाते समय आचार्यश्री ने मेरे निवास को पवित्र किया । मै और मेरी पत्नी श्रीमती कमलादे आचार्यश्री के मेरे निवास पर पदार्पण से धन्य हुए

प्रोफेसर दर्शन-शास्त्र, मोहनलाल सुखाडि
विश्वविद्यालय, उदयपुर(रा

कंचणस्स जहां धाऊ जोगेणं मुच्चए मलं ।
अणाईए वि संताणे तवाओ कम्म संकरं ॥

धातु के संयोग से स्वर्ण का मैल दूर होता है इसी भाति अनादि कर्म तप से नष्ट होते हैं ।

स्वर्णकार जब सोने को विशुद्ध करता है तो वह उसे आग में तपाने के पूर्व उसमे तेजाब मिलाता है । फलत: तपने के बाद स्वर्ण अधिक दीप्तिमय हो जाता है, मुलायम हो जाता है । इसी प्रकार कर्म मल आत्मा के साथ अनादिकाल से संयुक्त हैं फिर भी तप द्वारा वह कर्म मल दूर हो जाता है और आत्मा विशुद्ध हो जाती है ।

प्रश्न आ सकता है कि आत्मा के साथ जिस कर्म का संयोग अनादि है उसका अन्त कैसे हो सकता है ? इसके प्रत्युत्तर मे अर्हतर्षि महाकाश्यप सोने का रूपक देते है । जैसे सोना और उसके मैल का सम्बन्ध अनादि है फिर भी मानव के प्रयत्न से वह सोने से पृथक कर दिया जाता है । इसी प्रकार तप. शक्ति अनादिकाल के मैल को दूर कर सकती है ।

ध्यान देने योग्य यह है कि जिस प्रकार सोने को तपाने के पूर्व उसे तेजाब से मुला-यम किया जाता है उसी भाति आत्मा को भी तपाने के पूर्व मुलायम करना होता है । मनुष्य को अहं ही कठोर बनाता है । अहंत्याग से ही तप मे निखार आता है नही तो वह क्रोध मे परिवर्तित हो जाता है ।

महान् आचार्य श्री की महान् उपलब्धि

☐ समाजसेवी मानव मुनि

भारत देश सदैव से महापुरुषो की जन्मभूमि रहा है, वे किसी जाति सम्प्रदाय के नही होते हैं। मानव समाज ही नही प्राणि–मात्र के कल्याण की भावना उनके हृदय मे होती है। वे उदार एवं करुणा मूर्ति होते हैं। आत्म–कल्याण के साथ पर-कल्याण ही ही जिनका ध्येय होता है, विज्ञान युग के ऐसे महान् तेजस्वी, आत्मचिन्तक, योग साधक, वाल ब्रह्मचारी, समता विभूति, समीक्षण ध्यान योगी, धर्मपाल प्रतिबोधक १००८ पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी म सा. है। उनकी उम्र कितनी, कहा जन्म लिया, माता-पिता कौन है, दीक्षा गुरु कौन हैं ? इस विवरण मे मैं जाना चाहता नही क्योकि यह सभी जानते हैं। पर वास्त–विक उम्र मेरे विचार से जव से महापुरुप ने आचार्य पदवी को सुशोभित कर धर्म का, भगवान महावीर के वीतराग सिद्धातो का मुकुट धारण किया वे, है–पच्चीस वप, उसे उम्र कहे या आत्म-सोधना के विकास पथ पर वढते हुए कदम कहे, एक ही वात है। उन्होने राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात प्रातो मे हजारो मीलो की पदयात्रा कर भगवान महावीर की वीतराग वाणी का संदेश जैन समाज को ही नही जन-जन को दिया तथा स्थानकवासी जैन समाज मे अनुशासन के नये आयाम का शुभारम्भ किया। दो सौ से अधिक मुमुक्षु भाई–वहिनो को दीक्षा देकर भौतिकतावादी युग मे उन्हे त्याग, साधना, सयम के मार्ग पर चलने का मगल आशीर्वाद दिया। उन्होने सदैव ही सांवत्सरिक महापर्व जैन समाज का एक हो, ये भावनाए व्यक्त की है। ऐसे दूरदृष्टा विरले होते हैं। गाधीयुग के वाद मालवा की पावन भूमि पर हजारों दलित हरिजनो का आपने उद्धार किया, यह एक ऐतिहासिक क्राति घटित हुई है। मासाहारी से शाकाहारी बनाया व धर्मपाल नाम की सज्ञा देकर उन्हे सम्मानित किया। मानव के नाते मानव से प्यार करना सिखाया। ऐसे महापुरुष के सम्वन्ध मे जितना भी लिखा जाये, कम होगा। जिस प्रकार समुद्र की गहराई का मालूम नही होता उसी प्रकार महापुरुष की आध्यात्मिक–साधना की गहराई का हमे ज्ञान नही हो पाता। ऐसे महापुरुप के पावन पवित्र चरणो मे कोटि-कोटि वदन अभिवदन। जिनके आचार्य पद का यह रजत-जयन्ती वर्ष याने आत्म-साधना का वर्ष हम धर्म ध्यान, त्याग, सयम, तप द्वारा मनाये तभी इन महा-पुरुष के चरणो मे सच्ची श्रद्धा के सुमन अर्पित कर सकेंगे।

स्थानकवासी समाज मे एक नया सगठन श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ के नाम से स्थापित हुआ। उसको २५ वर्ष हो गये। इस उपलक्ष मे संघ का रजत-जयन्ती महोत्सव मनाया जा रहा है। समाज सुधार के, युवापीढी को गतिशील वनाने के रचनात्मक कार्यो के माध्यम से सघ को सुदृढ वनाने तथा जन-कल्याण करने के सवसे महत्वपूर्ण सिद्धांत कहिये या संघ के उद्देश्य कहिये, वे नितात श्रेष्ठ हैं। इन सघ मे पद व पदवी के लिये कभी चुनाव नही हुए। सघ पदाधिकारी जो भी रहे, वे सदैव सेवा भावना से, समान भाव से कधे से कधा मिलाकर, छोटे-वडो का

भेद भुला कर संघ की प्रवृत्तियो को गतिशील बनाने मे सहयोगी बनते है । यही संघ की महान् शक्ति है ।

साहित्य एव श्रमणोपासक प्रकाशन द्वारा युग की विचार धारा से अवगत करवाते है पर ग्रामीण आंचलों मे पदयात्रा द्वारा जो ग्रामजीवन की अनुभूति प्राप्त होती है, वह महत्त्वपूर्ण है । संघ की प्रमुख प्रवृत्ति धर्मपाल समाज की प्रवृत्ति है जो संघ को भारत मे गौरवशाली बनाने मे अग्रणी है । संघ प्रवृत्तियो के विकास के पच्चीस वर्ष मे जो स्नेह एव सद्भाव है भविष्य मे वह और बढेगा तथा समाज व राष्ट्र को प्रगतिशील बनाने मे सार्थक सिद्ध होगा, ऐसा मेरा विश्वास है ।

साधु समाज व श्रावक समाज के मध्य समन्वय करने वाली भावना और संघ है । गृहस्थ जीवन में रहकर भी साधना की जाग व जहां सत-सतियां के चातुर्मास नही हो, उस क्षेत्र मे स्वाध्यायी जाकर धर्म की प्रभावना करे, यह संघ की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति है । रजत-जयन्ती वर्ष आत्म-निरीक्षण का है। आत्म स्वरूप को पहिचाने, गरीबो की सेवा मे अपना कर्त्तव्य एवं धर्म समझें, गोवंश की रक्षा हो, प्राणि-मात्र को अभयदान मिले, यह हमारी प्रबल भावना हो । देश मे जो हिंसा बढ रही है उस पर श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ अहिंसा का ध्वज फहराये, यही हमारा भावी ध्येय रहे, यही हार्दिक कामना है।

विसर्जन आश्रम नवलखा, इन्दौर

समय का मूल्य

ससार मे सबसे बहुमूल्य समय होता है । पर अधिकतम उपेक्षा इसकी ही की जाती है । व्यक्ति प्रमाद एव असावधानी मे समय को व्यर्थ ही गवां देता है जो समय के मूल्य को नही आंकता, उसका भी कोई मूल्य नही आंकता । इसलिए "समयं गोयम ! मा पमायए"—एक क्षण का भी प्रमाद मे अपव्यय न करो ।

जा जा वच्चई रयणी न सा पड़िनियत्तई ।
धम्म च कुणमाणस्स सफला जन्ति राइओ ।

जो रात्रियां व्यतीत हो गईं । वे लौट कर पुनः नही आयेगी । जो साधक साधना शील (धर्म परायण) रहकर उनका उपयोग कर लेगा, वह समय की सार्थकता को प्रमाणित कर लेगा ।

समय के मूल्य को आंकने का तात्पर्य है, वर्तमान का जागरूकता के साथ उपयोग करना । वर्तमान में सजग रहने वाला सब क्षेत्रो तथा सब कार्यो मे सजग रहता है, अत· वह अपने निर्माण मे पूर्ण सफल रहता है । जिसने समय की उपेक्षा कर दी, सारा ससार उसकी उपेक्षा कर देता है । उस प्रकार के निरुपयोगी व्यक्ति का कोई भी सन्मान नही करता ।

जो व्यक्ति समय का उपयोग नही करता, वह अपने निर्माण में ही कोरा रहता है, इतना ही नही बल्कि व्यर्थ किये गये उस समय से वह ऐसे दुखद जाल भी बुन लेता है जिनसे उसका निष्क्रमण अत्यन्त कठिन हो जाता है । जीवन मे प्रगति, विकास तथा निखार चाहने वाले व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह एक क्षण को भी प्रमाद मे व्यतीत न करे ।

रजत संकल्प

□ श्रीमती रत्ना ओस्तवाल

हम सौभाग्यशाली है कि हमे महान् समता-समीक्षण साधना के ज्वलन्त आदर्श, प्रशात चेता, युगद्रष्टा आचार्यश्री नानेश के आचार्य के २५वे आचार्य पद को समता-साधना वर्ष के रूप मे मनाने का रजत अवसर प्राप्त हुआ है। आचार्य श्री नानेश के २४ वर्षो का इतिहास धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक जन जागृति का अभियान तन-मन-धन से जन-जन मे समाया हुआ हे। जो हमारे लिए तिन्नाण तारयाणम् के रूप मे है।

इस २५वी वर्षगाठ ने चतुर्विध सघ को पूर्ण रूप से सचेत कर धर्म एव समता-साधना मे प्रवृत्त कर दिया है।

श्री आचार्य भगवन् का २५वा आचार्य पद, समता-साधना वर्ष और श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ का रजत-जयन्ती वर्ष। कितना सुन्दर मणिकाचन योग है।

'रजत' धातु युग की विशेषता है कि इस शब्द को मूल्यवान बना दिया हे। वैज्ञानिको ने इस 'रजत' Silver को (Ag) "Periodic Table" से महत्त्वपूर्ण प्रथम स्थान दिया। अनेक विशेषताओ के धारक इस रजत को रग, रूप, गुण सभी तत्वो मे श्वेत बना दिया। श्वेत उसी का प्रतीक है, जो शाति प्रिय है। चमक उसी मे होती है जो तेजोमय है।

सफेद रग मे सभी रगो का समावेश है। इसमे किसी के प्रति न राग हे न द्वेष।

इस समता के धारक रजत की कई परिभाषा है। कई उपमा है। तन, मन, धन तीनो मे समाया यह रजत शब्द मानव जीवन का विकसित रूप भी माना जाता है। जहा किशोर शब्द युवा मे बदल जाता है। जहा युवा शब्द मे मानव जाति के सभी गुण विद्यमान हो जाते है। इस उम्र मे वह रूपवान, गुणवान, धनवान, ऐश्वर्यवान और अन्तत भाग्यवान कहलाता हे।

आज हमारी होड इस भाग्यवान शब्द को पाने के लिए लालायित है। हम भाग्यवान अध्यात्म से बने या व्यवहार मे।

भाग्यवान बनना ही जीवनरूपी पूर्ण विराम है। जहा मानव असीम शाति की सास लेता है, चाहे वह आध्यात्मिक हो या व्यावहारिक। रजत से बने शब्द ही जीवन सुधारक बन गये है। हर दो अक्षर का शब्द कितना बोधप्रद हे।

> **जर मे, रत न हो,**
> **रज से तर जाओ।**
> **तज इस रजत को,**
> **शाति तरज हो जाओ॥**

जहा 'जर' निद्रा, आलस्य, प्रमाद का प्रतीक है, तो 'रज' पावन पवित्र चरणो की धूल है, जो भव-सागर से पार कर देती है। तज इस रजत को परिग्रह से दूर जहा समाज मे फैली दहेज, विषमता, लोभ मोह, माया का त्याग है और अत मे शाति का सुन्दर व्यावहारिक जीवन है, अपनाकर जीवन धन्य-धन्य बना सकते है।

रजत शब्द की धारणा ने हमे आत्म-साधना, धर्म आराधना, सामाजिक उपासना और अपरिग्रह

स्थापना मे अवगाहित कर लिया है । अगर हम समता साधना को रजत कह दें या घोषित कर दें तो तनिक सकोच नहीं ।

श्री आचार्य भगवन् जो मेरे परम पिता है, भेद-अभेद से दूर है, जिनके व्यवहार मे सर्वोत्तम समता है, जो सहज ही सिद्धावस्था देते है, उन्ही के शब्दो को दोहराती हूं—

"आप भले मुझे मारवाडी साधु समझे या अमुक सम्प्रदाय से आबद्ध समझें पर मैं तो आप सब को अपनी आत्मा समझता हू ।"

जो स्वय मे सिद्ध, स्वच्छ, श्वेत, धवल, रजत, स्फटिक है, वह सभी मे अंतरग है ।

अंतरग का अनुभूतिगत ज्ञान साधना की गहराई मे प्रवेश पाने पर ही हो सकता है । आज हमारा प्रवेश द्वार समता-साधना वर्ष है, जो हर जन-जन के लिए समता-साधना का अपूर्व सन्देश लिए अवतरित हुआ है ।

कितना अद्भुत भाग्य ! आज हम उस चकाचौंध के भौतिक युग मे महान् सत का सान्निध्य पाकर समता-साधना वर्ष मना रहे हैं, और निरस्थाई समता-साधना मे रमने का यह रजत सकल्प है ।

कामठी लाइन, राजनादगाव (म प्र.)

आनन्द का श्रेष्ठ मार्ग

समान्यतः व्यक्ति निराशा, असफलता व विषाद के क्षणों में उन्मन हो जाता है तथा आशा, सफलता व हर्ष के क्षणों मे उछलने लगता है । वह प्रतिकूलता को अभिशाप तथा अनुकूलता को वरदान मानकर चलता है । यह व्यक्ति की अपूर्णता है और वह किसी रिक्तता की ओर संकेत करती है । यथार्थता यह है कि जीवन द्वन्द्वात्मक है। वह नाना विरोधी युगलों को अपने में अटाकर ही अवस्थित रह सकता है । उनका तिरोधान किसी भी स्थिति मे शक्य नही है । व्यक्ति यह क्यो भूल जाता है कि सारे द्वन्द्व जीवन रूप रस्सी के दो छोर या एक ही सिक्के के दो पार्श्व है ।

निराशा, असफलता, विषाद एवं प्रतिकूलता के क्षणो मे जो अन्यमनस्क नही होता, वह जीवन के रण-क्षेत्र मे विजयी होता है । वह फिर सफलता, हर्ष आशा तथा प्रतिकूलता के समय भी समचित्त रहेगा । उसके जीवन मे न ऊब तथा घुटन होगी एवं न अतिरिक्तता की अनुभूति होगी । यह प्रकार जितना साधक के लिए उपयोगी है उतना ही सामान्य व्यक्ति के लिए भी । जो इन द्वन्द्वों से अतीत रहेगा, वह सदैव आनन्दमय रहेगा । आनन्दित होने का यही श्रेष्ठ मार्ग है ।

आचार्यों में विरल

△ गुमानमल चोरड़िया
भूतपूर्व अध्यक्ष, श्री अ. भा. सा. जैन संघ

परम पूज्य चारित्र चूडामणि, समता दर्शन प्रणेता, जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक, समीक्षण ध्यान योगी, जिन नही पर जिन सरीखे, प्रातः स्मरणीय, अखण्ड वाल ब्रह्मचारी १००८ आचार्य श्री नानालाल जी म सा जैन समाज के विरल आचार्यों मे से एक है। आचार्य के जो छत्तीस गुण होते हैं, वे आप मे परिपूर्ण रूपेण हैं।

आप श्री का जन्म दाता ग्राम मे हुआ, यह सभी को मालूम है। वाल्यकाल मे आपको धर्म के प्रति कोई विशेष रुचि नजर नही आती थी, लेकिन जव से आप सतो के सम्पर्क मे आये, तभी से आपकी प्रवृति मे काफी परिवर्तन आया एव आपकी जिज्ञासा चिन्तनशील बनी, तत्वो के प्रति आकर्षित हुई। आप शान्त प्रकृति के एव गम्भीर हैं, दीक्षा लेने के पश्चात् आप सामान्य सतो की तरह ज्ञानाभ्यास करते हुए भी गम्भीरता एव सेवा भावना से ओत-प्रोत थे। आपने स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा की जिस समर्पित भाव से सेवा की, उसी का आज यह प्रतिफल है कि आप एक महान् आचार्य के रूप मे हमारे समक्ष विद्यमान है। सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र का विशुद्ध पालन करना व करवाना आपको गुरु से विरासत मे ही मिला है।

आप ने विशिष्ट ज्ञान हो, ऐसा प्रतीत होता है। उदयपुर मे जव आप स्व आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा की, जिन्हे केन्सर जैसी भयकर व्याधि थी, सेवा मे थे। डाक्टरो ने यह कहा कि अव आचार्य श्री का समय नजदीक है, आप अपना अवसर देख सकते हैं, तव आपने कहा मुझे कोई ऐसी बात नजर नही आती। उसके पश्चात् आचार्य श्री काफी महीने तक विद्यमान रहे। सेवा करते-करते आपको यह ज्ञान हुआ कि आचार्य श्री अधिक समय नही निकालने वाले है। तब आपने डा. साहव से पूछा कि आपकी क्या राय है? डा साहब ने एक ही जवाब दिया कि आपके ज्ञान के आगे हमारी डाक्टरी चल नही पाती है। आपने समय पहचान कर आचार्य श्री से अर्ज किया एव तदनुरूप स्व आचार्य श्री ने सलेखना सथारा किया जो अधिक समय नही चला। ऐसा आप मे विशिष्ट ज्ञान एव दृढ आत्मविश्वास दृष्टिगोचर होता है।

आप पूर्ण अतिशयधारी है। जब आपको आचार्य पद प्रदान किया गया, तब आपके पास अल्पमात्रा मे शिष्य समुदाय था, उसमे भी अधिकतर स्थविर ही थे। यदि आपका अतिशय नही होता तो शायद इस सघ की जाहोजलाली जो आज दृष्टिगोचर हो रही है, नही होती। आपके हाथ से २३३ भागवती दीक्षाए हो चुकी है, जो आपने आप मे ही एक विशिष्टता लिए है। आपके पास रतलाम मे २५ दीक्षाओ का एक साथ प्रसग वना, जो इतिहास मे स्वर्णाक्षरो मे अकित करने योग्य है। कारण लोकाशाह के पश्चात् आज तक स्थानकवासी समाज मे एक आचार्य के पास इतनी दीक्षाएं सम्पन्न नही हुई।

आपकी प्रेरणाए अप्रत्यक्ष ही होती हैं। जो

आपके प्रवचन सुनते है या आपके चारित्र से प्रभावित होते है, वे मुमुक्षु आत्माए आपके पास प्रव्रजित हो जाती है। प्रत्यक्ष मे आप किसी को विशेष प्रेरणा नही देते, लेकिन आपका सयम, आपका जीवन सबके लिए प्रेरणास्पद है। आपने भगवान का एक वाक्य हृदयगम कर रखा है–"जे सुहानु देवानुप्रिय"–अर्थात हे देवताओ के प्रिय ! जैसा सुख उपजे वैसा ही करो पर धर्म करणी मे विलम्ब मत करो।

आपके प्रवचन प्रभावशाली होते है, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण धर्मपाल प्रवृति है। स्व दादागुरु श्री जवाहरलाल जी म सा का अछूतोद्धार का काम आपने पूर्ण कर एक कीर्तिमान स्थापित किया। जब आप रतलाम के आस-पास के ग्रामो मे विचर रहे थे, तब आपके पास बलाई जाति के लोग आये और उन्होने अपनी व्यथा व्यक्त की। कहा कि हम धर्म परिवर्तन कर ले, ईसाई बन जायें या मुसलमान बन जावें या आत्म हत्या कर लें। कारण हमे कोई भी गले नही लगाता। पशुओ से भी बदतर हमारी हालत है। तब आचार्य प्रवर ने एक बात फरमाई कि आप व्याप्त बुराइया–मदिरा, मास का सेवन बन्द कर दे, समाज आपको गले लगा लेगा। मरता क्या नही करता, तदनुरूप उन लोगो ने आपकी बात स्वीकार की। बुराइयो का त्याग किया, धर्मपाल बने। आपने आहार पानी के परीषह की परवाह किये बिना उधर के ग्रामो मे विचरण किया, जिसका प्रतिफल यह कि आज लाखो लोग व्यसनमुक्त हुए है एव हजारो लोग धर्मपाल बने है। यह एक ऐतिहासिक कार्य हुआ है।

साहित्य लेखन के लिए आपसे निवेदन किया कि साहित्य सघ का दर्पण होता है इसके बारे मे आप कुछ चिन्तन करें ताकि सघ से हम साहित्य प्रकाशित कर सके। तदनुरूप आपने बडी कृपा करके जो पाण्डुलिपिया सघ को परठी, सघ द्वारा प्रकाशित हुई है। हमे लिखते हुए परम सतोष है कि जो साहित्य प्रकाशित हुआ है एव होने वाला है अपने आप मे विशिष्टता रखने वाला है।

सयम साधना के लिए समता एव ध्यान दोनो ही आवश्यक है, और दोनो ही दिशाओ मे आचार्य प्रवर ने पूर्ण शक्ति लगाकर जो कार्य किया वह अपने आप मे एक उपलब्धि प्रतीत होती है। समता के बारे मे आपका साहित्य पठन करने से पाठक समता के आनन्द मे रस लेने लगता है, आप्लावित हो जाता है। समीक्षण ध्यान के बारे मे जो आपने लिखा है वह भी बहुत ही अनुभव गम्य एव पाडित्य पूर्ण है।

कषाय समीक्षण के बारे मे जो विशद विवेचन आपने किया है, उसमे से क्रोध समीक्षण पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है। मान, माया, लोभ समीक्षण पुस्तकें प्रकाशित होने वाली है, इन सब मे आचार्य प्रवर ने आत्मानुभूत सामग्री प्रदान की है।

आचार्य श्री मे निर्लिप्तता का विशेष गुण है जो विरल साधको मे ही देखने को मिलता है। आपके पास कोई दर्शनार्थ जावे तो न तो उन्हे उनके परिवार वालो के विषय मे पूछते है और न ही अन्य क्रियाकलापो के विषय मे। मेरा आपके निकट मे रहने का काफी प्रसग पडा, लेकिन आपने कभी साधुमार्गी सघ के विषय मे भी पूछा नही कि क्या हो रहा है ? क्या नीति निर्धारित हुई ? आपको कभी कोई बात अर्ज कर दी तो ठीक, तटस्थ भाव से सुन ली, वरना कभी पूछने का प्रसग नही। सघ के पदाधिकारियो के चुनाव के बारे मे आपका कोई सकेत नही। ऐसे निर्लिप्त साधक आज कहा दृष्टिगोचर होते है। ऐसे निर्लिप्त साधक को पाकर आज सघ गौरवान्वित हुआ है।

ऐसे आचार्य प्रवर के आचार्य पद के २५ वर्ष पूर्ण हो रहे है। ऐसे आचार्य को पाकर आज सघ कृतकृत्य हुआ, निहाल हुआ। वीर-प्रभु से यही प्रार्थना है कि आपके सान्निध्य मे चतुर्विध सघ ज्ञान-दर्शन-चारित्र मे अभिवृद्धि करता रहे, आपका वरद हस्त हमेशा रहे एव सान्निध्य प्राप्त होता रहे, आप दीर्घायु हो। ऐसे आचार्य प्रवर को हमारा शत्-शत् वन्दन।

–सोथलियो का रास्ता, जयपुर

ये पच्चीस वर्ष : जैन इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ

△ पी. सी. चौपड़ा

भूतपूर्व अध्यक्ष—श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ

न केवल साधुमार्गी जैन सघ के लिए अपितु सकल जैन सघ के लिए यह अत्यन्त गौरव का विषय है कि जिनशासन प्रद्योतक, समता विभूति, समीक्षण ध्यानयोगी, आचार्य-प्रवर श्री नानालालजी म सा. के सघ-सचालन के पच्चीस वर्ष पूरे होने जा रहे हैं। इन पच्चीस वर्षो मे पूज्य आचार्य-प्रवर के नेतृत्व मे चतुर्विध सघ की जो जाहो जलाली और प्रभावना हुई है, वह हम सबके लिए अविस्मरणीय एव गौरव-पूर्ण उपलब्धि है। इस पुनीत प्रसग पर मैं पूज्य आचार्य प्रवर के चरण कमलो मे श्रद्धावनत होकर नमन करता हुआ उनके मगलमय यशस्वी दीर्घजीवन की कामना करता हू ताकि उनकी छत्रछाया मे चतुर्विध श्री सघ का रथ अविराम गति से विकास के पथ पर निरन्तर आगे बढता रहे।

जहा एक ओर यह रजत-जयन्ती वर्ष हमे अतीत के गौरवशाली इतिहास का स्मरण कराता है वही भविष्य के लिए अधिक विकास की प्रेरणा भी प्रदान करता है। अतीत के इतिहास को स्मृति पटल पर रखते हुए और भविष्य की नवीन योजनाओ का लक्ष्य सामने रखकर हमे वर्तमान मे क्रियाशील और गतिशील बनना है, तभी इस रजत-जयन्ती वर्ष की सार्थकता है।

पूज्य आचार्य-प्रवर की मगलमय सयम-साधना, ज्ञान-दर्शन-चारित्र के प्रति दृढ आस्था, सयम-पालन के प्रति सतत जागरूकता के कारण ही चतुर्विध सघ का विकास हुआ है, हो रहा है और होता रहेगा। उत्कृष्ट चारित्रिक आराधना ही वह मूलभूत तत्व है जिसने आचार्य-प्रवर के प्रभाव को इतनी विपुल व्यापकता प्रदान की है। आज हजारो श्रद्धालु जन-समुदाय के मानस-पटल पर आचार्य-प्रवर की जो छाप अकित है, वह अद्वितीय है।

आचार्य-प्रवर के शासनकाल की अनेक महत्व-पूर्ण उपलब्धिया है परन्तु मेरी दृष्टि मे सर्वाधिक गौरवपूर्ण उपलब्धि है—उनके द्वारा प्रबुद्ध दीक्षार्थियो का विपुल प्रमाण मे सयम-पथ का पथिक बनना। पूज्य प्रवर के द्वारा अब तक २५० दीक्षाए दी जा चुकी हैं जो आज के युग मे आश्चर्य का विषय है। रतलाम नगर मे हुई एक साथ पच्चीस दीक्षाओ का भव्य प्रसग भी अपने आप मे एक अद्भुत एव ऐतिहासिक प्रसग था जो आचार्य प्रवर के प्रबल पुण्य का परिचायक था।

सामाजिक क्षेत्र मे आचार्य-प्रवर द्वारा दिया गया योगदान धर्मपाल समाज के निर्माण के रूप मे प्रकाशित हुआ है। इसके माध्यम से हजारो लोगो के जीवन मे व्यसन मुक्ति के रूप मे क्रान्ति हुई है। ज्ञान के क्षेत्र मे, दर्शन के क्षेत्र मे एव चारित्र के क्षेत्र मे आचार्य-प्रवर का अत्यन्त दृढता पूर्वक योगदान रहा है जो हमारे चतुर्विध सघ की प्रभावना का मूल आधार है।

इसी प्रसग पर अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर अपने कार्यकाल के २५ वर्ष सम्पन्न करने जा रहा है इसके लिए हार्दिक बधाई! मैं आशा करता हू कि सघ भविष्य मे भी गतिशील और क्रियाशील बनकर चतुर्विध संघ और जैन शासन की प्रभावना मे अपना योगदान देता रहेगा।

—डालू मोदी बाजार, रतलाम (म प्र)

अगणित वन्दन करता हूं

△ सुन्दरलाल ताते़

शांत क्रांति के जन्मदाता श्रमण-संस्कृति पर अडिग रहने वाले स्वर्गीय आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. के उत्तराधिकारी, धर्मपाल प्रतिबोधक, समता विभूति आचार्य श्री १००८ श्री नानालाल जी म.सा को आचार्य पद प्राप्ति का २५ वा वर्ष चल रहा है। आपके उपदेशो से आत्मबोध प्राप्त करके करीबन २२५ भाई-बहिन इस भौतिकता की चकाचौध से दूर हटकर श्रमण-संस्कृति के मार्ग पर अग्रसर होकर आत्म उत्थान करने में लगे हुए है।

मालवा क्षेत्र मे बलाई जाति के भाई जो पुराने सस्कारो से मदिरा आदि का सेवन करते थे, वे भी आपके सद्उपदेशो से प्रभावित होकर मास-मदिरा का त्याग करके अपने जीवन को ऊचा उठाने मे तत्पर होकर धर्मपाल जैनो के नाम से अपने को सबोधित करने लगे हैं। मदिरा आदि का त्याग करने के बाद आर्थिक परिस्थिति से भी वे सक्षम बने है।

श्रद्धेय आचार्य-प्रवर का जीवन समता सिद्धान्त से ओत-प्रोत है। आप सात्विक पुरुषो से मैत्री, गुणीजनो के प्रति प्रमोद भाव, विपरीत वृति वालो पर मध्यस्थ भाव रखते हैं। आपके जो भी व्यक्ति सपर्क मे आया है, वह खुद अनुभव कर सकता है।

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ आचार्य भगवन् के आचार्य पद प्राप्ति के २५ वे वर्ष के उपल[illegible] मे रजत-जयन्ती वर्ष मना रहा है।

अब हमे सोचना है कि इन पच्चीस वर्षो [illegible] आचार्य श्री जी म सा ने आत्मिक उत्थान के लि[illegible] उद्बोधन दिया, उसको हमने अपने जीवन मे कित[illegible] ग्रहण किया है? सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र [illegible] अभिवृद्धि करने मे कितना सहयोग दिया है? अ[illegible] स्वधर्मी बन्धुओ के साथ सहयोग करके उनके जी[illegible] मे कितना प्रेम संचार किया है? समाज मे आई [illegible] कुरीतियो को हटाने मे क्या कार्य किया है? अ[illegible] सघ को दृढ से दृढतर बनाने मे हमारा क्या चिन्तन [illegible]

प्रत्येक व्यक्ति अपने आप मे इसका चि[illegible] करावे। रजत-जयन्ती वर्ष के अन्दर ज्ञान, दर्शन, चा[illegible] की अभिवृद्धि करते हुए सेवा कार्य करे जो सब [illegible] हिताय हो।

श्रद्धेय आचार्य भगवन् को शत्-शत् व[illegible] करता हुआ जीवन के अन्दर आई हुई बुराइयो को [illegible] करने में सक्षम बनू, इसी भावना के साथ—

> ओ श्रुत का सच्चा बोध देने वाले नानेश
> ओ प्राणी की नव सर्जना करने वाले नाने[illegible]
> अनगणित वन्दन मै करता हूं तुमको—
> ओ नाना जीवों के अभयंकर नानेश !

—दस्सानियो का चौक, बीका[illegible]

श्रद्धा को श्रद्धा से देखें

● जयचन्दलाल सुखानी

कुछ भी कहने से पूर्व यह बतला देना चाहता हू कि जहां श्रद्धा का विषय होता है, वहा तर्क काम नही करता क्योकि तर्क वह दुधारी तलवार है, जिसका वार दोनो तरफ होता है । तर्क सत्य को असत्य, असत्य को सत्य कर सकता है । अत मेरी अभि-व्यक्ति आत्मा की अभिव्यक्ति है, उसे श्रद्धा की दृष्टि से ही देखा जाय तो ही उपयुक्त होगा । मैंने जो कुछ सुना, देखा, अनुभव किया वह प्रस्तुत है, श्रद्धालुओ के लिए ।

विश्व के महान् आध्यात्मिक चिकित्सक, विषमता से समता की ओर लाने वाले, आज के मानवो को तनाव से मुक्ति देने वाले, समीक्षण ध्यान-योगी, विद्वद् शिरोमणि, प्रातः स्मरणीय १००८ श्री आचार्य प्रवर श्री नानालालजी म सा के सयमीय जीवन मे वह चुम्बकीय आकर्षण है कि जो भी अजनवी एक वार उनके दर्शन कर लेता है, वह उनके विराट् व्यक्तित्व से प्रभावित हुए विना नही रह सकता । आज से करीव वीस वर्ष पहले जव आचार्य प्रवर का वर्षावास मन्दसौर मे था, तव मैंने पहली वार वीकानेर से जाकर दर्शन किये थे । दर्शन करते ही मन मे एक अजीव शान्ति की अनुभूति हुई । सोचा कहा भटक गया था मै इतने वर्षो तक, अव तक ऐसे महापुरुषो का दर्शन नही कर सका । खैर·······देर से सही, पर सही रास्ता मिल गया । दर्शन-प्रवचन एव सत्सा-न्निध्य को पाकर मेरी श्रद्धा प्रगाढ वन गई । मंदसौर चातुर्मास के वाद तो मुझे आचार्य प्रवर एव आपश्री के आज्ञानुवर्ती सन्त-महासतियाजी के निरन्तर दर्शन होते रहे है । मै आचार्य प्रवर के साथ आपश्री के आज्ञानुवर्ती सन्त महापुरुष एव महासतियाजी के विशुद्ध जीवन से खूव प्रभावित हुआ हू । उन सभी घटनाओ को लिखने वैठू, जिन्होने मेरे जीवन को छुआ है तो लेखन पूरा ही न हो, अत कुछेक घटनाओ को प्रस्तुत कर रहा हू ।

(१)

एक घटना तो स्व स्थविर पद विभूषित, प्रखर स्मरण शक्ति के धनी श्री घनराजजी म सा के जीवन से सम्वन्धित है । मैं वर्षो पूर्व जव वे कपासन विराज-मान थे, तो दर्शनार्थ गया था । मैंने उनके प्रथम वार ही दर्शन किये थे । उन्हे आखो से दिखाई नही देता था । जव मैंने 'मत्थएण वन्दामि' के उच्चारण के साथ उन्हे वन्दना की तो वे तुरन्त वोले तुम वागमलजी सुखानी के पडपोते हो क्या ? यह सुनते ही मैं आश्चर्य मे पड गया क्योकि म सा ने यह कैसे जान लिया कि मै उनका पडपोता हू । मैंने पूछा उनसे, तो वे वोले भाई तुम्हारी आवाज और तुम्हारे पड-दादाजी की आवाज करीव एक समान-सी लगी । इस समान स्वर के कारण, मैंने तुम्हे अनुमान से पहचान लिया । मुझे सुखद आश्चर्य हुआ कि म सा की स्मरण शक्ति कितनी गजव की है ? किस प्रकार से गहरा स्वर-विज्ञान है इन्हे, जैसा कि आज के वडे-वडे स्वर वैज्ञानिक भी नहीं रख पाते हैं । ऐसी घटना मेरे साथ नहीं, अनेक के साथ घटी थी । मैं उनकी तपस्या, साधना एव स्मरण शक्ति देख कर नतमस्तक हो गया ।

(२)

जव से मैं आचार्य प्रवर के सम्पर्क मे आया हूं करीव तव मे ही मेरी मुमुक्षु भाई-वहिन की दीक्षा की दलाली अर्थात् उनके माता-पिता को समझाकर दीक्षा हेतु आज्ञा कराने की प्रवृत्ति रही है, इस कारण मेरा वहुत से परिवारो से अच्छा परिचय रहा है ।

इसी क्रम में मुझे सोमोलाय की दीक्षा का प्रसंग विशेष रूप से याद आ रहा है। सोमोलाय से ब्यावर निवासी श्री मागीलाल जी मेहता के सुपुत्र ज्ञानचन्द एव सुपुत्री ललिता एवं उदयपुर निवासी गुलाबचन्द जी नागनोत की सुपुत्री क्रम रजना-अजना की दीक्षा होने जा रही थी। जेठ सुदी पचमी का दिन था, हजारो लोग उस छोटे से गाव मे दीक्षा देखने हेतु उपस्थित थे। उस समय प्रकृति का वातावरण ऐसा था कि आकाश मे घटाटोप बादल छाए हुए थे। अब वर्षा हो, अब वर्षा हो, ऐसा लग रहा था। सभी के दिल मे हल-चल थी कि यदि वर्षा चालू हो गई तो श्रद्धेय आचार्य प्रवर दीक्षा-स्थल पर पहुच नही पायेंगे। ऐसी स्थिति मे या तो आज दीक्षा नही होगी या फिर मुमुक्षुओ को धर्म स्थान मे जाकर दीक्षा लेनी होगी।

इधर तो ऐसी परिस्थिति थी और उधर मुमुक्षुओ का मुण्डन कार्य चल रहा था। बालो का मुण्डन हो जाने के बाद परम्परानुसार माथे पर चन्दन के तेल का विलेपन किया जाता है, तदनुसार उन की माताजी सौरभ बाई ने चन्दन की शीशी निकाली, पर भूल से उसके स्थान पर अमृतधारा की शीशी निकल गई। जल्दी-जल्दी मे चन्दन के तेल की जगह मस्तिष्क पर, मुख पर अमृतधारा लगा दी गई सो वह तेजी से जलने लगी। समस्या बडी विचित्र बनती जा रही थी। इधर बादल मडराए हुए थे, कभी भी वर्षा हो सकती थी उधर चन्दन तेल की जगह अमृतधारा……। इस पर कर्मठ कार्यकर्ता मन्त्री श्री चादमलजी पामेचा ने कहा कि अच्छा सुगुन हुआ है, अमृतधारा का अमृत बरसा है। उधर विशाल जनमेदिनी बेताबी से इन्तजार कर रही थी। यह तो गुरुदेव की महान् पुण्यवानी ही थी कि दीक्षा के समय तक वर्षा नही आई और उधर ज्ञानचन्दजी की वेदना भी शात हो गई। ठीक समय पर सारा कार्य अच्छी तरह सम्पन्न हो गया, उसके तुरन्त बाद ही मूसलाधार वर्षा हुई थी।

(३)

राजगेर की एक बात याद आ रही है जब आचार्य भगवन् के साथ हम लोग भी हॉस्पीटल मे थे। श्रीमान् मोठा साहब को दर्शन देने आचार्य भगवन् पधारे हुए थे। सहसा मे लगा किसी देव ने तिक्खुत्तो के पाठ से उनकी वन्दना की। शब्द इतने स्पष्ट थे कि ऐसे शब्द कभी सुनने मे नही आए। कान को उस समय बड़ा ही आनन्द आ रहा था आखिर देव जो वन्दना करेगा तो वह आवाज प्यारी ही होगी।

(४)

एक बार घोर तपस्वी श्री प्रमोद मुनिजी म सा के घबराहट हो रही थी, उस दिन उनके पारणा था। मुनिश्री तपस्या अधिक करते हैं। शाम का समय था मुनिश्री को बिल्कुल चैन नही था। पेट फूल गया था। कभी दस्त की शका होती तो कभी उल्टी की। धायमाता पद विभूषित, कर्मठ सेवाभावी इन्द्रचन्दजी म सा उनकी सेवा मे लगे हुए थे। शाम होने के कारण डॉ का भी अवसर नही था। आखिर उनको भारी मात्रा मे उल्टी हुई और उसमे इतनी गध थी कि पास मे कोई खडा नही रह सकता था। धन्य है ऐसे मुनिराज को जिन्होने अग्लान भाव से साफ कर सेवा का आदर्श उपस्थित किया। इसको देख कर शास्त्र मे वर्णित नदीषेण अणगार की स्मृति उभर आती है।

मै क्या-२ लिखू आचार्य प्रवर के शासन समुद्र के लिए। जिनकी दिव्य मणियो की व्याख्या करना मेरे वश का काम नही। आपश्री का जीवन निश्चित रूप से इस युग मे अलौकिक एव दुर्लभ है। आप प्रभु महावीर के सच्चे अनुयायी, उत्तराधिकारी है। आपके सान्निध्य मे विचरण करने वाले सन्त-सतीवर्ग भी तप-सयम की आराधना करके जीवन को समुज्ज्वल बना रहे है।

—पुंजाणी डागो की पिरोल, बीकानेर

समता-सागर आचार्य श्री

(गुजराती से अनूदित)

△ बृजलाल कपूरचद गाधी
अध्यक्ष-घाटकोपर संघ

वाल ब्रह्मचारी पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा के विनीत प्रशिष्य वाल ब्रह्मचारी पूज्य आचार्य श्री नानालालजी म सा की प्रशसा मैंने खूब सुनी थी कि वे हमारी मौलिक स्थानकवासी मस्कृति के दृढ समर्थक हैं एव उनके पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. श्रमण सघ के वरिष्ठ पदाधिकारी (उपाचार्य) होते हुए भी उससे पृथक हो गये । ऐसी वातो से उनके दर्शन एव श्रवण की तीव्र अभिलाषा के साथ अवसर मिलने पर चातुर्मास कराने की प्रवल इच्छा मेरे हृदय मे उत्पन्न हुई ।

पूज्य मिश्रीमलजी म सा मधुकर को युवाचार्य की चादर समर्पित करने का महोत्सव जोधपुर मे था। वहा जाते समय रास्ते मे पूज्य आचार्य श्री नानालालजी म सा पाली मे विराजमान थे। मैं वहा उनके दर्शनार्थ गया। वहा रात्रि मे अनेक श्रावको को पूज्य आचार्य श्री के साथ ज्ञानचर्चा करते मैने देखा। इस ज्ञान चर्चा की समाप्ति के वाद मैंने पूज्य श्री से वार्तालाप हेतु थोडा समय प्रदान करने की विनती की । कुछ समय तक कान्फरेन्स के सम्वन्ध मे वार्तालाप करने के वाद मैंने पूज्य श्री को वम्वई पधारने की विनती की एव निवेदन किया कि साठ वर्ष पूर्व आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा ने घाटकोपर मे चातुर्मास किया था। उनके प्रवचनो की नयमीय प्रेरणा से कत्लखाने मे जाते हुए पशुओ को वचाकर उनके सरक्षण हेतु पिजरापोल जैसी महान् पवित्र सस्था की स्थापना की जो आज तक चल रही है ।

मेरी विनती अर्थात् घाटकोपर सघ की विनती समझ कर पूज्य गुरुदेव ने वडी शाति से सुनी। तत्पश्चात् हमारे सौभाग्य से पूज्य गुरुदेव के सवत् २०३६ मे अहमदावाद चातुर्मासार्थ विराजने पर वहा जाकर हमने पुन घाटकोपर चातुर्मास हेतु विनती की । पूज्य श्री ने परम्परानुसार अपनी झोली मे विनती को सुरक्षित रखने का कहा एव वताया कि फिलहाल यदि वडौदा की तरफ विहार सभावित हुआ तो वम्वई का योग वनने की सभावना है अन्यथा नही । पूज्य श्री का भावनगर चातुर्मास हुआ तत्पश्चात् धर्मप्रेमी श्री चुन्नीलालजी मेहता के प्रयत्नो से वम्वई पधारे एव वोरीवली मे चातुर्मास हुआ। तदनन्तर सवत् २०४१ मे घाटकोपर निश्चित हुआ।

सवत् २०४१ का घाटकोपर चातुर्मास खूब तप-त्याग एव ठाठ से सम्पन्न हुआ । घाटकोपर मे प्रतिक्रमण माइक पर करना पडता था कारण कि लगभग सात-आठ हजार भाई सावत्सरिक प्रतिक्रमण करने आते हैं । वे सव शान्तिपूर्वक सुन सके तदर्थ माइक का उपयोग किया जाता था किन्तु पूज्य श्री के प्रयास से पृथक पृथक हॉल मे पृथक-पृथक वक्ता के साथ एक मुनि श्री जी के रहते प्रतिक्रमण हुआ फलत अत्यन्त शान्ति पूर्वक प्रतिक्रमण हुआ एव माइक की व्याधि से मुक्त हो गये । पर्युषण मे तीन स्थान पर व्याख्यान आयोजित करने से सभी श्रावक शान्ति से व्याख्यान श्रवण करते थे ।

पूज्य श्री के निश्चितरूपेण समता सागर होने के कारण आपके शिष्य भी ज्ञान, ध्यान एवं तप मे एक से एक बढ़कर सवाये हैं, अत्यन्त विनयी एवं व्यवहार कुशल हैं ।

हमारे यहा पूज्य श्री शरीर के कारण लगभग सात माह विराजे किन्तु ये माह किस तरह व्यतीत हो गये, यह हमको पता ही नही लगा । अब तो यही इच्छा होती है कि पूज्य श्री वापस कब शीघ्र पधारे ।

घाटकोपर चातुर्मास के समय एक साथ छ मुमुक्षुओ का दीक्षा महोत्सव तथा श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ का सम्मेलन आयोजित करने का अवसर श्री चुन्नीलाल भाई मेहता ने प्रस्तुत किया एव एक माह तक दर्शनार्थ आने वाले स्वधर्मी भाइयो के भोजन का लाभ श्री उत्तमचन्द भाई ने लिया । इस प्रकार पर आनन्दपूर्वक घाटकोपर संघ का चातुर्मास सम्पन्न हु

समता विभूति पूज्य आचार्य श्री नानालालजी सा. ज्ञान-ध्यान मे अग्रणी एव सौम्य स्वभाव के हैं विशिष्ट शिष्य मडली से आवृत है । दर्शनार्थ आने श्रावक भी अत्यन्त धर्मप्रेमी हैं । श्रद्धेय आचार्य का पुण्य इतना प्रबल है कि उनका शिष्य समु अत्यन्त ज्ञानवान, विनयी एव क्रियापालक है । युग मे इस प्रकार का शिष्य समुदाय भाग्य से ि के पास है । पूज्य आचार्य श्री पूर्ण स्वस्थ रहते दीर्घायु हो, समाज को खूब लाभ प्रदान करें, यही मेरी हार्दिक शुभ कामना है ।

—भारत टेक्सटोरियम, सायन सर्कल बम्बई

—००—

"पुरिसा ! तुमंसि नाम सच्चेव जं हंतव्वति मन्नसि" पुरुष जिसे तू मारना चाहता है वह तू ही है । वध्य (मरनेवाला) और वधक (मारने वाला) दो नही है । जो वधक है, वही वध्य है । जिसे परितप्त करना चाहता है, उपद्रुत करना चाहता है जिसे दास या नौकर बनाना चाहता है, वह भी अन्य कोई नही । वस्तुतः वह तू ही है । "सव्वेसिं जीविय पिय नाइवइज्ज किंचण" सब को ही जीवन प्रिय है, अतः किसी का भी अनिपात (हिसा) न करो ।

प्राण–वियोजन करना तो हिंसा है ही पर किसी के प्रति दुश्चिन्तन करना भी हिंसा है । अहिंसक का मन सर्वथा पवित्र रहना चाहिये । उसमें उभरने वाले प्रति-क्षण के विचार उदात्त तथा उन्नत होने चाहिये । प्रतिशोध, उत्तेजना, अह, छद्म, आसक्ति, किसी को हीन समझना, स्वयं को उच्च समझना आदि भी हिंसा के ही सूक्ष्म रूप है । किसी के प्रति अनादर व्यक्त करना, असभ्य शब्दो का प्रयोग करना, उपहास करना, निन्दा करना, एक दूसरे के मन मे घृणा के भाव उत्पन्न करना, डाटना, विरोधी वातावरण उभारना, किसी जाति, समाज या सम्प्रदाय को अन्य जाति समाज या सम्प्रदाय के विरुद्ध भडकाना आदि वाचिक हिंसा के नाना सूक्ष्म रूप है ।

चाटा मारना, उदन्डता करना, अभद्र व्यवहार करना, अशिष्टता बरतना, उछल-कूद मचाना आदि कायिक हिंसा के नाना सूक्ष्म रूप है । अहिसक व्यक्ति उपरोक्त सभी प्रकार से स्वय को मुक्त रखता है । वह मन, वाणी तथा काया से सर्वथा पवित्र रहता है ।

आचार्य श्री नानेश और समीक्षण ध्यान

△ मगनलाल मेहता

धर्म की प्रारंभिक भूमिका :

धर्म क्या है, और धर्म का पालन कैसे किया जाता है ? ईश्वर है या नही ? यदि ईश्वर है तो वह कहा है और क्या करता है ? आत्मा है या नही और उसे कैसे देखा जा सकता है ? ऐसे अनेक प्रश्न हैं जो अध्यात्म और धर्म के प्रति जिज्ञासु मनुष्य के मन मे सदैव-से उठते रहे है । इन्ही प्रश्नो और उनके समाधान की दिशा मे प्रत्येक धर्म की धुरी घूम रही है।

जैन धर्म ने इन प्रश्नो के बहुत संक्षिप्त उत्तर दिये हैं जैसे "वस्तु का स्वभाव ही धर्म है", "आत्मा ही परमात्मा है", आदि । परन्तु इन प्रश्नो को समझाने के लिये और उनका समुचित समाधान देने के लिये शास्त्रो मे बहुत ही विस्तृत व्याख्या उपलब्ध है। प्रमुख रूप से जैन धर्म की धुरी कर्म सिद्धान्त पर आधारित है । जो भी प्राणी जैसे कर्म करेगा, उसे उसी के अनुसार फल की प्राप्ति होगी और जब आत्मा पूर्णरूप से कर्म मुक्त हो जावेगी तो वही आत्मा परमात्मा हो जावेगी । प्रत्येक आत्मा मे यह शक्ति विद्यमान है कि वह अपने कर्मो का पूर्ण क्षय कर परमात्मा बन सकती है ।

कर्म क्या है ?

ससार का प्रत्येक प्राणी सुख का अभिलाषी है और इसी सुख की प्राप्ति के लिये हमारे जीवन के प्रतिक्षण की दौड-धूप हो रही है । फिर भी क्या किसी को स्थाई सुख की प्राप्ति हुई है अथवा क्या हमारी ये क्रियाए हमे सुख प्रदान कर सकती हैं ? गहराई से विचार करेगे तो इसका एक ही उत्तर होगा कि कदापि नही । हमारा प्रत्येक सुख केवल सुखाभास है, जिसके प्राप्त होते ही हमारे मन मे दूसरे सुख की अभिलाषा जागृत हो जाती है और उस प्राप्त सुख के प्रति असतोष हो जाता है । अतृप्ति बढती ही जाती है । इस तरह सुख की प्राप्ति के प्रयासो मे हम नित नये कर्मो का बध करते जाते है और जिस स्थाई सुख को हम प्राप्त करना चाहते है उससे दूर होते चले जा रहे है ।

आश्चर्य और चिंता इस बात की है कि जिस शरीर की प्राप्ति हमने आत्मा के पोषण और मुक्ति के लिये की है उसी शरीर का उपयोग हम आत्मा को कलुषित और कर्म-मल से आच्छादित करने के लिये कर रहे है । वह भी जानते हुए, अनजाने मे नही । हम धर्म की अनेक क्रियाए करते हुए भी धर्म से दूर होते चले जा रहे हैं, इसका कारण क्या है ? इस पर हमे गभीरतापूर्वक विचार करना, होगा । अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह रूपी सद्‌गुणो को ग्रहण करने और राग द्वेष जनित क्रोध, मान, माया, लोभ रूपी कषायो को दूर करने के लिये हम हमारी सारी धार्मिक क्रियाए करते है । फिर भी न तो सद्‌गुणो की प्राप्ति होती है और न ही कषाय छूटते हैं । इसका सबसे बडा कारण यह है कि हमने हमारी प्रत्येक धार्मिक क्रिया को रूढिग्रस्त बना लिया है।

हमारी क्रियाएं प्रतिदिन माला के मनको को फेरा लेना, मुख वस्त्रिका बाधकर सामायिक लेकर बैठ जाना, सध्या को प्रतिक्रमण की पाटिया दोहरा लेना अथवा मूर्ति पर जाकर केशर, चदन, फूल चढा देना, तीर्थयात्रा कर आना, पूजा-प्रतिष्ठा करवा देना

तक ही सीमित रह गई है। प्रारंभ मे इनमे से प्रत्येक क्रिया के पीछे एक निश्चित उद्देश्य और आदर्श रहा होगा, परन्तु आज हमने केवल जड क्रियाओ को पकड लिया है, आदर्श को भूल गये है। इसके साथ ही हम हमारी इन धार्मिक क्रियाओ को भी किसी न किसी प्रकार के सांसारिक सुख की प्राप्ति का माध्यम बना लेने मे लगे हुए है और धर्म को भी एक प्रदर्शन की वस्तु बना दिया है। यह धर्म की सबसे बडी विडम्बना है।

धार्मिक क्रियाओ को करते समय क्या हमारे मन को एकाग्र कर हम उन वीतराग प्रभु के गुणो को हमारे मे उतारने का तनिक भी प्रयास करते है? सामायिक तो कर लेते हैं पर मन की एकाग्रता और समभाव की उपलब्धि नही हो पाती, प्रतिक्रमण मे हम किये गये पापो की आलोचना करके फिर वही पाप किये चले जाते है। इसका कारण क्या है? यही कि हमने इन क्रियाओ की उपयोगिता को समझा नही है और केवल मशीन की तरह ये सब कार्य करते रहते हैं।

कर्मो का बध और क्षय :

स्पर्श, रस, गन्ध, रूप और शब्द ये पाच विषय है और इनको ग्रहण करने वाली क्रमश पाच इन्द्रिया है। मन इन पाचो विषयो का ग्रहण करने वाला और इनका प्रवर्तक है इसलिये मन सबसे शक्तिशाली इन्द्रिय है। कामनाओ का उत्स है मोह। ज्यो-ज्यो मोह क्षीण होता है, कामनाए क्षीण होती जाती है। विषयो के प्रति मनोज्ञता या अमनोज्ञता, पदार्थो मे नही, मन की आसक्ति मे निहित है। जब तक शरीर है तब तक इन्द्रियो के विषयो को रोका नही जा सकता। परन्तु विषयो को ग्रहण कर उन पर आसक्ति अथवा राग द्वेष न लाना यह व्यक्ति की साधना पर निर्भर है। इसलिये साधक विषयो को रोकने का प्रयत्न न करे किन्तु मन को इस तरह साधे कि ग्रहण किये गये विषयो के प्रति राग-द्वेष की भावना आये ही नही। अमनोज्ञ विषय द्वेष के बीज है और मनोज्ञ विषय राग के। जो दोनो मे सम रहता है, वही वीतराग कहलाता है।

धर्मशास्त्रो मे मन की विजय को पाचो इ पर विजय प्राप्त कर लेना माना है। इन्द्र ने जब राजर्षि से कहा, "आप अपने शत्रुओ को जीतकर प्रव्रजित हो"। नमि ने कहा, 'बाह्य शत्रुओ को से क्या, जो एक मन को जीत लेता है वह पा इन्द्रियो को जीत लेता है और जो इन्द्रियो को जी लेता है वह पूरे विश्व को जीत लेता है।' शकराचा से पूछा गया, "जित जगत केन", ससार को जीत वाला कौन है? तो उन्होने कहा "मनो हि येन" जिसने मन को जीत लिया है उसने सारे ससार को जीत लिया है।

मोह के द्वारा ही क्रोध, मान, माया लोभ रूप कषायो की उत्पत्ति होती है और इन्ही कषायो पर विजय प्राप्त करना धर्म का ध्येय है। जो साधक कषायरूपी शत्रुओ के साथ युद्ध करना चाहता है उसके लिये ध्यान ही एकमात्र शस्त्र है। सभी धर्मो मे ध्यान की मुक्त कठ से प्रशसा की गई है। मन गतिशील है उसको रोका नही जा सकता किन्तु साधना के द्वारा उसकी गति बदली जा सकती है और इसी का ना है मन पर विजय।

आचार्य श्री नानेश की आज समाज को सबसे बडी देन है, वह यही है कि इन उपरोक्त वर्णि रूढिग्रस्त धार्मिक क्रियाओ से दूर रह कर साधना औ धर्म की आराधना के लिये समीक्षण ध्यान के द्वारा म की एकाग्रता को प्राप्त कर राग-द्वेष जनित कषाय को दूर हटावें। आत्मा को शुभ कर्म की ओर मो और क्रमश कर्म-रहित बन कर सच्चे अर्थो मे सु की प्राप्ति कर आत्मा को परमात्मा बनावे, मुक्ति क और अग्रसर करे।

समीक्षण ध्यान साधना :

समीक्षण ध्यान क्या है? यह ध्यान की वह प्रयोगात्मक विधि है जिसके द्वारा हम मन को एकाग्र

कर दृष्टाभाव जागृत करें और प्रारंभिक भूमिका मे पहले अपने कर्मो को अशुभ से शुभ की ओर मोडे और तत्पश्चात् कर्मरहित होने का प्रयास करे । समीक्षण ध्यान के द्वारा हम आत्मा को निर्मल बनाते हुए कर्मक्षय कैसे कर सकते है इसकी सूक्ष्म विवेचना आचार्य श्री द्वारा प्रस्तुत की गई है ।

साधना विधि :

ध्यान साधना के इच्छुक साधक को सबसे पहले प्रतिदिन का अपना ध्यान का समय निश्चित करना होगा जो कि कम से कम एक घटा होना चाहिये और प्रात सूर्योदय से पूर्व अथवा रात्रि को सोने से पूर्व का । साधना मे बैठने से पूर्व शौचादि से निवृत्त हो, प्रतिदिन का निश्चित स्थान हो, एक दम शान्त और स्वच्छ वातावरण हो । बैठने के लिये आप कोई भी सुविधायुक्त आसन चुन सकते है लेकिन यह अवश्य ध्यान रखें कि ध्यान के समय प्रमाद, आलस्य अथवा निद्रा नही आने पावे । नेत्र बद रखें और यथासभव रीढ की हड्डी सीधी रखें ।

सबसे पहले आप अपने मन को एक दम शान्त, विचार मुक्त करने का प्रयास करे । इसके लिये अपने मन को किसी एक स्थान पर केन्द्रित करे । श्वास एक ऐसी क्रिया है जो हमारे शरीर मे प्रतिक्षण आ जा रही है अत मन केन्द्रित करने का सबसे सरल साधन श्वास क्रिया ही है । मन को नासिका के अग्रभाग पर केन्द्रित कर श्वास का आवागमन देखे, भीतर प्रवेश करते श्वास की ठडी हवा और निकलते श्वास की गर्मी का अनुभव करें ।

श्वास के दूसरे प्रयोग मे पूरक, रेचक और कुम्भक की क्रिया कर सकते है जिसके द्वारा नासिका के एक भाग से श्वास को भीतर लें, कुछ देर भीतर रोके और दूसरी नासिका से उसे बाहर निकाले । इसी क्रिया को कुछ समय के लिये उलट तरीके से भी कर सकते हैं । श्वास ग्रहण करने को पूरक, बाहर छोडने को रेचक और भीतर रोकने को कुम्भक कहते है । तीनो का समय करीब-करीब बराबर हो, यह ध्यान रखें । कुछ देर इस क्रिया के साथ मन की एकाग्रता करने के बाद मन की यह धारणा भी प्रारभ कर सकते है कि श्वास की प्रत्येक पूरक क्रिया के साथ बाहरी वायुमडल मे व्याप्त अहिंसा, सत्य अचौर्य अकाम और अनासक्त आदि के शुभ पुद्गल मेरे शरीर मे प्रवेश कर रहे है और रेचक की प्रत्येक क्रिया के साथ मेरे शरीर मे व्याप्त क्रोध, अहकार, छलकपट और लोभ तथा राग-द्वेष के अशुभ पुद्गल बाहर निकल रहे हैं ।

श्वास की तीसरी क्रिया के रूप मे हम गहरी सास भीतर ले और यह अनुभव करे कि श्वास सीधा मेरे शरीर मे स्थित विभिन्न शक्ति-केन्द्रो पर बारी-बारी से जा रहा है । मस्तक के शिखा भाग पर ज्ञान केन्द्र, तलवे के स्थान पर शाति केन्द्र, ललाट के अग्रभाग पर ज्योति केन्द्र, हृदय के मध्य शक्ति केन्द्र स्थित है । यह अनुभव करें कि जिस केन्द्र पर श्वास केन्द्रित है वहा से ज्ञान, शान्ति, ज्योति, शक्ति आदि की किरणे प्रस्फुटित होकर मेरे पूरे शरीर मे व्याप्त हो रही है । इससे एक नये शक्ति स्रोत का अनुभव हमे होगा ।

श्वास की चौथी क्रिया के रूप मे हम हमारे कठ से अर्हम् शब्द का उच्चारण प्रत्येक श्वास के साथ करे और अनुभव करे कि अरिहत के गुणो का मुझमे समावेश हो रहा है । शब्द उच्चारण का तात्पर्य आवाज करने से बिल्कुल नही है केवल मन मे ही चिंतन चलता रहे ।

श्वास की उपर्युक्त वर्णित क्रियाओ का मूल उद्देश्य केवल यह है कि हम बाहरी वातावरण और यहा तक कि हमारे शरीर से भी हमारे मन को एकदम हटाकर एकाग्रता प्राप्त करें और दृष्टाभाव को जागृत करें । यह आवश्यक नही कि प्रत्येक क्रिया को हम प्रतिदिन करें । जिस भी क्रिया से हमे ध्यान केन्द्रित करने मे सुविधा हो उस एक या दो क्रिया को ही करना पर्याप्त होगा । श्वास की इन क्रियाओ मे हमारा मन एकदम शान्त हो जायेगा और बाहरी वातावरण मे

बिल्कुल हट जावेगा ।

समयानुसार पन्द्रह मिनट से आधा घंटा उपरोक्त क्रिया करने के पश्चात् जब मन पूर्ण शांत हो जावे तो हम समीक्षण मे उतरने का प्रयास करे। समीक्षण से तात्पर्य है हमारे स्वय के कृत्यो की समीक्षा । हमने पिछले पूरे दिन मे क्या-२ कार्य किया, कैसा-कैसा हमारा व्यवहार रहा, इस की समीक्षा हम प्रातः उठने से लेकर रात्रि विश्राम तक की पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के समय को ध्यान मे लेते हुए करें । यदि हमारा चित्त एकदम शात होगा तो दिन भर की पूरी घटनाए सिनेमा की तस्वीर की तरह हमारे दिमाग मे घूम जावेगी । दिन भर मे कब-कब मैने क्रोध किया, बच्चो को अथवा पति-पत्नी को प्रताड़ित किया, कब-कब मेरे मन मे अहकार की भावनाए पैदा हुई, कब मैंने किसी दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयास किया, किसी दरिद्र, गरीब, अथवा मद बुद्धि को देखकर मेरे मन मे उसके प्रति हीन भावना उत्पन्न हुई । व्यवसाय मे मैंने ग्राहको को ठगने का अथवा छलकपट करने का प्रयास किया, वस्तुओ मे भेल–सभेल, हल्की–ऊंची बताने का प्रयास किया । लोभवश ठगने का अथवा झूठ–सच कर अनैतिक पैसा कमाने का प्रयास किया । अत्यन्त मोहवश गाढ कर्मों का बधन किया अथवा द्वेष वश क्रोध एव घृणा का वातावरण बनाया । इन समस्त घटनाओ को हम दृष्टाभाव से देखेंगे तो हमारे मन मे अशरण और अनित्यता की भावना जागृत होगी और धीरे–धीरे हमे अनुभव होने लगेगा कि इस तरह हम अपने जीवन को गहरे गर्त मे डाल रहे हैं और गाढे कर्मों का बधन कर रहे है। जैसे ही यह अनुभव होगा–हमारी विचारधारा मे एकदम परिवर्तन प्रारभ होने लगेगा और इन कुकृत्यो के प्रति हमारे मन मे ग्लानि पैदा होगी और प्रत्येक ऐसा कृत्य करते समय हमारा मन कहेगा कि हमे यह नहीं करना है और साधक का जीवन व्यवहार अपने आप बदलने लगेगा । प्रत्येक कषाय की वृत्ति के साथ उससे उत्पन्न होने वाले दोष हमे दृष्टिगोचर होने लगेंगे । कषाय की वृत्ति के साथ हम हमारे दैनिक जीवन में किये गये सत्कार्यों की भी स्मृति करे । कब-२ हमा मन मे प्रेम, करुणा दया की भावना जागृत हु निस्वार्थ भाव से मैंने किसी दीन-दुखी की सेवा की व्यवहार मे सच्चाई और ईमानदारी का कृत्य कि आदि आदि । इन सद्गुणो को हम पुष्ट करने प्रयास करें ।

दैनिक जीवन व्यवहार की समीक्षा के बाद अपने आपको बहुत शान्त और हल्का मह करेंगे और हमें लगेगा कि हमारी आत्मा का निर्मल स्वरूप हमारे सामने प्रकट होने लगा है । तरह कुछ देर तक आत्मा के शुद्ध स्वरूप का करने के बाद हम अपने मन से अरिहत, सिद्ध, और धर्म की शरण ग्रहण करे । बहुत ही मद स्वर

अरिहंते शरणम् पवज्जामि,
सिद्धे शरणम् पवज्जामि,
साधु शरणम् पवज्जामि,

केवली पणतं धम्मं शरण पवज्जामि का वार उच्चारण करें । इस तरह प्रभु और धर्म शरण ग्रहण करने के पश्चात् शान्तभाव से मन मे ससार के प्रत्येक प्राणी के प्रति मैत्री और करुणा की भावना लेकर, जीवन मे सत्य, अकाम व अलोभ की शुभ भावनाओ को लेते हुए अपने नेत्र धीरे–धीरे खोलें, प्रभु और सद्गुरु को नमस्कार करे और ईमानदारी से अपने दैनिक जीवन व्यवहार मे प्रवेश करें ।

प्रतिदिन की नियमित साधना के पश्चात् थोड़े ही दिनो मे अनुभव करेगे कि जीवन व्यवहार ही बदल गया है ।

—चांदनी चौक, रतलाम

हमारे प्रेरणा श्रोत

□ केशरीचंद सेठिया

भारतवर्ष की वीर भूमि मेवाड मे जहा महाराणा प्रताप और सागा जैसे शूरवीर रण बाकुरे वीर रत्न हुए, वहा महायोगी, मनीषी श्री गणेशाचार्य और वर्तमान मे युग प्रधान आचार्य श्री नानेश जैसे महान् संत हुए है। दाता ग्राम के पोखरना कुल मे २० मई सन् १९२० को आपका जन्म हुआ। ग्राम्य जीवन मे सीमित साधनो के कारण व्यावहारिक शिक्षा अधिक नही मिल सकी। महापुरुष स्कूली किताबो के मोहताज भी नही होते।

पूज्य हुक्मीचन्दजी म. सा की सप्रदाय मे श्रीमद्जवाहराचार्य के उत्तराधिकारी युवाचार्य शात क्राति के अग्रदूत श्री गणेशीलालजी म सा. से आप दीक्षित हुए और शास्त्रो का गहन अध्ययन गुरु चरणो मे किया। आपकी अद्वितीय प्रतिभा को देखकर मेवाड की राजधानी उदयपुर मे आश्विन शुक्ला द्वितीया स २०१९ को चादर प्रदान कर उत्तराधिकारी के रूप मे युवाचार्य घोषित किया।

इस सप्रदाय के इतिहास मे यह एक स्वर्णिम दिन था। इसी दिन श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ की भी स्थापना हुई।

यह एक सयोग की बात है कि इसी वीरभूमि मे सन् १९६३ दि ११ जनवरी को इस महान् सप्रदाय के आप आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। आप पर चतुर्विध सघ का गुरुतर दायित्व आ गया। श्रमण भगवान महावीर की वाणी को आपने घर-घर पहुचाने के साथ-साथ अपनी गुरु परम्परा के अनुरूप शिक्षा-दीक्षा और प्रायश्चित एक ही आचार्य की नेश्राय मे होने की घोषणा की। विशाल शिष्य, शिष्याओ को महावीर के शासन मे दीक्षित कर स्थानकवासी जैन इतिहास मे एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। शिष्य, शिष्याओ द्वारा परस्पर अध्ययन-अध्यापन मे एक दूसरे के सहयोगी बनाकर शिक्षको के अभाव की पूर्ति की। मर्यादामय साधु जीवन एवं अनुशासन के प्रति आप जागरुक ही नही कठोर भी है। आपके शासन मे शिथिलाचार और सयमित जीवन के प्रति लापरवाही को स्थान नही।

मेरा अहोभाग्य है कि अनेक महापुरुषो के सानिध्य का सुअवसर मुझे प्राप्त होता रहा। वर्तमान आचार्य को आचार्य पद शोभित करने के कई वर्षो पश्चात् देशनोक मे दर्शन, श्रवण का अवसर मिला। (बीकानेर और देशनोक के बीच उदयरामसर पडता है) जहा चारो ओर रेतीले टीले ही टीले नजर आते है। मरुस्थल के इस रेतीले क्षेत्र मे जब अधड आता है तो यह पता लगाना मुश्किल है कि कौन टीला कहा था। यही मेरे साथ हुआ—रेतीले धोरे अंधड के रूप मे स्थानान्तरित होने लगे। बडी मुश्किल से देशनोक पहुंच सका। मन मे कल्पना उठी कि लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये कठिन से कठिन परीक्षा से तो गुजरना ही पड़ता है। सभवत यही कारण है कि बडे-बडे तीर्थ स्थान पहाडो के दुर्गम मार्ग को चीर कर ऊंची-ऊंची चोटी पर बने हैं।

मैं जब पहुचा तो धर्म सभा चल रही थी। दूर से देखा तो ठगा-सा रह गया। नेत्रो पर विश्वास नही हुआ। कही मैं पूर्वाचार्य स्वर्गीय श्री गणेशीलाल

जो म सा के दर्शन तो नही कर रहा। वही रंग-रूप, वही दैहिक सपदा, वही तेजस्वी शांत मूर्ति। गुरु के पद चिन्हो पर चलने वाले तो अनेक शिष्य देखे किन्तु इतना वडा एकाकार रूप हो जाना एक अलौकिक चमत्कार-सा लगा।

इसके वाद तो अनेक वार आपके दर्शन, श्रवण और सान्निध्य से लाभान्वित हुआ। उनके जीवन की खुली किताव को पढा। निर्लिप्त, कीर्ति से परे, अनुशासन एव सिद्धान्तो पर अडिग, आत्मसात् करने वाली वाणी के साथ-२ एक तेज, एक आभा, एक प्रकाश/ज्योति का वलय आपके मुखमडल पर सदैव दृष्टिगत होता है जो प्रत्येक को आकर्षित कर लेता है।

आपने धर्म और अध्यात्म जीवन की विशद व्याख्या की। तनावपूर्ण युग को शाति सदेश के रूप मे समता दर्शन का युगान्तरकारी चिन्तन दिया। इस तनाव पूर्ण युग मे अगर हम अपने जीवन को समतामय बनाले तो जीवन मे सुख और शाति की गगा वहने लगे। अगर आपने समता को धारण कर लिया तो समझ लीजिये आपने सुखी जीवन जीने की कला सीख ली। भीतर और बाहर चारों तरफ शाति ही शान्ति का आपको अनुभव होगा।

आपकी वाणी मे, प्रवचनो मे केवल कोरी विद्वता ही नही वल्कि अन्तर मन से निकली भगवान महावीर की दिव्यवाणी है, जो हृदयग्राही है। यही कारण है कि स्थानकवासी जैन समाज मे आप पहले आचार्य है जिनकी नेश्राय मे सैकडो मुमुक्षु आत्माओ ने प्रव्रज्या ग्रहण की।

आचार्य श्री की पद यात्रा करते आप गुराडिया गाव पधारे। वहा पर बलाई जो अछूत जाति के हैं—ने आपका प्रवचन सुना और प्रवचन के बाद उन्हे लगा यह योगी हमारे लिये कोई मसीहा बनकर आया है। करबद्ध निवेदन किया, भगवन्! आज हमारी जाति के कई लोग ईसाई, मुसलमान तथा अन्य-अन्य धर्मावलम्बी हो रहे है क्योकि हिन्दू हमे अछूत समझते है, हमारा तिरस्कार करते है। आप हमारा उद्धार कीजिये। आचार्य श्री ने फरमाया—महावीर के शासन मे जाति से कोई छोटा-बडा नही, कोई अछूत नही। उच्चकुल मे जन्म लेने मात्र से कोई उच्च नही हो जाता। अपने-अपने कृत कर्मो के अनुसार ही मनुष्य छोट-बडा होता है और आपने उन्हे धर्मपाल जैन से सबोधित करते हुए कहा—आज से तुम इसी नाम से जाने जाओगे। वे व्यसन मुक्त ही नही हुए उन्होने अपने समाज मे पुरखो से चली आ रही कुप्रथाओ को भी त्याग दिया। आज हजारो धर्मपाल जैन सुसस्कारी नागरिक का जीवन जी रहे है।

मानसिक तनाव—मुक्ति के लिये आपने समीक्षण ध्यान एव समीक्षण योग का प्रवर्तन किया। आप जैन आगमो और शास्त्रो के मर्मज्ञ विद्वान और गूढ व्याख्याता होने के साथ-२ प्रवुद्ध विचारक भी है। आपने कई शास्त्रो की टीका करके महान् उपकार किया है।

हम भाग्यशाली है कि ऐसी महान् विभूति के आचार्यत्वकाल के स्वर्णिम २५ वें वर्ष को हमे देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

१४, तुलसिघम स्ट्रीट, मद्रास

अपने गरिमा मंडित शान्त-सौम्य व्यक्तित्व और प्राणीमात्र के प्रति करुणा वेष्ठित सद्भाव से आपने लक्ष-लक्ष जनो को सन्मार्ग की ओर प्रेरित व अनु-प्राणित किया है। राष्ट्रीयता के प्रखर उद्घोषक बन कर आपने समय-समय पर इस देश के नागरिको को कर्त्तव्य पथ का वोध कराया है। आज आपके तप-तेज से दिशाएं दीप्त हो रही है। सूर्य का प्रकाश जैसे घने अंधेरे को चीर कर क्षितिज पर अपनी अरुणिमा फैला देता है, उसी प्रकार शिथिलाचार के तम को निर्जीर्ण कर आपने शुद्धाचार की लाली से अनन्त नभ को रंग दिया है। हे लाल! आज आप भानु के समान चमक रहे हैं। हम इस दिव्य आलोक मे अहिंसा और समतामय समाज की स्थापना हेतु स्व को समर्पित करें, इसी कामना के साथ हमारे श्रद्धा-पूर्ण अशेष वन्दन-अभिवन्दन।

पीपलिया कलां, मारवाड़ (राज०)

मनुष्य के हृदय पर खिड़की

"जहा अन्तो तहा वाहि, जहा वाहि तहाअन्तो" साधक जैसा अन्तरग में होता है वैसा ही बाहिर मे रहे। जैसा वाहिर में हो, वैसा ही अन्तरंग मे रहे। अन्तर और बाह्य के समरूप रहने वाला साधक शीघ्र सफल होता है। मन, वाणी और कर्म की एकरूपता प्रत्येक दिशा मे प्रगति करने के लिये आवश्यक होती है। तीनो का द्वैध किसी भी क्षण व्यक्ति को पछाड़ सकता है।

लोकप्रिय बनने का एक नुस्खा प्रचलित हो गया है कि जो सोचा जा रहा है वह किसी से न कहो। जो कहा जा रहा है, वैसा कभी न करो। करने के लिये सदा ही दूसरो पर भार लादते रहो। पर, इससे मित्रो की संख्या घटती जाती है, समर्थक मूक होने लगते है और प्रभावित उदासीन। जब उसकी कलाई खुलती है, तब मित्र, समर्थक तथा प्रभावित, उतने ही अधिक विरोधी देखे जाते है। आचार्य यदि उस गुर को काम मे लेते है तो उनके शिष्यो की श्रद्धा उनसे उचटती जाती है और एक समय ऐसा आता है कि शिष्यों को आचार्य का नग्न गुरुडम दिखाई देने लगता है।

सबसे अधिक दुर्गम्य मनुष्य ही है। उसके हसने तथा रोने के, बोलने तथा मूक रहने के, इंगित तथा आकार के, चलने तथा बैठने के प्रयोजन भी भिन्न होते है। वह स्वय को ऐसा प्रदर्शित कर देता है कि अन्तर मे, उसका एक अंश भी नही होता। इसलिए कई बार चिन्तन उभरता है, कितना अच्छा होता, मनुष्य के हृदय पर एक खिड़की हो जाती, जिसे खोलकर जाना जा सकता था कि उसके अन्तरंग मे वास्तविकता क्या है?

नई दिशा : नया मोड़

△ फतेहलाल हिंगर

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ का रजत-जयन्ती वर्ष मनाने का प्रसंग उपस्थित है। इस सघ का गठन जिन विशिष्ट परिस्थितियो मे हुआ उनका स्मरण जब होता है तो सहसा सम्बन्धित सभी बिन्दु स्मृति पटल पर उभर कर सामने आ जाते हैं। याद आ जाती है उन ऐतिहासिक क्षणो की, चर्चाओ, घटनाओ की जो इसकी स्थापना मे प्रमुख रही और जिनसे निकट का सम्पर्क होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

२५ वर्ष के अपने यशस्वी काल मे अपनी रीति नीति और उद्देश्यो के अनुरूप अपनी गतिविधियो को आगे बढाते हुए एकता के सूत्र मे समाज को बाधे रखकर आज यह सघ अपनी सुदृढ स्थिति मे पहुचा है और अन्य समाज सेवी सस्थाओ के लिये अपने सुसगठन एव व्यवस्थित सुप्रशासन हेतु अनुकरणीय बना है। गर्व का अनुभव होता है हमे इस सघ की ऐसी स्थिति पर। जो कुछ भी यह सघ आज है वह श्रद्धेय परम पूज्य श्री जवाहराचार्य, शात काति के अग्रदूत श्री गणेशाचार्य एव समता विभूति बाल ब्रह्मचारी श्री नानेशाचार्य जैसे गुरुओ के मार्गदर्शन एव शुभाशीर्वाद का ही परिणाम है। उन्ही की प्रेरणा-स्वरूप यह सघ अबाध गति से आध्यात्मिक, व्यावहारिक आचार, विचार, शिक्षा और ज्ञान के प्रसार-प्रचार, सुसाहित्य सर्जन आदि विविध आयामो को छूते हुए निरन्तर विकासोन्मुख है। पर संघ के प्रारूप को यदि नवीन मोड देना है तो युगानुकूल कार्य सचालन प्रणाली मे बुद्धिजीवी वर्ग का पूर्ण सहयोग प्राप्त करते हुए उनके प्रगतिशील विचारो से समन्वय स्थापित करके चलना होगा।

समाज मे व्याप्त कुछ ऐसी अव्यावहारिक एव अनैतिक वृत्तियो की ओर ध्यान देना है जो समाज के आर्थिक ढाचे को बिखेरने मे सहायक हो रही है। वर्गीय भेदभाव सहित समाज की सुदृढ सरचना हेतु नये प्रयासो पूर्वक योजनाबद्ध कार्य करने की आवश्यकता है ताकि आज का युवक सही दिशा अपना सके और अधिक पथ भ्रमित न हो।

"कि जीवनम्"—जीवन क्या है ? इस रहस्य पूर्ण प्रश्न का अत्यन्त ही सरल और हृदयग्राही उत्तर देने वाले, समता दर्शन और समीक्षण ध्यान जैसे नये आयाम प्रस्तुत करनेवाले, शान्त, गम्भीर एव अनुशासनप्रिय पू. नानेशाचार्य के व्यक्तित्व ने किसको प्रभावित नही किया है ? सघ का सम्प्रति जो स्वरूप है उसके लिये हम इन महान् आचार्य के प्रति जितनी कृतज्ञता ज्ञापित करें उतनी कम है। इस महान् आचार्य का सान्निध्य प्राप्त कर मैंने अपने जीवन मे नवीन आध्यात्मिक चेतना, धर्म के प्रति सत्यनिष्ठा, अटूट श्रद्धा के मूल्यों को प्रतिस्थापित किया है। यू तो बाल्यकाल मे ही पू. दादा-दादीजी, (जिन्होने अपनी दो पुत्रियो-मेरी भुआजी को बालवय होते हुए भी के साथ भागवती दीक्षा अगीकार कर कुल को सुशोभित किया) एव माता-पिता ने सुसंस्कारित जीवन निर्माण की प्रक्रिया के संत समागम, दर्शन और नैतिक धार्मिक शिक्षा का सुयोग प्राप्त कराया। "हुक्म पाट" परम्परा के तीन दिग्गज आचार्यों के अतिरिक्त पजाब

केशरी आचार्य श्री काशीराम जी म. सा. एवं बाल ब्रह्म. आचार्य श्री हस्तीमल जी म सा. एवं कई संतों के सान्निध्य ने मेरी आध्यात्मिक चेतना की जागृति मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई पर परम श्रद्धेय नानेशाचार्य के विचारो और सदुपदेशो का मेरे जीवन निर्माण मे महत्वपूर्ण योगदान रहा । उनके वाक्य "साहस और धैर्य को धारण करते हुए, कर्त्तव्य निष्ठा से सत्य कर्म मे निरन्तर लवलीन रहकर आई विपत्तियो का निडरतापूर्वक सामना करते हुए आगे बढते रहना" से जो मत्र मिला वह मेरे जीवन निर्माण के प्रति उनकी अनुपम देन सिद्ध हुआ । ऐसे व्यक्तित्व के प्रथम मूक परिचय ने मुझे उस समय प्रभावित किया जब मेरे दादाजी द्वारा उन्हे अपनी वैराग्य अवस्था मे भोजनार्थ दिये गये स्नेहिल आमत्रण को सरलतापूर्वक स्वीकार करते हुए वे हमारे निवास स्थान पर पधारे थे । उस समय किसको यह ज्ञात था कि सरलमना यह वैरागी हमारे समाज का यशस्वी आचार्य बनकर श्रमण सगठन को नवीन सुदृढ रचना कर स्वर्णिम इतिहास का निर्माण करेगा ।

उदयपुर मे आयोजित युवाचार्य पद महोत्सव का प्रत्यक्ष दर्शी एव व्यवस्था के सक्रिय कार्य-कर्त्ता के रूप मे भाग लेते हुए महाराणा के राजमहल क प्रागण मे विशाल जन मेदिनी के समक्ष प्रस्तुत अपने सार्वजनिक उद्बोधन ने मेरे जीवन को नया मोड़ दे डाला । मुझे आज भी उस क्षण की जीवन्त स्मृति है जब आचार्य पद की प्राप्ति और उदयपुर मे २५ वर्ष पूर्ण हुई उनके हाथो प्रथम दीक्षा (महासती श्री सुशीलाकवर जी म) के बाद अशोकनगर से विहार करते समय मुझ जैसे छोटे कार्यकर्त्ता भक्त की विनती को ध्यान मे लेते हुए विहार का मार्ग ही बिना पूर्व सूचना किये बदल कर मेरे आवास पर हाथ फरसने की कृपा सत समुदाय के साथ की और इस तरह "राम ने शबरी" का आतिथ्य स्वीकार किया । हम गद्-गद थे और अन्य सभी चकित । ऐसे हैं ये भक्त वत्सल ।

आपका चिन्तन प्रधान जीवन नई ऊचाइयो को छूने की ओर इगित करता है । वह यह प्रतिभासित करता है कि आपने अथाह धर्म महोदधि में समता मौक्तिक प्राप्त्यार्थ कितने आध्यात्मिक एव गहन गोते लगाये हैं ।

सन् १९८१-८२ के उदयपुर वर्षावास की पुनीत स्मृति मे आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान की स्थापनार्थ प्रारम्भिक योजना को मूर्तरूप देने के प्रसग से आचार्य श्री के निकट रहते हुए उनके बहुमूल्य विचारो ने मेरे जीवन को प्रभावित किया । मैं इनको एक आध्यात्मिक योगी एव युग पुरुष के रूप मे देखता हूं ।

सघ को ऐसी महान् विभूति आचार्य के रूप मे प्राप्त कर गौरवानुभूति होती है । उनकी आध्यात्म साधना का भी यह रजत-जयन्ती वर्ष है जो समता साधना वर्ष के रूप मे सर्वत्र मनाया जा रहा है हमारी अन्त:करण से उन्हे कोटिश. वन्दन के साथ यही कामना है कि इक्कीसवी सदी मे भी ये आध्यात्मिकता की अलख जगाने हेतु जिनशासन की बागडो सभाले रहे ।

"आशीष-४/३०६ अशोकनगर, उदयपुर (राज.)

□

△ △

卐

□ □
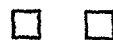
अनन्य श्रद्धा केन्द्र : आचार्य नानेश

□ दीपचन्द
भूतपूर्व अध्यक्ष, श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन

मेवाड के दाता ग्राम मे पिता मोडीलाल जी के घर माता श्रृगारदेवी जी की कोख से जन्मे 'नाना' नाम के देहाती बालक ने आज अपने तप, सयम, स्वाध्याय, ज्ञान और चारित्र से समाज जीवन दिशा **बोध** दिया है।

आपश्री ने प्रकृति की मुक्त गोद मे, वीरधरा मेवाड की पथरीली धरती पर खेलते-कूदते, खु ातावरण मे अपना प्रारम्भिक जीवन विताया। आप प्रारम्भ से निर्मल, निश्छल हृदय और संकल्पशील साहसी मन के स्वामी रहे। जीवन को परिवर्तन के पथ पर, भौतिकता की चकाचौंध से हटाकर आध्या-त्मिकता के मार्ग पर वीतरागता की उपासना मे जिस सरलता से आपने मोड दिया, समर्पित कर दिया, वह अभिनन्दनीय है। प्रथम सम्पर्क मे ही साधुता के मर्म को पहिचान कर उसे आत्मसात् करने की अद्भुत क्षमता के प्रदर्शन से समाज ने पूत के पाव पालने मे ही पहिचान लिए। आपने अपने को गुरुदेव के श्रीचरणो मे इस प्रकार समर्पित कर दिया कि गुरु-शिष्य एक प्राण दो देह हो गए। गुरुदेव के मानसलोक की विचार तरगो को अभिव्यक्ति से पूर्व ही समझकर स्वयं को तदनुरूप आचरण हेतु समग्र रूपेण,सर्वभावेन समर्पित कर दिया। स्व. पूज्य श्री गणेशाचार्यजी ने आपको साधना पथ के अडिग साधक और श्रेष्ठ अनुशास्ता के रूप मे पहिचाना और अपना सबल उत्तराधिकारी मनोनीत किया। इस गुरुत्तर उत्तरदायित्व को धारण करने पर ी आपकी सरलता और निरभिमानता यथावत् बनी रही। आपके आत्मीय स्नेह से युक्त अमृत वचनो ने अब तक देश के लक्ष-लक्ष जनो को सत्पथ का पथिक बना दिया है।

मेरे पूज्य पिताजी स्व. श्री भीखमचन्द जी भूरा हुकम परम्परा के अनन्य श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक थे और मेरी पूज्य मातुश्री भी उत्तम धार्मिक सस्कारो से युक्त सद्गृहिणी थीं। इन दोनो के पवित्र प्रभाव से हमारे पूरे परिवार पर साधुमार्गी परम्परा के श्रेष्ठ सस्कार बने रहे। मैं भी अपने पिताश्री के साथ समय-२ पर गुरु चरणो मे उपस्थित होता रहा। पूज्य गुरुदेव श्री नानेशाचार्य की मुझ पर हमेशा अनन्त कृपा बनी ही और आज भी है। पिताजी के प्रोत्साहन से मेरी गुरुभक्ति बढती ही चली गई। परम श्रद्धेय आचार्य ी जी को देशनोक चातुर्मास से मैंने अत्यन्त निकट से देखा और पाया कि इन विराट व्यक्तित्व मे प्राणी-न के प्रति अपाह करुणा सागर लहरा रहा है।

प्रतिवर्ष चातुर्मास मे आपकी सेवा मे उपस्थित होने से मुझे अपने जीवन विकास हेतु अनन्त प्रकाश ता रहा। मेरा कार्य व्यवसाय और पारिवारिक जीवन उत्तरोत्तर प्रगति करता चला गया गया। जीवन

केशरी आचार्य श्री काशीराम जी म. सा. एवं बाल ब्रह्म आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा एवं कई संतों के सान्निध्य ने मेरी आध्यात्मिक चेतना की जागृति मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई पर परम श्रद्धेय नानेशाचार्य के विचारो और सदुपदेशो का मेरे जीवन निर्माण मे महत्वपूर्ण योगदान रहा । उनके वाक्य "साहस और धैर्य को धारण करते हुए, कर्त्तव्य निष्ठा से सत्य कर्म मे निरन्तर लवलीन रहकर आई विपत्तियो का निडरतापूर्वक सामना करते हुए आगे बढते रहना" से जो मत्र मिला वह मेरे जीवन निर्माण के प्रति उनकी अनुपम देन सिद्ध हुआ । ऐसे व्यक्तित्व के प्रथम मूक परिचय ने मुझे उस समय प्रभावित किया जब मेरे दादाजी द्वारा उन्हे अपनी वैराग्य अवस्था मे भोजनार्थ दिये गये स्नेहिल आमत्रण को सरलतापूर्वक स्वीकार करते हुए वे हमारे निवास स्थान पर पधारे थे । उस समय किसको यह ज्ञात था कि सरलमना यह वैरागी हमारे समाज का यशस्वी आचार्य बनकर श्रमण सगठन की नवीन सुदृढ रचना कर स्वर्णिम इतिहास का निर्माण करेगा ।

उदयपुर मे आयोजित युवाचार्य पद महोत्सव का प्रत्यक्ष दर्शी एव व्यवस्था के सक्रिय कार्य-कर्त्ता के रूप मे भाग लेते हुए महाराणा के राजमहल क प्रागण मे विशाल जन मेदिनी के समक्ष प्रस्तुत अपने सार्वजनिक उद्बोधन ने मेरे जीवन को नया मोड दे डाला । मुझे आज भी उस क्षण की जीवन्त स्मृति है जब आचार्य पद की प्राप्ति और उदयपुर मे २५ वर्ष पूर्ण हुई उनके हाथो प्रथम दीक्षा (महासती श्री सुशीलाकंवर जी म) के बाद अशोकनगर से विहार करते समय मुझ जैसे छोटे कार्यकर्त्ता भक्त की विनती को ध्यान मे लेते हुए विहार का मार्ग ही बिना सूचना किये बदल कर मेरे आवास पर हाथ फ की कृपा मत समुदाय मे साथ की और इस "राम ने शबरी" का सानिध्य स्वीकार किया । गद्-गद् मे और अन्य सभी चकित । ऐसे हैं वे वत्सल ।

आपका चिन्तन प्रधान जीवन नई ऊचा को छूने की ओर इगित करता है । वह यह प्रति सित करता है कि आपने अथाह धर्म महोदधि समता मौक्तिक प्राप्त्यार्थ कितने आध्यात्मिक गहन गोते लगाये है ।

सन् १९८१-८२ के उदयपुर वर्षावास की पुनीत स्मृति मे आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान की स्थापनार्थ प्रारम्भिक योजना को मूर्तरूप देने के प्रसग से आचार्य श्री के निकट रहते हुए उनके बहुमूल्य विचारो ने मेरे जीवन को प्रभावित किया । मैं इनको एक आध्यात्मिक योगी एव युग पुरुष के रूप मे देखता हू ।

सघ को ऐसी महान् विभूति आचार्य के रूप मे प्राप्त कर गौरवानुभूति होती है । उनकी आध्यात्म साधना का भी यह रजत-जयन्ती वर्ष है जो समता साधना वर्ष के रूप मे सर्वत्र मनाया जा रहा है हमारी अन्तःकरण से उन्हे कोटिश वन्दन के साथ यही कामना है कि इक्कीसवी सदी मे भी ये आध्यात्मिकता की अलख जगाने हेतु जिनशासन की बागडोर संभाले रहे ।

"आशीष-४/३०६ अशोकनगर, उदयपुर (राज.)

□

△ △

卐

□ □

अनन्य श्रद्धा केन्द्र : आचार्य नानेश

☐ दीपचन्द भू
भूतपूर्व अध्यक्ष, श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन सं

मेवाड के दाता ग्राम मे पिता मोडीलाल जी के घर माता शृ गारदेवी जी की कोख से जन्मे इस 'नाना' नाम के देहाती बालक ने आज अपने तप, सयम, स्वाध्याय, ज्ञान और चारित्र से समाज जीवन को दिशा **बोध** दिया है।

आपश्री ने प्रकृति की मुक्त गोद मे, वीरधरा मेवाड की पथरीली धरती पर खेलते-कूदते, खुले वातावरण मे अपना प्रारम्भिक जीवन विताया। आप प्रारम्भ से निर्मल, निश्छल हृदय और सकल्पशील साहसी मन के स्वामी रहे। जीवन को परिवर्तन के पथ पर, भौतिकता की चकाचौध से हटाकर आध्यात्मिकता के मार्ग पर वीतरागता की उपासना मे जिस सरलता से आपने मोड दिया, समर्पित कर दिया, वह अभिनन्दनीय है। प्रथम सम्पर्क मे ही साधुता के मर्म को पहिचान कर उसे आत्मसात् करने की अद्भुत क्षमता के प्रदर्शन से समाज ने पूत के पाव पालने मे ही पहिचान लिए। आपने अपने को गुरुदेव के श्रीचरणो मे इस प्रकार समर्पित कर दिया कि गुरु–शिष्य एक प्राण दो देह हो गए। गुरुदेव के मानसलोक की विचार तरगो को अभिव्यक्ति से पूर्व ही समझकर स्वयं को तदनुरूप आचरण हेतु समग्र रूपेण, सर्वभावेन समर्पित कर दिया। स्व. पूज्य श्री गणेशाचार्यजी ने आपको साधना पथ के अडिग साधक और श्रेष्ठ अनुशास्ता के रूप मे पहिचाना और अपना सबल उत्तराधिकारी मनोनीत किया। इस गुरुत्तर उत्तरदायित्व को धारण करने पर भी आपकी सरलता और निरभिमानता यथावत् बनी रही। आपके आत्मीय स्नेह से युक्त अमृत वच अब तक देश के लक्ष-लक्ष जनो को सत्पथ का पथिक बना दिया है।

मेरे पूज्य पिताजी स्व. श्री भीखमचन्द जी भूरा हुकम परम्परा के अनन्य श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक ौर मेरी पूज्य मातुश्री भी उत्तम धार्मिक सस्कारो से युक्त सद्गृहिणी थी। इन दोनो के पवित्र प्रभाव ारे पूरे परिवार पर साधुमार्गी परम्परा के श्रेष्ठ सस्कार बने रहे। मैं भी अपने पिताश्री के साथ समय- गुरु चरणो मे उपस्थित होता रहा। पूज्य गुरुदेव श्री नानेशाचार्य की मुझ पर हमेशा अनन्त कृपा बनी और आज भी है। पिताजी के प्रोत्साहन से मेरी गुरुभक्ति बढती ही चली गई। परम श्रद्धेय आचार्य ी को देशनोक चातुर्मास से मैंने अत्यन्त निकट से देखा और पाया कि इस विराट व्यक्तित्व मे प्राणी- के प्रति अथाह करुणा सागर लहरा रहा है।

प्रतिवर्ष चातुर्मास मे आपकी सेवा मे उपस्थित होने से मुझे अपने जीवन विकास हेतु अनन्त प्रकाश रहा। मेरा कार्य व्यवसाय और पारिवारिक जीवन उत्तरोतर प्रगति करता चला गया गया। जीवन

से न जाने कितने ऐसे अनुभव मुझे हुए जब मैंने गुरुदेव के आशीर्वाद को प्रत्यक्ष अनुभव किया । अनेक बार संभावित भीषण दुर्घटनाएं टली और मुझे हर बार अहसास हुआ कि पूज्य गुरुदेव का वरदहस्त मेरे साथ है।

गुरुदेव की अनन्त कृपा से संघ ने मुझे अध्यक्ष का महान् गौरवशाली पद सौंपा । मै सोचा करता था कि इस विशाल देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैले श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ की शाखाओं और सदस्यो को सगठित करने, समाज और देश को उन्नति की ओर बढ़ाने के उस उत्तरदायित्व को कैसे पूरा कर पाऊंगा, किन्तु आज मै हर्ष तथा गर्व से कह सकता हूं कि पूज्य गुरुदेव की कृपा से मैं बड़ी सहजता से अपना कार्यकाल पूरा कर सका और उस कार्यकाल मे पूर्वांचल के स्वर्णाक्षरो मे लिखे जाने योग्य प्रवास सम्पन्न हुए और उस कार्यकाल मे गुरुदेव की नेश्राय मे सैकडो वर्षों के स्थानकवासी समाज की यशोगाथा मे ढूंढने से भी न मिल सकने वाला २५ भागवती दीक्षाओ का महान् आयोजन रतलाम मे सुसम्पन्न हुआ। बोरीवली मे दक्षिण भारत के युवा स्पेशल रेल लेकर गुरुदेव के चरणो मे उपस्थित हुए, बैंगलोर के मन में भी अप्रतिम भक्ति दिखाई दी । इस प्रकार दक्षिण भारत मे शासन निष्ठा का उभार प्रत्यक्ष हुआ, जिसमें उस क्षेत्र मे सघ के गौरव वृद्धि की आशा बंधी थी, जो आज फलीभूत हो चुकी है । इन्हीं दिनो मे रतलाम महिला उद्योग मन्दिर हेतु भूमि क्रय और भवन निर्माण की भाव भूमि का निर्माण हुआ । 'जिणधम्मो' जैसे ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ । इस प्रकार अनेक कार्यक्रमो की सफलता ने श्री अ भा. साधुमार्गी जैन सघ के गौरव को चार चाद लगाए और यह सब गुरुदेव के अतिशय का पुण्य-प्रताप है । मुझे इस अवधि मे अध्यक्ष पद पर आसीन होने का जो सौभाग्य मिला, वह मै मात्र निमित्त के रूप मे गुरुदेव की कृपा का प्रसाद मान कर ही स्वीकार करता हूं ।

आज जब भी हम श्रमणोपासक को उठाकर हाथ में लेते है, इसके पन्ने पलटते है और समाचारो को पढ़ते है तो पृष्ठ-पृष्ठ पर, पंक्ति-पंक्ति मे त्याग, तप, स्वाध्याय, शिक्षण, प्रशिक्षण और शिविरो द्वारा सस्कार प्रदान कार्यक्रमो की भरमार दिखाई देती है । संतो-सती, श्रावक-श्राविका और आबाल-वृद्ध मे जैसा अद्‌भुत उत्साह देशभर मे दिखाई दे रहा है, वह समीक्षण ध्यान योगी. जिनशाशन प्रद्योतक आचार्य-प्रवर के महान् चारित्र का प्रत्यक्ष प्रमाण है ।

रजत जयन्ती वर्ष और समता साधना वर्ष की इस पुनीत वेला मे मै अपने आराध्य आचार्यश्री नानेश के श्री चरणो मे अनन्य श्रद्धापूर्वक वन्दन करता हू ।

—देशनोक, (बीकानेर)
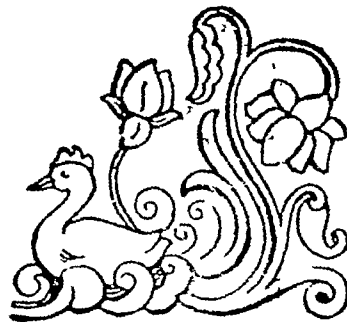
"आचार्य श्री नानेश और समता दर्शन"

(विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. द्वारा व्यक्त किये गए विचारों का संकलन)

विषमता का ज्वालामुखी आज सर्वत्र प्रज्ज्वलित हो रहा है । मानव जीवन अशान्त, विक्षिप्त और विश्रृंखल हो विकृति के गर्त की ओर अग्रसर हो रहा है । अमावस्या की रात्रि के घने अंधकार की तरह विषमता व्यक्ति से लेकर परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व तक विस्तृत होकर, मानव हृदय की सुजनता तथा शालीनता का नाश करती हुई, प्रलयंकारी विकराल दृश्य उपस्थित कर रही है ।

विषमता का उद्भव :

सर्व-विनाशिनी इस विषमता का मूल उद्भव स्थल मानव की मनोवृत्ति है । जिस प्रकार वट वृक्ष का बीज राई के समान सूक्ष्म होता हुआ भी उपयुक्त साधन मिलने पर विशाल रूप धारण कर लेता है, उसी प्रकार मानव की मनोवृत्ति से समुत्पन्न विषमता का बीज भी हर क्षेत्र मे अपनी शाखा-प्रशाखाएं प्रसारित कर देता है, जिससे दलन, शोषण और उत्पीड़न की चोटें सहन करता हुवा प्राणी चैतन्य से जडत्व सुषुप्ति की ओर बढता जाता है ।

धरती की समानता तथा सर्वत्र एक रूप मे वर्षा होने पर भी एक ही क्षेत्र मे एक ओर सुस्वादु इक्षु व दूसरी ओर मादक अफीम का वपन किया जाय तो इनका प्रस्फुटन ऐसा होगा कि एक जीवन-रक्षण मे सहायक है तो दूसरा मृत्यु का कारण । इसी प्रकार दो हृदय एक से होने पर भी यदि एक मे समता का और दूसरे मे विषमता का बीज वपन किया जाय तो दोनो की अवस्था गन्ने एव अफीम के सदृश होगी । समता जीवन का सर्जन करती है तो विषमता जीवन की मानसिक, वाचिक, कायिक अवस्था को विषमय करती हुई, उसको विनाश के कगार पर पहुचा देती है । कहा है —

> अज्ञान कर्दमे मग्नः जीवः संसार–सागरे ।
> वैषम्येण समायुक्तः, प्राप्तुमर्हति नो सुखम् ।।

अर्थात्–ससार-सागर के अज्ञान रूपी कीचड मे लीन, विषमता से युक्त जीव कभी भी सुख को प्राप्त नही कर सकता है ।

अत मानव समाज मे जितने भी दुर्गुण है, वे सभी विषमता से ही उत्पन्न हुए हैं और मानव के द्वारा सिंचित होकर विराट रूप धारण कर रहे हैं ।

महावीर का समता सिद्धान्त :

भगवान् महावीर ने कहा है कि सभी आत्माए समान है । सभी को जीने का अधिकार है । कोई भी किसी की सुख-सुविधा का अपहरण नही कर सकता । जिस प्रकार चोरी करने वाला दण्डित किया जाता है, क्योकि उस वस्तु पर उसका अधिकार नही है, वैसे ही किसी अन्य के जीवन, इन्द्रिय, शरीर पर

किसी को कोई अधिकार नही है । सभी को समान रूप से जीने का अधिकार है । अत. किसी के प्राणों का व्यपरोपणादि करना अपराध है । एतदर्थ भगवान् का मूल उद्घोष है.—"जीओ और जीने दो।" इस सिद्धान्त को ज्ञान, आचरणपूर्वक अपनाने से अवश्य ही जीवन मे समता रस की प्राप्ति हो सकती है।

आचार्य श्री नानेश द्वारा समता-प्रसार :

विषमता के इस वातावरण मे व्यक्ति और विश्व के जीवन मे शान्ति का सौरभमय वातावरण उपस्थित करने के लिये आचार्य श्री नानेश द्वारा समता का प्रचार-प्रसार किया जा रहा है । सम्पूर्ण प्राणियों की, चाहे वे ऋद्धिवान् हो या निर्धन, सेठ हो या किंकर, तिर्यंच हो या मनुष्य देव हो या नारक, गुरु हो या शिष्य, आत्मा समान है । कर्मावरण से किसी की आत्मा अधिक आच्छादित है तो किसी की अल्प, किन्तु आत्म विषयक विभेद नही है, 'स्थानाङ्ग सूत्र' मे भगवान् ने स्पष्ट फरमाया है —'एगे आया' आत्मा एक है ।

आत्मा की समानता का ज्ञान सुगमता से करने के लिये एक दीपक का दृष्टान्त उपयुक्त है। जिस प्रकार दीपक कमरे मे रखा हुवा यथाशक्ति प्रकाश फैलाता है, वैसे ही उसे छोटे से छोटे स्थान मे स्थापित करने पर भी उसके प्रकाश मे कोई व्याघात की स्थिति नही आती । डिब्बे मे स्थित किया जाए तो वह उसी स्थान को प्रकाशित करेगा, बाहर नही । वैसे ही आत्मा को अल्पतम पिपीलिका का शरीर प्राप्त होगा तो वह उसी शरीर मे व्याप्त हो जाएगी, बाहर नही । तद्वत् हाथी का शरीर प्राप्त होने पर दीपक के प्रकाश की भाति वह सपूर्ण गज देह मे व्याप्त हो जाएगी । इसी प्रकार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, विकलेन्द्रिय, पशु–पक्षी, मनुष्यादि मे भी जानना चाहिये । एतदर्थ सुख शान्ति की अभिलाषा रखने वाले मानव को चाहिये कि वह सम्पूर्ण जीव–जगत् पर समता का सुभाव रखे । आचार्य श्री नानेश ने समता के चार सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया है, जिनका सक्षिप्त परिचय इस प्रकार है –

१ सिद्धान्त-दर्शन, २ जीवन दर्शन, ३. आत्म-दर्शन एव ४ परमात्म-दर्शन ।

१. सिद्धान्त-दर्शन : समता का सैद्धान्तिक स्वरूप है कि सम-सोचे, समजाने, सम मानें, सम देखे, समकरे, । जीवन के प्रत्येक कार्य मे समभाव का होना अत्यन्त आवश्यक हे । एतद् विषयक एकता के लिये भोगविलास से हटकर जीवन मे त्याग-वैराग्य सयमित अवस्था की अपेक्षा है । सयम का तात्पर्य मुण्डित होना ही नही, किन्तु मन इन्द्रियो की सयमित-सुरक्षित रखना है । मनोज्ञ-अमनोज्ञ शब्द पहुंचने पर राग–द्वेष की भावना उत्पन्न न करना, श्रोतेन्द्रिय को सयमित करना है । इसको वश मे न रखने से बहुत अनर्थ होने की सभावना रहती है । महाभारत का युद्ध इसी का परिणाम है । द्रौपदी ने दुर्योधन को यही कहा था कि 'अधे के पुत्र अधे ही होते है ।' इस शब्द के तीव्र व्यग्यबाण का आघात दुर्योधन सहन नही कर सका जिससे कि हजारो लाखो निरपराध प्राणियो का संहार हो गया । अत श्रवणेन्द्रिय को वशीभूत रखना आवश्यक है । इसी प्रकार चक्षुरिन्द्रिय के आगे किसी भी प्रकार का अच्छा बुरा श्लील अश्लील चित्र आए, नाक मे अच्छी वा बुरी गध आए, जिह्वा द्वारा खट्टा-मीठा कोई भी स्वाद आए, शरीर का स्पर्श कठोर या रूक्ष हो, राग-द्वेष की उत्पत्ति न होना समता का सच्चा स्वरूप एव सिद्धान्त कहा है –

गृह्णाति हृदि भद्रेण, त्यागवैराग्य–संयमम् ।
लभते सम-सिद्धान्तं, जीवनोन्नति-कारकम् ॥

अर्थात् त्याग, वैराग्य, सयम आदि सिद्धान्तो को सरलता से मानता है, वह जीवन उन्नतिकारक मता सिद्धान्त को प्राप्त करता है ।

२. **जीवन दर्शन :** विपमता के घने अन्धकार मे समता की एक ज्योति ही आशा का संचार रती है । जिस प्रकार एक दीपक अनेक दीपको को अपनी शक्ति से प्रज्वलित कर देता है, वैसे ही सम्यक् ान सहित आचरण से स्वयं के जीवन को प्रज्वलित करते हुए अनेको के जीवन का भी नव–निर्माण करते । इसके लिए व्यक्ति मे पहले समता भाव होना परमावश्यक है । समता भाव की साधना के लिए ुव्यसनो का त्याग करते हुए जीवनोपयोगी, आत्म-दर्शन की साक्षात् कराने वाली उपादेय वस्तुओ का आचरण ाथा-शक्ति करना चाहिये । 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' के सिद्धान्त को समक्ष कर जीवन का सर्जन करना समता ा द्वितीय सोपान जीवन-दर्शन है । कहा भी है–

पलं सुरापणाखेटौ, चौर्यं वेश्यापराङ्गना ।
सप्तव्यसनसंत्यागः, दर्शनं जीवनस्य तत् ॥

अर्थात्–सप्त कुव्यसनो का आचरण नही करना तथा जीवन को सदा सादा, शीलवान, अहिंसक नाये रखना समता-जीवन का दर्शन है ।

३. **आत्म-दर्शनः**—जब जीवन पूर्णरूप से सयमित हो जाता है तब आत्म दर्शन की अवस्था ाप्त होती है । एक मानव शरीर, जिसे हम चैतन्य कहते है, उसमे तथा अपर मृत मानव शरीर मे क्या न्तर है ? एक क्षण पूर्व जिसकी इन्द्रिया सजग एव जागरूक थी, मन चिन्तन मे रत था, वचन मे शब्द रिस्फुटित हो रहे थे, काया मे स्पन्दन हो रहा था, दूसरे ही क्षण हृदय गति रुकी और वह मृत हो गया । निष्कर्ष यह कि चेतना शक्ति जब तक शरीर के अन्दर रहती है, तब तक देह का सचार चलता रहता है । ज्योहि चेतना शक्ति शरीर से बाहर निकल जाती है, तत्क्षण शरीर को मृत कहा जाता है । पौद्गलिकता के कारण शरीर की उत्पत्ति तथा विनाश होता रहता है, जिसे मृत या जीवित की सज्ञा दी जाती है, किन्तु आत्मा का न कभी नाश हुआ है न कभी उत्पत्ति । वह अनादि काल से एक रूप मे चली आ रही है । कर्म की विचित्रता से सूर्य पर मेघपटल की तरह आवरण आता रहता है जिससे चैतन्य प्रकाश आच्छादित हो जाता है । कर्म के क्षयोपशम होने पर पुन प्रकट सूर्य की तरह चैतन्य प्रकाश प्रकट हो जाता है किन्तु आत्मा सदा तिर्यंच, मनुष्य, नरक, देव और भूत, भविष्य, वर्तमान, मे एक समान रहती है । वह अपने कर्मो का स्वय कर्त्ता-भोक्ता है, यह प्रमाणों से सिद्ध है । कहा भी है —

प्रमाण सिद्धचैतन्य, कर्त्ताभोक्ता फलाश्रितः ।
निज देह प्रमाणे यः स आत्मा जिनशासने ॥

उपर्युक्त लक्षण से युक्त आत्मा की आवाज को जो सुन लेता है और तदनुसार आचरण करता है, वह अवश्य ही आत्म-विकास की अवस्था को प्राप्त कर देता है । उदाहरण के लिए एक व्यक्ति आपके स्वागतार्थ नोटो की गड्डिया गिनता हुआ, उन्हे छोडकर जलपान की सामग्री के लिए, बाहर चला जाता है, तब आपके हृदय मे जड मन और चैतन्य आत्मा का युद्ध होता है । मन कहता है कि कुछ नोट उठा लिये जाये, तभी आत्मा की आवाज उठती है कि यह चोरी है, अन्याय, अपराध है । जिसकी आत्मा जागृत हो उठती है तो वह जडत्व भावना को परास्त कर आत्म-दर्शन में लीन हो जाता है । कहा है–

अहिंसासत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यमकिञ्चनं ।
यश्चपालयते नित्यं, समाप्नोत्यात्मदर्शनं ।।

अर्थात्—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह को जो सर्व रूप से नियमित हो पालन क
है, वह आत्म-दर्शन को प्राप्त करता है ।

४. परमात्म-दर्शन :—जब आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है तब त्वरित रूप से परमात्
अवस्था की भी प्राप्ति हो जाती है । जैन-दर्शन परमात्मा को कोई अलग से नहीं मानता । उसकी तो यह
मान्यता है कि आत्मा ही संसार से विरक्त होकर सर्वांगीण रूप से कर्मजाल को हटाकर, गुणस्थानों की
अन्तिम श्रेणी अयोगी केवली की अवस्था की प्राप्ति हो जाने पर पांच ह्रस्व अक्षर के उच्चारण मात्र में
जितना समय लगता है, उतने ही समय मे, नीरोग, निरुपम, स्वाभाविक, अबाधित, निरंजन, निराकार, अर्हन्त
से सिद्ध की प्राप्ति कर लेती है । विश्व का कोई भी प्राणी क्यो न हो, इस सिद्धान्त से प्राणियो में स्वाभि
मान जागृत होता है और वे अपने पुरुषार्थ से जीवन को अनादिकालीन संसार से हटाने मे प्रयत्नशील होते
है । यही आत्मा से परमात्मा पद का साक्षात्कार करना है । कहा है—

कर्मणश्च विनाशेन, संप्राप्यायोगिजीवनं ।
संसारे लभते प्राणी, परमात्मपदं फलम् ।।

इस प्रकार विश्व की विषमता को दूर करने के लिए युगप्रवर्तक, जिन शासन प्रद्योतक, धर्मपा
प्रतिबोधक, समता दर्शन के पथ प्रदर्शक आचार्य श्री नानेश के सिद्धान्तो व सूत्रो का जो कोई भी व्यक्ति
जीवन मे आचरण करेगा, वह अवश्यमेव शान्ति, सुख और आनन्द की अनुभूति कर सकेगा ।

जीवन को समतामय बनाने के लिए आचरण के २१ सूत्र एवं समतावादी, समताधारी औ
समतादर्शी के रूप मे तीन सूत्र भी आचार्य प्रवर ने बतलाए है । आचार्य प्रवर का यह कथन कि "वि
मे कभी भी शांति का प्रसार होगा तो वह समता दर्शन से ही होगा," सर्वथा सत्य है ।

समता की उपयोगिता एवं महात्म्य को ध्यान मे रखकर ही यह वर्ष भी अन्तराष्ट्रीय स्तर प
"समता वर्ष" के रूप समुद्घोषित किया है । विश्व में शांति के प्रचार-प्रसार के लिए आवश्यकता है—
आचार्य प्रवर द्वारा प्रवर्तित समता दर्शन के सम्यक् प्रसार की ।

सकलनकर्ता— **चम्पालाल डा**
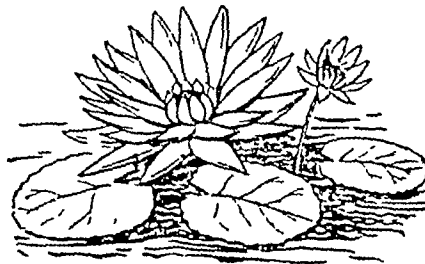
आचार्य श्री नानेश और समीक्षण ध्यान

(विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. द्वारा व्यक्त किये गए विचारो का संकलन)

आधुनिक युग का प्रत्येक मानव शारीरिक टेन्सन के साथ ही मेन्टल–टेन्सन से ग्रस्त परिलक्षित हो रहा है। जबकि मानव ने तनाव-मुक्ति की अथक क्रियान्विति मे कोई कमी नही रखी है। जीवन का हर क्षण, हर पल, हर क्रिया तनावमुक्ति एव सुख की खोज मे ही लगी हुई है। भौतिक विज्ञान की अकल्पित उन्नति मे भी मूलभूत सुख की आकाक्षा ही रही हुई है। जिस अभीप्सा-इच्छा के पीछे मानव ने गगनाङ्गन की परिक्रमा की, भूगर्भ मे पैठ की, जीवन के हर मोड पर सुख की खोज की तथापि सफलता के आसार नजर नही आए।

हा, यह अवश्य हुआ, फुटपाथ पर रहने वाला मानव गगन-चुम्बी महलो मे चला गया। फर्श पर सोने वाला इन्सान मखमली कालीनो, डनलप के गद्दो पर सोने लगा। फल फूल खाकर जीवन निर्वाह करने वाला आदमी छप्पन भोग खाने लगा। वल्कल भी जहा नसीब नही थे, वहां आज आधुनिक परिधान मे सज गया। भौतिकता की इस घुड-दौड़ ने उसे निश्चित ही बाह्य रूप से सजाया और संवारा किन्तु इस सजावट के पीछे उसे बहुत बडा मूल्य चुकाना पडा है, बहुत बडी क्षति सहन करनी पडी, जो वर्तमान दु ख से कही अधिक जन-जीवन को सत्रस्त बना रहा है।

बाह्य सजावट ने उसके अन्तरग को क्षत-विक्षत कर डाला है। जिस चैन की सास, भौतिकी सजावट के बिना, वह आदिम युग मे लेता था। गहरी निद्रा अंग-अग मे ताजगी भर देती थी। जहा अरण्य निवास एव भू-शयन भी सुख की अनुभूति कराने वाला था, वहा आज भौतिक-प्रधान जीवन ने उससे सब कुछ छीन लिया है। गगन चुम्बी महलो मे करोडो की संपति के मालिको को मखमली कालीन पर भी नीद नही आती। काम्पोज की टेबलेट एव मर्फिया के इजेक्शन लेकर भी वे उचट पडते हैं। वैचारिक तनाव ने उनके अन्तरग जीवन को क्षत–विक्षत कर डाला है। लगता है जिस कगार पर खडा इन्सान आर्त्तनाद कर रहा था, शाति के लिए, सुख के लिए, उसी से आज वह अशाति के महागर्त्त मे कूद पडा है। कगार पर तो आर्त्तनाद की अभिव्यक्ति थी, किन्तु अब दु खो का भयानक ज्वाला-मुखी ही फूट पडा है। जिसमे उसने अपनी भीतरी शाति, क्षमा, मानवता, सौजन्य के गुणो को जलाकर राख कर डाला है, आज वह अशाति की जिस गहराई मे उतर गया है, जिस कदर ओत-प्रोत हो गया है, जिस पंकिल मे फस गया है, उससे उभरना, शाति की सास पाना, असंभव तो नही, दु साध्य अवश्य है।

ऐसे भयानक गर्त से निकलने के लिए उतना ही सशक्त अवलम्बन चाहिये। कच्चे तारो के सहारे उबरपाना कभी सभव नही है। आश्चर्य कि इस विकट स्थिति मे भी अधिकाश मानवो के विचार यथार्थता की ओर उन्मुख नही हो पा रहे है। अ धेरे मे निशाना साधने की तरह ही उसकी गति निरर्थक हो रही है। जब तक गति मे मोड नही आएगा, विचारो मे सशोधन नही होगा, सशक्त अवलम्बन नही

मिलेगा । तब तक अनंत जन्मो एवं असंख्यात शताब्दियां व्यतीत होने पर भी वह उसी स्थान पर खड़ा मिलेगा, जिस पर आज है, बल्कि उससे गिरावट सभावित है, उन्नति तो कदापि सभावित नही ।

अन्तरग की शान्त-विशाल अनन्तता को गुंजायित करने के लिए शक्ति के प्रवाह को अन्त: में सम्यक् प्रकार से प्रवाहित करना होगा । अन्तरग का भूगर्भवत् विशाल और व्यापक है । असंख्य गुफाएं-प्रति गुफाए है । यदि गति क्रिया लक्ष्यानुरूप नही होगी तो गुफा-प्रति-गुफा मे प्रवेश सभावित है, जिनसे उबरना एव पुन: लक्ष्यारूढ होना अतीव दुर्लभ है । लक्ष्यानुरूप अन्त: गति के लिए समर्थ निर्देश और सशक्त अवलम्बन यदि इस भौतिकता की चका-चौंध मे कुछ है तो प्रभु महावीर का शासन एवं उनमे विचरण करने वाले समता–विभूति आचार्य श्री नानेश की आगमिक सिद्धान्तो पर प्रतिपादित समीक्षण ध्यान साधना की मौलिक पद्धति ।

जैसे अनन्त आकाश का सीमा बन्धन नही किया जा सकता वैसे पौद्गलिक अनन्तता की वाचिक अभिव्यक्ति सभवित नही । लोकोत्तर की उपलब्धि अहर्निश दौड से भी संभव नही । ठीक इसी प्रकार अन्तरग की अभिव्यक्ति, भौतिकता की दौड से लेश मात्र भी सभावित नही है । किन्तु अन्त जागरण पर उसका ज्ञाता एव दृष्टा भाव सभवित है । एक ही स्थान से आत्मा से अनतता का ज्ञान एव दर्शन किया जा सकता है। जीवन की गहराइयो मे उतरकर अनत ज्ञान, अनतदर्शन, अनतसुख और अनंतशक्ति को शाश्वत रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है । अनन्तशक्ति का स्रोत बाहर नही, भीतर ही है । अनतता तक गति नही, पर विज्ञप्ति सभवित है । इस विज्ञप्ति के लिए समीक्षण-ध्यान साधना पद्धति को समझना होगा । स्वय प्रभु महावीर की साधना, समीक्षण से अनुरंजित थी, प्रभु की समीक्षण प्रज्ञा ने आत्मा की अनतता को अभिव्यक्ति दी थी । जिस अभिव्यक्ति ने लोका-लोक की विज्ञप्ति दी, वह उन्ही के मुख से निम्न शब्दो मे स्फुरित हुई । प्रभु ने फरमाया—

उड्ढं अहेयं तिरियं दिसासु,
तसाय जे थावर जे य पाणा ।
से निच्च निच्चेहि समिक्खपन्ने,
दीवे व धम्मं समियं उदाहु ।।

(सूत्रकृताङ्ग सूत्र १/६/४)

सर्वज्ञ-सर्वदर्शी, प्रज्ञापुरुष प्रभु महावीर ने उर्ध्वलोक अध लोक, तिर्यक्लोक मे स्थित त्रस एव स्थावर जीवो की नित्यता-अनित्यता का **समीक्षण कर** दीपक के समान धर्म का कथन किया ।

इस कथन से प्रभु द्वारा किया गया त्रिकाल-त्रिलोक का ज्ञान, समीक्षण पर आधारित है । यह बात स्पष्ट प्रमाणित होती है । यही नही प्रभु ने धर्माचरण के लिए भी स्पष्ट रूप से कहा है—

पन्ना–समिक्खए धम्मं,
तत्तं तत्तं विणिच्छिय ।

उत्तराध्ययन सूत्र २३/२५

आत्म-धर्म का समीक्षण एव सत् तत्त्व का विनिश्चय प्रज्ञा द्वारा होता है ।

इस प्रकार का कथन, आगमो मे स्थान-स्थान पर प्राप्त होता है । जो इस बात को प्रमाणित करता है कि तनावमुक्ति एव आत्मशाति के लिए प्रज्ञा मे समीक्षण का होना आवश्यक है । जिसकी प्रज्ञा, पूर्ण रूप से समीक्षण से अनुरजित हो जाती है, वह शाश्वत शाति को प्राप्त कर लेता है ।

समीक्षण है क्या ? प्रज्ञा को समीक्षण से अनुरंजित कैसे बनाया जाय ? इसके विधि-विधान क्या है ?

इन सब का प्रस्तुतीकरण प्रज्ञानिधि, समीक्षणयोगी, गुरुदेव आचार्य श्री नानेश की अनुभूति पुरस्सर वाणी से उद्भासित हुआ है। इसीलिए "समीक्षण ध्यान साधना पद्धति" सोना मे सुहागा की लोकोक्ति को चरितार्थ करती है। क्योकि "समीक्षण-ध्यान" बीज रूप से सर्वत्र विद्यमान तथा विशाल वृक्ष के रूप मे आगम सम्मत प्रस्तुतीकरण महायोगी आचार्य प्रवर द्वारा होने से यह सच्चे ध्यान जिज्ञासुओ के लिए नितान्त उपादेय है।

आचार्य प्रवर ने "समीक्षण" की परिभाषा इस प्रकार की है—सम+ईक्षण (सम का अर्थ है समता अथवा सम्यक् और ईक्षण का अर्थ देखना है—(समीक्षण ध्यान प्रयोग विधि से) समता मूलक पैनी बुद्धि से किसी भी वस्तु को देखना, समीक्षण कहलाता है। यह एक ऐसी तटस्थ दृष्टि है कि जिससे जिस किसी वस्तु को देखने का अवसर प्राप्त हो, उस समय यह समीक्षण दृष्टि किसी भी दिवार मे अटके नही, किन्तु राग द्वेष की सशक्त दिवारो के मध्य से अछूती गुजरती हुई भीतर मे प्रवेश कर जाय (मान समीक्षण से)। तभी आत्म-शाति उपलब्ध हो सकेगी।

"समीक्षण प्रज्ञा" द्वारा सर्व-प्रथम स्वय वृत्तियो का समीक्षण आवश्यक है। क्योकि अध्यात्म-साधना मे चित्तवृत्तियो के नियन्त्रण-सशोधन का प्रावधान प्रमुख है। चित्त-वृत्तियो के सशोधन की विवेचना मे आचार्य प्रवर ने "योग" की अत्यन्त सुन्दर परिभाषा दी है—"योगश्चित्तवृति सशोध." चित्त-वृत्तियो का सशोधन योग है। यह सशोधन भी सहज–साध्य नही। अनन्तकाल से धावमान चित्त को सहज ही संशोधित एव नियन्त्रित कैसे किया जा सकता है। इसे नियन्त्रित करने के लिए अनेक साधको ने विभिन्न प्रयोग किये भी, उससे सामयिक समाधान जरूर मिला, पर शाश्वत नही। शाश्वत समाधान तो सर्वज्ञ निर्देशित शाश्वत–ध्यान ही दे सकता है। और वह है समीक्षण ध्यान साधना।

आचार्य प्रवर ने इसके विधि-विधान की भी विस्तृत चर्चा की है। जिनमे कुछ तो प्रारभिक ध्यान साधको के लिए "समीक्षण-ध्यान-प्रयोग विधि" के रूप मे उभर कर आई है। प्रस्तुत मे विधि–विधान की सुविस्तृत चर्चा सभव नही, अत सक्षिप्त मे ही कुछ निदर्शन कराया जा रहा है—

१ समीक्षण-ध्यान मे प्रवेश करने वाला साधक स्थान एव वातावरण की विशुद्धि का सर्व प्रथम ध्यान रखे। जो भी स्थान हो, वह प्रतिदिन के लिए निश्चित हो, साथ ही वातावरण भी विषमता एव विषय–कषाय जनित न हो। क्योकि साधक पर इसका गहरा प्रभाव होता है। खराब वातावरण चित्त वृत्तियो को उद्वेलित कर सकता है। अत साधना के लिए सर्वोपयोगी स्थान एकान्त, नीरव एव सभी प्रकार के इन्द्रियाकर्षणो से रहित होना चाहिये।

२ ध्यान साधक अपना वेश भी सात्विक एव सादा रखे। क्योकि रहन–सहन मे भी जितनी सात्विकता होगी, चित्त उतना ही शीघ्र साधना के प्रति समर्पित होगा। "सादा जीवन उच्च विचार" की उक्ति उसका अभिन्न अग बन जाए।

३ ध्यान का समय निश्चित हो। जो भी समय हो, प्रतिदिन उसी समय ध्यान [illegible] बैठा जाय। क्योकि मन के साथ समय का भी बडा तादात्म्य है। व्यवहार मे देखा जाता है [illegible] प्रतिदिन

किसी के चाय पीने का है उस समय उसमे चाय की इच्छा पैदा हो ही जाएगी । इसी प्रकार ध्यान की अन्तरंग जिज्ञासा के लिए समय का निश्चय आवश्यक है ।

४. साधना का समय अगर रात्रि निर्धारित किया हो तो साधना मे प्रवेश के समय से करीब ३० मिनिट पूर्व निद्रा-भंग एवं शयनासन परित्याग आवश्यक है और उस समय आवश्यक हो तो शारीरिक चिन्ता दूर करने मे वह स्वतन्त्र है । ठीक समय पर वह सामायिक/सवर की साधना के साथ, प्रमाद निवारण के लिए पूर्वाभिमुख हो ग्यारह बार पचाग नमस्कार (तिक्खुतो के पाठ से) वन्दन करे । वन्दन से लाघव गुण भी प्रकट होगा ।

५. पद्मासन या सुखासन मे बैठकर मेरुदण्ड सीधा रखा जाय, जिससे प्राण सचार मे व्यवधान न हो ।

६ अटल सकल्प पूर्वक ससार के समस्त मोह-जालो को उस समय के लिए परित्याग कर दे। क्योकि दृढ़ सकल्प का प्रभाव मानस पर जोरदार होता है ।

संकल्प की दृढता, परिवेश की शुद्धता, वातावरण की पवित्रता तथा विनय-विवेक के साथ त्याग भावना की ओजस्विता के द्वारा साधना के लिए उपयोगी भूमिका का निर्माण होता है ।

७. कुछ समय तक दीर्घश्वास-नि श्वास तदनन्तर पूरक-रेचक-कुंभक करके भीतरी गदगी को निकालकर मन को शान्त-प्रशान्त बनाया जाय । भ्रामरी गुंजार के द्वारा भीतर की मदशक्तियो को सक्रिय किया जाय ।

८. अतीन के चौबीस घण्टो का चिन्तन कर विपरीत-वृत्तियो को दूर करने का सकल्प लिया जाय । भविष्य के चौबीस घण्टो के कार्य-काल का सामान्य निर्धारण कर लिया जाय जो कि समीक्षण से अनुरजित हो ।

९. चार-शरणो के प्रति अपने आपको सर्वतोभावेन समर्पित कर दिया जाय । समर्पण का यह रूप अपने अस्तित्व को जगाने वाला होता है । जिस प्रकार पानी, दूध मे मिलकर दूध का मूल्य पा लेता है ।

१० अपनी वे कुआदते जो छूट नही रही हो तो उन को छोड चुके महापुरुषो के आदर्श जीवन का चिन्तन किया जाय ।

११ आत्मा से परमात्मा तक की यात्रा के क्रम का चिन्तन आत्मसात् होकर किया जाय ।

१२ कुछ समय के लिए स्वयं संकल्प पूर्वक 'शात रहने की कोशिश करे । उस बीच उठ रहे विचारों के लिए "जाने दो—जान दो" का संकल्प करे । जिससे मन-शिथिल हो, शात एवं सतेज हो जाय ।

१३ प्रतिदिन मन को वश मे करने के लिए, किसी न किसी प्रकार का नियम ग्रहण करें ।

उपर्युक्त समीक्षण-साधना का पद्धति क्रम अति-सक्षिप्त मे रखा गया है । सुविस्तृत जानकारी के लिए आचार्य प्रवर के समीक्षण सबन्धित साहित्य के मनन पूर्वक पठन की आवश्यकता है एव प्रयोग के लिए उनके पावन सान्निध्य की ।

"समीक्षण ध्यान" की स्थिति निश्चित समय तक तो की ही जाती है, पर उसकी गूंज पूरे चौबीस घण्टे तक मानस पर कायम रहनी चाहिये । जिस प्रकार घडी मे दी गई चाबी से वह चौबीस घण्टे

तक चलती है । जब तक ध्यान व्यक्ति के चौबीस घटो को प्रभावित नही करता है, तब-तक ध्यान की पूर्ण उपादेयता ज्ञात नही हो पाती । ध्यान, जब व्यावहारिक जीवन के साथ जुड़ता है, तब वह उस जीवन मे सुख का अमिय रस घोल देता है । क्योकि जब हमारी दृष्टि सम्यक् है तो विषम भाव पैदा ही नही हो सकता और विषमभाव के बिना अशाति पनप नही सकती । भगवान् महावीर की दृष्टि-समीक्षण से अनुरजित होने के कारण ही इतने परिषह एव उपसर्गों की स्थिति बनने पर भी उनमे अशाति उत्पन्न नही हुई ।

"समीक्षण" स्व के निरीक्षण का अवसर प्रदान करता है और जो व्यक्ति स्व का निरीक्षण कर लेता है, वह व्यक्ति उत्तमोत्तम सोपान पर आरोहण करता जाता है । स्व का निरीक्षण का एक व्यावहारिक उदाहरण है—एक बार एक व्यक्ति, रात्रि मे कोई लेखन कार्य कर रहे थे । लिखते-लिखते उनकी स्याही समाप्त हो जाती है । तब उन्होने नौकर को स्याही लाने को कहा । यथास्थित स्याही की दवात को उठा लाया और उनके हाथ मे देने लगा । पर कुछ ऐसा ही सयोग बना की दवात नीचे गिर गई और फूट गई । स्याही फैल गई, नीचे बिछा कालीन भी खराब हो गया ।

यह देखकर नौकर घबरा गया और कापने लगा । सोचा आज तो निश्चित डाट पडनी है । पर यह क्या वह व्यक्ति बोला भाई ! घबराने की कोई बात नही है, तुम्हारी कोई गल्ती नही है, गल्ती तो मेरे से हुई कि मैंने दवात को सही ढंग से नहीं पकड़ा वह गिर गई ।

मालिक के इन शब्दो ने नौकर को भी अन्तः समीक्षण का मौका दिया और वह भी झट से बोल उठा—नही मालिक । भूल मुझ से हुई है क्योकि मैने आपको दवात सही ढंग से नही पकडाई थी ।

कहा तो सघर्ष होने वाला था । मालिक कहता तुमने नही पकडाई और नौकर कहता आपने नही पकडी—इसलिए गिरी । और कहा दृष्टि के सम्यक् मोड ने दोनो मे परस्पर प्रेम एव स्नेह का सचार कर दिया ।

यह था समीक्षण दृष्टि का प्रभाव । ध्यानाभ्यासी मानव, अपने जीवन के प्रत्येक कार्य को समीक्षण दृष्टि से देखने की कोशिश करे । समीक्षण दृष्टि से अनुरजित किया गया प्रत्येक कार्य उसके अन्तरग की शक्तियो को उद्घाटित करने वाला होगा । वातावरण मे शाति का सचार करने वाला होगा । क्योकि ध्यान का असर तत्क्षण होना है । बशर्ते कि ध्यान की विधि को सम्यक् प्रकार से अपनाई जाय ।

आचार्य प्रवर ने क्रोध-मान-माया-लोभ जैसे आत्म-गुण के घातक दुर्गुणो को निकालने के लिए स्वतत्र रूप से उन पर विवेचन प्रस्तुत किया है । जो क्रोध–समीक्षण, मान समीक्षण माया–समीक्षण, लोभ-समीक्षण के नाम से ध्यान–जिज्ञासुओ के सामने आया है ।

समीक्षण-ध्यान, मानसिक तनावो को ही नही शारीरिक-तनावो को समाप्त करने एव आत्मा का पूर्ण जागरण करने मे सक्षम है ।

समीक्षण ध्यान साधना की उपलब्धिया, किसी भी प्रकार की सीमा से आबद्ध नही है । जिस प्रकार गोता–खोर समुद्र की गहराइयो मे जितना अधिक पैठता जाएगा, वह उतनी ही अधिक मात्रा मे बहुमूल्य रत्नो को प्राप्त करेगा । उसी प्रकार समीक्षण की गहराइयो मे जो जितना अधिक उतरता जाएगा, वह साधक उतनी ही अधिक मात्रा मे आनन्द की अनुभूति करता रहेगा ।

अन्तः में गुणीन समस्याओ को देखते हुए यह आवश्यक नही अति-आवश्यक है कि आचार्य-द्वारा प्रवर्तित समीक्षण ध्यान को जीवन मे स्थान दिया जाय । कमजोर आंख पर जब प्रमाणोपेत लगाए जाते है, तब उसे मालूम पड़ता है कि जो धुंधला पथ उसे मुझे दिखाई दे रहा था, वह धुंधला नही, अपितु स्पष्ट है । यही हाल समीक्षण का है । जब व्यक्ति की आंख समीक्षण से युक्त होती है, तब उसे सच्चा परिज्ञान होता है ।

ध्यान की अनुभूति, विवेचन या समझाने का विषय नही, अपितु अनुभूति का विषय अनुभूति के लिये प्रयोग आवश्यक है । सम्यक् प्रयोग करने पर ही ध्यान की उपयोगिता अनुभूत हो स

संकलनकर्त्ता—चम्पालाल

क्रोध के दो रूप हैं एक प्रकट, दूसरा अप्रकट । पहला प्रज्वलित आग है दूसरा राख मे दबी आग । क्रोध का प्रथम रूप अपनी ज्वालाए बिखेरता दिखायी देता है दूसरे रूप मे ज्वालाए बाहर फूट कर नही निकलती किन्तु अनबुझे कोयले की तरह भीतर ही भीतर सुलगती रहती हैं । उदाहरणत दो व्यक्तियो मे झगडा हो जाने पर परस्पर बोल-चाल बन्द हो जाती पर क्रोध की ज्वाला समाप्त नही होती । हुआ इतना ही कि बाहर की ज्वाला भीतर पहुंच गयी । भीतर की यह आग बाहरी आग से भी अधिक खतरनाक है । कारण यह भीतरी आग कब विस्फोट करेगी कहा नही जा सकता । जिस भाति ऊष्ण युद्ध से शीत युद्ध भयावह होता हे क्योकि शीतयुद्ध की पृष्ठभूमि पर ही उष्ण युद्ध की विभीषिका खडी हो जाती है ।

इसीलिए अर्हर्षि नारायण का कहना है क्रोध जब आग है तो इसे जितनी जल्दी हो सके उपशमन करन चाहिए ।

क्रोध के प्रारम्भ मे मूर्खता है और अन्त मे पश्चात्ताप ।

अष्टाचार्य जीवन झलक

(विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. द्वारा लिखित "अष्टाचार्य एक झलक" से संकलित —सं.)

साधुमार्ग की परम्परा अनादिकाल से अविच्छिन्न रूप मे चली आ रही है । जिस परम्परा को विशुद्ध रूप से अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए बड़े-बडे महापुरुषों के सतत प्रयास रहे है । जिन्होने उतार-चढाव के बावजूद भी इस परम्परा को अविरल रूप से प्रवाहित रखा है । उन सभी महापुरुषो का जीवन वृत्त आलेखित करना सम्भव नही है । अत: अनादि-अतीत की चर्चा न करके प्रस्तुत मे निकट अतीत की चर्चा की गई है । इस परम्परा की विशुद्धता बनाए रखने वाले आठ आचार्यों का नाम आज गौरव के साथ लिया जाता है ।

हु शि उ चौ श्री ज ग नाना ।
लाल चमकता भानु समाना ।।

के रूप मे उनकी जय-जयकार की जाती है ।

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म. सा.

प्राकृतिक सुषमा से युक्त 'टोडा रायसिंह' ग्राम मे पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा ने जन्म धारण किया तथा स्वाभाविक विरक्ति के आलोक मे रमण करते हुए बूदी नगर मे पूज्य श्री लालचन्दजी म सा के सान्निध्य मे भागवती दीक्षा अगीकार की । निर्ग्रन्थ सस्कृति की अक्षुण्णता को बनाये रखने के लिये आपने सयमी जीवन का कठोरता से पालन करते हुए क्राति-कारी कदम आगे बढाया । जिससे पूज्यश्री क्षणिक समय के लिए असतुष्ट भी हुए, किन्तु जब उन्हे यह ज्ञात हुआ कि मुनि श्री हुक्मीचन्दजी अज्ञानतमिस्रा का नाश करने वाली ज्योतिर्मय मशाल है, वीर लोकाशाह की भाति जनता मे धर्मक्राति का शखनाद फूककर नव जागृति उत्पन्न कर रहे है, तब पूज्यश्री बहुत प्रसन्न हुए और जनता के समक्ष कहा कि मुनिश्री हुक्मीचन्दजी तो चौथे आरे की बानगी है । इनमे गौतम स्वामी जैसा विनय है तो नदिषेण जैसी सेवा भावना है, आदि ।

आपके जीवन की निम्न कतिपय प्रमुख विशेषताए थी-

(१) २१ वर्ष तक निरन्तर बेले बेले का तप करना ।

(२) १३ द्रव्यो से अधिक द्रव्य काम मे नही लेना ।

(३) मिष्टान्न एव तली चीजो का परित्याग कर शरीर रक्षा के लिए मात्र रूक्ष-शुष्क आहार करना ।

(४) शीत-उष्ण सभी ऋतुओ मे एक चादर से अधिक नही रखना ।

(५) प्रतिदिन २००० शक्रस्तव (णमोत्थुण) एव २००० आगमगाथाओ का स्वाध्याय करना तथा

(६) गुरु के प्रति पूर्ण रूप से विनयावनत रहना ।

जब आप बीकानेर पधारे तब आपके मार्मिक ओजस्वी प्रवचनो से प्रभावित होकर नगर के प्रमुख पाच श्रेष्ठियो ने आपश्री के चरणो मे भागवती दीक्षा अगीकार की । शिष्य बनाने का परित्याग होने से आप उन्हे दीक्षित कर अपने गुरु भ्राता की नेश्राय मे कर देते ।

ग्राम-ग्राम मे,नगर-नगर मे विचरण कर आपने प्रभु महावीर द्वारा उपदिष्ट धर्म का यथातथ्य स्वरूप जनता के समक्ष रखा । जिससे आपकी यश पताका सर्वदिशाओ मे फहराने लगी । नीतिकारो ने सत्य ही कहा है--

यदि सन्ति गुणा: पुसां, विकसन्त्येव ते स्वयम् ।
नहि कस्तूरिकाऽऽमोद:, शपथेन विभाव्यते ।।

यदि पुरुष मे गुण है तो वे स्वय ही विकसित

हो जाते हैं । कस्तूरिका की सुगन्ध को प्रमाणित करने के लिए शपथ खाने की आवश्यकता नही होती ।

पूज्यश्री के द्वारा की गई धर्मक्रान्ति(क्रियोद्धार) भी इन्ही के अष्टम पट्टधर समताविभूति आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य मे पल्लवित-पुष्पित-फलित हो रही है ।

आचार्य श्री शिवलालजी म. सा.

पूज्य श्री शिवलालजी म सा का जन्म मध्य-प्रदेश के धामनिया ग्राम मे हुआ । ससार की असारता एव मुक्ति के अक्षय सुख के स्वरूप को समझ कर मुनिपु गव श्री दयालजी म की निश्राय मे भागवती दीक्षा अ गीकार की तथापि आप प्राय: पूज्यश्री हुक्मी-चन्दजी म सा के समीप ही निवास करते थे । उनके सान्निव्य के प्रभाव से आपकी प्रतिभा मे निखार आया, फलस्वरूप आप दिग्गज विद्वान् के रूप मे जनता के समक्ष आये । पूज्यश्री की तरह ही आप भी स्वाध्यायप्रेमी, आचार-विचार मे महान् निष्ठावान् एव परम श्रद्धावान थे ।

पूज्यश्री के पास कोई भी जिज्ञासु भाई-वहिन आते तो उन के स्वाध्याय, मौन, तपाराधना मे तल्लीन रहने के कारण उन जिज्ञासुओ की जिज्ञासाओ का समाधान आप ही करते । जिज्ञासु सटीक समाधान को प्राप्त कर प्रसन्न हो जाते थे ।

आपश्री की कवित्वशक्ति अनूठी थी । भक्ति-रस से परिपूर्ण जीवनस्पर्शी और उपदेशात्मक आदि सभी प्रकार से आप भजन रचना करते थे जिनकी मधुर स्वरलहरिया कर्णगह्वरो मे पहुचते ही जनमानस को वशीकरण मत्र की भाति आकर्षित कर लेती थी ।

आपके जीवन मे ज्ञान और क्रिया का अनुपम सयोग हुआ था । प्रखर विद्वत्ता के साथ ही कर्म-कलिमल को नाश करने के लिए आपने आत्मा को तप-अग्नि मे निखारा था । अर्थात् आपश्री ने ३५ वर्ष पर्यन्त(लगभग) एकान्तर तप किया था ।

इस प्रकार आचार-विचार मे आपश्री म परिपूर्ण योग्यता जानकर पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म.सा ने [illegible] के प्रमुख नगर बीकानेर मे चतुर्विध सघ समक्ष यह उद्घोषित किया—

'भव्य प्राणियो ! मुनिश्री शिवलालजी [illegible] बाद आप सबके नायक है । आप सभी इनकी आ के अनुसार कार्य करे ।' पूज्यश्री की घोषणा को श्रव कर सघ के सभी सदस्यो ने सहर्ष स्वीकार किया कई जगह ऐसा भी मिलता है कि पूज्यश्री ने उत्त धिकारी की घोषणा न कर उनका नाम लिख स्वर्गस्थ हो गए थे ।

इस प्रकार पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म. के प पर विराजकर आचार्यश्री शिवलालजी म सा ने च विध सघ की अत्यधिक प्रभावना की ।

आचार्य श्री उदयसागरजी म. सा

आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म सा के तृतीय प वर पूज्य श्री उदयसागरजी म सा हुए । आपश्री जन्म मारवाड के प्रमुख नगर जोधपुर मे हुआ थ

जव आपने किशोरावस्था को पारकर युवाव मे प्रवेश किया तव आपके जीवन मे एक विशेष घ घटित हुई जिसके अमिट प्रभाव से आपका मन स से उद्विग्न हो उठा और आपने ससार परित्याग सर्वसुख-प्रदायिनी भवभयहारिणी जैनेश्वरी दीक्षा अ कार कर ली ।

वह विशेष घटना यह है-एकदा माता-पित अपने लाडले पुत्र के शरीर पर यौवन के चिह्नो परिस्फुटित होते हुए देखकर ससार की मोहज परम्परा के अनुसार ही पुत्र को वैवाहिक वन्धनो वाधने का निश्चय किया । तदनुरूप सर्वगुणस कन्या के साथ विवाह निर्णीत कर दिया ।

निश्चित तिथि को विवाह करने के लिए धू धाम के साथ बरात यथास्थान पहुंची । वैवा कार्यक्रम प्रारम्भ होने लगा । जव चवरी मे फेरे लिए पहुचे तव आपका साफा चवरी के पात्रो

अटक जाने से मस्तक से नीचे गिर गया। महिलाएं हास्य-विनोद करने लगी। भाई लोग साफा मस्तक पर रखने की शीघ्रता करने लगे। परन्तु साफा क्या गिरा मानो अनादिकालीन कामविकार जनित मोह-दशा ही हटकर दूर गिर पडी। उसी समय आपका विचार उर्ध्वगामी बना। जो साफा एक बार सिर से नीचे गिर चुका है उसे दूसरी बार क्या धारण किया जाए ! आप बिना विवाह किये ही विवाह-मण्डप से लौट गए।

ममत्व से समत्व की ओर, राग से विराग की ओर, अधकार से प्रकाश की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर अग्रसर हो गए। आचार्य श्री शिवलालजी म के शिष्य श्री हर्षचन्दजी म सा के पास दीक्षा अगीकार कर 'विणओ धम्मस्स मूल' के सिद्धात को ध्यान मे रखते हुए अत्यन्त विनम्रता के साथ आपने ज्ञानार्जन किया। आचार्यश्री की प्रवर-मनीषा ने आपके जीवन को परख लिया और आपको सघ के समक्ष युवाचार्य पद पर सुशोभित कर दिया।

आपकी उपदेश-शैली अत्युत्तम थी, जिसे श्रवण करने के लिए जैनेतर जनता भी बडी सख्या मे उपस्थित होती थी। आपके शासन काल मे जैन-समाज का बहुमुखी विकास हुआ। हालाकि आप एक सम्प्रदाय के आचार्य थे तथापि समग्र स्थानकवासी समाज आपको अपना नेता मानता था।

रामपुरा ग्राम मे शास्त्रवेत्ता केदारजी गाग रहते थे। उन्होने आपकी ज्ञानार्जन की असाधारण जिज्ञासा एव विनीतता देखकर आपको ३२ शास्त्रो का अर्थ सहित गम्भीर अध्ययन कराया।

सघ के आचार्य होते हुए भी आपके जीवन मे अद्भुत सरलता थी। एक बार आप सोजत मे पधारे तो वहा एक साधु थे। उनके विषय मे आपने पूछा तो लोगो ने कहा—अजी वह शिथिलाचारी है। तब आचार्यश्री ने फरमाया कि—'ऐसा मत कहो।' वे मेरे उपकारी हैं, मैं वहा जाऊगा और आप वहा पहुच भी गये। इस घटना का उन साधु के जीवन पर आश्चर्यजनक प्रभाव पडा।

आप ही नही आपके सान्निध्य मे रहने वाले सत भी विविध विरल विशेषताओ से युक्त थे। कोई विनयवान् था, तो कोई क्षमासागर, तो कोई विद्वान्।

एक उदाहरण लीजिए—एक बार पूज्य श्री के पास एक प्रोफेसर आये। कहने लगे कि—'आपका सर्वोत्तम विनयवान् शिष्य कौन है ? जरा मै उन विनयमूर्ति के दर्शन कर लू।' तब पूज्यश्री ने कुछ भी न कहते हुए सत को बुलाया। वह विनय भाव से उपस्थित हुआ। पूज्यश्री ने उसे बिना कुछ कहे ही वापस भेज दिया। इसी प्रकार उन्हे एक बार, दो बार ही नही, अनेक बार बुलाया। फिर भी बिना किसी हिचकिचाहट के वह सत आते रहे। तब प्रोफेसर ने कहा भगवन् ! बस बस, मैं समझ गया। मै जान गया कि इनमे कितना विनयभाव है। अब आप इन्हे बार बार बुलाकर कष्ट न दे।

प्रोफेसर साहब विनयमूर्ति की विनीतता तथा गुरु के प्रति शिष्य की अगाध श्रद्धा का प्रत्यक्ष दर्शन कर आश्चर्यान्वित हुए।

इसी प्रकार पूज्य श्री के एक शिष्य थे जिनका नाम श्री चतुर्भुजजी म सा था, जो क्षमासागर के नाम से प्रसिद्ध थे, उन्हे क्रोध करना तो आता ही नही था। वे यह अच्छी तरह से जानते थे कि क्रोध रूपी अग्नि आत्मा के स्फटिक के समान स्वच्छ गुणो को भस्म कर देती है।

एक बार किसी साधु के हाथ से सहसा पात्र (लकडी का भाजन) छूट जाने से उसके टुकडे हो गये। उस समय आचार्यश्री जो शौच-निवारण करने के लिये बाहर पधारे हुए थे। जब आचार्य श्री जी वापस पधारे, सयोगवश वे साधुजी किसी कार्यवश बाहर गये हुए थे। स्थानक मे क्षमासागर श्री चतुर्भुजजी म विद्यमान थे। आचार्य श्री जी ने पात्र को विखडित देखा, तब उन्हे यह ज्ञान हुआ कि

(समर्थ थे) [illegible] पात्र [illegible] हो। पर आपने उन्हें [illegible] से उपालम्भ दिया। क्षमासागर मुनिराज इसे मौन-भाव से श्रवण करते रहे। पूज्य श्री द्वारा दिये गये उपालम्भ को समभाव से ग्रहण करते हुए अपना अहोभाग्य मानने लगे कि अहो! मुझे आज पूज्य श्री जी के मुख से शिक्षा श्रवण करने को मिल रही है। इतने में ही जिनके हाथ से पात्र खडित हुआ था वे मुनिराज आये। जब पूज्य श्री को उपालभ देते हुए देखा तो वे कहने लगे—'भगवन्! पात्र तो मेरे द्वारा खडित हुआ है, अपराधी मैं हू। ये नही।'

तब पूज्यश्री ने क्षमासागरजी म सा से कहा-अरे! मैंने तुम्हे इतना उपालभ दिया और तुमने तनिक भी प्रतिवाद नही किया, स्पष्टीकरण न किया। इतना तो कह देते कि मेरे द्वारा पात्र खडित नही हुआ। तब क्षमासागर मुनिराज बोले–प्रभो! वैसे तो आपसे कभी ऐसे उपालभमय शब्द सुनने को नही मिलते, किन्तु मौन के द्वारा आपका उपालभ रूपी प्रसाद मिला। दुर्लभ शिक्षा प्राप्त हुई। इससे मुझे तो बहुत लाभ ही हुआ है। ऐसी क्षमाशीलता से ही आप (चतुर्भुजजी म सा) क्षमासागर के नाम से प्रसिद्ध हुए।

पूज्यश्री के सान्निध्य मे क्रियोद्धारक महान् क्रान्तिकारी पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म द्वारा की गई क्रान्ति प्रगतिशील हुई।

आचार्य श्री चौथमलजी म. सा.

आचार्य श्री चौथमलजी महाराज हुक्मगच्छ के चतुर्थ आचार्य हुए। आपका जन्म काठा प्रान्त के प्रमुख नगर पाली मे हुआ था।

ससार से उद्विग्न होकर सच्चे शाश्वत सुख की पिपासा को शान्त करने के लिए सर्व सतापहारिणी जैनेश्वरी दीक्षा बूदी शहर मे स १९०९ मे चैत्र शुक्ला द्वादशी को अगीकार की।

[illegible] आत्मा का निर्म[illegible] [illegible] "[illegible] तथा दया के सिद्धान्तानुसार ज्ञान-पूर्वक संयम का बड़ी ही सतर्क के साथ [illegible], मन और वचन से पालन किया।

आपका मन जितना [illegible] सहज था, उत ही संयम के प्रति सतर्क था। संयम की शिथिल के लिए वे "वज्रादपि कठोराणि" (वज्र से भी कठोर) थे तो संयम साधना में "मृदुनि कुसुमादपि (फूल से भी कोमल) थे।

जिनकी ज्ञान-पूर्ण क्रियाराधना आज भी साधु साध्वियो के लिए जाज्वल्यमान प्रकाश–स्तम्भ बनी हुई है। उनकी उत्कृष्ट क्रियाराधना का एक उदाहरण इस प्रकार है—

आपकी वृद्धावस्था के कारण आपका मरणधर्म शरीर जब जराजीर्ण हो गया था, तब भी आ साधुत्व की नित्यचर्या मे पूर्णतया सावधान रह थे। एक बार जब सन्ध्या का प्रतिक्रमण अस्वस्थ हो से लकडी के सहारे खडे होकर कर रहे थे उस सम एक श्रावक ने आपको बडी ही विनम्रता के सा कहा–'भगवन्! आपका आत्मबल अपरिमित है, कि उसका आधार शरीर जीर्ण होता हुआ चला जा र है, अत आप खड़े खडे प्रतिक्रमण न करके विराजव कर लें तो क्या हानि है?'

तब आचार्य श्री ने फरमाया—श्रावकजी अगर मै बैठा-बैठा प्रतिक्रमण करूगा तो सत सो सोये करेगे।' ऐसी थी सयम के प्रति सजगता-सतर्कता इससे पता चलता है कि आचार्य मे कितनी दीर्घदृ होनी चाहिए और किस प्रकार अपने आचार द्वा शिष्यो के समक्ष आदर्श उपस्थित करना चाहिए।

कठोर साधना के धनी आपने बहुत ही क लगभग ३ वर्ष तक आचार्य पद पर रहकर चतुर्वि सघ मे धर्मक्राति का बिगुल बजाया।

अन्त मे १९५७ की कार्तिक शुक्ला अष्टमी व रतलाम मे भौतिक शरीर का परित्याग कर आप चिर सुख की ओर प्रयाण किया।

आचार्य श्री श्रीलालजी म, सा.

देवेन्द्रो और दानवेन्द्रो के लिए भी जो अजेय है, उस काम (मदन) को जीतने वाले आचार्य श्री श्रीलालजी म सा हुक्मगच्छ के पाचवे पाट पर सुशोभित हुए ।

बचपन से ही आपश्री ने प्राकृतिक सुषमा की अनुपम रमणीयता मे रमण करते हुए सयम के उन्मुक्त क्षेत्र मे विचरण करने की शक्ति प्रादुर्भूत कीथी, तथा भौतिक शक्तियो की उपेक्षा करते हुए आध्यात्मिक भाव मे रमण करने लगे । छ वर्ष की अल्पवय मे ही माता से सुनकर सामायिक–प्रतिक्रमण कठस्थ कर लिए। आपकी निरन्तर बढती विरक्त भावना को देखकर माता-पिता ने सासारिक बन्धन-श्रृखला मे बाधने के लिए आपका विवाह कर दिया । यह प्रबल विघ्न भी आपको अपने विचारो से विचलित नही कर सका ।

एक बार जब आप मकान के ऊपर वाले कमरे मे अध्ययन कर रहे थे, तब आपकी धर्मपत्नी ने आकर कमरे का दरवाजा बन्द करके आपसे वार्तालाप करना चाहा । आपने सोचा–अहो ! एकान्त स्थान मे स्त्री का मिलना ब्रह्मचारी व्यक्ति के लिए योग्य नही है । आप वहां से भागने की कोशिश करने लगे किन्तु दरवाजा बन्द था । अत आप ब्रह्मचर्य की सुरक्षा के लिए खिडकी से ही नीचे वाली मजिल पर कूद पडे । यह थी आपकी दुर्जय साधना !

वैराग्य का वेग तीव्रतर होता गया । जब किसी भी उपाय से दीक्षा ग्रहण करने की आज्ञा प्राप्त न हो सकी तो अन्त मे बिना आज्ञा ही स्वयमेव दीक्षित हो गये। मोह की प्रबलता के कारण पारिवारिक जनो ने पुनः गृहस्थ बनाने का प्रयास किया किन्तु उनका प्रयत्न मिट्टी मे से तेल निकालने के समान विफल हुआ । 'सूरदास की कारी कवरिया चढे न दूजो रग' इस कहावत को आपने चरितार्थ किया ।

आपकी सयम के प्रति अडिगता देखकर परिवार वालो ने आज्ञा दे दी तब विधिवत् आप सयमी बने । तदनन्तर आचार्य श्री चौथमलजी म सा के अन्तेवासी होकर रहने लगे ।

आपने सयम का पूर्णतया पालन करते हुए शास्त्रों का गहनतम अध्ययन किया । आचार्य श्री ने परिपूर्ण योग्यता देखकर आपको अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया ।

३२ वर्ष तक सयम-जीवन का पालन कर २० वर्ष आचार्य पद पर रहते हुए जनता को आपने अमृतमय वाणी का पान कराया । आपके उपदेश से बडे बडे राजा-महाराजा प्रतिबोधित हुए ।

उदयपुर मे "इन्फ्लुए जा" रोग से ग्रसित होने के कारण भावी शासन को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए आपने मुनि श्री जवाहरलालजी म. सा को युवाचार्य पद प्रदान किया ।

जब पूज्य श्री जैतारण पधारे तब शास्त्रप्रवचन करते समय अचानक नेत्रज्योति क्षीण हो गई । मस्तिष्क मे भयानक पीडा उठी । तब आपने फरमाया कि यह चिह्न अ तिम समय के जान पड़ते है, अत: मुझे सथारा करा दो किन्तु सतो ने परिस्थिति को देखते हुए सथारा नही कराया । आषाढ शुक्ला द्वितीया को इतनी तीव्र वेदना मे भी "घोरा मुहुत्ता अबल सरीर' द्वारा उपदेश दिया तथा सागारी सथारा ग्रहण किया और रात्रि मे यावज्जीवन का सथारा लिया । चतुर्विध सघ से क्षमायाचना की । रात्रि के चतुर्थ प्रहर मे औदारिक शरीर को त्याग कर समाधिपूर्वक महाप्रयाण कर दिया । जैनशासन रूप गगनाङ्गन से एक जाज्वल्यमान सूर्य अस्त हो गया ।

आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा.

विन्ध्याचल की पर्वतीय श्रेणियो से आच्छादित मालव प्रान्त की पुण्यधरा थादला ग्राम से हुक्मगच्छ के षष्ठ पट्टधर ज्योतिर्धर महान् क्रान्तिकारी जवाहराचार्य का उद्भव हुआ ।

इतिहास साक्षी है कि महापुरुषों के जीवनपथ मे अनेक प्रकार की बाधाए व कठिनाइया आती है किन्तु वे पर्वत की भाति अटल रहते है और उन्हे जीत लेते है । ये बाधाए और कठिनाइया उनके जीवन को विकास के उच्चतम शिखर पर प्रतिष्ठित करने मे सोपानो का काम करती है ।

श्री जवाहरलालजी का जीवन बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक अनेक प्रकार के सघर्षो एव बाधाओ के बीच से गुजरा किन्तु ज्योतिर्धर जवाहर उन सघर्षो की दुर्लंघ्य घाटियो को दृढतापूर्वक पार करते चले गये । ज्यो–ज्यो सघर्ष आए त्यो-त्यो आपके जीवन मे अधिकाधिक निखार आता गया ।

आपश्री की प्रवचन–पटुता, प्रखर प्रतिभा, आगम–मर्मज्ञता और गौरवशाली शरीर सम्पत्ति को देखकर पूज्य श्री श्रीलालजी म सा ने आपको विधिवत् अपना उत्तराधिकारी घोषित किया ।

प्रखर प्रतिभा से ही आपश्री ने आगमो के गभीर रहस्यो का आलोडन-विलोडन करके जनता मे फैली भ्रान्त धारणाओ का निराकरण कर दया-दान रूप सत्य-तथ्य धर्म के स्वरूप को उद्भासित किया ।

सन्त मुनिराजो के ज्ञान-चक्षु को विकसित करने के लिये अपने शिष्यो को पडितो से अध्ययन कराकर ज्ञानवर्द्धन की दिशा मे एक नवीन आयाम स्थापित किया, जिसका तत्काल तो कुछ विरोध सामने आया किन्तु आचार्य श्री जवाहर की दूरदर्शिता के कारण वर्त्तमान मे उसका व्यापक प्रचार-प्रसार होने से पूरा स्थानकवासी समाज उससे लाभान्वित हुआ, फलस्वरूप श्रमण–श्रमणी वर्ग मे सस्कृत–प्राकृत, न्याय, व्याकरण, आगम आदि के धुरधर विद्वान् सामने आए ।

हालाकि पूज्यश्री एक सप्रदाय के आचार्य थे तथापि अखिल जैन-समाज मे ही नही, अपितु जैनेतर समाज मे भी, साथ ही राष्ट्रीय स्तर पर भी आपके व्यक्तित्व का एक अनूठा प्रभाव था ।

आपश्री के धार्मिक सिद्धान्तो से युक्त प्रवच[न] सर्वजनहिताय और सर्वजनसुखाय तो थे ही साथ ही आप भारतीय सभ्यता एव सस्कृति को एक नई दिशा-निर्देश देने वाले भी थे ।

यह युग भारत की परतन्त्रता का था और आप स्वतन्त्रता के सजग प्रहरी थे । तब भला आप भारतीय परतन्त्रता की दयनीय स्थिति कब सह होती ? आपश्री ने भी सजीवनी स्वतन्त्रता पाने लिये अपनी श्रमणमर्यादा का निराबाध–निर्वहन क[रते] हुए विशाल पैमाने पर धार्मिक आन्दोलन प्रारम्भ क[र] दिया । ब्रह्म तेज से दमकते-चमकते आपश्री के मु[ख] मण्डल से स्फुरित वचन स्वतन्त्रता पाने के लिये ज[न] जन मे भव्य क्रान्ति का शखनाद करने लगे ।

आपके प्रवचनो का आश्चर्यजनक प्रभाव हुआ सहस्रो मानवो ने पचेन्द्रिय जीवो की हिंसा के निमि[त्त] भूत चर्बीमिय विदेशी वस्त्रो का परित्याग कर अल्पार[म्भी] खादी के वस्त्र धारण कर लिये । खान–पान, र[हन] सहन आदि मे अनेक मानवो ने भारतीय सभ्यत[ा] सस्कृति को जीवन मे स्थान दिया । जिसके न[मूने] आज भी इतस्तत देखने को मिल रहे है ।

अहिंसा के पुजारी महात्मा गाधी को आपश्री की दिव्य प्रतिभा का पता चला तो वे स[्वय] आपके पास पहुचे तथा आपके स्वतन्त्रता के रग [मे र]सने मार्मिक ओजपूर्ण प्रवचनो को सुनकर आनन्द [अनुभव] किया । उच्चस्तर के राजनीतिविदो एव पत्रकारो [मे] यह प्रसिद्धि हो गई कि भारत मे एक नही दो ज[वा]हर है । राजनीति के क्षेत्र मे पडित जवाहर[लाल] नेहरु है तो धर्मनीति के क्षेत्र मे आचार्य श्री ज[वा]हरलालजी महाराज ।

साहित्यजगत् मे भी आपकी सेवा कुछ उल्लेखनीय नही है । स्थानाग सूत्र मे निर्दिष्ट धर्मो के स्वरूप पर आपने अनुपम व्याख्या प्रस्तुत है । धर्म के साथ राष्ट्र और राष्ट्र के साथ धर्म संगति का प्रस्तुतीकरण कर आपने जैन धर्म

विराट स्वरूप जनता के समक्ष रखा है । सद्धर्म के प्रचार मे आपकी अमर कृति है-"सद्धर्ममण्डन" जो आज भी सद्धर्म की रक्षा करने के लिये अभेद दुर्ग के रूप मे परिलक्षित हो रही है ।

आपश्री की आत्मानुभूति के भास्कर से उद्भासित ज्ञान रूपी रश्मिया वर्तमान मे भी "जवाहर किरणावली' सीरीज के माध्यम से दिग् दिगन्त तक आपके यशस्वी जीवन की, तलस्पर्शी विद्वत्ता की, सूक्ष्म विचारक्षमता की, अद्भुत विवेचना कौशल की और आगमो के रहस्य को हृदयगम कर लेने की घोषणा कर रही है ।

आपश्री की क्रान्ति मात्र विचारो तक ही सीमित नही थी, अपितु आप सयमाचार के पालन करने व करवाने मे भी पूर्ण सजग एव सतर्क रहते थे । उदाहरण के रूप मे स १९९० के वर्ष मे अजमेर नगर मे वृहत् साधु-सम्मेलन हुआ था । वहा आपश्री प्रतिनिधि के रूप मे न रहकर दर्शक के रूप मे उपस्थित थे । सम्मेलन मे आपके द्वारा दिये गये विचार व परामर्श की सभी ने सराहना व प्रशसा की थी ।

लगभग ३५ हजार जनता के मध्य मे जब आपके समक्ष विद्युत् से सचालित लाउडस्पीकर मे बोलने का प्रसग आया तब जनता के बहुत आग्रह करने पर भी आप नही बोले और बिना बोले ही हजारो की जनमेदिनी मे से वीरता के साथ निकल कर अपूर्व साहस व दृढता का परिचय दिया था ।

आपश्री इन विचारो के धनी थे कि शुद्धाचार-युक्त वैचारिक क्राति ही सच्ची शाति का प्रतीक होती है ।

पूज्यश्री ने भारत के बहुभूभाग-मारवाड मेवाड, मालवा, गुजरात, पजाब, महाराष्ट्र, काठियावाड आदि के सुदूर प्रदेशो मे विचरण करके अढाई हजार वर्ष से चले आ रहे प्रभु महावीर द्वारा प्रविवेचित धर्म के विशुद्ध स्वरूप को जनता के समक्ष रखकर गरिमामय कीर्तिस्तम्भ स्थापित किया ।

जीवन की संध्या का समय आपने थली प्रांत की पुण्यधरा भीनासर मे व्यतीत किया था । उस समय कर्म-रिपु ने अपना पुर-जोर प्रभाव बताया । घुटने मे दर्द, पक्षाघात, जहरी फोडा आदि अनेकानेक भयंकर बीमारियो ने आ घेरा, किन्तु उस वीर पुरुष के समक्ष उन कर्म-रिपुओ को भी परास्त होना पडा । वे आध्यात्मिक पुरुष, आत्मा और शरीर के भेद को जानने वाले, ज्ञान-क्रिया से सयुक्त, अहर्निश साधना मे प्रगतिशील थे । उन वेदनाओ को भी अत्यन्त समभाव से सहन करते हुए कर्म-शत्रुओ से बराबर युद्ध करते रहे ।

भयकर वेदना मे भी पूज्यश्री के चमकते-दमकते गौर मुख-मण्डल की दिव्य सुषमा से जनमानस मुग्ध हो उठता था । अनायास लोगो के मुख से निकल पड़ता-अहो ! क्या साधना है इस युग-पुरुष की ! कैसी वीरता है कर्म शत्रुओ को परास्त करने मे इस लौह-पुरुष की ।

आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा.

अरावली की उपत्यकाओ मे बसे हुए मेवाड के प्रमुख नगर उदयपुर मे गणेशाचार्य का आविर्भाव हुआ ।

नवयौवन काल मे ही पूज्यश्री पर एक वज्रपात सा हुआ । माता, पिता और पत्नी स्वर्ग सिधार गए । ऐसे वज्राघात को भी आपने समभाव से सहन कर ससार के स्वरूप का यथार्थ चिन्तन किया । आप विरक्ति के आलोक मे विचरण करने लगे । ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहर के उदयपुर चातुर्मास मे ससार की असारता का बोध पाकर राग से विराग के पथ (सयम) को अगीकार कर लिया ।

पूज्य श्री श्रीलालजी म ने अपने दीर्घ अनुभव एव पैनी मति के आधार पर आपश्री के पिताजी को पूर्व मे अर्थात् जब आप शैशवावस्था मे थे तब ही फरमा दिया था कि-"यदि आप अपने बालक को

संगम मिला दे तो हमारे धर्म की महान उन्नति होगी। यह बालक महान होनहार है।"

पूज्यश्री की गुरु-आराधना बेजोड़ थी। आपश्री ने निरन्तर आचार्य श्री जवाहरलालजी म. की सेवा में रहकर ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना करते हुए गुरु–भक्ति की तन्मयता का एक महान् आदर्श उपस्थित किया।

प्रवचन शैली के साथ ही साथ आपश्री की गायनशैली भी अति मनमोहक थी। जब आपके मुख से मधुर स्वर-तन्त्रिया झकृत होने लगतीं तब जन-जन का मानस स्वर-लहरियो के आनन्द से आन्दोलित हो उठता था।

आपश्री की क्षमा, सहिष्णुता एव विनम्रता उस सीमा तक पहुच चुकी थी कि प्रकाण्ड विद्वान् तथा आगमज्ञ होते हुए भी यदा-कदा पूज्य श्री व्याख्यान मे जनसमूह के समक्ष भी आपको टोक देते तो आप उसी समय असावधानी के लिये क्षमायाचना करते और कृतज्ञता-पूर्वक उनकी सूचना अगीकार करते।

'गणेश' शब्द की यथार्थता–

व्याकरण के अनुसार 'गणेश' शब्द की तीन व्युत्पत्तिया होती है।

१ गणस्य+ईश —गणेश।
२ गणयो+ईश —गणेश।
३ गणाना+ईश – गणेश।

कितना अद्भुत सयोग है–गणेशाचार्य के नाम मे, उनके जीवन मे यह तीनो व्युत्पत्तिया घटित होती हुई "यथानाम तथागुण" की उक्ति को पूर्णरूप से चरितार्थ करती है। पहली व्युत्पत्ति है—

१ गणस्य+ईश = गणेश जो एक गण का स्वामी हो, वह गणेश है। पूज्यश्री के ज्ञानयुक्त दृढतम सयम-साधना आदि योग्यतम गुणो को देखकर ज्योतिर्धर जवाहराचार्य ने जलगाव मे अपने शरीर की अस्वस्थता को जानकर आपश्री को अपने गण (सम्प्रदाय) का आचार्य व उत्तराधिकारी (युवाचार्य) नियुक्त किया था।

२. गणयो+ईश = गणेश जो दो गणो का ईश हो, वह गणेश है। महान् क्रियावान् परम प्रतापी पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के पचम पट्टधर पूज्य श्रीश्रीलालजी म. के समय मे कतिपय कारणो को लेकर सम्प्रदाय के दो विभाग हो चुके थे। उनका पुन एकीकरण करने के लिये स्थानकवासी समाज के गणमान्य मध्यस्थ मुनिवरो को पच के रूप मे नियुक्त किया गया था। उन्होने सवत् १९९० की वैशाख कृष्णा अष्टमी को अपना निर्णय दिया कि पूज्य श्री जवाहरलालजी म. के एवं पूज्य श्री मुन्नालाल जी म सा. के गणो के भविष्य मे उत्तराधिकारी पूज्य श्री गणेशीलालजी म. होगे। उनके शब्द हैं– "मुनि श्री गणेशलालजी म. को युवाचार्य नियुक्त करें।" उस निर्णय मे दोनो पक्षो ने अपनी सम्मति दे दी। इस प्रकार दो गणो का युवाचार्य पद प्राप्त होने से "गणयो+ईश" की व्युत्पत्ति आपके जीवन में सार्थक होती है।

३ गणाना+ईश —गणेश।

दो से अधिक गणो के जो ईश हो, वे गणेश है। स २००९ की वैशाख शुक्ला १३ बुधवार को लगभग ३५ हजार के विशाल जनसमूह के बीच मे प्राय. स्थानकवासी समाज के मूर्धन्य श्रमणसमूह के साथ समग्र चतुर्विध सघ ने एकमत होकर आपश्री को अपना (सर्वसत्ता–सपन्न) उपाचार्य स्वीकृत किया और इस पद की विधि सुसम्पन्न की। इस प्रकार अनेक गणो के आचार्य बन जाने से 'गणाना+ईश' की व्युत्पत्ति आपश्री के जीवन मे घटित होती है।

कुछ-एक कारणो से❀ श्रमण सघ अपने मूल

❀ उन कारणो का विशद वर्णन श्री अ भा सा जैन सघ द्वारा प्रकाशित "श्रमण सघीय समस्याओ पर विश्लेषणात्मक निवेदन" नामक पुस्तक मे जिज्ञासु देखें।

स्वरूप मे स्थायी नही रह सका । तब आपश्री ने अपनी शर्त के अनुसार त्याग-पत्र दे दिया और अपनी पूर्व अवस्था मे विचरण करने लगे ।

जीवन की सध्या मे आपश्री के मन मे एक विचार स्फुरित हुआ । वह यह था-श्रमणसघ का जो उद्देश्य है उस उद्देश्य को मै कम से क्रम उस उद्देश्य के पोपक सघ मे तो पूर्णतया अमली रूप दे दू । तदनुसार आपश्री ने साधु-साध्वियो मे उस उद्देश्य को साकार रूप दे दिया । जिसके फलस्वरूप वर्त्तमान मे आपश्री का सघ समताविभूति विद्वत्-शिरोमणि आचार्य श्री नानेश के योग्यतम अनुशासन को पाकर निराबाधरूप से चलता हुआ सर्वतोभावेन विकास की ओर प्रगतिशील है ।

आपश्री की निर्भयता भी मन को विस्मयाभिभूत करने वाली थी । जब आपश्री विचरण-काल मे एक बार सतपुडा पर्वत पार कर रहे थे, उस समय आपके साथ श्रीमलजी म तथा जेठमलजी म थे । अचानक आपकी दृष्टि दो खूखार शेरो पर पडी । चालीस-पचास कदम का ही फासला था किन्तु आप बिलकुल निर्भय रहे । कही सत डर न जाए, अत आपश्री ने उन्हे अपनी ओट मे रखते हुए-वनराजो की तरफ इगित किया । कितना सौजन्य था अपने गुरुभ्राताओ के प्रति !

पूज्यश्री से वनराजो का दृष्टिमिलनहुआ । किन्तु जो जगत् का राजा है, ससार के चराचर, प्राणियो को अभय देने वाला है, उसके सामने दो शेर तो क्या सहस्रो भी आ जाए । तथापि उसका कुछ भी नही बिगाड सकते । वनराजो की शक्ति आपश्री के सामने हतप्रभ हो गई । जगत्सम्राट आचार्यश्री गणेश के चरणो मे द्रुत श्रद्धान्वित होते हुए दोनो वनराज जगल मे विलीन हो गए ।

जब आपकी दिव्य आत्मा चरम लक्ष्य की साधना मे तन्मय थी तब आपश्री का तेजपूर्ण अलौकिक आभा-मण्डल जनता मे एक विचित्र प्रकार की शान्ति प्रसारित कर रहा था ।

धन्य है ऐसी महान् पवित्र आत्मा !

आचार्य श्री नानालालजी म. सा.

उन्नत ललाट, प्रलम्ब बाहु, प्रदीप्त गात्र, ब्रह्म तेज से चमकता मुखमण्डल, निर्विकार सुलोचन, विशाल वक्षस्थल आदि शारीरिक श्री से समृद्ध प्रखर प्रतिभा-सम्पन्न महायोगी को देखकर जन-जन के मानस मे अपूर्व आन्तरिक शाति का सचार हो जाता है ।

जिस महायोगी की योग-मुद्रा से निर्झरित शीतल शाति रूप नीर मे आप्लावित होकर एक नही अनेक आत्माओ ने परम शाति का अनुभव किया और कर रहे है । वे महायोगी है—आचार्य श्री नानेश ।

वीरभूमि मेवाड के दाता ग्राम मे प्रादुर्भूत होकर कर्मरूपी शत्रुओ का दमन करने के लिये शात-क्राति के जन्मदाता श्री गणेशाचार्य के सान्निध्य मे दीक्षित—सयमित हुए और अहर्निश साधना की सीढियो पर आरोहण करने लगे ।

आगम के गभीर रहस्यो का तलस्पर्शी ज्ञान तो प्राप्त किया ही, साथ ही अन्य धर्मो के ग्रन्थो का भी आपने अध्ययन किया । न्याय, व्याकरण, साहित्य आदि विषयो के अनेक ग्रन्थो के गहन अध्ययन के साथ सस्कृत-प्राकृत भाषाओ पर भी पूर्ण अधिकार प्राप्त किया । ऐसी प्रगतिशील भव्य साधना को देखकर श्री गणेशाचार्य ने महायोगी को उदयपुर नगर मे, राजमहल के विशाल प्राङ्गण मे धवल वस्त्र प्रदान कर अपना उत्तराधिकारी (युवाचार्य) घोषित किया ।

इनका साधनामय जीवन जन-जन के मानस को धर्म का दिव्य प्रकाश प्रदान करेगा । मानो इस तथ्य की सूचना देने के लिये मेघाच्छादित सूर्य भी धवल-वस्त्र प्रदान करते समय बादलो से अनावृत होकर पूर्णतया जाज्वल्यमान हो उठा । वर्तमान मे भी अनेक घटाटोप मेघो के पटल भी महायोगी की साधनारूपी सूर्य की प्रचण्डता के समक्ष बिखरते जा रहे हैं ।

आज से लगभग सात वर्ष पूर्व मालव प्रान्त मे लाखो दलित वर्ग, जो गोरक्षक से गोभक्षक बन रहे थे, जिनका मानवीय स्तर अध पतन के गर्त मे गिर

लालों का यह लाल हठीला, कभी नहीं डिग पायेगा

समरथमल डागरिया

गगन झुकेगा, पवन रूकेगा, बहता पानी जब थम जायेगा ।
प्रलय मचेगा उस दिन, जब मेरा पच महाव्रती डिग जायेगा ।।
तू जोर लगाले अरे जमाने, आखिर मुह की खायेगा ।
लालो का यह लाल हठीला, कभी नही डिग पायेगा ।।

सकल्पो की ज्वाला ने, जिसको नई रवानी दी ।
पूज्य गणेशी से गुरुवर ने, वीतराग की वाणी दी है ।।
दशवैकालिक सूतर ने, जिसको नई दिशा दी है ।
भारत मा के परम लाडले ने, जीवन की कुर्बानी दी है ।।

इसको कोई क्या समझेगा, एक दिन वह भी आयेगा ।
लालो का यह लाल हठीला, कभी नही डिग पायेगा ।।

भक्तामर की गाथाओ को अन्तस्तल से चूमा है ।
विनयचन्द की चौबीसी पर ललक लाडला झूमा है ।।
आगम और अनगार ने जिसका मानस विकसित कर डाला ।
महावीर की इन सन्तानो ने, णमो आयरियाण कह डाला ।।

सागर वर गभीरा जो है, उसको कोई क्या झुठ लायेगा ।
पूज्य गणेशी का पटधर मेरा कभी नही डिग पायेगा ।।
चाहे बादल फट फट जाये और अगणित बरसाये अंगारे ।
हिले हिमालय डिगे दिशाएं, रह रह कर यूं चित कारे ।।

सत्य अहिंसा का पालक मेरा, कभी नही विचलित हो जायेगा ।
गुरु जवाहर की क्रान्ति पताका, अहर्निश यह फहरायेगा ।।
एक नजारा समरथ तेरा गुरुवर, अग जग को यह दिख लायेगा ।
सुधर्मा स्वामी का पटधर, यह कभी नही डिग पाएगा ।।

जिन शासन के गौरव तेरा,
अभिनन्दन करती मा भारती ।
शस्य श्यामला वसुन्धरा यह,
तेरे जीवन की उतारे आरती ।।
तू पंच महाव्रत धारी है,
जप तप सयम तेरी साधना ।
कोटि कोटि स्वीकार करो गुरु,
चरण कमल मे मेरी वन्दना ।।

आचार्य प्रवर की नेश्राय में विचरण करने वाले एवं उनसे दीक्षित संत सतियांजी म. सा. की तालिका:-

क्र. स.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
१.	श्री ईश्वरचन्दजी म. सा.,	देशनोक	स १९९९ मिगसर कृष्णा ४	भीनासर
२.	श्री इन्द्रचन्दजी म. सा.,	माडपुरा	स २००२ वैशाख शुक्ला ६	गोगोलाव
३.	श्री सेवन्तमुनिजी म. सा.,	कन्नोज	स २०१९ कार्तिक शुक्ला ३	उदयपुर
४.	श्री अमरचन्दजी म. सा.,	पीपलिया	स २०२० वैशाख शुक्ला ३	पीपलिया
५.	श्री शान्तिमुनिजी म. सा.,	भदेसर	स २०१९ कार्तिक शुक्ला १	भदेसर
६.	श्री कवरचन्दजी म. सा.,	निकुम्भ	सं २०१९ फाल्गुन शुक्ला ५	बड़ीसादड़ी
७.	श्री प्रेममुनिजी म. सा.,	भोपाल	स २०२३ आश्विन शुक्ला ४	राजनांदगाव
८.	श्री पारसमुनिजी म. सा.,	दलोदा	स. २०२३ आश्विन शुक्ला ४	राजनांदगाव
९.	श्री सम्पतमुनिजी म. सा.,	रायपुर	स २०२३ आश्विन शुक्ला ४	राजनादगांव
१०.	श्री रतनमुनिजी म. सा.,	भाड़ेगांव		सोनार
११.	श्री धर्मेशमुनिजी म. सा.,	मद्रास	स २०२३ फाल्गुन कृष्णा ९	रायपुर
१२	श्री रणजीतमुनिजी म. सा.,	कंजार्ड़ा	स २०२७ कार्तिक कृष्णा ८	बडीसादडी
१३.	श्री महेन्द्रमुनिजी म. सा.,	गोगुन्दा	स २०२७ कार्तिक कृष्णा ८	बड़ीसादड़ी
१४.	श्री सौभागमलजी म सा.,	बड़ावदा	स २०२८ कार्तिक शुक्ला १३	ब्यावर
१५.	श्री रमेशमुनिजी म. सा,	उदयपुर	स २०२८ कार्तिक शुक्ला १३	ब्यावर
१६.	श्री रवीन्द्रमुनिजी म सा.,	कानवन	स २०२९ भादवा कृष्णा १२	जयपुर
१७	श्री भूपेन्द्रमुनिजी म. सा,	निकुम्भ	स २०२९ आश्विन शुक्ला ३	"
१८.	श्री वीरेन्द्रमुनिजी म सा.,	आष्टा	स २०२९ माघ शुक्ला २	देशनोक
१९.	श्री हुलासमलजी म सा.,	गगाशहर	स २०२९ माघ शुक्ला १३	भीनासर
२०.	श्री जितेन्द्रमुनिजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
२१.	श्री विजयमुनिजी म. सा,	बीकानेर	" " " " "	"
२२.	श्री नरेन्द्रमुनिजी म. सा,,	बम्बोरा	स २०३० माघ शुक्ला ५	सरदारशहर
२३.	श्री ज्ञानेन्द्रमुनिजी म. सा,	ब्यावर	स २०३१ जेठ शुक्ला ५	गोगोलाव
२४	श्री बलभद्रमुनिजी म सा,	पीपलिया	स २०३१ आश्विन शुक्ला ३	सरदारशहर
२५	श्री पुष्पमुनिजी म सा,	मंडी डब्वावाली	स २०३१ आश्विन शुक्ला ३	"
२६.	श्री मोतीलालजी म सा.,	गंगाशहर	" " माघ " १२	देशनोक
२७.	श्री रामलालजी म सा.,	देशनोक	" " " " "	"
२८.	श्री प्रकाशचन्दजी म. सा,	देशनोक	स २०३२ आश्विन शुक्ला ५	देशनोक
२९	श्री गौतममुनिजी म. सा,	बीकानेर	स २०३२ मिगसर शुक्ला १३	बीकानेर

क्र. सं.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
१८.	श्री भवरकंवरजी (प्रथम) म सा	बीकानेर	स २००३ वैशाख कृ. १०	बीकानेर
१९	श्री सम्पतकवरजी म सा.	जावरा	स २००३ आश्विन कृ १०	ब्यावर पुरानी
२०	श्री सायरकंवरजी (प्रथम) म. सा.	केशरसिंहजी का गुड़ा	स २००४ चै शु २	राणावास
२१.	श्री गुलाबकंवरजी (द्वि.) म सा,	उदयपुर	स २००६ मा. शु. १	उदयपुर
२२.	श्री कस्तूरकंवरजी (प्र.) म सा	नारायणगढ	स. २००७ पौ. शु. ४	खाचरौद
२३.	श्री सायरकंवरजी (द्वि) म सा.	ब्यावर	स २००७ ज्ये. शु. ५	ब्यावर
२४.	श्री चान्दकवरजी म सा.	बीकानेर	स २००८ फा कृ ८	बीकानेर
२५.	श्री पानकंवरजी (द्वि) म सा,	बीकानेर	स २००९ ज्ये कृ ६	बीकानेर
२६	श्री इन्द्रकंवरजी म. सा,	बीकानेर	सं २००९ ज्ये. कृ. ५	बीकानेर
२७	श्री बदामकंवरजी म. सा,	मेडता	स २०१० ज्ये कृ. ३	बीकानेर
२८.	श्री सुमतिकंवरजी म. सा,	झज्जू	स २०११ वै शु ५	भीनासर
२९.	श्री इचरजकंवरजी म. सा,	बीकानेर	स २०१३ आ. शु १०	गोगोलाव
३०	श्री चन्द्राकंवरजी म. सा.,	कुकड़ेश्वर	स २०१४ फा. शु. ३	कुकड़ेश्वर
३१.	श्री सरदारकंवरजी म. सा.,	अजमेर	सं २०१५ आ. शु. १३	उदयपुर
३२	श्री शाताकंवरजी (प्रथम) म सा	उदयपुर	स २०१६ ज्ये शु. ११	उदयपुर
३३.	श्री रोशनकवरजी (प्र) म सा,	उदयपुर	स. २०१६ आ शु १५	बड़ीसादड़ी
३४.	श्री अनोखाकवरजी म. सा,	उदयपुर	स. २०१६ का कृ ८	उदयपुर
३५	श्री कमलाकंवरजी (प्र) म सा,	कानोड	स. २०१६ का. शु १३	प्रतापगढ
३६	श्री झमकूकंवरजी म. सा.,	भदेसर	स २०१७ मि. कृ ५	उदयपुर
३७	श्री नन्दकंवरजी म. सा,	बडीसादडी	स २०१७ फा बदी १०	छोटीसादडी
३८	श्री रोशनकंवरजी (द्वि) म. सा,	बडीसादडी	सं २०१८ वै शु. ८	बड़ीसादड़ी
३९	श्री सूर्यकान्ताजी म सा,	उदयपुर	स २०१९ वै शु ७	उदयपुर
४०.	श्री सुशीलाकवरजी (प्र.) म सा,	उदयपुर	सं २०१९ वै शु १२	उदयपुर
४१.	श्री शान्ताकवरजी (द्वि) म.सा.,	गगाशहर	स २०१८ फा कृ १२	गगाशहर
४२	श्री लीलावतीजी म. सा,	निकुम्भ	सं २०२० फा शु २	निकुम्भ
४३.	श्री कस्तूरकवरजी म.स (द्वि)	पीपल्यामडी	स २०२० वै शु ३	पीपल्यामडी
४४	श्री हुलासकवरजी म सा,	चिकारड़ा	स २०२१ वै शु १०	चिकारड़ा
४५	श्री ज्ञानकवरजी (द्वि) म.सा,	मालदामाड़ी	स २०२१ आ. शु ८	पीपलियाकला
४६	श्री विरदीकवरजी म. सा.,	बीकानेर	स २०२३ वै शु ८	बीकानेर
४७.	श्री ज्ञानकवरजी (द्वि) म.सा.,	राणावास	सं २०२३ आ शु ४	राजनादगांव
४८.	श्री प्रेमलताजी (प्र) म सा,	सुरेन्द्रनगर	" " " "	"
४९	श्री इन्दुबालाजी म सा.,	राजनादगाव	" " " "	"
५०	श्री गगावतीजी म सा,	डोगरगांव	स २०२३ मि. शु १३	डोगरगांव

क्र. स	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
३०.	श्री प्रमोदमुनिजी म. सा.,	हारा	स २०३३ माघ कृष्णा १	भीनासर
३१.	श्री प्रशममुनिजी म. सा.,	गंगाशहर	स २०३४ वैशाख कृष्णा ७	भीनासर
३२.	श्री अशोककुमारजी म. सा,	जावरा	स २०३४ आश्विन शुक्ला २	भीनासर
३३.	श्री मूलचन्दजी म सा,	नोखामण्डी	स २०३४ मिगसर शुक्ला ५	नोखामण्डी
३४.	श्री ऋषभमुनिजी म. सा,	बम्बोरा	स २०३४ माघ शुक्ला १०	जोधपुर
३५.	श्री अजितमुनिजी म. सा.,	रतलाम	स. २०३५ आश्विन शुक्ला २	जोधपुर
३६	श्री जितेशमुनिजी म सा.,	पूना	स २०३६ चैत्र शुक्ला १५	ब्यावर
३७.	श्री पद्मकुमारजी म. सा,	नीमगावखेडी	" " " " "	"
३८	श्री विनयमुनिजी म. सा,	ब्यावर	" " " " "	"
३९.	श्री गोविन्दमुनिजी म. सा.,	ब्यावर	स २०३७ पौष शुक्ला १३	जगदलपुर
४०.	श्री सुमतिमुनिजी म. सा,	नोखामडी	स ३०३७ पौष शुक्ला ३	भीम
४१.	श्री चन्द्रेशमुनिजी म. सा.,	फलोदी	स २०३८ वैशाख शुक्ला ३	गगापुर
४२.	श्री पकजमुनिजी म. सा,	राजनादगाव	स. २०३९ चैत्र शुक्ला ३	अहमदाबाद
४३.	श्री धर्मेन्द्रकुमारजी म सा.,	साकरा	" " " " "	"
४४.	श्री धीरजकुमारजी म. सा,	जावद	सं २०४१ फाल्गुन शुक्ला २	रतलाम
४५	श्री कातिकुमारजी म. सा.,	नीमगावखेड़ी	" " " " "	"

महासतियांजी म. सा की तालिका

क्र.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
१.	श्री सिरेकंवरजी म. सा.,	सोजत	स १९८४	सोजत
२.	श्री वल्लभकवरजी (प्रथम) म सा.	जावरा	स १९८७ पौष शुक्ला २	निसलपुर
३	श्री पानकवरजी (प्रथम) म सा.	उदयपुर	स १९९१ चैत्र शुक्ला १३	भीण्डर
४.	श्री सम्पतकवरजी (प्रथम) म सा.	रतलाम	स १९९२ चैत्र शुक्ला १	रतलाम
५.	श्री गुलाबकवरजी (प्रथम) म.सा	खाचरौद	सं १९९२	खाचरौद
६,	श्री प्यारकवरजी म सा	गोगोलाव	स १९९५ वैशाख शुक्ला ३	गोगोलाव
७.	श्री केसरकवरजी म. सा,	बीकानेर	स १९९५ ज्येष्ठ शुक्ला ४	बीकानेर
८.	श्री गुलाबकवरजी (द्वितीय) म सा.	जावरा	स १९९७	खाचरौद
९.	श्री धापूकवरजी (प्रथम) म. सा	भीनासर	स १९९८ भादवा कृ ११	भीनासर
१०.	श्री कुंकुकवरजी म. सा,	देवगढ़	स, १९९८ वैशाख शु. ६	देवगढ
११.	श्री पेपकवरजी म सा.,	बीकानेर	स. १९९९ ज्येष्ठ कृ. ७	बीकानेर
१२	श्री नानूकवरजी म. सा.	देशनोक	स १९९९ आश्विन शु ३	देशनोक
१३	श्री लाडकवरजी म सा.,	बीकानेर	स २००० चैत्र कृ १०	बीकानेर
१४.	श्री धापूकवरजी (द्वितीय) म.सा,	चिकारड़ा	स. २००१ चैत्र शु. १३	भीलवाडा
१५	श्री कंचनकंवरजी म. सा,	सवाईमाधोपुर	स २००१ वैशाख कृ. २	ब्यावर
१६.	श्री सूरजकवरजी म. सा,	विरमावल	स २००२ माघ शु. १३	रतलाम
१७,	श्री फूलकंवरजी म. सा	कुम्तला	स २००३ चैत्र शु ९	सवाईमाधोपुर

क्र. स.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
१८	श्री भवरकवरजी (प्रथम) म सा.	बीकानेर	स २००३ वैशाख क्. १०	बीकानेर
१९	श्री सम्पतकवरजी म. सा.	जावरा	स २००३ ग्राश्विन कृ १०	ब्यावर पुरानी
२०	श्री सायरकंवरजी (प्रथम) म. सा.	केशरसिहजी का गुड़ा	स. २००४ चै शु २	राणावास
२१.	श्री गुलाबकंवरजी (द्वि) म सा,	उदयपुर	स २००६ मा. शु १	उदयपुर
२२.	श्री कस्तूरकंवरजी (प्र) म सा	नारायणगढ	स. २००७ पौ. शु ४	खाचरौद
२३	श्री सायरकवरजी (द्वि) म. सा.	ब्यावर	स २००७ ज्ये. शु. ५	ब्यावर
२४.	श्री चान्दकवरजी म. सा.	बीकानेर	स २००८ फा. कृ ८	बीकानेर
२५.	श्री पानकंवरजी (द्वि) म सा,	बीकानेर	स २००९ ज्ये. कृ ६	बीकानेर
२६.	श्री इन्द्रकंवरजी म सा.,	बीकानेर	स २००९ ज्ये कृ. ५	बीकानेर
२७	श्री बदामकवरजी म. सा.,	मेड़ता	स २०१० ज्ये कृ. ३	बीकानेर
२८.	श्री सुमतिकंवरजी म. सा,	झज्जू	स २०११ वै शु ५	भीनासर
२९.	श्री इचरजकंवरजी म सा.,	बीकानेर	सं २०१३ ग्रा. शु. १०	गोगोलाव
३०	श्री चन्द्राकंवरजी म सा.,	कुकडेश्वर	स २०१४ फा. शु. ३	कुकड़ेश्वर
३१.	श्री सरदारकंवरजी म सा,	ग्रजमेर	स. २०१५ ग्रा. शु. १३	उदयपुर
३२	श्री शाताकवरजी (प्रथम) म सा.	उदयपुर	स. २०१६ ज्ये. शु. ११	उदयपुर
३३.	श्री रोशनकवरजी (प्र) म सा.,	उदयपुर	स. २०१६ ग्रा शु १५	बड़ीसादडी
३४.	श्री ग्रनोखाकवरजी म सा,	उदयपुर	स २०१६ का कृ ८	उदयपुर
३५	श्री कमलाकंवरजी (प्र) म सा,	कानोड	स. २०१६ का. शु. १३	प्रतापगढ़
३६.	श्री झमकूकवरजी म. सा.,	भदेसर	स २०१७ मि कृ ५	उदयपुर
३७.	श्री नन्दकंवरजी म. सा,	बड़ीसादडी	स २०१७ फा वदी १०	छोटीसादड़ी
३८	श्री रोशनकंवरजी (द्वि) म सा,	बड़ीसादड़ी	सं २०१८ वै शु. ८	बड़ीसादड़ी
३९	श्री सूर्यकान्ताजी म सा,	उदयपुर	स २०१९ वै शु ७	उदयपुर
४०.	श्री सुशीलाकवरजी (प्र) म सा.,	उदयपुर	सं २०१९ वै शु १२	उदयपुर
४१	श्री शान्ताकवरजी (द्वि) म.सा,	गंगाशहर	सं २०१८ फा कृ १२	गगाशहर
४२	श्री लीलावतीजी म सा,	निकुम्भ	स २०२० फा शु २	निकुम्भ
४३.	श्री कस्तूरकवरजी म स (द्वि)	पीपल्यामडी	स २०२० वै शु ३	पीपल्यामडी
४४	श्री हुलासकवरजी म. सा,	चिकारड़ा	स २०२१ वै शु १०	चिकारड़ा
४५	श्री ज्ञानकवरजी (द्वि) म सा,	मालदामाड़ी	स २०२१ ग्रा. शु ८	पीपलियाकला
४६	श्री विरदीकवरजी म सा,	बीकानेर	स २०२३ वै शु ८	बीकानेर
४७	श्री ज्ञानकवरजी (द्वि) म सा,	राणावास	स २०२३ ग्रा शु ४	राजनादगांव
४८.	श्री प्रेमलताजी (प्र) म सा,	सुरेन्द्रनगर	" " " "	"
४९	श्री इन्दुबालाजी म सा,	राजनादगाव	" " " "	"
५०	श्री गगावतीजी म सा,	डोगरगाव	स २०२३ मि शु १३	डोंगरगांव

क्र.सं.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
५१.	श्री पारसकवरजी म. सा.,	कलगपुर	स. २०२३ मि शु १३	डोंगरगाव
५२	श्री चन्दनबालाजी म. सा.,	पीपल्या	सं २०२३ मा. शु. १०	पीपल्यामडी
५३.	श्री जयश्रीजी म. सा.,	मद्रास	स. २०२३ फा. कृ. ६	रायपुर
५४.	श्री सुशीलाकवरजी (द्वि) म. सा.	मालदामाड़ी	स. २०२४ आ. शु. २	जावरा
५५.	श्री मगलाकवरजी म. सा.,	बड़ावदा	स. २०२४ आ. शु. १	दुर्ग
५६.	श्री शकुन्तलाजी म. सा.,	बीजा	स. २०२४ मि. कृ. ६	दुर्ग
५७.	श्री चमेलीकवरजी म. सा,	बीकानेर	स. २०२५ फा. शु. ५	बीकानेर
५८.	श्री सुशीलाकवरजी (तृ.) म.सा.	बीकानेर	स २०२५ फा. शु. ५	बीकानेर
५९.	श्री चन्द्राकवरजी म सा.,	रतलाम	स २०२६ वै. शु ७	ब्यावर
६०.	श्री कुसुमलताजी म. सा.,	मदसौर	स २०२६ आ. शु. ४	मंदसौर
६१.	श्री प्रेमलताजी म. सा.,	मदसौर	स. २०२६ आ. शु. ४	मदसौर
६२.	श्री विमलाकंवरजी म. सा..	पीपल्या	स २०२७ का कृ. ८	बड़ीसादड़ी
६३.	श्री कमलाकवरजी म. सा,	जेठाणा	" " " " "	"
६४.	श्री पुष्पलताजी म. सा.,	बड़ीसादड़ी	" " " " "	"
६५.	श्री सुमतिकवरजी म. सा.,	बड़ीसादडी	" " " " "	"
६६.	श्री विमलाकवरजी म. सा,	मोडी	स. २०२७ फा शु. १२	जावद
६७.	श्री सूरजकवरजी म सा.,	बडावदा	स २०२८ का. शु. १२	ब्यावर
६८.	श्री ताराकवरजी (प्र.) म. सा.	रतलाम	" " " " "	"
६९.	श्री कल्याणकवरजी म सा,	बीकानेर	" " " " "	"
७०.	श्री कान्ताकवरजी म सा.,	बड़ावदा	" " " " "	"
७१.	श्री कुसुमलताजी (द्वि) म. सा	रावटी	" " " ' "	"
७२.	श्री चन्दनाजी (द्वि.) म. सा.,	बडावदा	" " " " "	"
७३.	श्री ताराजी (द्वि.) म. सा,	रतलाम	स २०२९ चै शु, २	जयपुर
७४.	श्री चेतनाश्रीजी म सा.,	कानोड़	स २०२९ चै शु १३	टोक
७५.	श्री तेजप्रभाजी म सा.,	गोगोलाव	स २०२९ मा. शु १३	भीनासर
७६.	श्री भवरकवरजी (द्वि.) म. सा,	बीकानेर	" " " " "	"
७७.	श्री कुसुमकान्ताजी म सा.,	जावरा	" " " " "	"
७८	श्री बसुमतीजी म सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
७९.	श्री पुष्पाजी म. सा,	देशनोक	" " " " "	"
८०	श्रीराजमतीजी म. सा.,	दलोदा	" " " " "	"
८१.	श्री मजुबालाजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
८२.	श्री प्रभावतीजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
८३.	श्री ललिताजी (प्रथम) म सा.,	बीकानेर	सं. २०२९ फा. शु. ११	बीकानेर

क्र.स.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
८४.	श्री सुशीलाजी (द्वि) म. सा,	मोड़ी	स २०३० वै. शु. ६	नोखामडी
८५.	श्री समताकवरजी म. सा.,	अजमेर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
८६.	श्री निरजनाश्रीजी म. सा,	बड़ीसादडी	स. २०३० का. शु. १३	बीकानेर
८७.	श्री पारसकवरजी म. सा,	बांगेड़ा	स. २०३० मि. शु. ६	भीनासर
८८.	श्री सुमनलताजी म. सा.,	बागेड़ा	,, ,, ,, ,, ,,	,,
८९.	श्री विजयलक्ष्मीजी म. सा.,	उदयपुर	स. २०३० मा. शु. ५	सरदारशहर
९०.	श्री स्नेहलताजी म. सा.,	सदरदारशहर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
९१.	श्री रजनाश्रीजी म. सा.	उदयपुर	स २०३१ ज्ये. शु. ५	गोगोलाव
९२.	श्री अजनाश्रीजी म. सा.,	उदयपुर	,, ,, ,, ,, ,,	,
९३.	श्री ललिताजी म. सा,	ब्यावर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
९४	श्री विचक्षणाजी म सा.,	पीपलिया	स. २०३१ आ. शु. ३	सरदारशहर
९५	श्री सुलक्षणाजी म सा.,	पीपलिया	,, ,, ,, ,, ,,	,,
९६.	श्री प्रियलक्षणाजी म. सा.,	पीपलिया	,, ,, ,, ,, ,,	,,
९७	श्री प्रीतिसुधाजी म सा.,	निकुम्भ	स २०३१ मा शु. १२	देशनोक
९८.	श्री सुमनप्रभाजी म. सा.	देवगढ़	,, ,, ,, ,, ,,	,,
९९	श्री सोमलताजी म. सा,	रावटी	,, ,, ,, ,, ,,	,,
१००.	श्री किरणप्रभाजी म. सा.	बीकानेर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
१०१.	श्री मजुलाश्रीजी म सा,	देशनोक	स २०३२ वै. कृ. १३	भीनासर
१०२.	श्री सुलोचनाजी म. सा.,	कानोड़	,, ,, ,, ,, ,,	,,
१०३.	श्री प्रतिभाजी म. सा,	बीकानेर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
१०४.	श्री वनिताश्रीजी म सा.	बीकानेर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
१०५	श्री सुप्रभाजी म सा.,	गोगोलाव	,, ,, ,, ,, ,	,,
१०६.	श्री जयन्तश्रीजी म सा.,	बीकानेर	स. २०३२ आ. शु. ५	देशनोक
१०७	श्री हर्षकवरजी म. सा,	अमरावती	स २०३२ मि. शु. ८	जावरा
१०८.	श्री सुदर्शनाजी म सा,	नोखामडी	स २०३३ आ. शु ५	नोखामडी
१०९.	श्री निरुपमाजी म. सा,	रायपुर	,, ,, ,, ,, १५	,,
११०.	श्री चन्द्रप्रभाजी म सा,	मेड़ता	,, ,, मि. ,, १३	,,
१११.	श्री आदर्शप्रभाजी म. सा.,	उदासर	स २०३४ वै. कृ. ७	भीनासर
११२.	श्री कीर्तिश्रीजी म सा.,	भीनासर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
११३.	श्री हर्षिलाश्रीजी म. सा,	गगाशहर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
११४.	श्री साधनाश्रीजी म. सा.	गगाशहर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
११५.	श्री अर्चनाश्रीजी म. सा,	गगाशहर	,, ,, ,, शु १५	,,
११६.	श्री सरोजकवरजी म. सा,	धमतरी	स २०३४ भा कृ ११	दुर्ग
११७.	श्री मनोरमाजी म. सा.,	रतलाम	,, ,, ,, ,, ,,	,,
११८	श्री चचलकवरजी म. सा,	कांकेर	,, ,, ,, , ,,	,,

क्र.सं.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
११९.	श्री कुसुमकंवरजी म सा,	निवारी	ग २०३४ भा कृ. ११	दुर्ग
१२०.	सुप्रतिभाजी म. सा.,	उदयपुर	ग. २०३४ प्रा शु २	भीनासर
१२१	श्री शाताप्रभाजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
१२२.	श्री मुक्तिप्रभाजी म. सा.,	मोडी	स. २०३४ मि. कृ ५	बीकानेर
१२३.	श्री गुणसुन्दरीजी म. सा,	उदासर	" " " " "	"
१२४.	श्री मधुप्रभाजी म. सा,	छोटीसादडी	स २०३४ मि कृ ५	बीकानेर
१२५.	श्री राजश्रीजी म. सा.,	उदयपुर	" " मा शु. १०	जोधपुर
१२६.	श्री शशिकाताजी म. सा,	उदयपुर	" " " ' १०	जोधपुर
१२७.	श्री कनकश्रीजी म. सा,	रतलाम	" " " " "	"
१२८.	श्री सुलभाश्रीजी म. सा,	नोखामण्डी	" " " " "	"
१२९.	श्री निर्मलाश्रीजी म. सा.,	देशनोक	स २०३५ आ. शु २	जोधपुर
१३०.	श्री चेलनाश्रीजी म सा.,	कानोड़	" " " " "	"
१३१.	श्री कुमुदश्रीजी म. सा.,	गगाशहर	" " " " '	"
१३२.	श्री कमलश्रीजी म. सा,	उदयपुर	स. २०३६ चै. शु १५	ब्यावर
१३३.	श्री पदमश्रीजी म. सा.,	महिन्दरपुर	" " " " "	"
१३४.	श्री अरुणाश्रीजी म. सा.,	पीपल्या	" " " " "	"
१३५.	श्री कल्पनाश्रीजी म. सा.,	देशनोक	" " " " "	"
१३६	श्री ज्योत्स्नाश्रीजी म सा.,	गगाशहर	" " " " "	"
१३७.	श्री पंकजश्रीजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
१३८.	श्री मधुश्रीजी म. सा,	इन्दौर	" " " " "	"
१३९.	श्री पूर्णिमाश्रीजी म. सा.,	बड़ीसादड़ी	" ' " " "	"
१४०.	श्री प्रवीणाश्रीजी म. सा.,	मंदसौर	" " " " "	"
१४१.	श्री दर्शनाश्रीजी म. सा,	देशनोक	" " " " '	"
१४२.	श्री वन्दनाश्रीजी म सा,	गंगाशहर	" " " " "	"
१४३.	श्री प्रमोदश्रीजी म. सा,	ब्यावर	" ' " " "	"
१४४.	श्री उर्मिलाश्रीजी म सा,	रायपुर	स २०३७ ज्ये. शु. ३	बुसी
१४५.	श्री सुभद्राश्रीजी म सा,	बीकानेर	स. २०३७ श्रा शु. ११	राणावास
१४६.	श्री हेमप्रभाजी म सा,	केसीगा	स २०३७ आ. शु ३	राणावास
१४७.	श्री ललितप्रभाजी म सा.,	विनोता	स २०३८ वै. शु ३	गगापुर
१४८.	श्री वसुमतीजी म. सा,	अलाय	स. २०३८ आ शु ८	अलाय
१४९	श्री इन्द्रप्रभाश्रीजी म. सा,	बीकानेर	स. २०३८ का शु १२	उदयपुर
१५०.	श्री ज्योतिप्रभाश्रीजी म सा,	गगाशहर	" " " " "	"
१५१.	श्री रचनाश्रीजी म सा.,	उदयपुर	" ' " " "	"
१५२	श्री रेखाश्रीजी म सा,	जोधपुर	" " " " "	"
१५३	श्री चित्राश्रीजी म. सा.,	लोहावट	" " " " "	"

क्र.सं.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
१५४	श्री लघिमाश्रीजी म. सा.	गंगाशहर	सं. २०३८ का शु १२	उदयपुर
१५५.	श्री विद्यावतीजी म. सा,	सवाईमाधोपुर	सं. २०३८ मि. शु. ६	हिरणमगरी
१५६	श्री विख्याताश्रीजी म. सा.,	विनोता	स २०३८ मा. कृ. ३	बम्बोरा
१५७	श्री जिनप्रभाश्रीजी म. सा.,	राजनांदगाव	स २०३९ चै. कृ. ३	अहमदाबाद
१५८.	श्री अमिताश्रीजी म. सा.,	रतलाम	" " " " "	"
१५९	श्री विनयश्रीजी म. सा.,	दुरखखान	" " " " "	"
१६०.	श्री श्वेताश्रीजी म सा.,	केशकाल	" " " " "	"
१६१	श्री सुचिताश्रीजी म सा.,	रतलाम	स. २०३९ चै. कृ. ३	अहमदाबाद
१६२	श्री मणिप्रभाजी म. सा.,	गगाशहर	" " " " "	"
१६३.	श्री सिद्धप्रभाजी म. सा,	नागौर	" " " " "	"
१६४.	श्री नम्रताश्रीजी म. सा.,	जगदलपुर	" " " " "	"
१६५.	श्री सुप्रतिभाश्रीजी म. सा.,	राजनादगाव	" " " " "	"
१६६	श्री मुक्ताश्रीजी म. सा.,	कपासन	" " " " "	"
१६७.	श्री विशालप्रभाजी म. सा.,	गगाशहर	" " " " "	"
१६८	श्री कनकप्रभाजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
१६९.	श्री सत्यप्रभाजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
१७०.	श्री रक्षिताश्रीजी म. सा.,	पाली	स. २०४० आ. शु. २	भावनगर
१७१.	श्री महिमाश्रीजी म. सा,	अहमदाबाद	" " " " "	"
१७२.	श्री मृदुलाश्रीजी म. सा.,	वैशालीनगर	" " " " "	"
१७३.	श्री वीणाश्रीजी म. सा.,	वैशालीनगर	" " " " "	"
१७४.	श्री प्रेरणाश्रीजी म. सा.,	बीकानेर	स. २०४० फा. शु. २	रतलाम
१७५	श्री गुणरजनाश्रीजी म सा.,	उदयपुर	" " " " "	"
१७६	श्री सूर्यमणिजी म. सा,	मदसौर	" " " " "	"
१७७	श्री सरिताश्रीजी म. सा.,	कलकत्ता	" " " " "	"
१७८.	श्री सुवर्णाश्रीजी म. सा.	रतलाम	" " " " "	"
१७९	श्री निरूपणाश्रीजी म सा.,	उदयपुर	" " " " "	"
१८०.	श्री शिरोमणिश्रीजी म. सा,	डोडीलोहारा	" " " " "	"
१८१.	श्री विकाशप्रभाजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
१८२.	श्री तरुलताजी म. सा.,	चित्तौड़	" " " " "	"
१८३	श्री करुणाश्रीजी म. सा,	मोड़ी	" " " " "	"
१८४.	श्री प्रभावनाश्रीजी म. सा,	बड़ाखेड़ा	" " " " "	"
१८५	श्री सुयशमणिजी म. सा,	गगाशहर	" " " " "	"
१८६	श्री चित्तरजनाजी म. सा,	रतलाम	" " " " "	"
१८७.	श्री मुक्ताश्रीजी म. सा.,	बीकानेर	" " " " "	"
१८८	श्री सिंहमणिजी म. सा.,	वेगू	" " " " "	"

नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
. श्री रजमणिश्रीजी म. सा ,	बंगुमुण्डा	स. २०४० फा शु. २	रतलाम
. श्री अर्पणाश्रीजी म. सा.,	कानोड़	,, ,, ,, ,, ,,	,,
. श्री मंजुलाश्रीजी म. सा.,	भीनासर	,, ,, ,, ,, ,,	,,
. श्री गरिमाश्रीजी म. सा.,	चौथ का बरवाडा	,, ,, ,, ,, ,,	,,
. श्री हेमश्रीजी म. सा.,	नोखामण्डी	,, ,, ,, ,, ,,	,,
. श्री कल्पमणिजी म. सा.,	पीपल्या	,, ,, ,, ,, ,,	,,
. श्री रविप्रभाजी म. सा.,	जावरा	,, ,, ,, ,, ,,	,,
. श्री मयकमणिजी म सा.,	पीपलियामडी	,, ,, ,, ,, ,,	,,

महावीर से एक बार गौतम ने पूछा—"प्रभो, आपके अनुग्रह से मुझे चौदह पूर्व और चार ज्ञान प्राप्त है। केवल-ज्ञान तक पहुचने मे अब कितना अवशेष है ?"

महावीर ने कहा—गौतम, असंख्य योजन विस्तृत स्वयभू रमणसमुद्र मे से एक चिडिया चोच मे पानी ले और सोचे कि अब सागर मे कितना जल शेष है तेरा सोचना भी वैसा ही है। चिडिया की चोच मे जितना जल समाता है उतना ही तेरा चौदह पूर्व और चार ज्ञान है।"

कहने का तात्पर्य है कि ज्ञान तो स्वयभूरमण समुद्र की तरह असीमित है। जो अपने ज्ञान का गर्व करते है, मै आगम ज्ञानी हू या उत्कट विद्वान हूं उन्हे महावीर के इस कथन से शिक्षा लेनी चाहिए। जब चार ज्ञान के धारी चौदह पूर्व के ज्ञाता महा मेधावी गौतम को यह प्रत्युत्तर मिला तो हमारा ज्ञान तो राई के समान भी नही है। फिर उसका गर्व कैसा ?

महा मनीषी न्यूटन से किसी के प्रश्न करने पर उन्होने अपने ज्ञान की तुच्छता बतलाने के लिए कहा—मैं तो ज्ञान समुद्र के किनारे पडे पत्थर ही बटोर रहा हू। ज्ञान समुद्र मे डुबकी लगाना तो बहुत दूर की बात है।

सच्चे ज्ञानी का यही लक्षण है.—

लाभसि जे ण सुमणो अलाभे णे व दुम्मणो।
से हु सेट्टे मणुस्साण देवाण सयक्कऊ ॥

यम नामक अर्हतर्षि कहते है—

जो लाभ मे प्रसन्न नही होता, जो अलाभ मे अप्रसन्न, वही मनुष्यो मे श्रेष्ठ है, ठीक उसी तरह जैसे देवो मे इन्द्र।

गीता मे जिसे समत्व योग कहा है, जैन दर्शन मे उसे ही सम्यक्त्व या सामायिक कहा है। सुख–दु ख, लाभ–अलाभ, जीवन-मृत्यु, सभी अवस्था मे सब समय जो समभाव रखता है वही सम्यक्त्वी है वही सामायिक करता है। करेमि भते सामाइय अर्थात् मैं समभाव मे स्थित होता हू। और उस सामायिक के लिए स्वय को "वोसिरामि" उत्सर्गित करता हू। एतदर्थ जो सामायिक करता है। उसकी मुस्कान कोई छीन नही सकता। वह मानव होते हुए भी महामानवता को प्राप्त करता है।

चिन्तन
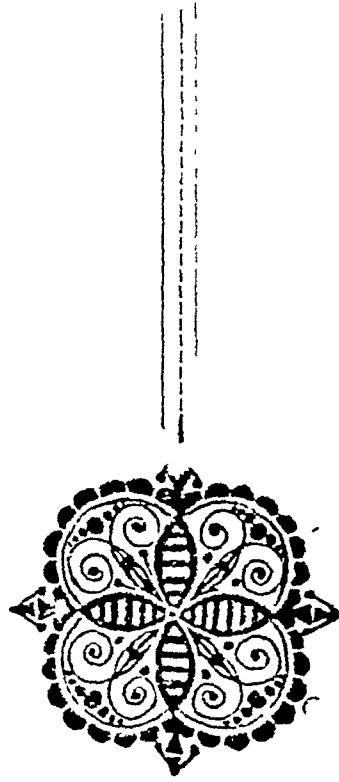
मनन

समाज, साधना और सेवा : जैन धर्म के परिप्रेक्ष्य में

☐ डा. सागरमल जैन

△

> अहिंसा और सेवा एक-दूसरे से अभिन्न है। अहिंसक होने का अर्थ है—सेवा के क्षेत्र मे सक्रिय होना। जब हमारी धर्म साधना में सेवा का तत्व जुड़ेगा तब ही हमारी साधना मे पूर्णता आयेगी। हमे अपनी अहिंसा का हृदय शून्य नही बनने देना है अपितु उसे मैत्री और करुणा से युक्त बनाना है। जब अहिंसा मे मैत्री और करुणा के भाव जुड़ेगे तो सेवा का प्रकटन सहज होगा और धर्म साधना का क्षेत्र सेवा क्षेत्र बन जायेगा।

वैक्तियकता और सामाजिकता दोनो ही मानवीय जीवन के अनिवार्य अग हैं। पाश्चात्य विचाक ब्रेडले का कथन है कि 'मनुष्य मनुष्य नही है यदि वह सामाजिक नही है।' मनुष्य समाज मे ही उत्पन्न ोता है, समाज मे ही जीता है और समाज मे ही अपना विकास करता है। वह कभी भी सामाजिक ीवन से अलग नही हो सकता है। तत्वार्थ सूत्र मे जीवन की विशिष्टता को स्पष्ट करते हुए कहा गया है क पारस्परिक साधना ही जीवन का मूलभूत लक्षण है (परस्परोपग्रहोजीवानाम् ५/२१)। व्यक्ति मे राग के, प के तत्व अनिवार्य रूप से उपस्थित है किन्तु जब द्वेष का क्षेत्र सकुचित होकर राग का क्षेत्र विस्तृत होता तब व्यक्ति मे सामाजिक चेतना का विकास होता है और यह सामाजिक चेतना वीतरागता की उपलब्धि के ाथ पूर्णता को प्राप्त करती है, क्योकि वीतरागता की भूमिका पर स्थित होकर ही निष्काम की भावना ीर कर्त्तव्य बुद्धि से लोक-मगल किया जा सकता है। अत जैन धर्म का, वीतरागता और मोक्ष का आदर्श ाभाजिकता का विरोधी नहीं है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसके व्यक्तित्व का निर्माण समाज-जीवन पर आधारित है। यक्ति जो कुछ बनता है वह अपने सामाजिक परिवेश के द्वारा ही बनता है। समाज ही उसके व्यक्तित्व ीर जीवन-शैली का निर्माता है। यद्यपि जैन-धर्म सामान्यतया व्यक्तिनिष्ठ और निवृति प्रधान है और उसका क्ष्य आत्म-साक्षात्कार है, किन्तु इस आधार पर यह मान लेना कि जैन धर्म असामाजिक है या उसमे सामाजिक सन्दर्भ का अभाव है, नितात भ्रमपूर्ण होगा। जैन साधना यद्यपि व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास की बात करती है किंतु उसका तात्पर्य यह नही है कि वह सामाजिक कल्याण की उपेक्षा करती है।

यदि हम मनुष्य को सामाजिक प्राणी मानते है और धर्म को 'धर्मो धारयते प्रजा' के अर्थ मे लेते है तो उस स्थिति मे धर्म का अर्थ होगा—जो हमारी समाज व्यवस्था को बनाये रखता है, वही धर्म है। वे सब तत्व जो समाज जीवन मे बाधा उपस्थित करते है और हमारे स्वार्थों को पोषण देकर हमारी सामाजिकता को खण्डित करते है, समाज-जीवन मे अव्यवस्था और अशान्ति के कारणभूत होते हैं, अधर्म है। [illegible] घृणा, विद्वेष, हिंसा, शोषण, स्वार्थपरता आदि को अधर्म और परोपकार, करुणा, दया, सेवा आदि को धर्म कहा गया है। [illegible] जो गुण हमारी सामाजिकता की स्वाभाविक वृत्ति का संरक्षण करते है वे

धर्म है और जो उसे खण्डित करते है वे अधर्म है। यद्यपि यह धर्म की व्याख्या दूसरों से हमारे सम्बन्धो के सन्दर्भ मे है और इसीलिए इसे हम सामाजिक-धर्म भी कह सकते है।

जैन धर्म सदैव यह मानता रहा है कि साधना से प्राप्त सिद्धि का उपयोग सामाजिक कल्याण की दिशा मे होना चाहिए। स्वय भगवान महावीर का जीवन इस बात का साक्षी है कि वे वीतरागता और कैवल्य की प्राप्ति के पश्चात् जीवन पर्यन्त लोकमगल के लिए कार्य करते रहे है। प्रश्न व्याकरण सूत्र मे स्पष्ट रूप से कहा गया है कि तीर्थंकरो का यह सुकथित प्रवचन संसार के सभी प्राणियो की करुणा के लिए ही है।[1] जैन धर्म मे जो सामाजिक जीवन या सघ जीवन के सन्दर्भ उपस्थित हैं, वे यद्यपि बाहर से देखने पर निषेधात्मक लगते हैं इसी आधार पर कभी-कभी यह मान लिया जाता है कि जैन धर्म एक सामाजिक निरपेक्ष धर्म है। जैनो ने अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह की व्याख्या मुख्य रूप से निषेधात्मक दृष्टि के आधार पर की है, किन्तु उनको निषेधात्मक और समाज-निरपेक्ष समझ लेना भ्राति पूर्ण ही है। प्रश्न व्याकरण सूत्र मे ही स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि ये पाच महाव्रत सर्वथा लोकहित के लिए ही है। जैन धर्म मे जो व्रत व्यवस्था है वह सामाजिक सम्बन्धो की शुद्धि का प्रयास है। हिसा, असत्य वचन, चौर्यकर्म, व्यभिचार और सग्रह (परिग्रह) हमारे सामाजिक जीवन को दूषित बनाने वाले तत्व है। हिसा सामाजिक अनस्तित्व की द्योतक है, तो असत्य पारस्परिक विश्वास को भग करता है। चोरी का तात्पर्य तो दूसरो के हितो और आवश्यकताओ का अपहरण और शोषण ही है। व्यभिचार जहा एक ओर पारिवारिक जीवन को भग करता है, वही दूसरी ओर वह दूसरे को अपनी वासनापूर्ति का साधन मानता है और इस प्रकार से वह भी एक प्रकार का शोषण ही है। इसी प्रकार परिग्रह भी दूसरो को उनके जीवन की आवश्यकताओं और भोगों से वचित करता है, समाज मे वर्ग ... और सामाजिक शांति को भग करता है। ... आधार पर जहा एक वर्ग सुख, सुविधा और ... की गोद मे पलता है वही दूसरा जीवन की ... आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी तरसता है। ... सामाजिक जीवन मे वर्ग-विद्वेष और आक्रोश ... होते है और इस प्रकार सामाजिक शांति और सा... समत्व भग हो जाते है। सूत्रकृताग मे कहा ... कि यह सग्रह की वृत्ति ही हिसा, असत्य, चोरी और व्यभिचार को जन्म देती है और इस प्रकार वह सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को विषाक्त बनाती ... यदि हम इस सन्दर्भ मे सोचें तो यह स्पष्ट ... कि जैन धर्म मे अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य ... अपरिग्रह की जो अवधारणायें है, वे मूलत. सामा... जीवन के लिए ही है।

जैन साधना पद्धति को मैत्री, प्रमोद, क... और मध्यस्थ की भावनाओ के आधार पर भी सामाजिक सन्दर्भ को स्पष्ट किया जा सकता ... आचार्य अमितगति कहते है—

सत्वेषु मैत्री, गुणीषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपा-परत्वं
माध्यस्थभावं विपरीत वृत्तो—
सदा ममात्मा विदधातु देव।

"हे प्रभु! हमारे जीवन मे प्राणियो के ... मित्रता, गुणीजनो के प्रति प्रमोद, दुखियो के ... करुणा तथा दुष्ट जनो के प्रति मध्यस्थ भाव वि... रहे।" इस प्रकार इन चारो भावनाओ के मा... से समाज के विभिन्न प्रकार के व्यक्तियो से ... सम्बन्ध किस प्रकार के हो इसे स्पष्ट किया गया। समाज मे दूसरे लोगो के साथ हम किस प्रकार ... जिये, यह हमारी सामाजिकता के लिये अति आ... श्यक है। उसने सघीय जीवन पर बल दिया है ... सघीय या सामूहिक साधना को श्रेष्ठ माना है।

1. सव्वच-जगजीव-रक्खण दयट्ठाए पावमणं भगवया सुकहियं-प्रश्न व्याकरण २/१/२१

क सघ मे विघटन करता है उसे हत्यारे और चारी से भी अधिक पापी माना गया है और के लिये छेद सूत्रो मे कठोरतम दण्ड की व्यवस्था गई है। स्थानाग सूत्र में कुल धर्म, ग्राम धर्म, धर्म, राष्ट्रीय धर्म, गणधर्म आदि का निर्देश गया है, जो उसकी सामाजिक दृष्टि को स्पष्ट है।[1] जैन धर्म ने सदैव ही व्यक्ति को समाज न से जोड़ने का ही प्रयास किया है। जैन धर्म हृदय रिक्त नही है। तीर्थंकर की वाणी का टन ही लोक की करुणा के लिए हुआ है। आ तभद्र लिखते है—"सर्वापदामन्तकर, निरन्त सर्वोदय मिदम् तवैवा" हे प्रभु! आपका तीर्थ (अनुशासन) दुखो का अन्त करने वाला और सभी का कल्याण सर्वोदय करने वाला है। उसमें प्रेम और करुणा अटूट धारा वह रही है। स्थानाग में प्रस्तुत कुल ग्राम धर्म, नगर धर्म एव राष्ट्र धर्म भी जैन की समाज-सापेक्षता को स्पष्ट कर देते हैं।

रवारिक और सामाजिक जीवन मे हमारे पारस्परिक न्धो को सुमधुर एव समायोजन पूर्ण बनाने तथा ाजिक टकराव के कारणो का विश्लेषण कर उन्हे करने के लिए जैनधर्म का योगदान महत्वपूर्ण है।

वस्तुत जैन धर्म ने आचार शुद्धि पर बल देकर क सुधार के माध्यम से समाज सुधार का प्रशस्त किया। उसने व्यक्ति को समाज की ई माना और इसलिए प्रथमत व्यक्ति चरित्र के ण पर बल दिया। वस्तुत महावीर के युगो समाज रचना का कार्य ऋषभ के द्वारा पूरा हो चुका अत महावीर ने मुख्य रूप से सामाजिक जीवन बुराइयो को समाप्त करने का प्रयास किया और ाजिक सम्बन्धो की शुद्धि पर बल दिया।

सामाजिकता मनुष्य का एक विशिष्ट गुण है। तो समूह-जीवन पशुओ मे भी पाया जाता है न्तु मनुष्य की यह समूह जीवन-शैली उनसे कुछ विशिष्ट । पशुओ मे पारस्परिक सम्बन्ध तो होते है किन्तु । सम्बन्धो की चेतना नहीं होती है। मनुष्य जीवन की विशेषता यह है कि उसे उन पारस्परिक सम्बन्धो की चेतना होती है और उसी चेतना के कारण उसमे एक दूसरे के प्रति दायित्व-बोध और कर्त्तव्य बोध होता है। पशुओ मे भी पारस्परिक हित साधन की प्रवृति होती है किन्तु वह एक अन्धमूल प्रवृति है। पशु विवश होता है, उस अन्ध प्रवृति के अनुसार ही आचरण करने मे। उसके सामने यह विकल्प नही होता है कि वह कैसा आचरण करे या नही करे। किन्तु इस सम्बन्ध में मानवीय चेतना स्वतन्त्र होती है उसमे अपने दायित्व बोध की चेतना होती है। किसी उर्दू शायर ने कहा भी है—

वह आदमी ही क्या है, जो दर्द आशना न हो।
पत्थर से कम है, दिल शरर गर निहा नहीं॥

जैसा कि हम पूर्व मे ही सकेत कर चुके है कि जैनाचार्य उमास्वाति ने भी न केवल मनुष्य का अपितु समस्त जीवन का लक्षण 'पारस्परिक हित साधन' को माना है। दूसरे प्राणियो का हित साधन व्यक्ति का धर्म है। धार्मिक होने का एक अर्थ यह है कि हम एक दूसरे के कितने सहयोगी बने हैं, दूसरे के दुख और पीडा को अपनी पीडा समझें और उसके निराकरण का प्रयत्न करे, यही धर्म है। धर्म की लोक कल्याणकारी चेतना का प्रस्फुटन लोक की पीडा निवारण के लिए ही हुआ है और यही धर्म का सार तत्व है। कहा भी है—

यही है इबादत, यही है दीनों इमां
कि काम आये दुनिया मे, इंसां के इंसा।

दूसरो की पीडा को समझकर उसके निवारण का प्रयत्न करना, यही धर्म की मूल आत्मा हो सकती है। सन्त तुलसीदास ने भी कहा है—

परहित सरिस धरम नहिं भाई,
परपीड़ा सम नहीं अधमाई।

अहिंसा, जिसे जैन परम्परा मे धर्म सर्वोच्च कहा गया है कि चेतना का विकास तभी सम्भव है

---
1. स्थानाग सूत्र, १०/७६०

जब मनुष्य 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना का विकास होगा। जब हम दूसरों के दर्द और पीड़ा को अपना दर्द समझेंगे तभी हम लोकमंगल की दिशा में अपना पर पीड़ा के निवारण की दिशा में आगे बढ़ सकेंगे। पर पीड़ा की तरह आत्मानुभूति भी वस्तुनिष्ठ न होकर आत्मनिष्ठ होनी चाहिये। हम दूसरों की पीडा के मूक दर्शक न रहे। ऐसा धर्म और ऐसी अहिंसा जो दूसरो की पीडा की मूक-दर्शक बनी रहती है वस्तुत न धर्म है और न अहिंसा। अहिंसा केवल दूसरो को पीड़ा न देने तक सीमित नही है, उसमे लोक-मगल और कल्याण का अजस्र स्रोत भी प्रवाहित है। जब लोक-पीडा अपनी पीडा बन जाती है तभी धार्मिकता का स्रोत अन्दर से बाहर प्रवाहित होता है। तीर्थंकरो, अर्हंतो और बुद्धो ने जब लोक पीडा की यह अनुभूति आत्मनिष्ठ रूप मे की तो वे लोककल्याण के लिए सक्रिय बन गये। जब दूसरो की पीडा और वेदना हमे अपनी लगती है, तब लोक कल्याण भी दूसरो के लिए न होकर अपने ही लिए हो जाता है। उर्दू शायर अमीर ने कहा है—

खंजर चले किसी पे, तड़फते है हम अमीर,
सारे जहां का दर्द, हमारे जिगर में है।

जब सारे जहा का दर्द किसी के हृदय मे समा जाता है तो वह लोक कल्याण के मगलमय मार्ग पर चल पडता है और तीर्थंकर बन जाता है। उसका यह चलना मात्र बाहरी नही होता है। उसके सारे व्यवहार मे अन्तश्चेतना काम करती है और यही अन्तश्चेतना धार्मिकता का मूल उत्स है। इसे ही दायित्वबोध की सामाजिक चेतना कहा जाता है। जब यह जागृत होती है तो मनुष्य मे धार्मिकता प्रकट होती है। आपको यह ज्ञात होना चाहिए कि तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन वही साधक करता है जो धर्म संघ की सेवा मे अपने को समर्पित कर देता है। तीर्थंकर नामकर्म उपार्जित करने के लिए जिन बीस बोलो की साधना करनी होती है, उनके विश्लेषण से यह लक्ष्य स्पष्ट हो जाता है।

दूसरों के प्रति आत्मीयता के भाव का ... होना ही धार्मिक जीवन का सर्वप्रथम पहला उपक्रम है। यदि हमारे जीवन में दूसरों की पीड़ा, दूसरों का ... अपना नहीं बना है तो हमें यह निश्चित ही सम... लेना चाहिये कि हमारे धर्म का अवतरण नहीं हुआ है। दूसरों की पीड़ा आत्मनिष्ठ अनुभूति से ... दायित्व बोध की अन्तश्चेतना के बिना सारे धा... क्रियाकाण्ड पाखण्ड या ढोंग है। उनका धार्मिकता ... दूर का रिश्ता नहीं है। जैन धर्म में सम्यक्त्व (जो कि धार्मिकता की आधार-भूमि है) के जो पांच ... माने गये हैं, उनमें समभाव और अनुकम्पा ... अधिक महत्वपूर्ण है। सामाजिक दृष्टि से समभाव ... अर्थ है, दूसरों को अपने समान समझना। ... अहिंसा एवं लोककल्याण की अन्तश्चेतना का उद... इसी आधार पर होता है। आचाराग सूत्र में ... गया है कि जिस प्रकार मैं जीना चाहता हू, म... नही चाहता हू उसी प्रकार ससार के सभी प्रा... जीवन के इच्छुक है और मृत्यु से भयभीत हैं। ... प्रकार मैं सुख की प्राप्ति का इच्छुक हू और दु... से बचना चाहता हू उसी प्रकार ससार के ... प्राणी सुख के इच्छुक है, और दुख से दूर ... चाहते हैं। यही वह दृष्टि है जिस पर अहिंसा ... धर्म का और नैतिकता का विकास होता है।

जब तक दूसरो के प्रति हमारे मन में सम... अर्थात् समानता का भाव जागृत नही होता, अनुक... नही आती अर्थात् उनकी पीड़ा हमारी पीडा ... बनती तब तक सम्यक्दर्शन का उदय भी नही ह... जीवन मे धर्म का अवतरण नही होता। असर ... नवी का यह निम्न शेर इस सम्बन्ध मे कितना मौजू...

इमां गलत उशूल गलत, इद्दुआ गलत।
इंसा की दिलदिही, अगर इंसा न कर सके॥

जब दूसरो की पीडा अपनी बन जाती है ... सेवा की भावना का उदय होता है। यह सेवा ... तो प्रदर्शन के लिए होती है और न स्वार्थबुद्धि ... होती है, यह हमारे स्वभाव का ही सहज प्रकटन हो... है। तब हम जिस भाव से हम अपने शरीर ...

पीडाओ का निवारण करते है उसी भाव से दूसरो की पीडाओ का निवारण करते है, क्योकि जो आत्म-बुद्धि अपने शरीर के प्रति होती है वही आत्मबुद्धि समाज के सदस्यो के प्रति भी हो जाती हैं। क्योकि सम्यक्दर्शन के पश्चात् आत्मवत् दृष्टि का उदय हो जाता है। जहा आत्मवत् दृष्टि का उदय होता है वहा हिंसक बुद्धि समाप्त ही जाती है और सेवा स्वाभाविक रूप से साधना का अग वन जाती है। जैन धर्म में ऐसी सेवा को निर्जरा या तप का रूप माना गया है। इसे 'वैयावच्च' के रूप मे माना जाता है। मुनि नन्दिसेन की सेवा का उदाहरण तोजैन परम्परा मे सर्वविश्रुत है। आवश्यक चूर्णि में सेवा के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए कहा है कि एक व्यक्ति भगवान का नाम स्मरण करता है, भक्ति करता है, किन्तु दूसरा वृद्ध और रोगी की सेवा करता है, उन दोनो मे सेवा करने वाले को ही श्रेष्ठ माना गया है क्योकि वह सही अर्थों मे भगवान की आज्ञा का पालन करता है, दूसरेशब्दो में धर्ममय जीवन जीता है।

जैन समाज का यह दुर्भाग्य हे कि निवृति-मार्ग या सन्यास पर अधिक वल देते हुए उसमे सेवा की भावना गौण होती चली गई—उसकी अहिंसा मात्र 'मत मारो' का निपेधक उद्घोप वन गई। किन्तु यह एक भ्राति ही है। विना 'सेवा' के अहिंसा अधूरी हे और सन्यास निष्क्रिय है। जब सन्यास और अहिंसा में सेवा का तत्व जुडेगा तभी वे पूर्ण वनेगे।

सन्यास और समाज :

सामान्यतया भारतीय दर्शन मे सन्यास के प्रत्यय को समाज-निरपेक्ष माना जाता है किन्तु क्या सन्यास की धारणा समाज-निरपेक्ष है ? निश्चय ही सन्यासी पारिवारिक जीवन का त्याग करता हे किन्तु इससे क्या वह असामाजिक हो जाता हे ? सन्यास के सकल्प मे वह कहता है कि "वित्तैषणा पुत्रैषणा लोकैषणा मया परित्यक्ता" अर्थात् मै अर्थकामना, सन्तान कामना और यश कामना का परित्याग करता हूं। जैन परम्परा के अनुसार वह सावद्ययोग या पापकर्मो का त्याग करता हे। किन्तु क्या धनसम्पदा, सन्तान तथा यश कीर्ति की कामना का या पाप कर्म का परित्याग समाज का परित्याग है ? वस्तुत. समस्त एपणाओ का त्याग या पाप कर्मों का त्याग स्वार्थ का त्याग है, वासनामय जीवन का त्याग है। सन्यास का यह सकल्प उसे समाज-विमुख नही वनाता है, अपितु समाज कल्याण की उच्चतर भूमिका पर अधिष्ठित करता हे क्योकि सच्चा लोकहित निस्वार्थता एव विराग की भूमि पर स्थित होकर ही किया जा सकता हैं।

भारतीय चिन्तन संन्यास को समाज-निरपेक्ष नही मानता। भगवान् बुद्ध का यह आदेश "चरत्थ भिक्खवे चारिक वहुजन-हिताय वहुजन-सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय देव मनुस्सान" (विनय पिटक महावग्ग)। इस बात का प्रमाण है कि सन्यास लोकमगल के लिए होता है। सच्चा सन्यासी वह हे जो समाज से अल्पतम लेकर उसे अधिकतम देता है। वस्तुत वह कुटुम्व, परिवार आदि का त्याग इसलिए करता है कि समष्टि होकर रहे, क्योकि जो किसी का है, वह सवका नही हो सकता, जो सवका है वह किसी का नही है। सन्यासी नि स्वार्थ और निष्काम रूप से लोकमगल का साधक होता हे। सन्यास शव्द सम पूर्वक न्यास शव्द से वना है। न्यास शव्द का अर्थ देखरेख करना भी है। सन्यासी वह व्यक्ति है जो सम्यक् रूप से एक न्यासी (ट्रस्टी) की भूमिका अदा करता हैं और न्यासी वह है जो ममत्व भाव और स्वामित्व का त्याग करके किसी ट्रस्ट (सम्पदा) का रक्षण एव विकास करता है। सन्यासी सच्चे अर्थों मे एक ट्रस्टी है। जो ट्रस्टी या ट्रस्ट का उपयोग अपने हित मे करता है, अपने को उसका स्वामी समझता है तो वह सम्यक् ट्रस्टी नही हो सकता है। इसी प्रकार वह यदि ट्रस्ट के रक्षण एव विकास का प्रयत्न न करे तो भी सच्चे अर्थ मे ट्रस्टी नहीं है। इसी प्रकार यदि सन्यासी लोकैषणा से युक्त

जब मनुष्य 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की भावना का विकास होगा। जब हम दूसरो के दर्द और पीडा को अपना दर्द समझेगे तभी हम लोक मगल की दिशा मे अथवा पर पीड़ा के निवारण की दिशा मे आगे बढ सकेगे। पर पीडा की तरह आत्मानुभूति भी वस्तुनिष्ठ न होकर आत्मनिष्ठ होनी चाहिये। हम दूसरो की पीडा के मूक दर्शक न रहे। ऐसा धर्म और ऐसी अहिंसा जो दूसरो की पीडा की मूक-दर्शक बनी रहती है वस्तुत न धर्म है और न अहिंसा। अहिंसा केवल दूसरो को पीडा न देने तक सीमित नही है, उसमे लोक-मगल और कल्याण का अजस्र स्रोत भी प्रवाहित है। जब लोक-पीडा अपनी पीडा बन जाती है तभी धार्मिकता का स्रोत अन्दर से बाहर प्रवाहित होता है। तीर्थंकरो, अर्हतो और बुद्धो ने जब लोक पीडा की यह अनुभूति आत्मनिष्ठ रूप मे की तो वे लोककल्याण के लिए सक्रिय बन गये। जब दूसरो की पीडा और वेदना हमे अपनी लगती है, तब लोक कल्याण भी दूसरो के लिए न होकर अपने ही लिए हो जाता है। उर्दू शायर अमीर ने कहा है—

खंजर चले किसी पे, तड़फते है हम अमीर,
सारे जहां का दर्द, हमारे जिगर में है।

जब सारे जहा का दर्द किसी के हृदय मे समा जाता है तो वह लोक कल्याण के मगलमय मार्ग पर चल पड़ता है और तीर्थंकर बन जाता है। उसका यह चलना मात्र बाहरी नही होता है। उसके सारे व्यवहार मे अन्तश्चेतना काम करती है और यही अन्तश्चेतना धार्मिकता का मूल उत्स है। इसे ही दायित्वबोध की सामाजिक चेतना कहा जाता है। जब यह जागृत होती है तो मनुष्य मे धार्मिकता प्रकट होती है। आपको यह ज्ञात होना चाहिए कि तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन वही साधक करता है जो धर्म सघ की सेवा मे अपने को समर्पित कर देता है। तीर्थंकर नामकर्म उपार्जित करने के लिए जिन बीस बोलो की साधना करनी होती है, उनके विश्लेषण से यह लक्ष्य स्पष्ट हो जाता है।

दूसरों के प्रति आत्मीयता के भाव का जाग्रत होना ही धार्मिक बनने का सबसे पहला उपक्रम है। यदि हमारे जीवन मे दूसरो की पीडा, दूसरो का दर्द अपना नही बना है तो हमे यह निश्चित ही समझ लेना चाहिये कि हमारे धर्म का अवतरण नही हुआ है। दूसरो की पीडा आत्मनिष्ठ अनुभूति से आत्म दायित्व बोध की अन्तश्चेतना के बिना सारे धार्मिक क्रियाकाण्ड पाखण्ड या ढोंग है। उनका धार्मिकता से दूर का रिश्ता नही है। जैन धर्म मे सम्यक्दर्शन (जो कि धार्मिकता की आधार-भूमि है) के जो पाच अग माने गये है, उनमे समभाव और अनुकम्पा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। सामाजिक दृष्टि से समभाव का अर्थ है, दूसरो को अपने समान समझना। क्योंकि अहिंसा एव लोककल्याण की अन्तश्चेतना का उदय इसी आधार पर होता है। आचाराग सूत्र में कहा गया है कि जिस प्रकार मैं जीना चाहता हू, मरना नही चाहता हू उसी प्रकार ससार के सभी प्राणी जीवन के इच्छुक है और मृत्यु से भयभीत हैं। जिस प्रकार मैं सुख की प्राप्ति का इच्छुक हू और दुख से बचना चाहता हू उसी प्रकार ससार के सभी प्राणी सुख के इच्छुक है, और दुख से दूर रहना चाहते है। यही वह दृष्टि है जिस पर अहिंसा का धर्म का और नैतिकता का विकास होता है।

जब तक दूसरो के प्रति हमारे मन में अर्थात् समानता का भाव जागृत नही होता, अ... नही आती अर्थात् उनकी पीडा हमारी पीडा नहीं बनती तब तक सम्यक्दर्शन का उदय भी नही होता, जीवन मे धर्म का अवतरण नही होता। असर ... नबी का यह निम्न शेर इस सम्बन्ध मे कितना मौजू है—

इमा गलत उशूल गलत, इद्दुआ गलत।
इंसा की दिलदिही, अगर इंसा न कर सके॥

जब दूसरो की पीडा अपनी बन जाती है ... सेवा की भावना का उदय होता है। यह सेवा न तो प्रदर्शन के लिए होती है और न स्वार्थबुद्धि से होती है, यह हमारे स्वभाव का ही सहज प्रकटन होता है। तब हम जिस भाव से हम अपने शरीर ...

पीडाओं का निवारण करते है उसी भाव से दूसरों की पीडाओं का निवारण करते हैं, क्योंकि जो आत्म-बुद्धि अपने शरीर के प्रति होती है वही आत्मबुद्धि समाज के सदस्यो के प्रति भी हो जाती है। क्योकि सम्यक्दर्शन के पश्चात् आत्मवत् दृष्टि का उदय हो जाता है। जहा आत्मवत् दृष्टि का उदय होता है वहा हिंसक बुद्धि समाप्त ही जाती है और सेवा स्वाभाविक रूप से साधना का अग बन जाती है। जैन धर्म मे ऐसी सेवा को निर्जरा या तप का रूप माना गया है। इसे 'वैयावच्च' के रूप मे माना जाता है। मुनि नन्दिसेन की सेवा का उदाहरण तोजैन परम्परा मे सर्वविश्रुत है। आवश्यक चूणि मे सेवा के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए कहा है कि एक व्यक्ति भगवान का नाम स्मरण करता है, भक्ति करता है, किन्तु दूसरा वृद्ध और रोगी की सेवा करता है, उन दोनो मे सेवा करने वाले को ही श्रेष्ठ माना गया है क्योकि वह सही अर्थो मे भगवान की आज्ञा का पालन करता है, दूसरेशब्दो में धर्ममय जीवन जीता है।

जैन समाज का यह दुर्भाग्य है कि निवृति-मार्ग या सन्यास पर अधिक वल देते हुए उसमे सेवा की भावना गौण होती चली गई—उसकी अहिंसा मात्र 'मत मारो' का निपेधक उद्घोप वन गई। किन्तु यह एक भ्राति ही है। विना 'सेवा' के अहिंसा अधूरी है और सन्यास निष्क्रिय है। जव सन्यास और अहिंसा में सेवा का तत्व जुडेगा तभी वे पूर्ण वनेगे।

संन्यास और समाज :

सामान्यतया भारतीय दर्शन मे सन्यास के प्रत्यय को समाज-निरपेक्ष माना जाता है किन्तु क्या सन्यास की धारणा समाज-निरपेक्ष है? निश्चय ही सन्यासी पारिवारिक जीवन का त्याग करता है किन्तु इससे क्या वह असामाजिक हो जाता हे? सन्यास के सकल्प मे वह कहता है कि "वित्तेपणा पुत्रैपणा लोकैपणा मया परित्यक्ता" अर्थात् मै अर्थकामना, सन्तान कामना और यश कामना का परित्याग करता हू। जैन परम्परा के अनुसार वह सावद्ययोग या पापकर्मों का त्याग करता हे। किन्तु क्या धनसम्पदा, सन्तान तथा यश कीर्ति की कामना का या पाप कर्म का परित्याग समाज का परित्याग है? वस्तुत समस्त एपणाओ का त्याग या पाप कर्मों का त्याग स्वार्थ का त्याग है, वासनामय जीवन का त्याग है। सन्यास का यह सकल्प उसे समाज-विमुख नही वनाता है, अपितु समाज कल्याण की उच्चतर भूमिका पर अधिष्ठित करता हे क्योकि सच्चा लोकहित निस्वार्थता एव विराग की भूमि पर स्थित होकर ही किया जा सकता है।

भारतीय चिन्तन संन्यास को समाज-निरपेक्ष नही मानता। भगवान् बुद्ध का यह आदेश "चरत्थ भिक्खवे चारिक वहुजन-हिताय वहुजन-सुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय देव मनुस्सान" (विनय पिटक महावग्ग)। इस बात का प्रमाण है कि संन्यास लोकमगल के लिए होता है। सच्चा सन्यासी वह है जो समाज से अल्पतम लेकर उसे अधिकतम देता है। वस्तुत वह कुटुम्व, परिवार आदि का त्याग इसलिए करता है कि समष्टि होकर रहे, क्योकि जो किसी का है, वह सवका नही हो सकता, जो सवका है वह किसी का नही है। सन्यासी निःस्वार्थ और निष्काम रूप से लोकमगल का साधक होता है। सन्यास शब्द सम पूर्वक न्यास शब्द से वना है। न्यास शब्द का अर्थ देखरेख करना भी है। सन्यासी वह व्यक्ति है जो सम्यक् रूप से एक न्यासी (ट्रस्टी) की भूमिका अदा करता हैं और न्यासी वह है जो ममत्व भाव और स्वामित्व का त्याग करके किसी ट्रस्ट (सम्पदा) का रक्षण एव विकास करता है। सन्यासी सच्चे अर्थों मे एक ट्रस्टी है। जो ट्रस्टी या ट्रस्ट का उपयोग अपने हित मे करता है, अपने को उसका स्वामी समझता है तो वह सम्यक् ट्रस्टी नही हो सकता है। इसी प्रकार वह यदि ट्रस्ट के रक्षण एव विकास का प्रयत्न न करे तो भी सच्चे अर्थ मे ट्रस्टी नही है। इसी प्रकार यदि सन्यासी लोकेपणा से युक्त

है, ममत्व-बुद्धि या स्वार्थ-बुद्धि से काम करता है तो वह सन्यासी नही है और यदि लोक की उपेक्षा करता है, लोक मगल के लिए प्रयास नही करता है तो भी वह सन्यासी नही है। उसके जीवन का मिशन तो "सर्वभूतहिते रत. का" है।

सन्यास मे राग से ऊपर उठना आवश्यक है। किन्तु इसका तात्पर्य समाज की उपेक्षा नही है। सन्यास की भूमिका मे स्वत्व एव ममत्व के लिए निश्चय ही कोई स्थान नही है। फिर भी वह पलायन नही, समर्पण है। ममत्व का परित्याग कर्तव्य की उपेक्षा नही है, अपितु कर्तव्य का सही बोध है। सन्सासी उस भूमिका पर खडा होता है, जहा व्यक्ति अपने मे समष्टि को और समष्टि मे अपने को देखता है। उसकी चेतना अपने और पराये के भेद से ऊपर उठ जाती है। यह अपने और पराये के विचार से ऊपर हो जाना समाज विमुखता नही है, अपितु यह तो उसके हृदय की व्यापकता है महानता है। इसीलिए भारतीयचिन्तकों ने कहा है—

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

सन्यास की भूमिका न तो आसक्ति की भूमिका है और न उपेक्षा की। उसकी वास्तविक स्थिति 'धाय' (नर्स) के समान ममत्वरहित कर्तव्य भाव की होती है। जैन धर्म मे कहा भी गया है—

सम दृष्टि जीवड़ा करे कुटुम्ब प्रतिपाल।
अन्तर सूं न्यारा रहे ज्यू धाय खिलावे बाल।

वस्तुत निर्ममत्व एव निस्वार्थ भाव से तथा वैयक्तिकता और स्वार्थ से ऊपर उठकर कर्तव्य का पालन ही सन्यास की सच्ची भूमिका है। सन्यासी वह व्यक्ति है जो लोकमगल के लिए अपने व्यक्तित्व एव शरीर को समर्पित कर देता है। वह जो कुछ भी त्याग करता है वह समाज के लिए एक आदर्श बनता है। समाज मे नैतिक चेतना को जागृत करना तथा सामाजिक जीवन मे आनेवाली दुप्रवृत्तियो से व्यक्ति को बचाकर लोक मगल के लिए, उसे दिशा-निर्देश देना—सन्यासी का सर्वोपरि कर्तव्य माना जाता है। अत हम कह सकते है कि भारतीय दर्शन मे सन्यास की जो भूमिका प्रस्तुत की गई है वह सामाजिकता की विरोधी नही है। सन्यासी क्षुद्र स्वार्थ से ऊपर उठकर खडा हुआ व्यक्ति होता है, जो आदर्श समाज रचना के लिए प्रयत्नशील रहता है।

अत सन्यासी को न तो निष्क्रिय होना चाहिए और न ही समाज विमुख। वस्तुत निष्काम भाव से सघ की या समाज की सेवा को ही उसे अपनी साधना का अग बनाना चाहिए।

गृहस्थ धर्म और सेवा :

न केवल सन्यासी अपितु गृहस्थ की साधना मे भी सेवा को अनिवार्य रूप मे जुडना चाहिए। दान और सेवा गृहस्थ के आवश्यक कर्तव्य हैं। उसका अतिथि सविभागव्रत सेवा सम्बन्धी उसके दायित्व को स्पष्ट करता है। इसमे भी दान के स्थान पर 'सविभाग' शब्द का प्रयोग अत्यन्त महत्वपूर्ण है, वह यह बताता है कि दूसरे के लिए हम जो कुछ करते है, वह हमारा उसके प्रति एहसान नही है, अपितु उसका ही अधिकार है, जो हम उसे देते है। समाज से जो हमे मिला है, वही हम सेवा के माध्यम से उसे लौटाते है। व्यक्ति को शरीर, सम्पति, ज्ञान और सस्कार जो भी मिले है, वे सब समाज और सामाजिक व्यवस्था के परिणाम स्वरूप मिले हैं। अत समाज की सेवा उसका कर्तव्य है। धर्म साधना का अर्थ है निष्काम भाव से कर्तव्यो का निर्वाह करना। इस प्रकार साधना और सेवा न तो विरोधी है और न भिन्न ही। वस्तुत सेवा ही साधना है।

अहिसा का हृदय रिक्त नही है :

कुछ लोग अहिंसा को मात्र निषेधात्मक आदेश मान लेते है। उनके लिए अहिसा का अर्थ होता है 'किसी को नही मारना' किन्तु अहिसा चाहे शाब्दिक रूप मे निषेधात्मक हो किन्तु उसकी आत्मा निषेधमूलक

नही है, उसका हृदय रिक्त नही है । उसमें करुणा और मैत्री की सहस्रधारा प्रवाहित हो रही है । वह व्यक्ति जो दूसरो की पीडा का मूक दर्शक बना रहता है वह सच्चे अर्थ मे अहिंसक है ही नही । जब हृदय मे मैत्री और करुणा के भाव उमड रहे हो, जब ससार के सभी प्राणियो के प्रति आत्मवत् भाव उत्पन्न हो गया है, तब यह सम्भव नही है कि व्यक्ति दूसरो की पीडाओ का मूक दर्शक रहे । क्योंकि उसके लिए कोई पराया रह ही नही गया है । यह एक आनुभाविक सत्य है कि व्यक्ति जिसे अपना मान लेता है, उसके दु ख और कष्टो का मूक दर्शक नही रह सकता है । अत अहिंसा और सेवा एक दूसरे से अभिन्न है। अहिंसक होने का अर्थ है—सेवा के क्षेत्र मे सक्रिय होना । जब हमारी धर्म साधना मे सेवा का तत्व जुडेगा तब ही हमारी साधना मे पूर्णता आयेगी । हमें अपनी अहिंसा का हृदय शून्य नही बनने देना है अपितु उसे मैत्री और करुणा से युक्त बनाना है । जब अहिंसा मे मैत्री और करुणा के भाव जुडेगे तो सेवा का प्रकटन सहज होगा और धर्म साधना का क्षेत्र सेवा का क्षेत्र बन जायेगा ।

जैन धर्म के उपासक सदैव ही प्राणी-सेवा के प्रति समर्पित रहे है । आज भी देश भर मे उनके द्वारा सचालित पशु सेवा सदन (पिंजरापोल, चिकित्सालय) शिक्षा सस्थाए और अतिथि शालाए उनकी सेवा-भावना का सबसे बडा प्रमाण है । श्रमण-वर्ग भी इनका प्रेरक तो रहा है किन्तु यदि वह भी सक्रिय रूप से इन कार्यो से जुड सके तो भविष्य मे जैन समाज मानव सेवा के क्षेत्र मे एक मानदण्ड स्थापित कर सकेगा ।

—निदेशक, पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध सस्थान, वाराणसी

मानवता का तकाजा

□ कमल सौगानी

एकमेल के युद्ध के बाद नेपोलियन आस्ट्रिया की राजधानी वियना के पास पहुचा । उसने सधि का झडा लेकर एक दूत नगर मे भेजा, किन्तु नगर के लोगो ने इस दूत को मार डाला । इस खबर से नेपोलियन क्रुद्ध हो उठा । उसकी अपार सेना ने चारो ओर से नगर को घेर लिया । फ्रासीसी तोपे आग उगलने लगी । नगर के भवन ध्वस्त होने लगे ।सहसा नगर का द्वार खुला और एक दूत सधि का झडा लिये हुए निकला । उस दूत ने कहा—"आपकी तोपे नगर के बीच जहा गोले गिरा रही है, वहा समीप ही राजमहल मे हमारे सम्राट् की पुत्री बीमार पडी है । कुछ और गोलाबारी हुई तो सम्रा् अपनी बीमार पुत्री को छोडकर अन्यत्र जाने को विवाश होगे । नेपोलियन के सेनानायको नें कहा—'हम शीघ्र विजयी होने वाले है, नगर के बीच तोपो के गोलो का गिरना युद्ध-नीति की दृष्टि से इस समय आवश्यक है ।'

नेपोलियन ने कहा—"युद्ध नीति की बात तो ठीक है । किन्तु मानवता का तकाजा है कि एक रुग्ण राजकुमारी पर दया कीजाय ।"

अपनी 'निश्चित' विजय को "संदिग्ध" बनाने का खतरा उठाकर भी नेपोलियन ने तोपो को वहा से तुरन्त हटाने की आज्ञा दे दी ।

—स्टेशन रोड, भवानी मडी-३२६५०२

अपरिग्रह : एक बुनियादी सामाजिक मूल्य

□ सिद्धराज ढड्ढा

> इस प्रकार, व्यक्तिगत, सामाजिक, वैज्ञानिक या आध्यात्मिक—किसी भी दृष्टि से देखें, अपरिग्रह मानव जीवन के परम मूल्यो मे से है। आज के युग मे, जबकि आर्थिक शोषण की प्रवृत्ति अत्यधिक बढ गई है और खासकर पिछले दो-तीन सौ वर्षों में विज्ञान और यान्त्रिकी इन दोनो के विकास ने इस प्रकार के शोषण तथा आर्थिक केन्द्रीकरण के अवसर बढ़ा दिये है, तब अपरिग्रह एक बुनियादी सामाजिक मूल्य बन गया है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो वह हमेशा ही जीवन के प्रमुख यमों मे माना गया है, आज साधनो की सीमितता को देखते हुए विज्ञान के लिये भी वह मान्य हो गया है।

लगभग सभी धर्मों और सस्कृतियो मे मनुष्य के लिए जो यम-नियम बताये गये है उनमे 'अपरिग्रह' का स्थान काफी ऊचा है। मैं स्वय, सत्य, अहिंसा आदि सनातन और सार्वभौम सिद्धान्तो के अलावा अन्य 'यमो' मे अपरिग्रह को सबसे महत्त्वपूर्ण मानता हूं। पच महाव्रतो मे अपरिग्रह का स्थान तो है ही, गाधीजी ने भी जिन ग्यारह व्रतो पर जोर दिया था और जिन्हे अपने आश्रम की दैनिक प्रार्थना मे दाखिल किया था, उनमे भी पहले पाच—सत्य, अहिसा आदि—जो 'महाव्रत' हे उन्ही मे अपरिग्रह का स्थान हे।

अपरिग्रह केवल व्यक्तिगत साधना या गुण-विकास के लिए ही आवश्यक नही है बल्कि उसमे एक बहुत बडा सामाजिक मूल्य अन्तर्निहित है। वैसे तो व्यक्तिगत जीवन के मूल्यो मे और सामाजिक जीवन के मूल्यो मे अन्तर करना उचित नही है, क्योकि व्यक्ति और समाज के जीवन को अलग-अलग करके नही देखा जा सकता, न देखना चाहिए, फिर भी आजकल आम लोगो मे ऐसी धारणा है कि धर्म अलग वस्तु है और समाज-जीवन अलग। धर्म को वे केवल व्यक्तिगत साधना का या मान्यता का विषय मानते है। वास्तव मे जीवन को इस प्रकार टुकडो मे बाटना गलत है। पर समझने की सुविधा के लिये धर्म और समाज-जीवन को अलग मानें तो भी अपरिग्रह इन दोनो को जोडनेवाली कडी है। अपरिग्रह का जितना महत्त्व व्यक्तिगत गुण-विकास और साधना के लिए है उतना ही महत्त्व उसका समाजगत है।

आज पश्चिम से आयी हुई जिस भौतिकवादी सभ्यता का दौर चल रहा है उसमे जीवन की आवश्यकताओ को (जिसे Standard of living कहा जाता है) बढाते जाना, प्रगति का या विकास का सूत्र बन गया है। आवश्यकताएं ज्यादा होगी तो आस-पास सामान भी ज्यादा होगा, अर्थात् परिग्रह बढेगा। जिसके घर मे जितना अधिक सामान हो वह ज्यादा सभ्य या सुसस्कृत माना जाता है। लेकिन दूसरी दृष्टि से सोचे तो बात इससे बिल्कुल उल्टी है। आवश्यक सामान का सग्रह असामाजिक तो है ही, वह कुसस्कारिता की भी निशानी है। जीवन जितना सादा होगा, उतना ही वह सुसंस्कृत माना जायगा।

आवश्यकताओ को बढाते जाना और उनकी पूर्ति के लिये सामान बटोरते जाना आज बहुतो के का लक्ष्य बन गया है। पर इन लोगो के ध्यान मे नही आता कि आवश्यकताओ का, वासनाओ का

ग्रा इच्छाओं का कोई अन्त नहीं है। भोग को जितना बढाया जाय, उतनी ही अतृप्ति की भावना भी बढती जाती है यह अनुभव सामान्य है। भोग का कही अन्त नही होता, वल्कि हमारा ही अत हो जाता है– "भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता" (भर्तृहरि)। केवल भोगवादी दृष्टि से देखें तो भी एक हद के आगे सगृहीत वस्तुओ का उपभोग की दृष्टि से कोई मूल्य नही रहता, उनसे केवल विकृत मानसिकता की तुष्टि भले ही हो।

एक उदाहरण से यह स्पष्ट हो जायगा। हाल ही मे फिलीपीन्स मे जन-विद्रोह हुआ और पिछले बीस वर्ष से वहा राष्ट्रपति पद पर बने हुए मारकोस और उनकी पत्नी इमेल्दा को देश छोडकर भाग जाना पडा। अपने बीस वरस के शासनकाल मे मारकोस ने जिस तरह अपने देश को और देशवासियो को लूट कर अरबो रुपयो की निजी सम्पत्ति और जायदाद जगह-जगह दुनिया मे खडी करली और करोडो के हीरे-जवाहरात अन्य कीमती सामान तीन सौ बक्सो मे भरकर वे लोग जाते समय साथ ले गये, वह तो अपने आप मे शायद एक वेमिशाल चीज है ही, पर मारकोस और इमेल्दा के भाग जाने के वाद लोगो ने देखा कि जो सामान वे साथ नही ले जा सके उसमे इमेल्दा की सैन्ट आदि सुगन्धियो की अनगिनत कीमती शीशिया और भाड, सैकडो 'लेडिज पर्स' जिनमे से अधिकाश के पैकिंग भी नहीं खोले गये थे तथा तीन हजार से ऊपर तरह-तरह की, रग-विरगी जूते-जोडिया थी। स्पष्ट है कि अगर इमेल्दा सवेरे-शाम भी नई-नई जूते-जोडिया वदलती तो वरसो मे भी एक का नम्बर नही आता। इसी तरह की कुछ बातें इजिप्ट (मिश्र) के वादशाह फारूक की कुछ वरस पहले सामने आई थीं। उनकी आलमारियो (वार्डरोव) मे उनके पहनने के तीन सौ से ऊपर 'सूट' थे। स्पष्ट है कि इस प्रकार की चीजो के सग्रह का उपयोग 'भोग' के लिए तो खास होता नहीं।

वस्तुएं जिस कच्चे माल मे वनती हैं, वह कच्चा माल आखिरकार सीमित है। पृथ्वी में या पृथ्वी पर जो सचित साधन है जैसे तेल, कोयला, सोना, चादी, पाषाण आदि वे तो सीमित हे ही, (वैज्ञानिको का अनुमान है कि इनमे से वहुत सी चीजे तो, अगर उनकी खपत आज की तरह ही होती रही, कुछेक वर्षो मे ही समाप्त हो जायेगी) लेकिन इनके अलावा पेड, पौधे, वनस्पति, अन्न आदि जो चीजे "पैदा होती है" उनकी उत्पत्ति भी जिन पच-तत्त्वो पर आधारित है वे भी सीमित है। आज का विज्ञान भी यहा तक तो पहुच ही गया है कि पृथ्वी पर जो वायुमण्डल, तापमान आदि तत्त्व हैं, जिनसे चीजे वनती है या उनके बनाने मे जिनसे मदद मिलती हे, वे सब सीमित है या मनुष्य के लिये उनकी उपलब्धि की सीमा है। करीब एक दशक पहले रोम मे दुनिया के कुछ बडे-बडे वैज्ञानिक और समाजशास्त्री इकट्ठे हुए थे। उनकी चर्चाओ के निष्कर्ष के रूप मे जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई उसका शीर्षक ही है—"लिमिट्स टू ग्रोथ"- विकास या वृद्धि की सीमाए। जब साधन या कच्चा माल सीमित है तव उनमे वनने वाली वस्तुए भी सीमित ही रहेगी। वे असीमित कैसे हो सकती है? और जब उत्पादन की सीमा है तो उपभोग भी असीमित या अमर्यादित कैसे हो सकता है? इसलिए आवश्यकताओ को और परिग्रह को बिना किसी मर्यादा के वढाते जाने की वात अवैज्ञानिक है, नासमझी है।

परिग्रह अवैज्ञानिक तो है ही, वह असामाजिक भी है। क्योंकि, जब सामग्री सीमित है तब अगर मैं अपने उपभोग को बिना किसी मर्यादा के बढाता जाऊ तो साधारण बुद्धि कहती है कि मैं निश्चित ही किसी दूसरे के उपभोग को सीमित करूगा। मनुष्य समझता है कि यह सारी सृष्टि 'मेरे लिए' बनी है। मैं इसका मालिक हू, जितनी मेरी क्षमता और योग्यता हो उतना उपभोग मैं कर सकता हू—

इदम् अद्य मया लब्धम् इमम् प्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदम् अस्ति इदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥
असौ मया हतः शत्रु हनिष्ये चापरान् अपि ।
ईश्वरोहम् अहम् भोगी सिद्धोऽहम् बलवान् सुखी ।
(भगवद् गीता-अध्याय १६, श्लोक १३-१४)

यह सारी सृष्टि मेरे लिये बनी है, मै जितना और जिस प्रकार चाहूं उसके उपभोग का मेरा अधिकार है, यह गलत धारणा ही आज की सारी समस्याओ की जड मे है । द्वेष, कलह, सघर्ष, युद्ध—सब इसी मे से पैदा होते है । वास्तव मे सृष्टि मनुष्य के लिए नही है, मनुष्य सृष्टि के लिए है । कुल मिलाकर सारी सृष्टि एक है और परस्पर सबधित है । मनुष्य उसका एक अग है मालिक नही । जैसा 'ईशावास्योपनिषद्' के पहले ही मत्र मे कहा है—

ईशावास्यम् इदम् सर्वम् यत् किंच जगत्याम् जगत ।
तेन त्यक्तेन भुन्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥

चारो ओर फैली हुई यह प्रकृति अनन्त मालूम होती है, पर हमने देखा कि वह सीमित है । इतना ही नही, वह केवल मेरे लिए नही है । वह वास्तव मे किसी **'के लिए'** नही है । सब मिलकर सबके लिये है । सब मिलकर 'एक' है । किसी एक लिए सब नही । इसलिए मनुष्य को प्रकृति से उतना ही लेना चाहिए जितना उसके पोषण आदि के लिए आवश्यक है । और जो लिया जाय वह भी 'यज्ञ' करके, अर्थात् प्रकृति की सेवा करके, कुछ न कुछ दे करके, कुछ न कुछ उत्पादन करके, कुछ न कुछ श्रम करके । "तेन त्यक्तेन भुन्जीथा—त्याग करके भोग करो ।" जो बिना बदला चुकाये खाता है उसके लिये **'गीता'** ने तो 'चोर' जैसा कडा शब्द इस्तेमाल किया है—"तैन दत्तानप्रदायैभ्यो, यौभुङ्क्ते स्तेन एव स." । त्याग और भोग की चर्चा करते हुए त्याग पर जोर देने के लिए सत विनोबा अक्सर कहा करते थे कि जैसे दो हिस्सा हाइड्रोजन और एक हिस्सा ऑक्सीजन मिलकर पानी बनता है उसी तरह दो हिस्सा त्याग और एक हिस्सा भोग मिलकर [illegible] बनता है ।

जाहिर है कि जब त्याग करके ही भोग[illegible] है, मेहनत करके ही खाना है, तब भोग की म[illegible] अपने आप आ जाती है । तब भोग अमर्यादित [illegible] हो सकता । तब फिर प्रश्न उठता है कि वह म[illegible] क्या हो ? मर्यादा को कैसे जाना जाय ? इ[illegible] सहज उत्तर वही है जो ऊपर आ चुका है—प्रकृति से उतना ही लेने के हकदार है, जितना [illegible] जीवन-निर्वाह के लिए जरूरी हो । इस प्रसग[illegible] गाधीजी की अगेज शिष्या, एडमिरल स्लेड की कुमारी स्लेड जो गाधीजी के साथ रहने के उनके आश्रम मे आ गई थी, और जिन्हे [illegible] ने "मीरा" बहन नाम दिया था, उनकी कही हुई एक[illegible] रोचक भी है और विषय को स्पष्ट करने वाली सन् १९२८-२९ की बात है, मोतीलाल नेहरू थे अत कांग्रेस वर्किंग कमेटी की बैठक इलाहाबा[illegible] उनके निवास 'आनन्द-भवन' मे हो रही गाधीजी वही ठहरे हुए थे ।

सवेरे वे मुह धोने, दातून करने बैठे, बहन ने रोज की तरह पानी का एक लोटा गाधीजी के पास रखा था और गाधीजी मुह [illegible] थे । इतने मे जवाहरलाल नेहरू गाधीजी से कुछ[illegible] करने आ गये । गाधीजी मुह धोते-धोते उनसे[illegible] करते जाते थे । इतने मे गाधीजी को ध्यान [illegible] कि लोटे का पानी तो खतम हो गया । लेकिन धोना पूरा नही हुआ । मीरा बहन पास मे थी, वे लोटा फिर से भरकर ले आई । गाधी[illegible] मुह धोने की क्रिया तो पूरी करली, पर बात करते एकाएक चुप और गभीर हो गये । जवाह[illegible] ने पूछा—"क्या बात है बापू, आप इतने [illegible] कैसे हो गये ?" गाधीजी ने कहा, "मेरे से गलती हो गई । रोज मेरा मुह एक लोटे पा[illegible] धुल जाता था आज बात करते-करते मुझे ध्यान

ग्रौर मुझे दूसरा लोटा पानी लेना पड़ा।"
्रलाल ने हसकर कहा—"इसमे परेशानी की
बात है, यहा तो गगा-जमुना दोनो बहती है,
पानी की कमी नही है। आप रेगिस्तान मे
ही है।" गाधीजी ने उत्तर दिया—"गगा–
ा केवल मेरे लिए नही बहती है। मुझे तो
ा ही पानी लेने का अधिकार है जितना मेरे
आवश्यक है!" रोज एक लोटा पानी काफी
ा था, उस दिन दो लोटे काम मे लेना पडा तो
ोजी सोच मे पड गये। आजादी की लडाई के
ापति के रूप मे अग्रेजी साम्राज्य के प्रतिनिधि से
ा-चीत मे कही असावधानी हुई होती उससे कम
ार बात गाधीजी के लिये यह आवश्यकता से
ाक पानी खर्च कर डालने की नही थी।

प्रकृति को केवल उपभोग्य वस्तु न मानकर,
माता के रूप मे देखते हुए उसके साथ सहयोग
के अपनी आवश्यकता जितनी ही वस्तु उससे लेकर
ार हम अपनी जीवन-यात्रा का निर्वाह करें तो कोई
ाह नही है कि पृथ्वी पर किसी को भी अभाव या
ीबी का सामना करना पडे। इस वसुधरा को
त्नगर्भा' कहा जाता है। 'रत्नगर्भा' का मतलब
ाल यह नही है कि पृथ्वी के गर्भ मे हीरे, माणक
ादि रत्न पडे हैं। वास्तव मे तो वह रत्नगर्भा इस-
ाए कहलाती है कि हर साल, हर फसल पर वह
ा अखूट सामग्री देती रहती है पृथ्वी पर जो भी
ा होता है—मनुष्य या अन्य प्राणी—उन सब के
र्याप्त निर्वाह की व्यवस्था या सामग्री प्रकृति उपलब्ध
रती है। यह सारा ससार 'नियम से' चलता है,
ह आज का विज्ञान भी मानता है। अत. जो पैदा
ुआ है उसके लिये निर्वाह का इन्तजाम न हो यह
ास नियम के और विज्ञान के प्रतिकूल बात है। हम
ोज देखते ही हैं कि मनुष्य हो या अन्य प्राणी, बच्चा
ादा होते ही मादा के स्तन मे उसके लिए दूध
त्काल निकलने लगता है, बच्चा नही हुआ था तब
तक नहीं निकलता था, बच्चा होते ही बच्चे का और
मा के स्तन दोनों के मुंह खुल जाते है।

आज जो गरीबी हम देख रहे है उसका मुख्य
कारण यह नही है कि दुनिया में चीजो का या
साधनो का अभाव है, बल्कि यह है कि उन साधनो
या उन वस्तुओ के बहुत बडे हिस्से पर थोडे से लोगो
ने अपना गलत आधिपत्य जमा रखा है। उनके उप-
भोग की कोई सीमा नही है। तथा इसीलिये दूसरी
ओर करोडो लोगो को अभाव और गरीबी मे जिन्दगी
बितानी पडती है। आजकल एक दलील अक्सर दी
जाती है कि गरीबी और अभाव का मुख्य कारण
जनसख्या की वृद्धि है। लेकिन यह प्रतिपादन अवैज्ञा-
निक और असत्य है। विशेषज्ञ लोगो की राय के
अनुसार पृथ्वी के मौजूदा साधन भी आज की अपेक्षा
दुगुनी-तिगुनी आबादी तक के लिए पर्याप्त है, पर
दुनिया के करीब तीन-चौथाई साधनो पर दो-चार
प्रतिशत लोगो का कब्जा है। अमेरिका और यूरोप
के 'विकसित' कहे जाने वाले देशो मे अन्न के, दूध
के, मक्खन के, पनीर के, मास-मछली के इतने विपुल
भण्डार भरे पडे है कि समय-समय पर उन्हे नष्ट
करना पडता है, जबकि दूसरी ओर अविकसित कहे
जाने वाले अफ्रीका, एशिया व दक्षिण अमेरिका आदि
के मुल्को मे करोडो लोग ऐसे है जिनको आधा पेट
रहना पडता है या भूखो मरना पडता है। पर वे
उस खाद्य सामग्री को खा नही सकते क्योंकि खरीद
नही सकते। वास्तव मे गरीबी और अभाव का सबंध
जनसख्या से नही है, इस बात से है कि प्रकृति मे
उपलब्ध या प्रकृति द्वारा दिये जाने वाले साधनो को
चद लोगो ने हथिया लिया है या उनका अमर्याद
उपभोग कर रहे है। सीधे शब्दो मे कहे तो वे
दूसरो का हिस्सा भी खा जाते है। गरीबी और
अभाव वास्तव मे शोषण के परिणाम है। जनसख्या
वाली दलील तो उस शोषण को छिपाने के लिए है
ताकि लोग भुलावे मे आकर असली शत्रु को न पह-

चाल सके और शोषण करने वाले इस दलील की आड मे अपना शोषण चालू रख सके ।

आज साधनो की उपलब्धि मे कितनी विषमता है इसका एक उदाहरण अभी कुछ समय पहले नई दिल्ली और मद्रास के दो शहरो के तुलनात्मक अध्ययन से सामने आया था । नई दिल्ली और मद्रास की आबादी मे फर्क नही है लेकिन नई दिल्ली मे मद्रास की अपेक्षा दस गुना ज्यादा पानी उपलब्ध है, वहा की सडके तीन गुना चोडी है और सडको पर प्रकाश की व्यवस्था मद्रास की अपेक्षा छ गुनी है, जबकि नई दिल्ली के नागरिक बिजली–पानी आदि की सेवाओ के लिए मद्रास के नागरिको की अपेक्षा कम मुआवजा देते हैं । नागरिक सुविधाओ पर मद्रास की अपेक्षा दिल्ली मे १५ से २० गुना खर्च होता है । यह तो दो बडे शहरो और राजधानियो के बीच की विषमता की बात हुई, पर इस देश के गावो से तथा अन्य छोटे शहरो से दिल्ली की तुलना की जाय तो कोई हिसाब ही नही बैठेगा । अत अपरिग्रह अर्थात् आवश्यकता से अधिक उपभोग या खर्च न करना, केवल व्यक्तिगत साधना का विषय नही है सामाजिक दृष्टि से भी वह बहुत महत्त्व की चीज है, खासकर दुनिया को आज की परिस्थिति मे । समाज से और समाज की समस्याओ से अपरिग्रहवृत्ति का गहरा सबध है । सामाजिक दृष्टि से देखे तो परिग्रह वास्तव मे एक अपराध है ।

अपरिग्रह के बारे मे एक और गलत धारणा लोगो मे है कि अपरिग्रही जीवन का मतलब है गरीबी और अभाव का जीवन । वास्तव मे बात इससे उल्टी है । हमने ऊपर देखा कि अगर अपरिग्रह का मूल्य समाज मे व्यापक रूप से स्वीकृत हो जाय तो आज जो आज गरीबी और अभाव है वह बहुत हद तक समाप्त हो सकते है । व्यक्तिगत साधना की दृष्टि से अपरिग्रह की बात अलग है, लेकिन सामान्य तौर पर अपरिग्रह का मतलब यह नही है कि जीवन की मूलभूत आवश्यकताओ मे कमी की जाय अपरि
अपने-आप मे एक नकारात्मक शब्द है । अपरि
अर्थात् परिग्रह का न होना, और परिग्रह का मत
सामान्य तौर पर है—आवश्यकता से अधिक वस्
का सग्रह । अपरिग्रह सग्रह या सग्रह की वृत्ति के अ
का नाम है, जीवन की आवश्यकताओ मे कटौती नही । इसलिए अपरिग्रह का सबध न गरीबी
न अभाव से ।

अब व्यक्तिगत दृष्टि से अपरिग्रह की चर्चा करेंगे । व्यक्तिगत जीवन के विकास मे अप
का महत्त्व व्यापक रूप से मान्य है जो लोग भौतिकवादी दृष्टि से सोचते है, उनकी बात
है, वरना चाहे पश्चिम हो या पूर्व, भारत
चीन या योरोप, सब जगह यह मान्यता समान
है कि भौतिक वस्तुओ का अनावश्यक सग्रह मनुष्
चारित्रिक और बौद्धिक विकास मे बाधा डालता है
आध्यात्मिक विकास मे होने वाली बाधा तो स्पष्
ही । अग्रेजी की कहावत प्रसिद्ध है—Plain Livi
High Thinking" । भौतिक दृष्टि से जीवन जित
सादा और सरल होगा उतनी ही अधिक बौद्धि
और आध्यात्मिक विकास के लिए अनुकूलता होगी
अन्यथा मनुष्य की सारी शक्ति पहले तो सग्रह
फिर उसकी सार–सभाल मे ही खर्च हो जायेगी
जैसा लेख के शुरू मे कहा गया है, सग्रह और परि
का एक परिणाम यह होता है कि ज्यो–ज्यो
बढता जाता है त्यो–त्यो उसकी लालसा और बढ
जाती है । फिर मनुष्य के पास अपने चारित्
विकास या आध्यात्मिक साधना के लिए कोई अवका
नही बचता । कबीर ने तो यहा तक चेतावनी
थी कि घर मे अगर सपत्ति बढ़ती है तो जिस तर
नाव मे बढा हुआ पानी नाव को ले डूबता है उ
तरह वह उस घर को ले डूबेगा —

पानी बाढा नाव मे, घर मे बाढो दाम ।
दोनो हाथ उलीचिये, यही सयानो काम ॥

मुस्लिम सस्कृति में भी असग्रह और अपरिग्रह का विचार इस हद तक रहा है कि रोज कुछ न कुछ खैरात करते रहने के अलावा वर्ष के अंत मे हर मुस्लमान कुटुम्ब को अपनी सारी सगहीत सम्पत्ति बाट देनी चाहिए ऐसा विधान उस सस्कृति मे रहा है। इस्लाम मे ब्याज लेना भी पाप माना जाता है, यह सब जानते हैं।

विनोबा ने तो एक सूत्र ही बनाया था—"घर में हो सादगी और समाज मे हो समृद्धि।" घर में अधिक सामान इकट्ठा करना जहा ईर्ष्या, द्वेष, कलह और सघर्ष का कारण बनता है वहा समाज की समृद्धि सबके लिये हितकर है बशर्ते कि वह पूरे समाज के उपयोग के लिये उपलब्ध हो। रोजमर्रा की आवश्यकताओ की पूर्त्ति तो हर कुटुम्ब अपनी करता ही है, पर इसके अलावा कभी-कभी मनुष्य को अधिक वस्तुओ या अधिक व्यय की आवश्यकता होती है जैसे—बीमारी, शादी, उत्सव, प्रवास, यात्रा आदि के प्रसग। ऐसे प्रसगो पर सब की आवश्यकता पूर्त्ति के लिए आज से कुछ वर्ष पहले तक समाज में सामूहिक व्यवस्था रही है। गाव–गाव मे धर्मशालाए शादी–व्याह और उत्सवो मे काम आने वाले सार्वजनिक स्थान, ऐसे प्रसगो के लिये आवश्यक वस्तुओ आदि का सग्रह यह सामान्य बात थी। इस 'सामाजिक समृद्धि' और परस्पर सहयोग के आधार पर सामान्य से सामान्य परिवारो को भी ऐसे प्रसगो पर कोई दिक्कत या अनावश्यक खर्च की आवश्यकता नही होती थी। आज धर्मशालाओ या सरायो का स्थान होटलो ने लिया है और शादी–व्याह का इन्तजाम भी किराये से होने लगा है। इसके कारण सामान्य कुटुम्बो की परेशानी कितनी बढ गई है, इसका अनुभव सबको होगा।

लेकिन परिग्रह भी सिर्फ भौतिक वस्तुओ का ही नही होता। महावीर स्वामी ने परिग्रह की व्याख्या यह की है कि केवल भौतिक वस्तु पर ही नहीं, किसी भी पदार्थ पर ममत्व रखना परिग्रह है। 'सब प्रकार की मूर्छा' परिग्रह है। मूर्छा अर्थात् लगाव, मोह या आशक्ति। वह आशक्ति वस्तुओ से ही नही अमूर्त चीजो से भी हो सकती है। 'भगवद् गीता' का तो सारा उपदेश ही आशक्ति-त्याग के चारो ओर गुथा हुआ है।

इस प्रकार, व्यक्तिगत, सामाजिक, वैज्ञानिक या आध्यात्मिक—किसी भी दृष्टि से देखें, अपरिग्रह मानव जीवन के परम मूल्यो में से है। आज के युग में, जबकि आर्थिक शोषण की प्रवृत्ति अत्यधिक बढ गई है और खासकर पिछले दो–तीन सौ वर्षों मे विज्ञान और यान्त्रिकी इन दोनो के विकास ने इस प्रकार के शोषण तथा आर्थिक केन्द्रीयकरण के अवसर बढा दिये है, तब अपरिग्रह एक बुनियादी सामाजिक मूल्य बन गया है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो वह हमेशा ही जीवन के प्रमुख यमो मे माना गया है, आज साधनो की सीमितता को देखते हुए विज्ञान के लिये भी वह मान्य होगया है। □

—लाल भवन के पीछे, चौडा रास्ता,
जयपुर (राजस्थान)

भीतर का अंधेरा मिटेगा विज्ञान और अहिंसा के मेल से

डॉ. दौलतसिंह कोठारी

△

> इसी बात को अगर जीवन मे उतार लें तो सारे भेद मिट जाएं। देश अलग हो, जाति अलग हो, भाषा और वेष-भूषा अलग हो, रंग-रूप और खान-पान भिन्न हो, सम्प्रदाय भिन्न हो-तो भी मानव एक-दूसरे का पूरक है। वह भिन्न होते हुए भी अभिन्न है। अपने आस-पास की तमाम चीजो को, घटनाओ को आप इसी कसौटी पर परखिए और आपके मन मे बसी तमाम घृणा, द्वेष, गुस्सा और झुंझलाहट यानी हिंसा पल भर मे काफूर हो जायेगी।

हमारे सामने कोई भी समस्या हो और हम उसका हल निकालना चाहे तो आजकल उसमें विज्ञान और टेक्नोलॉजी की परम आवश्यकता होती है। भारत के इतिहास में पहली बार ऐसा युग आया है, जिसका आधार विज्ञान और टेक्नोलॉजी है। चाहे आर्थिक समस्या हो, खेती की कठिनाइया हो, या सुरक्षा का सवाल हो—सबका हल खोजने के लिए और प्रगति एव विकास के लिए हमें विज्ञान और टेक्नोलॉजी को सहारा लेना पडता है। लेकिन एक बात गहरी चिंता जगाती है। एक ओर तो मानव–इतिहास में पहले कभी न तो इतना विज्ञान था, न टेक्नोलॉजी थी, दूसरी ओर मानव-मानव के बीच जितना अविश्वास, जितनी घृणा और जितनी हिंसा आज दिखाई देती है उतनी पहले कभी नही थी। और यह हिंसा बहुत ही व्यापक है। भाई-भाई का गला काटने को तैयार है। ऐसा लगता है जैसे पूरे समाज में पूरे देश मे हिंसा के खूनी दाग लगते ही जा रहे है–हर रोज।

इसका कारण क्या है ? कारण यही है कि विज्ञान और जनता के बीच खाई है, जो बडी तेजी से बढती जा रही है। इसलिए कि विज्ञान भयकर रफ्तार से बढ रहा है, हर दस साल मे उसका परिणाम पहले से दुगना हो जाता है। इस तरह आदमी तो पिछड रहा है और विज्ञान बढ रहा है। आम आदमी की जिंदगी मे विज्ञान को जिस तरह से रच-बस जाना था, वह नही हुआ। चन्द सुविधाओ का मिल जाना विज्ञान नही है। विज्ञान का असली लाभ तो तब है, जब वह हमारी जिंदगी मे उतर जाए उसका हिस्सा बन जाए।

यह तभी सम्भव है, जब हम विज्ञान को जनता के निकट ले जाए और उसे अहिंसा और गांवों के साथ जोडकर ले जाए और यह प्रयास केवल राष्ट्रीय विज्ञान–दिवस पर ही नहीं, हर दिन होना चाहिए निरन्तर। तभी विज्ञान और जनता के बीच की खाई कम हो सकती खास तौर से बच्चो को अपने देश के महान वैज्ञानिको के जीवन और कार्य से परिचित कराना जरूरी है। २८ फरवरी के दिन सन १९२८ में हमारे एक महान वैज्ञानिक डॉ सी वी रामन् ने अपनी महान खोज 'रामन् इफेक्ट' की घोषणा की थी। और भी बहुत से महान वैज्ञानिक हुए है इस देश मे–प्रफुल्लचन्द राय, जगदीशचन्द्र बोस, मेघनाथ साहा-इन सबके बारे में बच्चो को और आम जनता को बताना चाहिए। आजादी मिले चालीस साल हो गये, अब भी नही

बतायेंगे तो कब बतायेंगे ?

इन महान वैज्ञानिको के बारे मे बताने की सबसे बडी बात यह है कि विज्ञान एक साधना है। इन वैज्ञानिको के जीवन से हमें सबसे बडा पाठ यही मिलता है कि जीवन मे सयम बरतना बहुत जरूरी है, विज्ञान के प्रति ही नही मानव मे भी अटूट श्रद्धा रखना अत्यावश्यक है, और हमें घोर परिश्रम करना चाहिए। सयम, श्रद्धा और परिश्रम या तप के बिना आप न तो जीवन को अच्छी तरह जी सकते है, न जीवन से कुछ पा सकते है और न कही पहुच सकते है। हमे नवयुवको तक यह सदेश पहुंचाना होगा कि विज्ञान एक तरह की तपस्या है, साधना है।

एक और बात जो इन वैज्ञानिको के जीवन और कार्य से सीखनी है, वह यह है कि जो समस्याए हमें बेहद जटिल और डरावनी लगती है, असल मे उनकी जड बडी मामूली होती है। हमे वे मुश्किल इसलिए लगती है कि ठीक से नजर नही आ रही हे। उनकी तह तक पहुचने के लिए हमे विज्ञान का तरीका अपनाना होगा। विज्ञान का तरीका यही है—खोज-बीन, जाच-पडताल और सोच-विचार।

उदाहरण के लिए 'रामन् इफेक्ट' या 'रामन् प्रभाव' की ही खोज को ले। उसकी जड है इस सवाल मे कि आसमान का रग आसमानी है तो सही, पर यह रग आसमान मे आया कहा से ? हर बच्चे के मन मे यह सवाल उठता है। रामन् ने इसी पर सोचा, चिंतन किया। उनसे पहले भी लोग इस उहापोह मे लगे थे कि आसमान को उसका रग कहा से मिला। तो एक जवाब मिला कि हवा से मिला। पर हवा मे तो कोई रग नहीं होता। सो, चितन जारी रहा। तब इस प्रश्न की एक और गुत्थी सुलझी कि सूरज की किरणे जब हवा के परमाणुओ से टकराती है तो उनमे से जो नीले रग की किरणे हे वे ज्यादा बिखर जाती है और लाल रग की किरणे कम बिखरती ह इसीलिए उगता और डूबता सूरज लाल दिखता है और बाकी आसमान नीला। ऐसी ही बातो पर चिंतन करते-करते रामन् अपनी महान खोज तक पहुंचे।

रामन् की खोज की महानता इस बात मे है कि वह बुनियादी वैज्ञानिक सकल्पनाओ से भी जुडी है और व्यावहारिक उपयोगो से भी। विज्ञान के इस समय के सबसे महान् सिद्धात से भी उसका सीधा तालमेल बैठता है। वह मूल सिद्धात यह हे कि कोई भी परमाणु हो वह लहर भी है, तरग भी है और कण भी है। यानि एक ही तत्व, एक ही साथ एक ही समय में दो रूपो मे विद्यमान है—तरग भी, कण भी। अब तरग तो यहा भी तरग हैं और आगे भी तरग रहेगी—यानी उसमे अभिन्नता है। परन्तु दूसरी ओर, कण एक यहा है तो दूसरा वहा है। यानी कणो मे भिन्नता है। इस भिन्नता और अभिन्नता का समन्वय विज्ञान का सबसे बड़ा मूल सिद्धात हे। इसी को अगरेजी मे कहते है—"कॉम्प्लिमेटैरिटी ऑफ आइडेन्टिटी एण्ड नॉन आइडेन्टिटी।" यानी परस्पर विरोधी होते हुए भी एक दूसरे का पूरक होना।

अब इसी बात को अगर जीवन मे उतार ले तो सारे भेद मिट जाए। देश अलग हो, जाति अलग हो, भाषा और वेश-भूषा अलग हो, रग-रूप और खान-पान भिन्न हो, सम्प्रदाय भिन्न हो—तो भी मानव एक दूसरे का पूरक है। वह भिन्न होते हुए भी अभिन्न है। अपने आस-पास की तमाम चीजो को घटनाओ को आप इसी कसौटी पर परखिए और आपके मन में बसी तमाम घृणा, द्वेष, गुस्सा और झुझलाहट यानी हिंसा पल भर मे काफूर हो जायेगी।

विज्ञान के इसी मूल सिद्धात को भारतीय दर्शन ने भी अनुभव के आधार पर अपनी तरह से प्रस्तुत किया था। जैसे कि आप और हम है। शरीर की दृष्टि से हम भिन्न है। लेकिन आत्मा की दृष्टि से हम अभिन्न है यही से उदय होता है प्रेम का। मानव ही नही, जीव मात्र के प्रति प्रेम।

यही से पनपती है यह भावना कि जियो और जीने दो। परमाणु के अन्दर प्रोटान के चारो ओर चक्कर लगाते इलेक्ट्रान भला कहा जानते है कि वे अभिन्न है ! बस, उनके कार्यों से उनकी अभिन्नता प्रकट होती है। उसी आधार पर कुछ टिका हुआ है—इलेक्ट्रान से बने, परमाणु, परमाणुओ से बने तत्व, तत्वो से बने यौगिक, यौगिकों से बने पदार्थ जीव-जन्तु, पेड-पौधे, हम सब और यह धरती, ग्रह, तारे और यह सम्पूर्ण ब्रह्माड ! दूसरी ओर, हम मानव जानता तो है कि आत्मा की दृष्टि से हम अभिन्न है, पर अपने जीवन में, आचार मे हम इस बात को उतारते नही है। इसी कारण सारी समस्याए है।

तो विज्ञान की यह बात हमे आज भारत के जन-जन तक पहुंचानी है। बल्कि भारत मे ही नही, सम्पूर्ण विश्व में फैलानी है। भारत की इसमे एक बडी निश्चित देन हो सकती है कि विज्ञान के इस युग को "विज्ञान और अहिंसा" का युग बनाया जाए।

यहा मुझे महान् वैज्ञानिक आइन्स्टाइन की याद आ रही है। प्रिंस्टन मे उनका जो अनुसधान सस्थान था, उसमे अपने कमरे मे उन्होने केवल दो चित्र लगा रखे थे। इनमे से एक उनके जर्मनी के मित्र सगीतकार का था। दूसरा चित्र न तो न्यूटन का था और न किसी और वैज्ञानिक का, बल्कि ऐसे व्यक्ति का था जिससे आइन्स्टाइन स्वय कभी मिले नही थे। वह महात्मा गांधी का चित्र था। जब कोई उनसे मिलने जाता तो वे गांधी के चित्र की ओर इशारा करके कहते, "द ग्रेटेस्ट मेन ऑफ द एज" [इस युग का सबसे बड़ा महापुरुष] युग के सबसे महान् वैज्ञानिक का यह कथन ही मानो उस भविष्य का सकेत दे रहा है, जो विज्ञान और अहिंसा का युग होगा।

सन् १९५१ मे मैने आइन्स्टाइन को एक पत्र लिखा था कि दिल्ली विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग के रजत-जयन्ती समारोह के लिए कृपया एक सन्देश भेजिए। उन्होने छोटा, पर कितना सारगर्भित सन्देश भेजा। उन्होने लिखा।

"भाईचारा रखो और लगन से, बिना किसी पूर्वाग्रह के काम मे जुटे रहो। तुम्हे अपने कार्य में आनन्द भी आयेगा और सफलता भी मिलेगी।"

यही चीज हमे देश को सिखानी है। ☐

बुझी लालटेन

☐ श्री नरेन्द्र सिंघवी

कोई अंधा आदमी रात को अपने मित्र के यहा से घर लौटने लगा तो मित्र ने जलती लालटेन को उसके हाथ में थमा दी। अधा हसा और बोला—"यह मेरे किस काम आयेगी ?" मित्र ने कहा—"लालटेन देखकर लोग तुम्हारे लिए रास्ता छोड देंगे, इसलिए इसे ले जाओ।"

अंधा लालटेन लेकर चल पडा और रास्ते में जब एक आदमी उससे टकरा गया तो वह अन्धा 'झल्लाया—आंख मूद कर चल रहे हो क्या ? दिखती नही, मेरे हाथ में लालटेन ?"

इस पर उस आदमी ने उत्तर दिया—पर भाई लालटेन तो बुझी हुई है।

सच है लालटेन जल रही है या नही, इसे देखने के लिये भी आंखे चाहिये।

—ओरियन्टल ट्रांसपोर्ट के पास,
जवाहरलाल किशनलाल ८७ मकान,
भवानी मण्डी

आत्म साधना : प्रतीकों के माध्यम से

△ डॉ. प्रेमसुमन जैन

△

प्राकृत कथा साहित्य मे प्राचीनकाल से ही प्रतीको का प्रयोग होता रहा है। कथाकार अपनी कथा मे भावो को व्यजित करने के लिए प्रतीको का प्रयोग करता है। जैसे घू घट से झाकता हुआ नारी का सुन्दर मुख दर्शक को अधिक कौतूहल एवं आनन्द प्रदान करता है, वैसे ही प्रतीको का प्रयोग कथा को अधिक मनोरजक एव सार्थक वना देता है।

आचार्य हरिभद्र सूरि भारतीय साहित्य मे कथा-सम्राट के रूप मे विख्यात हैं। समराइच्चकहा एव धूर्ताख्यान जैसे प्रसिद्ध ग्रन्थो के अतिरिक्त उन्होने सैकडो लघु कथाए भी लिखी है। डॉ नेमिचन्द शास्त्री ने हरिभद्र के कथा–साहित्य का मूल्याकन प्रस्तुत किया है।[1] हरिभद्र द्वारा प्रस्तुत विभिन्न प्रकार की कथाओ मे से उनकी कतिपय प्रतीक कथाओ के वैशिष्ट्य को यहा प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

प्राकृत कथा साहित्य मे प्राचीनकाल से ही प्रतीको का प्रयोग होता रहा है। कथाकार अपनी कथा मे भावो को व्यजित करने के लिए प्रतीको का प्रयोग करता है। जैसे घू घट से झाकता हुआ नारी का सुन्दर मुख दर्शक को अधिक कौतूहल एव आनन्द प्रदान करता है, वैसे ही प्रतीको का प्रयोग कथा को अधिक मनोरजक एव सार्थक वना देता है। प्रतीको के प्रयोग से प्रतिपाद्य विषय का सरलता से स्पष्टीकरण हो जाता है। सीधी–सादी कथा प्रतीको से अलकृत हो उठती है। जैसे प्राकृत कथाओ मे नायक द्वारा समुद्र यात्रा की जाती है। किन्तु प्राय अधिकाश कथाओ मे समुद्र के वीच मे जहाज तूफान से भग्न हो जाता है और किसी लकडी के पटिये के सहारे नायक समुद्र के तट पर जा लगता है। यह घटना इस वात का प्रतीक है कि ससार एक समुद्र की भाति है, जहा कर्मो के तूफान उठते रहते है और शरीर रूपी नौका भग्न होती रहती है। किन्तु पुरुषार्थी जीव रूपी नायक अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।[2]

आचार्य हरिभद्र ने अपनी कथाओ मे इस प्रकार के कई प्रतीको का प्रयोग किया है। शब्द प्रतीको के अन्तर्गत कथा के पात्रो के विशेष नाम रखे गये है। समराइच्चकहा का नायक समरादित्य का नाम स्वय एक प्रतीक है। समर का अर्थ है–युद्ध, सघर्ष। नायक नो भवो तक अपने प्रतिद्वन्द्वियो से जूझता रहता है। आदित्य का अर्थ है–सूर्य। सूर्य अस्त होने के वाद भी अपनी प्रखर आभा के साथ उदित होता रहता है। उसी प्रकार नायक भी अपने कर्तव्यो का पालन करता हुआ अन्तत निर्वाण प्राप्त करता है। कुछ प्रतीक

---

१. शास्त्री, नेमिचन्द, हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन, वैशाली, १९६५

२. द्रष्टव्यः जैन, प्रेम सुमन, 'पालि-प्राकृत कथाओ में प्रयुक्त अभिप्राय' नामक लेख, राजस्थान भारती, वीकानेर १९६६

विशेप अर्थ को व्यजित करने वाले होते है। जैसे—अधिक घमण्ड करने वाला कोई पात्र मरकर हाथी होता है। यहा मान का प्रतीक नाक है। पात्र ने अधिक मान किया इसलिए उसको लम्बी नाक (सूंड वाला) हाथी का जन्म मिला। जब किसी दीपक या सूर्य के उदाहरण द्वारा केवलज्ञान का परिचय दिया जाता है तो वह भावप्रतीक का प्रतिनिधित्व करता है। प्राकृत कथाओ मे ऐसे कई उदाहरण प्राप्त होते है। कुछ ऐसे दृश्य एव विम्व भी प्राप्त होते है जो अमूर्त भावो को व्यक्त करते है। जैसे कीचड से आच्छादित लौकी भारी हो जाने से जल मे डूब जाती है और कीचड की परत गल जाने पर हल्की होकर वह पानी के ऊपर आ जाती है, यह कथा-विम्वघटना-प्रतीक के रूप मे है। यहा लौकी जीवात्मा और कीचड कर्मों का प्रतीक है।[1] आगम साहित्य मे ऐसी कई प्रतीक कथाए प्राप्त है। आचार्य हरिभद्र ने समराइच्चकहा मे ऐसे प्रतीको का प्रयोग किया है। दूसरे भव की कथा के गर्भ मे नायिक को साप का स्वप्न आता है, जो इस बात का प्रतीक है[2] कि होने वाला बालक माता–पिता का विघातक होगा।

ऐसी प्रतीक कथाओ का विकास आगमिक कथाओ से हुआ है। आचाराग सूत्र मे एक कच्छप की प्रतीक कथा है। उस कछुए को शैवाल (काई) के बीच मे रहने वाले एक छिद्र से चादनी का सौन्दर्य दिखायी देता है। उस मनोहर दृश्य को दिखाने के लिए जब वह कछुआ अपने साथियो को बुलाकर लाया तो उसे वह छिद्र ही नही मिला, जिसमे से च दिख रही थी। यह प्रतीक आत्मज्ञान के निमी भव के लिए प्रयुक्त हुआ है।[3] भारतीय कथाः कच्छप-प्रतीक प्रचलित रहा है।[4] इसी : सूत्रकृतागसूत्र मे पुण्डरीक की प्रतीक कथा है। सरोवर जल और कीचड मे भरा हुआ है। बीच मे कई कमल खिले हुए हैं। उनके वी एक सफेद कमल है। चारो दिशाओ से आने मोहित पुरुष उस सफेद कमल को प्राप्त क प्रयास मे कीचड मे फसकर रह जाते है। वीतरागी पुरुष सरोवर के किनारे खडा रहक सफेद कमल को अपने पास बुला लेता है। प्रतीक कथा मे सरोवर ससार का प्रतीक है, कर्मराशि का। कीचड विषय-भोगो का प्रतीक है। साधारण कमल जनपद के प्रतीक है एव श्वेत कम राजा का। चार मोहित पुरुष मतवादियो के प्रती है एव वीतरागी पुरुष श्रमण धर्म का। ज्ञाताध कथा मे कई प्रतीक कथाए प्राप्त है। मयूरी के अ के प्रतीको द्वारा श्रद्धा और सशय के फल को प्र किया गया है। दो कछुओ की प्रतीककथा द्वारा सयमी एव असयमी साधको के परिणामो को उपस्थित कि गया है। धन्ना सार्थवाह एव विजय चोर की क आत्मा एव शरीर के सम्बन्ध को स्पष्ट करती है रोहिणी कथा पाच व्रतो की रक्षा एव वृद्धि को प्रती द्वारा स्पष्ट करती है। उदकजात नामक कथा अ कान्त के सिद्धान्त की प्रतीको से समझाती है।

१. ज्ञाताधर्मकथासूत्र, छठा अध्ययन।
२. समराइच्चकहा, सम्पा-जैकोबी, प्र० एशियाटिक सोसाइटी बगाल, कलकत्ता, १९२६, भव-२ पृ. ११-
दृष्टव्य परिशिष्ट (क)
३. आचारांगसूत्र, अ. ६. उ. १
४. मज्झिमनिकाय, भाग ३, बालपण्डितसुत्त, पृ. २३९-४०
५. सूत्रकृतांगसूत्र, द्वितीयश्रुत., प्र. अ., सूत्र ६३८-४४।
६. दृष्टव्य, जैन, प्रेम सुमन, "आगम कथा-साहित्य मीमांसा" नामक धर्मकथानुयोग भाग २ की भूमिका, पृ. १४

राध्ययन सूत्र एव उसके व्याख्या-साहित्य मे कई ाक कथाए उपलब्ध है। प्रतीक कथाओ की इस भूमि मे आचार्य हरिभद्र की प्रतीक कथाएं कसित हुई है।

आचार्य हरिभद्रसूरि की रचनाओ में समराइ-कहा का प्रमुख स्थान है। इस कथा-ग्रन्थ मे कई तीक कथाए अन्तर्निहित है। ग्रन्थ के दूसरे भव की ा सिंह कुमार, कुसुमावली और आनन्द के जीवन सम्वन्धित है। प्रसगवश ससार-स्वरूप का विवेचन रने के लिए इसमे मधु-विन्दु दृष्टान्त की कथा भावशाली ढग से प्रस्तुत की गयी है।[1] यह हरि-द्र की प्रतिनिधि प्रतीक कथा है। यद्यपि इस कथा ा प्रचार भारतीय कथा साहित्य में प्राचीन काल से ुा है।[2] मधु-विन्दु की सक्षिप्त प्रतीक-कथा इस कार है—

"अनेक देशो एव वन्दरगाहो मे विचरण करने ाला कोई एक पुरुष अपने सार्थ के साथ एक सघन गल में प्रविष्ट हुआ। किन्तु चोरो द्वारा लूट लिये ाने पर वह अकेला जगल मे भटकने लगा तभी एक गली हाथी उसके पीछे पड गया। उससे वचने के लए वह पुरुष दौड कर एक पुराने कुए में वटवृक्ष ं प्रारोह (जटाओ) को पकडकर लटक गया। कुए ं वीच में लटके हुए उस व्यक्ति ने देखा कि नीचे ुह फाडे हुए एक अजगर उसको लीलने के लिए ायार है। कुए की दीवालो पर चारो ओर सर्प ूम रहे है। जिस जटा को वह पकडे हुए है उसके ऊपर वैठे हुए दो काले एव सफेद चूहे उस जड को काट रहे है। वह जगली हाथी भी अपनी सूंड से उस वटवृक्ष को उखाडने के प्रयत्न मे उसे हिला रहा है। इससे वटवृक्ष पर स्थित मधु-मक्खियो का एक झुण्ड उडकर उस व्यक्ति के शरीर को काटने लग गया है किन्तु मधु-मक्खी के छत्ते से मधु की एक-दो वूदे उस व्यक्ति के मुख में पड जाती है जिनको चाटकर वह रसास्वादन करने लगता है।"

इस प्रतीक कथा को स्पष्ट करते हुए आचार्य कहते हैं कि घना जगल ससार का प्रतीक है वह भटका हुआ पुरुष जीव का। जगली हाथी मृत्यु का प्रतीक है। वह कुआ मनुष्य एव देवगति का प्रतीक है। अजगर नरक एव तिर्यंच गति का प्रतिनिधित्व करता है। चारो ओर के साप क्रोध, मान, माया, एव लोभ कपायो के प्रतीक है। वटवृक्ष का प्रारोह (जड) मनुष्य की आयु है। दोनो काले एव सफेद चूहे कृष्ण और शुक्ल पक्ष रूपी रात-दिन है, जो आयु को क्षीण करने मे लगे है। मधु-मक्खिया शरीर को लगने वाली व्याधिया है और जो मधु की एक दो वूद मुह में आती है वह ससार के क्षणिक सुख का प्रतीक है।[3]

मधु विन्दु दृष्टान्त की यह प्रतीक कथा साहि-त्य कला एव दर्शन के क्षेत्र मे वहुत प्रचलित हुई।[4] आचार्य हरिभद्र ने इस प्राचीन कथा को जन-मानस तक पहुंचाने मे विशेष योग किया है।

समराइच्चकहा के तीसरे भव की कथा मे जालिनी और शिखिन् का वृतान्त वर्णित है। अग्नि-शर्मा एव गुणसेन के जीव पुत्र एव माता के रूप मे यहा जन्म लेते हैं। पुत्र के प्रति माता के मन में

१. समराइच्चकहा (जेकोवी) भव २, पृ. ११०–११४
२. वसुदेवहिण्डी, प्रथम खण्ड, पृ. ८
३. जहा सो पुरिसो तहा ससारी जीवो, जहा वण-हत्थी तहा मच्चू……… जहा महुयरा तहा आगतुगा सरीररूग्गया ववाही। दृष्टव्य परिशिष्ट (क)
४ दृष्टव्य, जैन प्रेम सुमन, 'मधुविन्दु-दृष्टान्त–एक मूल्यांकन' नामक लेख, वरदा, विसाऊ, १९६८

पूर्वजन्म के निदान के कारण वैर उत्पन्न हो जाता है । अत. वह पुत्र को गर्भ के समय से ही दुश्मन समझने लगती है । इस भावना को विकसित करने मे हरिभद्र ने कई प्रतीको का सहारा लिया है । माता जालिनी को गर्भ-धारण करने के उपरान्त एक स्वप्न आता है कि उसने जो स्वर्ण-घट देखा है वह टूट जाता है ।[1] स्वर्णघट टूटने की यह घटना एक सार्थक प्रतीक से जुडी हुई है । घट, उदर का प्रतीक है, कथा के रहस्य का प्रतीक है एव स्वर्ण गर्भ मे स्थित जोव का । किन्तु स्वर्णघट का टूटना इस वात का प्रतीक है कि माता जालिनी स्वय अपने गर्भ को नष्ट करने का प्रयत्न करेगी । अत यह प्रतीक भविष्य की सूचना देने के लिए प्रयुक्त हुआ है ।

नवे भव की कथा में समरादित्य एव गिरिषेण के प्रतिद्वन्द्वी चरित्रो को प्रस्तुत किया गया है । इसके लिए कई सार्थक प्रतीको का प्रयोग कथाकार ने किया है । इस कथा मे गर्भवती माता को स्वप्न में सूर्य दिखायी पडता है ।[2] सूर्य–दर्शन की यह घटना कथा के निम्न कार्यों को सूचित करती है—

१. गर्भस्थ बालक की तेजस्विता
२. ससार के प्रति समरादित्य की अलिप्तता
३ केवलज्ञान प्राप्ति का सकेत एव
४ प्रकाश की तरह धर्मोपदेश का वितरण आदि ।

इसी प्रकार समरादित्य का जन्म होते समय उसकी माता को कोई प्रसूतिजन्म क्लेश नही होता । यह इस बात का प्रतीक है कि उत्पन्न होने वाला शिशु जब अपनी मा को कष्ट नही देना चाहता तब वह दया, ममता, उदारता आदि गुणो का पु ज होगा ।

आचार्य हरिभद्रसूरि का दूसरा महत्वपूर्ण कथा ग्रन्थ धूर्ताख्यान है । भारतीय साहित्य मे यह अपने ढग की अनूठी रचना है । इसमें पाच धूर्तो की कथा है ।[3] चार पुरुष एव एक नारी पुराणों, काव्यों एव प्राचीन ग्रन्थो मे प्राप्त असम्भव लगने वाली, अबौद्धिक एव काल्पनिक कथाओ को कहकर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करना चाहते है । व्यग के माध्यम से वे जनमानस को यथार्थ पुरुषार्थी जीवन की शिक्षा देना चाहते हैं। इस कथा मे नारी धूर्ता खण्डपाना अपनी बुद्धि के चातुर्य से चारो धूर्तों पर विजय पा लेती है । हरिभद्र की यह पूरी ही कथा इस बात की प्रतीक है कि नारी किसी भी क्षेत्र में पुरुष से कम नहीं है। विजयी हो जाने पर भी नारी का अन्नपूर्णा का रूप धूमिल नहीं होता ।[3] नारी द्वारा अन्धविश्वासो के विरुद्ध सघर्ष छेडने का कार्य कराकर हरिभद्र ने यह सिद्ध कर दिया है कि मध्ययुग के प्रारम्भ में ही नारी आधुनिकता की ओर अग्रसित हो चुकी थी ।

आगम ग्रन्थो की व्याख्या के क्षेत्र में आचार्य हरिभद्र की विशेष भूमिका है । उन्होने दशवैकालिक टीका में ३० महत्वपूर्ण प्राकृत कथाए प्रस्तुत की है ।[4] उपदेशपद[5] नामक ग्रन्थ मे लगभग ७० कथाए उन्होने लिखी है । आवश्यक वृत्ति के टिप्पण[6] में भी सस्कृत मे कुछ कथाए दी गयी है । हरिभद्र की ये लघु कथाए कई दृष्टियो से महत्त्वपूर्ण है । इन लघु कथाओ मे भी प्रतीको का प्रयोग हरिभद्र ने किया है। प्रतीको द्वारा भावो की अभिव्यजना मे कथाकार को पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है । लघु कथाओ मे प्राप्त कुछ प्रतीक कथाओ को यहा प्रस्तुत किया जा रहा है।

---

१. समराइच्चकहा सम्पा. जंकोबी, भव–३, पृ. १३४
२. वही भव ९, पृ ७०३
३. जैन, जगदीशचन्द्र, प्राकृत साहित्य का इतिहास (द्वितीय सस्करण), १९८५, पृ. ३५८
४. धूर्ताख्यान—स.—डॉ. ए. एन. उपाध्ये, बम्बई, १९४४, ५ वां आख्यान
५. दशवैकालिक सूत्र हरिभद्रवृत्ति, मनसुखलाल महावीर प्रेस, बम्बई पिण्डवाड़ा से वि. सं. २०३७ मे पुनः प्रकाशित
६. उपदेशपद, शाह लालचन्द नन्दलाल, वडौदा
७. आवश्यकवृत्ति टिप्पण, देवचन्द लालभाई, अहमदाबाद

दशवैकालिक हारिभद्रीय वृत्ति मे एक वणिक् की कथा है । एक दरिद्र वणिक् रत्न द्वीप को गया। वहा व्यापार करके उसने कीमती रत्न प्राप्त किये । उन्हे लेकर जव वह वापिस लौटने लगा तो चोरो से वचने के लिए उसने असली रत्न भीतर छिपा लिये और हाथ मे सामान्य पत्थर लेकर वह चल पडा । वह पागलो की भाति चिल्लाता हुआ कि रत्नवणिक् जा रहा है रास्ता पार करता रहा। रास्ते मे उसने कीचड युक्त स्वादरहित जल को पीकर भी अपने रत्नो की रक्षा की और वापिस अपने घर लौट आया ।[1]

हरिभद्र की इस कथा मे रत्नद्वीप मनुष्यभव का प्रतीक है और वणिक् पुत्र जीव का। रत्नत्रय (सम्यक् दर्शन, सम्यक्ज्ञान और सम्यक् चारित्र) के प्रतीक है । चोरो का भय, विपय-वासना का भय है, जिनसे रत्नत्रय को सुरक्षित रखना आवश्यक है । वणिक्पुत्र ने मार्ग मे जो स्वाद रहित जलपीकर एवं अनेक कष्टो को झेलकर रत्नो की रक्षा की थी, वह इस वात का प्रतीक है कि रत्नत्रय की रक्षा भी इन्द्रिय-निग्रह एव प्रापुक जल व भोजन करने से ही हो सकती है ।

हरिभद्रसूरि के इसी ग्रन्थ मे 'घडे का छिद्र' नामक एक अन्य कथा प्राप्त होती है ।[2] पानी भरकर एक पनहारिन मार्ग से जा रही थी । किसी चचल राजकुमार ने ककड मारकर पनहारिन के घडे मे छेद कर दिया, जिससे पानी झरने लगा । किन्तु पनहारिन ने गीली मिट्टी द्वारा उस छिद्र को वन्द कर दिया और भरा हुआ घट वह अपने घर ले आयी । इस कथा मे घडा साधक का प्रतीक है और पनहारिन शुभ भावो की । ककड मारने वाला राजकुमार अशुभ भावो का प्रतीक है । छिद्र हो जाना योग की चचलता एव आस्रव का प्रतीक है । छिद्र को मिट्टी से वन्द कर देना गुप्ति अथवा संवर का प्रतीक है ।[3] इस प्रकार यह कथा दार्शनिक प्रतीको की कथा है ।

आचार्य हरिभद्रसूरि का उपदेशपद नामक ग्रन्थ कथा साहित्य की दृष्टि मे विशेष महत्त्व का है । इसमे जीवन के विभिन्न पक्षो को उजागर करने वाली कथाए है । प्रतीक कथा के रूप में "धन्य की पुत्र-वधुए" नामक कथा ध्यान आकर्पित करती है ।[4] यद्यपि यह कथा मूल रूप में ज्ञाता धर्मकथा में प्राप्त है,[5] किन्तु हरिभद्र ने इस मे सुन्दर सवादो का प्रयोग करके इसे मनोहारी वना दिया है । सक्षेप मे कथा इस प्रकार है—

धन्य सेठ अपनी चार वहुओ की श्रेष्ठता की परीक्षा करने के लिए उन्हे धान के पाच दाने यह कहकर देता है कि जव मै मागू तव उन्हे वापिस कर देना । वडी वहू ने उन दानो की उपेक्षा कर उन्हे वाहर फेंक दिया । मझली वहू ने ससुर का प्रसाद समझकर उन्हे छील कर खा लिया । सझली वहू ने उन दानो को कपडे मे वाधकर पेटिका में सुरक्षित रख दिया । किन्तु छोटी वहू ने उन धान के दानो को अपने पीहर में भेजकर उनकी खेती करवा दी । फसल आने पर जितने दाने पैदा हुए उन्हे फिर जमीन मे वो दिया इस प्रकार पाच वर्ष तक खेती करने पर वे पाच दाने कई गाडियो मे भरने लायक हो गये ।

१. दशवैकालिक हा. वृ., प्रकाशक, भारतीय-प्राच्यतत्त्व प्रकाशन, पिंडवाड़ा गाथा ३७ की वृत्ति, पृ. १३
२. वही, गाथा १७७ की वृत्ति गा. ४, पृ. ६३
३. इसी प्रकार नाव एव छिद्र का प्रतीक जैन दर्शन के अन्य ग्रन्थो मे भी प्राप्त हे ।
४. उपदेशपद, गाथा १७२-१७९, पृ. १४४
५. ज्ञाताधर्मकथा, सातवा अध्ययन, रोहिणी-कथा

धन्य सेठ ने जब पाच वर्ष बाद अपनी बहुओ से उन पाच धान के दानो को मांगा तो उसे सब वृतान्त का पता चला । उसने छोटी बहू को घर की मालकिन बनाकर बडी को झाड़ू लगाने का काम, मझली को रसोई का काम, एव सझली बहू को भण्डार का काम सौप दिया ।

कथाकार इस कथा के प्रतीको को स्पष्ट करते हुए कहता है कि धन्य सेठ गुरु का प्रतीक है एव चारो बहुएं चार प्रकार के साधको की प्रतीक । पाच धान के दानें पाच व्रतो के समान है । जो इन व्रतो की रक्षा कर उन्हे उत्तरोत्तर बढाता है श्रेष्ठ पद प्राप्त करता है ।[1]

हरिभद्र के प्राकृत कथा साहित्य प्रयुक्त प्र एव प्रतीक कथाओ का यहा मात्र दिग्दर्शन हुआ यदि उनके पूरे साहित्य में से प्रतीको को किया जाय तथा उनका तुलनात्मक अध्ययन प्र किया जाय तो भारतीय कथा साहित्य के कई उजागर हो सकते है । धर्म और दर्शन को स की एक नई दृष्टि जागृत हो सकती है ।

—सुखाडिया विश्वविद्यालय, उ

१. एवामेव समणाउसो ! जाव पंच महव्वया संवड्ढिया भवंति, से ण इह भवे चेव बहूणं सम क्षाव वीईवइस्सइ जहा व सा रोहिणीया—ज्ञाता, ७

अपरिग्रह

□ ललित शर्मा

सत अफरयत का जीवन अत्यन्त सरल था, वे बड़ी पवित्रता से रहते थे । अपनी जन्म-भूमि फारस का परित्याग कर वे सीरिया चले आये थे । वे सदा एक छोटी-सी गुफा में निवास कर भगवान् का चिन्तन किया करते तथा सूर्यास्त के पूर्व एक रोटी खा लिया करते थे। एक दिन वे अपनी गुफा के बाहर बैठे हुये थे कि अन्थेमियस उनसे मिलने आया । वह फारस मे राजदूत था । सत को भेट देने के लिये वह अपनें साथ फारस से सुन्दर वस्त्र लाया था । "यह आपके देश की बनी हुई वस्तु है । इसे सहर्ष ग्रहण कीजिये ।" अन्थेमियस नें निवेदन किया । "क्या आप इसे ठीक समझते है कि एक पुराने स्वामी भक्त सेवक को इसलिये निकाल दिया जाय कि दूसरा नया आदमी अपने देश आ गया है ?" सत ने अपने प्रश्न से अन्थेमियस को आश्चर्यचकित कर दिया ।

"नही, ऐसा कदापि उचित नही है ।" राजदूत ने गम्भीरता पूर्वक उत्तर दिया । "तो फिर अपना वस्त्र वापस लीजिये । मैने जिस वस्त्र को सोलह सालो से अनवरत धारण किया है । उसके रहते दूसरा धारण नही कर सकता । मेरी आवश्यकता इसी से पूर्ण हो जायेगी ।" सत की पवित्र अपरिग्रह-वृत्ति मुखरित हो उठी । वे अपनी गुफा के अन्दर चले गये ।

—शर्मा-सदन ७-मगलपुरा स्ट्रीट झालावाड़-३२६००१

भारतीय धर्म व इतिहास में सेवा

□ गणेश ललवानी

ईसाई धर्म का प्रेम तो मानव तक सीमित है किन्तु भारतीय धर्म चाहे वह बौद्ध धर्म या ब्राह्मण धर्म या जैन धर्म इससे बहुत-बहुत आगे बढ गया है-वे तो कहते है मानव ही नही संसार के सभी प्राणी पशु-पक्षी, कीट-पतंग, स्थावर जीव तक सभी पर प्रेम रखो कारण सब समान हैं। सब ब्रह्म रूप है 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' । मिति मे सव्व भूएसु ।' सर्व भूत के प्रति मेरी मित्रता है ।

लोग कहते है इसाई धर्म मे सेवा का जो महत्व बताया गया है वह भारतीय धर्मों मे नही है किन्तु ऐसा कहना हमारी अज्ञानता का ही द्योतक है । सच तो यह है कि भारतीय धर्मों मे सेवा का जो सद्रूप है वह किसी भी धर्म से कम नही है । वैदिक धर्म मे 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव' की जो बात आती है वह माता–पिता की सेवा के लिए । श्रवणकुमार आदि मातृ-पितृ भक्तो की सेवा को कहानियो से हमारा सारा पौराणिक साहित्य भरा पडा है जो कि हमे सतत माता-पिता की सेवा के लिए प्रेरित करता रहता है । गौडीय वैष्णवो ने भगवद् भक्ति के लिए जो दास्य, सख्य, वात्सल्य व मधुर भाव बताया है उसमे दास्य भाव मे भगवान से सेव्य-सेवक भाव रहता है । भक्त सोचता है वे प्रभु है मैं सेवक हूं—उनकी सेवा करना ही मेरा धर्म है । कीर्तन, भजन-पूजन ये सब सेवा के ही अंग है । फिर सेव्य-सेवक भाव केवल दास्य मे ही रहता है, ऐसा नहीं है । क्रमशः सख्य, वात्सल्य व मधुर भाव मे भी रहता है । गुरु सेवा तो भारतीय धर्म में सर्वोपरि रही है । गुरु की सेवा बिना ज्ञान प्राप्त किया ही नही जा सकता । कारण गुरु-सेवा से अह छूटता जाता है—जितना छूटता है उतना ही हम आत्मा के समीप होते जाते है । उपनिषदो मे आरुणि, उद्दालक आदि की जो कथाए आती है उससे यह प्रतीत होता है कि उन्होने केवल सेवा के बल पर ही ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था । भगवत गीता मे तो ज्ञान प्राप्ति का साधन बताते हुए कहते है **'तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।'**प्रणिपात अर्थात् झुकना नमनीय होना सदाशील होना । ज्ञान प्राप्ति का तो पहला साधन है प्रणिपात या श्रद्धा सम्यक् दर्शन । इसके बाद आता है परिप्रश्न-जिज्ञासा जानने की इच्छा । गुरु गौतम की जिज्ञासा कितनी अद्भुत थी, यह तो हम एक भगवती सूत्र को देखकर ही कह सकते है । जिज्ञासा, कुतर्क नही । श्रद्धा से श्रवण, श्रद्धा से ग्रहण किन्तु यह ग्रहण तभी टिक पाता हे जबकि उससे सेवा जुडी रहती अर्थात् ज्ञान प्राप्त कर उनकी सेवा करे । आज जब हम यह पढते हैं कि आरुणि पानी को रोकने के लिए आल (बाध) मे सो जाता हे और उसे ब्रह्मज्ञान-प्राप्त हो जाता है तो अविश्वसनीय-सा लगता हे किंतु इसमे अविश्वसनीय क्या है ? यह तो स्पष्ट हे कि जब वह सोता है तो देह बोध के परे चला जाता हे जब देह बोध नही रहेगा तभी तो आत्म-बोध होगा । सेवा से आत्म-बोध का द्वार खुल जाता हे पर खुलता तभी है जब हम सेवा झुंझलाते हुए नही, ख्याति के लिए नहीं प्रणिपात के रूप मे करते है ।

भगवती सूत्र में एक प्रसंग आता है जहां गण-धर गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान महावीर कहते है—'जे गिलाणं पडिहरई सो मम पडिहरई' जो ग्लान, दुखी की सेवा करता है वह मेरी सेवा करता है। सेवा से तो मोक्ष तक प्राप्त किया जा सकता है बशर्ते उसमे निदान न हो तो।

क्या सेवा का इतना महत्व ईसाई धर्म में है? सेवा के लिए प्रेरित किया गया है ऐसा कहीं नहीं लगता। सेटजन में आता है—This is my commandment that ye love one another as I have loved अर्थात् यह मेरा आदेश है, मै तुमको जितना प्यार करता हू तुम एक-दूसरे को परस्पर उतना ही प्यार करो। इसाई धर्म का प्रेम तो मानव तक सीमित है किन्तु भारतीय धर्म चाहे वह बौद्ध धर्म हो या जैन धर्म या ब्राह्मण धर्म इससे बहुत-बहुत आगे बढ गया है—वे तो कहते हे मानव ही नही संसार के सभी प्राणी पशु-पक्षी, कीट-पतग, स्थावर जीव तक सभी पर प्रेम रखो कारण सब समान हे, सब ब्रह्म रूप है 'सर्व खल्विद ब्रह्म,'। 'मिति मे सव्व भूएसु।' सर्व भूत के प्रति मेरी मित्रता है। स्वामी विवेकानन्द ने श्री राम-कृष्ण परमहस के सामने एकबार जीवदया की बात रखी तो उन्होंने टोकते हुए कहा—तुम दया करने वाले कौन होते हो? तुम तो जीव की मात्र शिव रूप मे सेवा ही कर सकते हो। बात ठीक है। इससे हमें भी सबक लेना है। जैनियो मे जीवदया के लिए पर्यूषण आदि अवसर पर चन्दा-चिठ्ठा होता हे। पर उसमे अह रहता है—मै दया कर रहा हू किन्तु वह होनी चाहिए—जीव सेवा। मैं सेवा ही कर सकता हू न उसे कर्म से छुटकारा दिला सकता हू न दया कर सकता हूं।

तो फिर क्या कारण है कि हम कहते हे कि ईसाई धर्म मे सेवा का बडा महत्व है। कारण स्पष्ट है। ईसाई मिशनरिया भारत मे न केवल विद्यालय कॉलेज चला रही हे बल्कि मेटरनिटी होम, अस्पताल, आरफनेज एवं वृद्धो के लिए आवास आदि भी चला रहे है। उनका यह सेवा कार्य जिसमे मैं मदर टेरेसा का सेवा कार्य भी सम्मिलित करता हू, क्या मानव सेवा की भावना से ही उद्बुद्ध है? मुझे ऐसा नही लगता। इसके पीछे है उनका उत्कट प्रेम जो कि उन्हे इस प्रकार के सेवा कार्य मे प्रवृत्त करता है ताकि वे अधिकाधिक व्यक्ति को ईसाई धर्म की ओर आकृष्ट कर धर्मान्तरण करा सके। मदर टेरेसा जिस प्रकार का सेवा कार्य कलकत्ता मे कर रही थी उनके सेवा कार्य को छोटा न करते हुए मैं कह सकता हू इस प्रकार का कार्य, अन्य भारतीय संस्थाए कर रही थी व कर रही है।[1] किन्तु मदर टेरेसा को नोबल पुरस्कार इसलिये मिला कि वे क्रिश्चिनिटी से जुडी हुई है। इस सिलसिले में एक तथ्य प्रकट किए बिना मे नही रह सकता।

कुछ दिन पूर्व मुझे एक सस्था 'सेन्ट पीटर्स ट्रस्ट फार क्रिश्चियन पब्लिकेशन्स इन अफ्रीका एण्ड एशिया' का एक पत्र मिला जिसमें उन्होने लिखा है कि यदि मैं Gospd का एक पृष्ठ हर जैन-जर्नल के अंक मे छाप दू तो विज्ञापन शुल्क के रूप में एक लम्बी राशि देगे। यह भी मुझे ज्ञात कराया कि इस कार्य के लिए उस सस्था ने ५०,००० डालर व्यय करना नियत कर रखा है। विज्ञापन छापने से मेरी पत्र सम्बन्धी कठिनाइया कुछ हद तक हल हो सकती थी पर मछली पकडने के लिए बशी के अग्रभाग में जिस प्रकार कीडे बाधकर पानी मे डाले जाते है, ये सेवा कार्य भी उसी प्रकार के कीडे है।

ईसाई धर्म का ध्येय और भारत मे उसके प्रचार का सक्षिप्त इतिहास यहा प्रस्तुत कर रहा हूं ताकि मिशनरियो के कार्यक्रम की प्रणाली कुछ समझ मे आ सके।

यीशु का जन्म यहूदि जाति मे हुआ था। ईसाई जाति के बहुत से ऋषि प्रवक्ताओ ने यह भविष्यवाणी की थी कि परमेश्वर द्वारा अभिषिक्त

(हिब्रु में मसीहा ग्रीकमे खीष्ट) मुक्तिदाता का आविर्भाव होगा । अतः यीशु जब अपना धर्ममत प्रचारित करने लगे एव चमत्कार दिखाए तो यहुदियो ने उन्हे ही समग्र मानव जाति के मुक्तिदाता के रूप मे प्रचारित करना प्रारम्भ किया तो लोगो ने इसका विरोध किया और यीशु को क्रुशविद्ध कर दिया ।[२] मृत्यु के बाद यीशु का पुनरुत्थान हुआ और उन्होने अपने शिष्यो को विभिन्न देशो मे विभिन्न जातियो मे ईसाई धर्म-प्रचार करने का सुस्पष्ट निर्देश दिया । परिणामत. न केवल यूरोप बलिक पृथ्वी के वृहद अश मे आज ईसाई धर्म का साम्राज्य है ।

भारत मे ईसाई धर्म का प्रचार तो ईसा की प्रथम शताब्दी मे ही प्रारम्भ हो गया था । यीशु का अपना शिष्य व प्रेरित दूत साधु थोमस (Saint Thomas) ईसा की ५२ अब्द मे भारत के केरल प्रदेश मे आए और वहा ईसाई धर्म का प्रचार किया । कई लोग ईसाई भी बने। जिनके वशज आज सिरियन क्रिश्चियन नाम से परिचित हैं । सिरियन क्रिश्चियन नाम होने का कारण यह है कि उनका सम्पर्क मध्य प्राच्य व पारस्य के साथ रहा । बाद मे यह सम्पर्क छिन्न हो गया जो कि १६ वी शदी से पुन प्रारम्भ हुआ जबकि उपनिवेशवादियो के साथ मिशनरी लोग आने लगे और सेवा कार्य करने लगे । किन्तु वे आए थे सेवा करने नही अपने धर्म का प्रचार करने ।

सोलहवीं सदी के प्रारम्भ मे तमिल देश मे सेन्ट फ्रान्सिस जैभियार आए और अपना धर्म-प्रचार करने लगे । पुर्तगीजो की कोठिया १६ वी सदी से स्थापित होने लगी थी । इन व्यवसायियो का अनुसरण कर मिशनरी भी आए । पश्चिमी उपकूल मे विशेषकर गोआ, मगलोर आदि स्थानो मे उन्होने बहुतो को क्रिश्चियन बनाया । ये पोर्तगीज मध्यकालीन मनोभाव से विमुक्त न थे अत अपने देश के रीति-रिवाज उन पर थोपने लगे जिसका परिणाम अच्छा नही रहा, इस सदी मे आर्मेनियन व्यवसायियो के साथ आर्मेनियन मिशनरी भी आयी ।

१६ वी सदी से इन्होने अपने प्रचार का तरीका बदला व स्थानीय भाषा, धर्म, रीति-रिवाज को समझने का प्रयास प्रारम्भ किया । इन मिशनरियो मे प्रमुख थे रोबेर्तो दे नोबिली, उन्होने दक्षिण भारत के मदुरा के पास आश्रम बनाकर हिन्दु-सन्यासियो का जीवन-यापन करते हुए हिन्दू-शास्त्रो का अध्ययन किया । उन्होने इस कार्य के लिए तमिल व सस्कृत सीखी । जनता पर इसका काफी प्रभाव पडा अत नोबिली तथा इसके अनुयायियो का धर्म-प्रचार बहुत जोरदार रहा ।

तत्पश्चात् डेनमार्क एव जर्मन से प्रोटेस्टेण्ट मिशनरी आए, त्रानकिवर मिशन के अध्यक्ष बरथेलमेय जिगेर्नबुल्ग और फ्रेडेरिक सोयार्टज ने नोबिली के आदर्श से अनुप्राणित होकर दक्षिण भारत मे ईसाई-धर्म का प्रचार किया फलत कई लाख तमिल व तेलगु भाषी क्रिश्चियन बन गए एव भारतीयत्व की रक्षा करते हुए यीशु को भजने लगे ।

१८ वी सदी के अन्त मे प्रोटेस्टेण्ट मण्डली व सम्प्रदाय के बहुत से मिशन भारत मे प्रतिष्ठित हो गए । इनमे कलकत्ते के निकट श्रीरामपुर के बैप्टिष्ट मिशनरियो का काम अत्यन्त उल्लेखनीय है । इस मिशन के विलियम केरी, मार्शम्यान वार्ड आदि प्रमुख मिशनरियों ने बाइबल का भारतीय भाषा मे अनुवाद किया और बाईबिल पढाने के लिए शिक्षा सस्कार एव शिक्षा प्रवर्तन के प्रशसनीय कार्य किए ताकि वे अपने धर्म का प्रचार सुगमता से कर सके ।

१९ वी सदी के प्रथम भाग मे अलेक्जेण्डर डाफ आदि कई प्रमुख मिशनरियो ने कलकत्ता, बम्बई जैसे शहरो मे स्कूल, कालेज प्रतिष्ठित किये ।

उद्देश्य था वही ईसाई धर्म का प्रचार । अत सभी कैथोलिक व प्रोटेस्टेण्ट मण्डलियो ने स्कूल कालेज खोलने के कार्यो को अपना लिया और शिक्षा के माध्यम से शिक्षित वर्ग पर ईसाई धर्म, विश्वास और नैतिक आदर्श के भावो को विस्तारित करने लगे ।

इसके फलस्वरूप बग बगाल के रे. कृष्ण मोहन बनोपाध्याय, माइकेल मधुसूदन दत्त जैसे प्रतिभावान युवकगण ईसाई धर्म मे दीक्षित होने लगे । साथ-साथ वे असम, सथाल परगना, छोटा नागपुर एव मध्य भारत के आदिवासी व उपजातियो के निवास–स्थल पर चिकित्सालय, अस्पताल, मेटरनिटी होम आदि प्रतिष्ठित करने लगे ताकि यहा के अशिक्षित और अविकसित आदिवासियो को ईसाई धर्म की ओर आकृष्ट कर सके । परिणाम वैसा ही हुआ जैसा वे लोग चाहते थे । भारत मे ईसाईयो का एक बहुत वडा भाग इन आदिवासी उपजातियो का ही है ।

इनकी शिक्षा और सेवा के माध्यम से जब शिक्षित और अशिक्षित सभी ईसाई बनने लगे तब इस प्रवाह को रोकने के लिए बगाल मे ब्रह्म समाज, पजाब मे आर्य–समाज स्थापित हुए । क्रिश्चियन मिशनरियो के आदर्श पर कई मठ-मिशन भी प्रतिष्ठित हुए जिन्होने शिक्षा व सेवा का 'मोटो' अपना लिया । रामकृष्ण मिशन, भारत सेवा श्रम सघ, हिन्दू मिशन ने जिस क्षेत्र मे क्रिश्चियन मिशनरी काम करते थे उसी क्षेत्र मे कार्य करना प्रारम्भ कर दिया ।

सघ बद्ध रूप मे शिक्षा और सेवा का यह कार्यक्रम आज मिशनरियो के आदर्श पर करने पर भी मै यह कहना चाहूगा कि हमारे देश मे यह आदर्श कोई नवीन वस्तु नही है । हमारे देश मे भी सघ बद्ध सेवा के उदाहरण प्रचुर परिमाण मे उपलब्ध है। यह कोई जरूरी नही कि सेवा का कार्य साधु ही करे—यह तो राष्ट्र एव समाज का कर्त्तव्य है साधु का नही । इस कार्य के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करता हू ।

यूरोप मे प्रथम अस्पताल प्रतिष्ठित हुआ सम्राट कान्स्टेन्टाइन के समय (३२६-३३७ इस्वी) में । पर भारत मे तो उसके भी छ सौ वर्ष पूर्व मनुष्य एव पशुओ के लिए अस्पताले थीं जिसका उल्लेख हम अशोक के शिलालेख मे पाते है । ईसा की ४थी सदी मे गुप्त साम्राज्य की राजधानी पाटलीपुत्र में सामन्तो एव भूम्यधिकारियो द्वारा सचालित अस्पताल था जिसका उल्लेख हम फाहियान के भारत विवरण मे पाते है—वे लिखते है—वहा रोगियो की पीडितो की नि शुल्क सेवा की जाती थी । हमारे देश में परिषद (Academic) थे जो कि साहित्य व शिल्पकला का सर्वेक्षण करते थे । दक्षिण भारत का सगम नाम तो सर्वविदित ही है । शिक्षा भी नि शुल्क दी जाती थी । नालन्दा विश्व विद्यालय को कौन नहीं जानता। जिसे नरसिंह गुप्त, बालादित्य ने (ई. ४६६-४७३ में) स्थापित किया था और जो सात सदियो तक शिक्षा

टिप्पण—

१. मै खेद के साथ यह भी कहना चाहूंगा कि हम मे कितने आदमी जानते है कि १६२६ मे स्वर्गीय फूलचन्द चौधरी ने दरिद्र व स्वजनहीन महिलाओं तथा अनाथ शिशुओ के आहार व आवास के लिये कलकत्ते के निकटस्थ लिलुआ मे निर्मल हृदय की तरह अबला आश्रम की प्रतिष्ठा की थी जो १६५६ मे पश्चिम बग सरकार ने इस काम के गुरुत्व के कारण राष्ट्रायत्त कर ली है । ऐसे एक फूलचन्द चौधरी नही कितने फूलचन्द चौधरी ने भारत के विभिन्न प्रांतों मे अपनी सेवाएं दी हैं और दे रहे है पर वे सब हमारी दृष्टि से ओझल है कारण विश्व के खीस्टान प्रचारक संस्थाओं ने उनकी प्रशंसा जो नही की ।

२. प्रसंगतः यह कहना चाहूंगा कि क्रुशविद्ध करने का उदाहरण संघदासगणि की वसुदेव हिण्डी मे आया है । देखे चारूदत कथा । जहां एक विधाधर दूसरे विधाधर को क्रुशविद्ध करता है और चारूदत उसे बचाता है । क्या यह यीशु का क्रुशविद्ध करना व उनके रिसरेक्शन का स्मारक है ।

एव ज्ञान-विज्ञान का प्रसार करता रहा । चीनी पारि-व्राजक ईत सिंग ने दस साल तक यहा रर न्याय एव वैद्यक का अध्ययन किया था, ६७५-६८५ ई नालन्दा के छात्रो की सख्या ३००० से ५००० तक थी । इसके परिचालन के लिए राष्ट्र की ओर से २०० गावो का अनुदान मिला था । इसमें शिक्षार्थियो के लिए ३०० कक्ष थे व ८ सभागार । काहिरा के अल-अजहर (El-Ajhar) की भाति नालन्दा विश्व-विद्यालय भी स्वतन्त्र (Autonomous) थी । चीनी यात्री ह्वेनसाग तो इसे देखकर मुग्ध हो गए थे । जापान के नारा के निकट होरीयूजी मे आगे जाकर जो मठ-विद्यालय स्थापित हुआ था, वह इस नालन्दा विश्वविद्यालय से ही अनुप्राणित होकर । इस विश्व-विद्यालय को जो अनुदान मिलता था वह अनुदान यूरोप के वोलोग्ना, प्यारी या आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय को भी नही मिलता था । अत यह कहना सर्वथा अनुचित है कि भारतीय धर्म में सेवा का कोई महत्व नही है या हम सघ बद्ध रूप मे सेवा का कार्य नही करते या किया नही ।

—पी २५, जैन भवन, कलाकार स्ट्रीट, कलकत्ता

एक नया रास्ता

मोतीलाल सुराना, इन्दौर

बसन्त आने मे देरी थी । फिर भी सर्दी कुछ कम हो गई थी । हमेशा की तरह आज भी वह सुबह ५ बजे उठा और चादर ओढकर घूमने निकल पडा । थोडी ही दूर चला था कि सडक के किनारे एक आदमी पड़ा दिखा । पास गया तो देखा—उसके पास कपड़े भी पूरे न थे । सोचा—शायद ठण्ड से बेहोश हो गया है । उसके दुबले-पतले शरीर से तथा खाली पेट से लगता था, शायद एक दो दिन से वेचारे ने कुछ खाया भी न होगा ।

उसने कुरते की जेब मे हाथ डाला—पर उसमें एक पैसा भी न था । सवेरे स्नान कर कपड़े बदलने की धुन मे रात को उसने कुरते की जेब से सब सामान निकाल लिया था । यहा तक कि रूमाल भी जेब मे न था ।

वह उस बेहोश आदमी के पास गया और उसके हाथ-पांव, सिर पर अपना हाथ फेरते हुए बोला—भाई, धीरज रखना, मैं घर जाकर वापस अभी आता हू । तुम्हारे लिये कुछ लेकर । अभी मेरे पास कुछ भी नही है ।

इसके हाथ फेरने से उसे कुछ होश आया, वोला—आपके हाथों की गरमी मुझे मिली—यह क्या कम है । आपने गरमी तो दी, इससे मुझे थोडी तो राहत मिली है । थोडी देर मे सूरज की गरमी से मै थोडा और अच्छा हो जाऊगा । उसके इस जवाव से घूमने निकले उस व्यक्ति को प्रकाश की एक नई किरण मिली । एक नया रास्ता ।

जो है उसका सन्तोष और धैर्य से सामना करना चाहिये ।

सुख-दुःख का कारण अन्य नहीं

❀ कन्हैयालाल लोढ़ा

△

> वस्तुत दु ख का कारण है सुख का भोग, सुख की दासता। सुख की दासता अन्य किसी की देन नही है स्वय अपनी ही उपज है। यह नियम है कि यदि जिसे अनुकूलता मे सुख की प्रतीति होती उसे ही प्रतिकूलता मे दु ख होता है। दु ख का कारण प्राणी की स्वय की सुख-भोग की इच्छा है। अत· दु ख से मुक्ति पाने का उपाय है सुख-भोग का त्याग। सुख-भोग का त्याग करने पर व्यक्ति का दु ख-सुख से अतीत के जगत मे सदा के लिए प्रवेश हो जाता है जहा अक्षय अव्याबाध, अनन्त रस का सागर सदैव लहराता रहता है।

जैनागम 'उत्तराध्ययन' सूत्र के २० वें अध्ययन की गाथा ३७ मे कहा है—

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मितममितं च, दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ ॥

अर्थात् आत्मा (स्वय) ही दु खो व सुखो का कर्त्ता और अकर्त्ता है और आत्मा (स्व सदाचरण व दुराचरण मे स्थित अपना मित्र–अमित्र (दुश्मन) होता है।

परन्तु जब व्यक्ति अपने सुख–दुख का कारण अपने को नही मानकर किसी अन्य को पर व अर्थात् वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति तथा अवस्था को मान लेता है तो उसका सुख–दुख 'पर' पर आश्रित हो जाता है, वह पराश्रित हो जाता है। पराश्रित होना पराधीन होना है। पराधीनता अपने आप सबसे बडा दु ख है। इसलिए पराधीनता किसी भी प्राणी को किसी भी काल मे अभीष्ट नही है। पराधीनत के दु ख से बचना है तो दुख–सुख का कारण अन्य को मानना त्यागना ही होगा।

जब प्राणी अपने दु ख का कारण दूसरो को मान लेता है तो उसका भयकर परिणाम य होता है कि जिस दु ख को स्वय सदा के लिए मिटा सकता है उसे मिटाने मे अपने को पराधीन मान लेत है। पराधीन होने पर दु ख दूर हो जाना तो दूर रहा, उत्तरोत्तर दु ख बढता ही जाता है।

यह मानना कि अपने सुख–दुख का कारण अन्य है अर्थात् वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, अवस्थ आदि है, युक्तियुक्त नही है। इसे कुछ उदाहरणो से समझे—

एक व्यक्ति तुम गधे हो, यह गाली देता है जिसे वहा पर खडे सैकडो व्यक्ति सुनते है परन्तु उन सैकडो व्यक्तियो को गाली सुनने से दु ख नही होगा। दु ख केवल उसी व्यक्ति को होगा जो गाली को सुनकर उसकी प्रतिक्रिया करेगा। जो यह मानेगा कि इसने 'गधा' कहकर मेरा अपमान किया, उसे दु ख होगा। जिसने यह मान लिया कि इसके कहने से मै गधा नही हो गया, मेरा कुछ भी नही बिगडा उसे दु ख नहीं होगा। यदि यही वाक्य इगलिश मे कहा, "You are an ass" और सुनने वाला इगलिश नही जानता है तो उसे दु ख नही होगा अथवा यही वाक्य 'तुम गधे हो' पिता ने अपने शिशु, गुरु ने शिष्य को कहा तो

ह बुरा नही मानेगा, प्रत्युत मुस्करायेगा। विवाहोत्सव र ससुराल मे स्त्रिया वर व वर के परिवार वालो ो गीतो मे गालिया देती है परन्तु उन गालियो को ोई बुरा नही मानता। यदि गाली से दुख होता ो सब सुनने वालो को समान रूप से दुख होता, ब समय होता, सब परिस्थितियों मे होता। परन्तु सा नही होता। इससे प्रमाणित होता है कि गाली ने की घटना दुख का कारण नही है।

दूसरा उदाहरण लें—मेरे पास पचास हजार रुपये है। उन रुपयो को कोई मेरे से छीन ले तो मुझे घोर दुख होगा। दूसरी अवस्था लें–मैं, किसी बैंक का कर्मचारी हू, ये रुपये किसी बैंक के हैं जिन्हे मै, किसी दूसरी शाखा या बैंक मे जमा कराने जा रहा हू और ये रुपये किसी ने छीन लिये तो मुझे पहली अवस्था मे रुपये छिनने से जितना दुख हुआ, दूसरी अवस्था मे ऊतना दुख नही होगा। तीसरी अवस्था मे मैंने अपने पचास हजार रुपये देकर मोहन जौहरी से एक नगीना खरीद लिया और मोहन जौहरी से मेरे सामने ही पचास हजार रुपये छीन लिए गए तो रुपये छीनने का अब मुझे दुख नही होगा। यदि रुपये छीनने की घटना से दुख होने का सम्बन्ध होता तो तीनो अवस्थाओ मे घटना तो एक ही घटी रुपये छीने गये, ऐसी दशा मे मुझे तीनो अवस्थाओ मे समान दुख होना चाहिये था परन्तु ऐसा नही होता। होता यह है कि जिस वस्तु से हमने अपना जितना सम्बन्ध जोड रखा है जितना उसे अपना मान रखा है, ऊतना ही दुख उसके छिन जाने या वियोग से होता है। यह दुख घटना के कारण नही होता है प्रत्युत घटना की प्रतिक्रिया करने से होता है। यही कारण है कि एक ही घटना को हजारो लाखो लोग प्रतिदिन रेडियो, टेलीविजन, समाचार–पत्र आदि से अथवा प्रत्यक्ष भी जानते-देखते ह, उसका उन सब पर सुख–दुख रूप भिन्न-भिन्न प्रभाव पडता है, एकसा प्रभाव नही पडता। यदि घटना परिस्थिति ही दुख-सुख का कारण होती तो सबको समान रूप से सुख-दुख होता। इससे यह स्पष्ट है कि कोई परिस्थिति या घटना सुख–दुख का कारण नही है।

हम एक उदाहरण और ले। किसी स्त्री के प्रियतम पति की किसी दुर्घटना से विदेश मे मृत्यु हो गई। उस स्त्री को दूसरे दिन मृत्यु का समाचार मिला। समाचार मिलते ही दुख का वज्रपात हो गया। असह्य दुख हुआ। यदि यह दुख उसके पति की मृत्यु की घटना से हुआ तो पति की मृत्यु तो पहले दिन ही दुर्घटना मे हो गई थी, अत उसी समय यही दुख होना चाहिये था परन्तु मृत्यु के दिन दुख नही हुआ। दुख हुआ दूसरे दिन जब मृत्यु का समाचार मिला। वह समाचार उस समय सैकडो लोगो ने सुना, उन्हे भी वैसा ही दुख होना चाहिये था परन्तु वैसा नही हुआ। पत्नी को जितना दुख हुआ उतना पुत्र को नही हुआ, पुत्र को जितना दुख हुआ उतना पडौसी को नही हुआ। पडौसी को जितना दुख हुआ उतना नगर के अन्य नागरिको को नही हुआ। जिन्होने मृत्यु लेखा पुस्तिका मे नामाकन किया उन्हे बिल्कुल ही नही हुआ। यही ही नही जो पति का दुश्मन था उसे सुख हुआ। इस प्रकार प्रथम तो घटना से दुख हुआ ही नही, कारण घटना से दुख होता तो घटना घटते ही हो जाता। दुख हुआ घटना की जानकारी मिलने पर उसकी प्रतिक्रिया करने से। जिसने जैसी और जितनी प्रतिक्रिया की उसे वैसा ही उतना ही दुख या सुख हुआ।

आइये, न्यायाधीश का उदाहरण ले—न्यायाधीश का एक ही निर्णय सुनकर एक पक्ष हर्ष-विभोर हो जाता है दूसरा पक्ष दुख-सागर मे डूब जाता है और न्यायालय के कर्मचारियो को न दुख होता है और न सुख। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि घटना मे सुख दुख नही है।

विश्व मे प्रतिक्षण असख्य घटनाएं घट रही है। सैकडो व्यक्तियो की दुर्घटना या रोग से मृत्यु हो रही है। सैकडो दुखी होकर आत्म-हत्या कर रहे है। हजारो व्यक्ति समारोह मनाकर हर्ष-विभोर हो रहे है। यदि इन सब घटनाओ का सुख-दु.ख रूप प्रभाव व्यक्ति पर पडने लगे तो व्यक्ति एक क्षण भी जीवित नही रह सकता। यही नही जो व्यक्ति स्वय घटना के प्रति प्रतिक्रिया कर सुखी-दु.खी होता है उसका वह बडे से बडा सुख व दुख विस्मृति के गहरे गर्त मे समा जाता है। कोई भी सुख-दुख सदा नही रहने वाला है कारण कि उसका अपना अस्तित्व ही नही है। वह व्यक्ति की मान्यता, कल्पना या प्रतिक्रिया का परिणाम मात्र है।

यदि किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, घटना में सुख-दुख होता तो उस वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के रहते निरन्तर मिलता रहता परन्तु कोई सुख-दुख दो क्षण भी समान नही रहता उसमे परिवर्तन होता ही रहता है। उदाहरण के लिए एक विदेशी को लें। जो भारत के ताजमहल की प्रशसा सुनकर हजारो रुपये व्यय कर ताजमहल देखने आया। उसे ताजमहल देखने से सुख हुआ परन्तु क्षण प्रतिक्षण वह सुख घटता गया और दो-तीन घटे मे तो यह स्थिति हो गई कि उसे ताजमहल देखने मे अब कोई सुख नही रह गया और वहा से चलने को तैयार हो गया। प्रश्न उपस्थित होता है कि ताजमहल भी वही है और दर्शक भी वही है फिर सुख कहा चला गया ? नियम है कि कारण-कार्य की सामान स्थिति रहते हुए कार्य की निष्पति बराबर बनी ही रहनी चाहिये थी। जैसे जब तक विद्युत की लहर आती रहती है और यन्त्र की स्थिति यथावत् रहती है तब तक उससे चलने वाले यन्त्र रेडियो, टेलीविजन, बल्ब, पखे, बरावर उसी प्रकार चलते रहते है क्योकि उनमे कारण-कार्य सबध विद्यमान है। परन्तु सुख-दुख के विषय मे यह बात नही है। जिस वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति या घटना को वह अपने सुख-दुख का हेतु मानता है उनके यथावत् विद्यमान रहने पर भी सुख-दुख में परिवर्तन चलता ही रहता है उससे यह स्पष्ट है कि वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, अवस्था या घटना आदि सुख-दुख के कारण नही है। सुख-दुख का कारण हमारी स्वय की अज्ञान जनित मान्यता है।

इसे एक उदाहरण से समझे। जैसे सांप को कोई व्यक्ति लाठी से मारता है तो सर्प अपने मारने के दुख का कारण लाठी को मानता है जिससे वह अपने फण का प्रहार लाठी पर करता है, लाठी को काटता है। जबकि वास्तविक कारण लाठी नहीं लाठी चलाने वाला व्यक्ति है। लाठी तो निमित्त कारण है या करण है। जैसे सर्प अपनी मार का कारण लाठी को समझता है तो यह उसकी भूल है। इसी प्रकार दुख का कारण वस्तु-व्यक्ति-परिस्थिति आदि अन्य को समझना भूल है। ये सब तो निमित्त कारण है। मूल कारण तो अपनी अज्ञानजनित राग द्वेषात्मक प्रतिक्रिया है। यदि हम प्रतिक्रिया न करें, वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के प्रति उपेक्षा भाव रखें, उदासीनता व समता मे रहे, तटस्थ व द्रस्टा रहे तो कोई वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति आदि जो अपने से भिन्न है-पर है, अन्य है, वह लेशमात्र भी हमे दुख-सुख नहीं दे सकती। प्राणी दुखी-सुखी स्वय अपनी राग-द्वेष रूप की गई प्रतिक्रिया से होते है। अत दुख-सुख का का कारण अन्य को मानना भ्रान्ति है। इस भ्रांति के फलस्वरूप दुख के मूल पर प्रहार नही होता। प्राणी फल रूप दुख को दूर करने का प्रयत्न करता है दुख के मूल को नही। उसका कार्य वैसा ही है जैसे कोई व्यक्ति काटो से बचने के लिए बबूल के काटे तोडता रहे परन्तु वह व्यक्ति बबूल के मूल (जड) को न उखाडे। बबूल की जड को न उखाडने से वह व्यक्ति बबूल के पहले के काटे दूर करता जायेगा और नये काटे आते जायेगे। काटो से छुटकारा कभी नही होगा। इसी प्रकार दुख की मूल अपनी भूल को दूर न कर विद्य

मान दु ख को दूर करते रहने से नये दु ख बराबर आते रहेगे और दु ख से छुटकारा कभी भी नही होगा। यही कारण है कि सब प्राणी अपना दु ख दूर करने का अनन्त काल से प्रयत्न कर रहे है परन्तु दु ख आज भी ज्यो का त्यो है। दु ख मे कमी न आई और न अंत हुआ। और इस भूल के रहते भविष्य मे अनन्तकाल तक कभी भी दु,ख दूर नही होने वाला है।

दुःख का कारण : दोष

प्रश्न उपस्थित होता है कि जब हमे स्पष्ट दिखाई देता है कि धन की प्राप्ति से सुख और धन की हानि से दु ख, व्यक्ति के सयोग से सुख और वियोग से दु ख, अपने सम्मान से सुख और अपमान से दु ख होता है तो अन्य से सुख दु ख होता ही है, इसे सत्य क्यो न माने ?

उत्तर मे कहना होगा कि जो हमे अन्य से सुख-दु ख की प्रतीति होती है, वह किसी न किसी दोष की देन है। जिस प्रकार किसी व्यक्ति को नशे की लत का दोपन हो तो शराब पीने को मिलने पर सुख और न मिलने पर दु ख नही होगा। जिनमे नशा करने का दोष नही है उन्हे शराब की प्राप्ति अप्राप्ति से सुख-दु ख नही होता। इसी प्रकार जिसके जीवन मे लोभ का दोप होगा, उसे ही धन के लाभ मे सुख और हानि मे दु ख का भास होगा। जिन साधु-सन्यासियो ने लोभ के दोष को त्याग दिया, उन्हे धन की प्राप्ति-अप्राप्ति मे सुख-दु ख का भास नही होता। इसी प्रकार मोह का दोप होने से सयोग सुख का और वियोग दु ख का कारण प्रतीत होता है। जिसको जिस व्यक्ति के प्रति मोह नही होगा, उसे उस व्यक्ति के सयोग से सुख नही होगा और वियोग से दु ख नही होगा। अत सयोग वियोग जनित सुख-दु ख का कारण व्यक्ति नही, मोह रूप दोप है। ऐसे सम्मान-अपमान से होने वाले सुख-दु ख का कारण आदर, अनादर नही है प्रत्युत अपने व्यक्तित्व का मोह एव अहभाव का दोप है। इसी प्रकार अन्य कोई सुख-दु ख ऐसा नही हैं जिसका कारण कोई न कोई दोप न हो।

अभिप्राय यह है कि हमे जो भी सुख-दु ख होता है वह किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति आदि अन्य के कारण नही होता है, बल्कि अपने ही किसी न किसी प्रकार के दोप के कारण होता है। और कोई भी दोप किसी दूसरे की देन नही है अपितु हमारी ही भूल का परिणाम है। जब भूल हमारे ही द्वारा उत्पन्न हुई है तो उसे मिटाने का दायित्व भी हमारा ही है। भूल न किसी अन्य ने पैदा की है और न कोई अन्य हमारी भूल को मिटा सकता है। हमे अपने ही विवेक का आदर कर अपनी भूल को मिटाना है। भूल के मिटने से दोप जिट जायेंगे। दोप मिट जाने से दोष जनित सुख-दु ख मिट जायेंगे। सुख-दु ख मिट जाने से देहातीत, लोकातीत, अनत, अविनाशी, ध्रुव जीवन मे प्रवेश हो जायेगा। इसी की उपलब्धि के लिए यह अमूल्य मानव जीवन मिला हे। ऐसे अमूल्य जीवन को सुख-दु ख के भोग मे विताना अपनी सबसे बडी हानि है, अपना सर्वस्व खोना है। इस हानि से बचना मानव मात्र का कर्त्तव्य व दायित्व है। इसी मे जीवन की सार्थकता व सफलता है।

प्राणी द्वारा दोप करना और उसके फलस्वरूप दु खी होना, यही प्राणी का अपने प्रति अपना अमित्र होना है और दोप का त्याग करना, फलस्वरूप प्रसन्न होना प्राणी का अपने प्रति अपना मित्र होना हैं।

सुख-दुःख का कारण—

जो प्राणी अपने दु ख का कारण दूसरे को मानता है वही दूसरो से अर्थात् वस्तु, व्यक्ति, परि-स्थिति, अवस्था से सुख पाने की आशा करता है।

१. **वस्तु नही** —किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति एव अवस्था से सुख की आशा करना भयकर भूल है। कारण कि जिन वस्तुओ से हम सुख की आशा करते ह क्या उनसे हमारा नित्य सबध हे ? जिन व्यक्तियो

से सुख की आशा करते है क्या वे स्वयं दु,खी नहीं है ? जिन परिस्थितियो से हम सुख की आशा करते है क्या उनमे किसी प्रकार का अभाव नहीं है जिस अवस्था में सुख का भास होता है, क्या उसमे परिवर्तन नही है ? तो कहना होगा कि किसी भी वस्तु से नित्य सबध सभव नही है । कोई भी ऐसा व्यक्ति नही है जिसके जीवन मे दुख न हो । कोई भी परिस्थिति ऐसी नही है जो अभाव रहित हो और प्रत्येक अवस्था परिवर्तनशील है । जिससे नित्य सबध नही है, जो स्वय दु,ख से पीडित हैं, जो अभावयुक्त है, उससे सुख की आशा करना भूल है । यह भूल किसी की देन नही है अपितु स्वय की ही देन है अपना ही बनाया हुआ दोष है । इस दोष से ही प्राणी दु खी हो रहा है ।

वस्तुओ से सुख मिलता है इस भूल पूर्ण मान्यता का परिणाम यह होता है कि जो वस्तुए अनित्य हैं उनमे नित्यता, सत्यता एव सुन्दरता प्रतीत होने लगती है जिससे प्राणी उन वस्तुओ की दासता मे जकड़ जाता है । वस्तुओ की दासता प्राणी मे लोभ या सग्रह वृत्ति उत्पन्न कर देती है । लोभ या सग्रह वृत्ति अभाव की द्योतक है और अभाव दरिद्रता का द्योतक है । अत लोभ ही दरिद्रता का मूल है । यही ही नही जड वस्तुओ के लोभ से उनमे अपनापन का भाव होने से उन जड-वस्तुओ से जुडने से जडता बढती जाती है जिससे चिन्मयता, चेतनता तिरोहित होती जाती है, जो बहुत बडी हानि है ।

(२) व्यक्ति नहीं—व्यक्तियो से सुख की आशा करने का परिणाम यह होता है कि प्राणी सयोग की दासता और वियोग के भय से ग्रस्त हो जाता है । यद्यपि सयोग मात्र निरतर वियोग मे बदल रहा है परन्तु सुख की आशा सयोग काल मे वियोग का दर्शन या बोध नहीं होने देती जिससे प्राणी मोह मे आबद्ध होकर अपने अविनाशी स्वरूप से विमुख हो जाता है । यह ही नही जिन व्यक्तियो से प्राणी सुख की आशा करता है, वे व्यक्ति भी स्वय उससे सुख की आशा करने लगते है । इस प्रकार दो दुखी व्यक्ति सुख की आशा से परस्पर मोह मे आबद्ध हो जाते है । यह नियम है कि जहा मोह है वहा मूर्च्छा है, जहा मूर्च्छा, वहा जडता और जहा जितनी मूर्च्छा (बेहोशी), जडता है उतनी ही चेतनता की कमी है ।

(३) परिस्थिति नहीं—विश्व मे कोई परिस्थिति ऐसी नहीं है जो परिपूर्ण हो, जिसमें किसी भी प्रकार का अभाव न हो । किसी न किसी प्रकार का अभाव प्रत्येक परिस्थिति में रहता ही है । परिस्थिति स्वभावत ही अपूर्ण होती है जो अपूर्ण है उसे सुखद स्वीकार करना अपूर्णता में आबद्ध होना है, जिसके परिणाम स्वरूप प्राणी परिस्थिति से अतीत जो अपना वास्तविक पूर्ण जीवन है उससे विमुख हो जाता है ।

(४) अवस्था नहीं—प्रत्येक अवस्था सीमित तथा परिवर्तन-शील है । अत अवस्था में आबद्ध प्राणी अपने असीम-अनत स्वभाव से विमुख हो जाता है ।

इस प्रकार वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, अवस्था मे अर्थात् अपने से भिन्न-अन्य या पर से सुख की आशा करने मे अथवा सुख मे आबद्ध होने से अथवा उनमे जीवन है ऐसा मानने से, अथवा उनकी उपलब्धि के आधार पर अपना मूल्याकन करने या महत्त्व आकने से प्राणी अपनी वास्तविकता से दूर हो जाता है । वास्तविकता से हट जाना ही घोर दु ख का कारण है ।

(५) सुख-दुःख अन्य से न मानने से प्राप्त लब्धिया—अपने सुख-दु ख का कारण अन्य को मानने से होने वाली हानिया और न मानने से होने वाली लब्धिया इस प्रकार है—

अपने दुख का कारण अन्य को न मानकर पने को मानने से सजगता आती है और दुख का नवारण करने मे हम समर्थ और स्वाधीन हैं, यह ावना व उत्साह जागृत होता है, जिससे-प्रमाद मेटकर दुख से मुक्ति पाने का पुरुषार्थ-पराक्रम प्रबल होता है।

जब व्यक्ति अपने दुख का कारण किसी और को नही मानता है तब उसके जीवन में से द्वेष की आग सदा के लिए बुझ जाती है। जिसके बुझने से हृदय मे प्रेम का सागर हिलोरे लेने लगता है और वैर-भाव का नाश हो जाता है जिससे निर्भयता समता, मृदुता, मुदिता आदि दिव्य गुणो की अभिव्यक्ति स्वत होती है, दिव्य जीवन का अवतरण होता है।

समस्त सृष्टि सुख-दुख का समूह है। इसी कारण कोई भी प्राणी यहाँ दुख से रहित नही है। फिर भी सुख-दुख दोनो ही आने-जाने वाले है, अनित्य है, अत जीवन नही है। इसलिए मानव को सुख-दुख से अतीत के जीवन की अनुभूति के लिए पुरुषार्थ करना चाहिये।

जो अपने आए हुए दुख का कारण दूसरो को मान लेता है, उसका ध्यान दुख के मूल हेतु की खोज की ओर नही जाता तथा सदा क्षुभित व खिन्न रहता है एव दुख से मुक्ति पाने मे अपने को असमर्थ मान लेता है जिससे वास्तविक जीवन की विस्मृति हो जाती है जो सर्वस्व विनाश का हेतु है। जब मानव अपने दुख का कारण किसी अन्य को नही मानता तो उसे दुख के भूल का बोध हो जाता है जिससे दुख दूर करने की सामर्थ्य स्वत आ जाती है जो विकास का मूल है।

परिस्थिति की उपस्थिति कर्मों का फल है। परिस्थिति से सुखी-दुखी होना या न होना यह मनुष्य के विवेक, अविवेक या भावो पर निर्भर करता है। अत विवेकशील भयकर से भयकर परिस्थिति में भी अपने को दुखी नही करता है अपितु उसे अपनी उन्नति का साधन बना लेता है एवं सब परिस्थितियो को परिवर्तनशील, अनित्य, अन्य, अपूर्ण व अभावमय समझकर परिस्थितियो से अपने को असग कर परिस्थिति, ससार और शरीर से अतीत अनत आनद का अनुभव करता है।

दुख-सुख का कारण अन्य को मान लेने का परिणाम यह होता है कि हम अनुकूल परिस्थितियो की प्राप्ति के लिए अनवरत प्रयत्न करते रहते है और जो परिस्थिति हमे प्राप्त है उसका सदुपयोग नही करते। इससे वस्तु, व्यक्ति आदि के हम दास हो जाते हैं फलत अनुकूल व सुखद वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति के प्रतिराग और प्रतिकूल वस्तु व्यक्ति, परिस्थिति के प्रति द्वेष करने लग जाते है। राग-द्वेष ग्रस्त व्यक्ति किसी के भी सबध मे सही निर्णय नही कर सकता। कारण कि जिसके प्रति राग हो जाता है उसका दोष नही दिखाई देता और जिसके प्रति द्वेष होता है उसका गुण नही दिखाई देता। जब गुण-दोष का सही बोध नही होता तो निर्णय सही नही हो सकता। अत. हमें किसी के विषय मे सही निर्णय करना है तो अपने को रागद्वेष रहित करना होगा, तटस्थ बनना होगा। रागद्वेष रहित होने के लिए यह अनिवार्य है कि हमे अपने सुख-दुख का कारण किसी दूसरे को नही मानना होगा।

दोष का कारण–विषयेच्छा, भोगेच्छा–

पहले कहा गया है कि दुख का कारण दोष है तो प्रश्न उपस्थित होता है कि व्यक्ति या प्राणी दोष करता ही क्यो है? तो कहना होगा कि सुखाभास को सुख मानने की भूल से। आभास उसे कहा जाता है कि जिसकी प्रतीति तो हो परन्तु प्राप्ति नही हो जैसे ग्रीष्मऋतु मे रेगिस्तान मे दिखाई देने वाली मृग मरीचिका मे जल की प्रतीति तो होती है परन्तु जल की प्राप्ति नही होती। इसी प्रकार पदार्थों के भोग से सुख मिलता तो प्रतीत होता है परन्तु

वास्तव मे भोग मे सुख है नही । यदि भोग मे सुख होता तो वह प्राप्त होता और उसका संचय होता रहता और अब तक बहुत संचित हो जाता । परन्तु हम सब का अनुभव है कि सुख प्रतीत होता हुआ सुख का एक क्षण भी नही रहता है दूसरे क्षण ही उस सुख मे कमी हो जाती है और यह कमी प्रतिक्षण बढती जाती है और अत मे वह सुख की प्रतीति भी क्षीण होकर लुप्त हो जाती है । यदि वस्तु या वस्तु के भोग से मिलने वाला सुख वास्तविक होता तो उस वस्तु के रहते हुए उस वस्तु से सबधित सभी व्यक्तियो को सुख मिलता और सदा मिलता । परन्तु हम सबका अनुभव है कि ऐसा होता नही है, होता इसके विपरीत ही है । पूर्वोक्त ताजमहल देखने के सुख का उदाहरण ही लें । ताजमहल के पहरेदार चौकीदार व्यक्ति को ताजमहल देखने से किंचित भी सुख नही मिलता फिर सदा सुख मिलने की तो बात ही नही उठती । कामी पुरुष को जो स्त्री सौंदर्य की मूर्ति दिखाई देती है वही स्त्री उसकी शत्रु स्त्री को चुडैल दिखाई देती है ।

इस सबध मे एक तथ्य यह भी है कि विषय-भोग से जो सुख मिलता प्रतीत होता है, वह सुख भी भोग से नही मिलता हैं अपितु कामना रहित होने से मिलता है । होता यह है कि इन्द्रिय ज्ञान के आधार पर जब प्राणी किसी वस्तु की प्राप्ति मे सुख पाने की कल्पना करता है तो उसमे उस वस्तु के पाने की इच्छा या कामना उत्पन्न होती हैं । कामना उत्पन्न होते ही कामना की पूर्ति नही हो जाती है, कामना पूर्ति के लिए जिस वस्तु की आवश्यकता होती है, उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न व परिश्रम करना पडता है जिसके लिए समय अपेक्षित है । अत कामना की पूर्ति हतु वस्तु, श्रम व समय की अपेक्षा होती है । जितने समय तक कामना की पूर्ति नही होती तब तक अभाव रूप कामना अपूर्ति का दुख भोगना पडता है । वस्तुत वह दुख भोग्य वस्तु के न मिलने से नही हुआ । क्योकि वस्तु के न मिलने से दुख होता तो वस्तु तो कामना उत्पत्ति से पू[र्व] भी नही थी अर्थात् वस्तु का अभाव था । प[र] जब तक कामना की उत्पत्ति नही हुई तब तक न वस्तु के अभाव का अनुभव हुआ और न अभाव-ज[न्य] दुख हुआ । आज हम मे से प्रत्येक के पास दि[न] की अगणित वस्तुओ मे से कुछ गिनती की ही वस्[तु] है, शेष असख्य वस्तुए नही है फिर भी हमे उ[न] अभाव से दुख नही होता । अभाव-जन्य दुख [तभी] होता है जब वस्तु से सुख पाने की कामना उत्[पन्न] हो । उससे यह परिणाम निकलता है कि दुख [वस्तु के] अभाव मे नही है कामना की उत्पत्ति मे है ।

वस्तुत दुख वस्तु के अभाव से नही ह[ोता] अपितु अभाव के अनुभव मे होता है । अभाव का अनु[भव] होता है कामना उत्पत्ति से । कामना उत्पत्ति ह[ोती] है सुख पाने की इच्छा से । सुख पाने की इच्छा ह[ोती] है सुखाभास को सुख मानने से । सुखाभास को [सुख] मानना भूल है, भ्रान्ति है जो अपने ही ज्ञान के अ[ना]दर या अविवेक का फल है । ज्ञान का अनादर अविवेक है जो सुख रहता ही नही है अर्थात् जि[सका] अस्तित्व ही नही है उसका अस्तित्व स्वीकार करना अज्ञान है । अज्ञान का अर्थ ज्ञान रहित होना नही प्रत्युत जो 'नही है', उसे 'है' मानना है अ[र्थात्] इन्द्रिय–जन्य अल्पज्ञान या अधूरे ज्ञान को ही [पूर्ण] मान लेना और बुद्धि ज्ञान रूप विवेक और निज (जो स्वभाविक व सनातन है) रूप प्रज्ञा का [अनादर] करना है ।

आशय यह है कि ज्ञान के अनादर या अ[विवेक] से कामना की उत्पत्ति होती है । कामना उत्पन्न होने पर उस कामना की पू[र्ति] करने के लिए श्रम अपेक्षित है । श्रम के लिए स[मय] अपेक्षित है । तात्पर्य यह है कि कामना उत्पन्न होते ही कामना की पूर्ति नही हो जाती, उसकी पूर्ति के लि[ए] शक्ति व श्रम और श्रम के लिए समय अपेक्षित है अत जितने समय तक कामना पूर्ति नही होती उत[ने] समय तक कामना अपूर्ति की अवस्था रहती है ।

कामना अपूर्ति की अवस्था मे वस्तु के अभाव का अनुभव होता है। अभाव का अनुभव होना दुख है। अत कामना अपूर्ति की अवस्था मे अभाव के अनुभव का दुख भोगना ही पडता है। जब कामना पूर्ति हो जाती तो यह दुख मिट जाता है। दुख के मिट जाने से सुख का अनुभव होता है।

कामना पूर्ति की अवस्था है कामना का न रहना अर्थात् कामना का अभाव। अत यह सुख कामना के अभाव से होता है। कारण कि कामना के न रहने से कामना अपूर्ति का दुख मिट जाता है जिससे यह सुख मिलता है न कि कामना पूर्ति की अवस्था मे मिली वस्तु की उपलब्धि से। क्योकि यह देखा जाता है कि भले ही वस्तु मिले या न मिले विवेक से या अन्य किसी कारण से कामना का त्याग कर दिया जाय तो कामना अपूर्ति का दुख मिटकर शाति के सुख का अनुभव होने लगता है। अत सुख कामना पूर्ति के समय प्राप्त वस्तु, परिस्थिति आदि मे नही अपितु कामना के अभाव मे है परन्तु प्राणी की भूल यह होती है कि जो सुख कामना के न रहने से, अभाव से होता है उसे कामना पूर्ति से मिली वस्तु से मान लेता है इस मान्यता से अपने सुख-दुख का कारण वह वस्तु या अन्य को मान लेता है फलतः वह सुख पाने के लिए बार-बार नवीन कामनाए करता रहता है और कामना अपूर्ति का व श्रम जन्य थकान का दुःख भोगता रहता है। यदि किसी प्रकार अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति हो गई और उससे कामना पूर्ति हो गई तब भी उससे जो सुख मिलता प्रतीत होता है वह प्रतीयमान सुख भी रहता ही नही क्योकि वस्तु मे सुख होता ही नही। अत वस्तु या अन्य से सुख की उपलब्धि मानना भूल है।

यदि वस्तु मे सुख होता तो प्रथम बात तो यह होती कि जिसके पास वस्तुओ का जितना अधिक सग्रह है उसे उतना ही अधिक सुख मिलता और बालक, सन्यासी और गरीब व्यक्ति को सुख नही मिलता परन्तु ऐसा देखा नही जाता। देखा यह जाता है कि दुख या अशाति से छुटकारा पाने के लिए नीद की गोलिया अधिक सग्रही व्यक्ति को ही लेनी पडती है। दूसरी बात यह है कि प्राप्त वस्तु प्राप्तकर्त्ता से अभिन्न नही हो पाती। वस्तु और इसके प्राप्तकर्त्ता मे दूरी सदैव बनी ही रहती है और उससे सुख जैसी कोई शक्ति (Power) निकल कर आती नही है। तीसरी बात उस वस्तु के न होने पर भी असख्य व्यक्ति सुखी दिखाई देते है। चौथी बात जब तक हममे कामना की उत्पत्ति नही हुई थी तब तक हम भी उस वस्तु के न होने से दुखी नही थे। अत इससे यह फलित होता है कि वस्तु की प्राप्ति के साथ सुख की प्राप्ति का कोई भी सबध नही है।

यहा यह जिज्ञासा होती है कि 'दुख' पाना कोई भी नही चाहता फिर दुख का कर्ता अपने को कैसे मान जाय ? तो कहना होगा कि 'दुख' का कोई स्वय अस्तित्व नही है। दुख की प्रतीति होती है सुख पाने की इच्छा की अपूर्ति से। अत दुख वही पाता है जो सुख का भोगी है। वस्तुत दुख का कारण है सुख का भोग, सुख की दासता। सुख की दासता अन्य किसी की देन नही है स्वय अपनी ही उपज है यह नियम है कि यदि जिसे अनुकूलता मे सुख की प्रतीति होती है उसे ही प्रतिकूलता मे दुख होता है। दुख का कारण प्राणी की स्वय की सुख-भोग की इच्छा है। अत दुख से मुक्ति पाने का उपाय है सुख-भोग का त्याग। सुख-भोग का त्याग करने पर व्यक्ति का दुख-सुख से अतीत के जगत मे सदा के लिए प्रवेश हो जाता है जहा अक्षय अव्याबाध, अनत रस का सागर सदैव लहराता है। परन्तु इस रहस्य को वे ही जानते हैं जिन्होने विनाशी सुख (सुखाभास) का सर्वथा त्याग कर दिया है। उन्ही का जीवन धन्य है। —जैन सिद्धान्त शिक्षण सस्थान,

ए-९, बजाज नगर, जयपुर

Ahinsa, Karuna and Seva

Dr. Kamal Chand Sogani

Seva is Interested in the wellbeing of the 'Other', to work for the animal and human welfare, and to devote oneself to cultural renaissance are some of the dimensions of seva, Thus Ahinsa Karuna and Seva are interrelated and are conducive both to Individual and social progress

Ahinsa is primarily a social value. It begins with the awareness of the 'othe Like one's own existence, it recognises the existence of other beings In fact, to nega the existence of other beings is tantamount to negating one's own existence Since on own existence can not be negated, the existence of other beings also can not be negat The Acarang a rightly remarks, that one should not falsify the existence of other bein He who falsifies the existence of other beings falsifies his own existence Thus th exists the Universe of beings in general and that of human beings in particular, T basic characterisations of these beings are life is dear to all and any kind of suffer is painful to all of them,

Now for the progress and development of these beings, Ahinsa ought to the basic value guiding the behaviour of human beings For a healthy living, it re esents and includes all the values directed to the 'other" wihtout overemphasizing values directed to one's own self Thus it is the pervasive principale of all the val Posit Ahinsa, all the values are posited Negate Ahinsa all the values are negat Ahinsa purfies our action in relation to the self and other beings This purificat consists in our refraining from certain action and also in our performing certain a ons by keeping in view the existence of human and sub-human beings The Acaran the oldest text of Jainism, advise us, on the one hand, to refrain from killing, gov ning, enslaving, tormenting and provoking human and sub-human beings, while, on other, it inspires us to promote mental equanimity, social and economic justice

There is no denying the fact that we are living in an age of science a technology The impact of technological advancement on human behaviour is so gr that the rate of value change has grown very high Prior to scientific progress, valu

changed very slowly At present, we are confronted not merely with the question, "what will future generations value?", but also with the more pressing question, "what will we ourselves, value a decade or two from now?" Again, the question is, "which of the values, which fulfill the criterion of Ahimsa, are to be nourished?" In fact, values will be values only when they possess an element af Ahimsa in them, The values of friendship, chastity, honesty, truthfulness, forgiveness and the like are the expressions of Ahimsa in different ways

It is of capital importance to note that Ahimsa can be both an extrinsic value, i e both value as a means and value as an end This means that both the means and the ends are to be tested by the criterion of Ahimsa Thus the principle that "the end justifies the means" need not be rejected as immoral, if the means and ends are judged through the criterion of Ahimsa In fact, there is no inconsistency in saying that Ahimsa is both an end and a means

It may be asked, what is in us on account of which we consciously lead a life of values based on Ahimsa ? The answer is, it is Karuna which makes one move in the direction of adopting Ahimsa-values It may be noted that the degree of Karuna in a person is directly proportionate to the development of sensibility in him The greatness of a person lies in the expression of sensibility beyond ordinary limits This should be borne in mind that the emotional life of a person plays a decisive role in the development of healthy personality and Karuna is at the core of healthy emotions Attachment and aversion bind the human personality to mund-ane existence, but Karuna liberates the individual from Karmic enslavement The Dhavala, the celebrated commentary on the Satkhand – agama remarkably pronounces that Karuna is the nature of soul To make it clear, just as infinite know–ledge is the nature of soul, so also is Karuna This implies that Karuna is potentially present in every being although its full manifestation takes place in the life of the Arhat, the perfect being Infinite Karuna goes with infinite knowledge Fine Karuna goes with finite knowledge

Thus if Karuna which is operative on the perception of the sufferings of the human and subhuman beings plunges in to action in order to remove the sufferings of these beings, we regard that action as Seva Truely speaking, all Ahimsa values are meant for the removal of varied sufferings in which the human and sub-human beings are involved Sufferings may be phyiscal and mental, Individual and social, moral and spiritual To alleviate, nay, to uproot these diverse sufferings is Seva In fact, the performance of Seva is the veri-

fication of our holding Ahimsa-values It is understandable that physical, mental and economic sufferings block all types of progress of the individual and make his life miserable. These may be called first-order human sufferings. There are individuals who are deeply moved by these sufferings and consequently they dedicate them selves to putting an end to these sufferings Thus then Karuna results in Seva It is not idle to point out that Karuna is an emotion and Seva is in action This emotion and the resulting action make the individual free from earthly attachments, ignoble desires and selfish expectations Thus Seva becomes Self-purifying and consequently it serves as an internal austerity (Antaranga Tapa)

The second-order human sufferings is ignorance Human beings may be ignorant of the moral and spiritual values of life This makes them forgetful of the basic purpose of life With the increase in the capacity of rational understanding and Intuitive perception, Karuna issues in cultural action of propagating knowledge and persuading people to adopt a moral and spiritual way of life. This type of Seva is one of the most difficult tasks Hence it is pursued by the enlightened human beings

To sum up, Seva is interested in the well-being of the 'other' To work for the animal and human welfare, and to devote oneself to cultural renaissance are some of the dimensions of Seva Thus Ahimsa, Karuna and Seva are interrelated and are conducive both to Individual and social progress

—Profesor of Philosophy
Sukhadia University Udaipur (Rajasthan)

अहिंसा
संयम
अनाग्रह
तप
अपरिग्रह

जैन साहित्य और साधना में ओम् : एक संक्षिप्त विवेचन

□ प्रो. कल्याणमल लोढ़ा

जैन चिन्तन मे ओम् और अर्हम् को लेकर अनेक जिज्ञासु प्रश्न उठाते है कि ओम् के स्थान पर अर्हम् को महत्व देने का कारण क्या है ? वस्तुतः जैन साधना पद्धति मे दोनो का अपना महत्व है । ओम् की साधना प्राण शक्ति की और पंच परमेष्ठी की साधना है, नमस्कार मत्र की पर-प्राण-शक्ति की साधना मे अर्हम् का बहुत बडा महत्व है । ओम् का जप वैखरी, मध्यमा और पश्यन्ती तीनो मे समान रूप से हो सकता है—इसे ही हम संजल्प, अन्तर जल्प और ज्ञानात्मक भूमिया कह सकते है ।

भारतीय धर्म साधना, दर्शन और अध्यात्म का सर्वाधिक गूढ प्रतीक और महत्वपूर्ण शब्द यदि उसे शब्द कहे तो प्रणव या ओम् है । यही अखिल ब्रह्माण्ड और पिण्ड की सूक्ष्मतम दिव्य ध्वनि है—इसी को तन्त्र और योग शास्त्र मे 'दिव्य नाद'—या 'परानाद' कहा जाता है । भारतीय चिन्तको और योगियो ने इसे पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी से अग्राह्य बताया है । यही समस्त अभिव्यक्ति का मूल है और उसके सभी रूप इसी से विकसित है । वैदिक साहित्य से लेकर अद्यावधि भारत के समस्त धर्मो मे जैन, बौद्ध, सिख एव मत्र, तत्र, योग साधना मे इसको सर्वोपरि महत्व दिया गया है । भारतीय चिंता धारा मे ही क्यो, विश्व के सभी धर्मों ने किसी न किसी रूप मे ओम् की महत्ता को सर्वोपरि गिना है । इस्लाम मे इसको 'आमीन' और ईसाई धर्म मे 'आमेन्' कहा गया है । लगभग सभी प्रार्थनाओ के अन्त में ईसामसीह का अभिवादन आमेन् शब्द के प्रयोग द्वारा ही होता है । सन्त जान ने कहा—'यही प्रथम शब्द' है । अनेक तत्वज्ञो की राय है कि ओम् का ऊपर का भाग जो अर्ध चन्द्राकार है, यही इस्लाम मे चाद के आधे भाग के रूप मे मान्यता प्राप्त कर स्वीकृत हुआ । बौद्ध धर्म मे 'ऊ मणि पद्मे हुम्' ही प्रधान मन्त्र है और इसके द्वारा बौद्ध धर्म ओकार को सर्वोपरि मान्यता देता है । सिख 'एक ओकार सद्गुरु प्रसाद'—का सस्वर वाचन कर ओकार की गरिमा और महिमा स्वीकार करते है । इस प्रकार विश्व के प्राय सभी धर्मो मे ओकार या ओम् की महत्ता और गणना सर्वसाध्य मन्त्र के रूप मे की जाती है और उसे निखिल ब्रह्माण्ड मे व्याप्त सूक्ष्मतम नाद कहा जाता है ।

हिन्दू धर्म और अध्यात्म जगत मे तो ओकार या प्रणव को मन्त्रराज गिना ही जाता है । प्रणव ओकार का ही पर्याय है । कहा गया है 'मत्रणा प्रणव सेतु' । प्रणव को ओकार ॐ कहने का कारण भी विशिष्ट है । अथर्वशिर के अनुसार अरसादुच्यते प्रणव यस्मादुच्चार्य माण एव ऋचो यजू पि सामान्यर्वाङिग रसश्चयज्ञ ब्रह्म ब्राह्मणोभ्य प्रणवति तस्मादुच्यते प्रणव । मन्त्रो के लिए यह सेतु रूप है । इसी से सभी मन्त्र प्रणव से ही प्रारम्भ होते है ।

ऐतरीय आरण्यक के अनुसार 'ओंकारों ने सर्वावाक् है और गीता मे भी यही भाव है । महर्षि पातजलि ने तो इसे ब्रह्म का वाचक ही कहा है— 'तस्य वाचव प्रणव: ।' गायत्री महामन्त्र मे प्रथम प्रणव ही है । श्री कृष्ण ने गीता मे—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन ।
यः प्रयाति त्यजन् वेह स याति परमागतिम् ।।

अर्थात् जो प्रणव या ओंकार इस एक अक्षर रूपी ब्रह्म का ध्यान करता हुआ पार्थिव शरीर छोडता है, वह अवश्य ही परम गति प्राप्त करता है । मनु के अनुसार—'क्षरन्ति सर्वा वैदिक्यो जुहोति यजति क्रिया ।'

अक्षरमक्षयं ज्ञेयं ब्रह्म च एव प्रजापतिः

उपनिषदो मे तो सर्वत्र प्रणव की महिमा स्वीकार की गई है । उपनिषदो मे प्रणव की विविध रूपेण व्याख्या की गई हे । कठोपनिषद, माडूक्य उपनिषद, मुण्डकोपनिषद, प्रश्नोपनिषद, छादोग्य से लेकर ध्यान बिन्दूपनिषद, नाद बिन्दूपनिषद आदि इसके प्रमाण है । सक्षेप मे पुण्यराज के कथनानुसार प्रणव 'सर्ववाद विरोधिनी' है और इसी के गर्भ में सभी दर्शन शास्त्र और अध्यात्म तत्व उदित और समाहित होते है । इसी प्रकार साधको और योगियो की परमानुभूति, जो अनाहत, अगम्य अगोचर, अनभिव्यक्त और अवर्णनीय है—प्रणव उसी का प्रतीक है । मुनित्व की व्याख्या ही ओंकार से सम्बन्धित है—

'ओंकारो विदितो येन स मुनिर्नेतेरोजनः'

इस प्रकार ओंकार परम सत्य का, विराट् की परम चेतना का, पर ब्रह्म की सत्ता का, योग की चरम, निष्फल या निर्विकल्प स्थिति का समर्थ और सर्वमान्य प्रतीक है । तन्त्र शास्त्रमे प्रणव चादितो दत्वा स्तोत्र व सहित पठेत्—

अन्ते च प्रणवं दद्यादित्युवाचादि पुरुष : (वाराही तन्त्र)
ओंकार का ही तांत्रिक रूप 'हूं' बीज है ।

संक्षेप में भारतीय साधना राज्य मे प्रणव या ओंकार का विशिष्टतम महत्व है । इसके विभिन्न रूप, इसका तात्पर्य, उसके अंगों की व्याख्या सभी अत्यन्त गूढ है । उन सबका विवेचन किसी एक लघु निबन्ध मे सम्भव नहीं । योगियो ने मानव शरीर मे ओंकार के रूप और उसकी स्थिति का विशद [illegible] किया है ।

जैन धर्म मे भी ओंकार का महत्व सर्व और सर्वस्वीकृत है । एक आचार्य के अनुसार—

ओमित्येकाक्षर ब्रह्म वाचक परमेष्ठिन् ।
सिद्ध चक्रस्य सद् बीज सर्वदा प्रणमाम्यहम् ।।

एक अक्षर रूप 'ॐ' यत्र अनीश्वर ब्रह्म यही पञ्च परमेष्ठी का वाचक है । यन्त्र क्षेत्र समस्त यन्त्रो मे शीर्ष मणि सिद्ध चक्र यन्त्र का मन्त्र है—एतदर्थ म उसे प्रणाम करता हू । श्रीहे आचार्य ने प्रणव को ओंकार का ही पर्याय गिना 'ओंकार प्रणवो समो' जैन साहित्य की एक गाथ अनुसार—

अरिहंता असरीरा आयरियउवज्झाय मुणिणो
पंच खर निप्पणो ओंकारो पंच परमिटठी
(वृहद द्रव्य सग्रह)

अरिहन्त, अशरीरी सिद्ध . आचार्य, उपाध्याय और मुनि इन पाचो अक्षरो से निष्पन्न ओंकार पंच परमेष्ठी का ही रूप—प्रतीक है । इसकी निष्पति मे महापुरुषो के आद्य अक्षर इस प्रकार है—

अरिहंत का प्रतीक–परिचायक—अ
सिद्ध का प्रतीक परिचायक—अ
आचार्य का प्रतीक परिचायक—आ
उपाध्याय का प्रतीक परिचायक—उ
मुनि का प्रतीक परिचायक—म

जैन गाथाओ मे इसकी व्याख्या इस प्रकार है— अ+अ=आ+आ=आ आ+उ=ओ—और मुनि म मिलकर ओम् बनता है । एक और प्राचीन गाथा है—'प्रणव हरिया रिहा इअमतई दीआणि सप्पहा

वाणी सव्वेसि तेसि मूलो इक्का नवकार वर मन्तो।' प्रणव माया और अर्हं आदि प्रभावी मन्त्र हैं, पर इन सबका मूल 'नमस्कार मन्त्र' ही है।

एक जैनाचार्य का कथन है—

ओकारं विन्दुसंयुक्त, नित्य ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं, मोक्षद चएव ओकाराय नमोनमः॥

इसकी अत्यन्त प्रामाणिक, वैज्ञानिक और व्याकरणिक व्याख्या की गई है कि किस प्रकार ओम् शब्द निष्पन्न होता है। जैन शास्त्रो मे अर्हन्तवाणी को जो ओकार की ही ध्वनि मात्र है, सर्व भाषामय गिना है। जिनेन्द्र वाणी के अनुसार 'केवल ज्ञान होने पश्चात् अर्हन्त भगवान् के सर्वांग से एक अचित्र गर्जना रूप ओकार ऊ ध्वनि रिवरति है, जसे दिव्य ध्वनि कहते है, जैन शास्त्रो मे इस दिव्य ध्वनि का विशद विवेचन उपलब्ध है। दिव्य ध्वनि इच्छापूर्वक नही होती—वह स्वत स्फूर्त है। यह ध्वनि केवल ज्ञानियो मे ही सभव है, यह ध्वनि मुख से निःसृत है भी और नही भी, यह अनक्षरात्मक है और नही भी, यह सर्व भाषामय है और बीजात्मक रूप है। वैदिक मान्यता के अनुसार ओकार का एक अर्थ तीन लोको से है। अ का अर्थ है अधोलोक, उ का अर्थ उर्ध्व लोक और म का मध्य लोक। जैनाम्नाय के अनुसार यह त्रिलोकाकार घटित है। जैनागमो मे तीनो लोको का आकार तीन बात वलयो से वेष्ठित पुरुषाकार, जिसके ललाट पर अर्ध चन्द्र सिद्ध लोकका व विन्दु सिद्ध का प्रतीक है। मध्य मे हाथी के सू डवत त्रसनाली है। उसी आकार को शीघ्र लिखा जावे तो कलापूर्ण ऊ लिखा जाता है (जैन धर्मावलबियो का सर्वमान्य धर्म प्रतीक चिन्ह इस दृष्टि से दृष्टव्य है)। यही त्रिलोक का प्रतिनिधि है। ओकार प्रदेशापचय के अर्थ मे भी प्रयुक्त है। जैन धर्म मे ओम् की आकृति ऊ ही मान्य है ओम् जप का भी विधान जैन शास्त्रो मे उपलब्ध है। हृदय जप के अनुसार श्वेत, लाल, पीत, हरा और काले रगो की पाखुडियो पर ओम् का क्रमश ध्यानकिया जाता है। इसके लिए मन के सकल्प से हृदय मे ही पाच रगो का कमल बनाकर कमल के बीच मे अर्हम् का ध्यान अपेक्षित है। और विभिन्न रगो की पखुडियों पर पच परमेष्ठी का जाप करने से आध्यात्मिक शक्ति का वर्धन होता इसी प्रकार अ-सि-आ-उ-सा के मन्त्र मे भी 'ओम्' की स्थापना से साधना की जाती है। यदि कोई साधक अपने चैतन्य केन्द्रो को जागृत करना चाहता है तो उसे महामन्त्र के ओम् रूप की साधना करनी होगी। दर्शन केन्द्र, ज्ञान केन्द्र और आनन्द केन्द्र तीनो केन्द्रो को जागृत करने के लिए, तीन रगो के साथ ओम् का उन केन्द्रो पर ध्यान करना होगा—दर्शन केन्द्र पर लाल, ज्ञान केन्द्र पर श्वेत और आनन्द केन्द्र पर पीला।

जैन आचार्यो ने ओम् की निष्पत्ति का एक और भिन्न रूप प्रस्तुत किया है। अ = ज्ञान उ = दर्शन और म् = चारित्र का प्रतीक है। इस प्रकार ओम् ज्ञान दर्शन और चारित्र का भी प्रतीक ठहरता है—त्रिरत्न का ओकार की उपासना मोक्ष मार्ग की उपासना है। मत्र शास्त्र मे शब्द का उच्चारण, प्रयोग, जप, नियम आदि का पालन कर मत्र के अवयवो को साक्षात् अनुभव गम्य बनाना अनिवार्य है। इससे मत्र जागृत हो है। ओम् की साधना का भी यही नियम है। मातृ का नियम से भी स्वरोदय-स्वराधति, अर्धमात्रा आदि का अनुपालन अभीष्ट है। ओम् मे अर्ध मात्रा और तुरीय मात्रा स्वीकार की जाती है। साधना प्रणाली मे इन मात्राओ का विशिष्ट महत्त्व है। सोऽह मे सकार और हकार को हटाने से 'ओम्' बनता है—इस प्रकार ओम् सोऽह का ही परिवर्तित रूप है। ओम् प्राण-ध्वनि है और इसकी साधना का अन्यतम साधन कहा गया है 'सकार च हकार च लोपयित्वा प्रयुज्यते' जैन चिन्तन मे ओम् और अर्ह को लेकर अनेक जिज्ञासु प्रश्न उठाते है कि ओम् के स्थान पर अर्हम् को महत्त्व देने का कारण क्या है? वस्तुत जैन साधना पद्धति मे दोनो का अपना महत्त्व

है । ओम् की साधना प्राण शक्ति की ओर पंच परमेष्ठी की साधना है, नमस्कार मंत्र की पर प्राण-शक्ति की साधना मे अर्हम् का बहुत बडा महत्त्व है। ओम् का जप वैखरी, मध्यमा और पश्यन्ती तीनो मे समान रूप से हो सकता है—इसे ही हम सजल्प, अन्तर जल्प और ज्ञानात्मक भूमिया कह सकते है ।

इस प्रकार यह निर्विवाद है कि जैन दर्शन, अध्यात्म और साधना मे ओम् ॐ का महत्त्व सर्वोपरि

व निर्विवाद है । इस सक्षिप्त निबन्ध मे यही निर्दे करने की चेष्टा की गई है । भारत की विभि धर्म प्रणालियो मे जो एक मूल भावना और पर्द विद्यमान है, जो उन धर्मो को एक दूसरे के अभिन्न का प्रमाण बनती है, उनमे 'ओम्' विशिष्टतम् से एक है सर्व मान्य, सर्व स्वीकृत और सर्व शीर्ष

२–ए, देश प्रिय पार्क, कल

हृदय परिवर्तन

△ मोतीलाल सुराना, इन्दौर

चोर जेल से छोड़ दिया गया । बहुत बार कठोर यातना सहने के कारण चोर ने किसी सन्त की सेवा मे जाने की सोची । योग से सन्त एकनाथजी उस समय उधर से आ रहे थे । चोर दौडकर एकनाथजी के पास पहुंचा, पैरो मे गिरा तथा चोरी करने की अपनी आदत कबूल कर आगे से चोरी न करने की बात कही । सन्त ने उसे चोरी न करने की प्रतिज्ञा कराई तथा पूछा कि हम तीर्थ-यात्रा पर जा रहे है, अगर तुम भी चलना चाहो हमारे साथ चलो पर प्रतिज्ञा के अनुसार कभी भी चोरी मत करना । चोर ने हा कहा तथा साथ हो लिया ।

तीर्थयात्रा पर निकली सत एकनाथजी के साथ की सत मडली रोज-२ परेशानी मे पड़ जाती । कभी किसी का कमडल नही मिलता तो कभी किसी का अगोछा । बाद मे पता चलता कि जहा वे ठहरते थे वहा रात को चोर सामान को इधर–उधर रख दिया करता था । उसने चोरी तो छोड दी थी पर हेरा-फेरी के बिना उसे चैन न पडता था ।

जब सत मडली ने शिकायत की तो चोर से पहले सत मडली को एक-नाथजी ने समझाया कि मन बाहरी दबाव से एक हद तक रोका जा सकता है, पर आत्म सुधार के लिये तो हृदय परिवर्तन की जरूरत है । जो साधना और सयम से समय लगकर बदलता है । फिर चोर को भी प्रेम से समझाया कि ऐसा न करा करो तो धीरे-धीरे चोर भी एक सत की तरह जीवन-यापन करना सीख गया ।

भावात्मक एकता : प्रकृति और जीवन का सत्य

□ डा. नरेन्द्र भानावत

△

> भावात्मक एकता की पुष्टि एव अखण्ड मानवता की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि हम अपनी विविधता को द्रष्टा बनकर देखे न कि भोक्ता बनकर उसका अपने स्वार्थ के लिए दुरुपयोग करे। यह द्रष्टा भाव ही हमे अणु से विभु बनायेगा, वैभव-सम्पन्न बनायेगा। तब अनन्त से हमारा जुडाव होगा।

भावात्मक एकता प्रकृति और जीवन का सत्य है। जब तक इस सत्य से साक्षात्कार बना रहता है, जीवन और समाज मे सुख, शाति एव समता का वातावरण बना रहता है पर ज्योही यह सत्य नकारा जाता है, जीवन और समाज मे अशाति, विग्रह और दुख व्याप्त हो जाता है। सामान्य दृष्टि से देखें तो पता चलता है कि अपने चारो ओर विविधता ही विविधता बिखरी हुई है। किसी पेड या पौधे को देखिये, उस पर लहलहाने वाले पत्ते एक होते हुए भी विविधता लिए हुए है। जगत मे जितने भी जीव है, उन सब में स्वभावगत भिन्नता और व्यवहारगत वैशिष्ट्य है। बगीचा तभी सुन्दर लगता है जब उसमे भाति-भाति के पेड, पौधे और फूल हो। सार रूप मे कहा जा सकता है कि विविधता प्रकृति का धर्म है, विविधता विकास का मूल है, विविधता सम्पन्नता की परिचायक है पर यह सब तब है जब विविधता का विवेकपूर्वक सदुपयोग किया जाता है। यदि विवेकहीन होकर, कोई अपने स्वार्थ के लिए विविधता का दुरुपयोग करता है तो विविधता सम्पन्नता का कारण न रहकर, विपन्नता का कारण बन जाती है। इसीलिए आप्त पुरुषो ने विविधता मे एकता को प्रकृति का और जीवन का सत्य बताया है।

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जो विविध धर्मों, विविध जातियो, विविध खनिज पदार्थों, नदियो, मैदानो, पहाडो, गावो और नगरो का देश है। यहा प्रकृति प्रत्येक ऋतु मे विविध शृगार करती है। धार्मिक मान्यताओ, सामाजिक रीति-रिवाजो, सास्कृतिक कला-विधानो आदि मे वैविध्य है। यहा विविध भाषाए और काव्य शैलियां है। यह सब वैविध्य राष्ट्र को सम्पन्न और समृद्ध बनाता है। इसीलिए कहा जाता है कि देवता भी भारत भूमि मे जन्म लेने के लिए लालायित रहते है।

भारतीय सतो, दार्शनिको, और साहित्यकारो ने इस विविधता मे एकता का दर्शन कर पूरे राष्ट्र को भावात्मक एकता मे बाधा है। उन्होने यह सत्य प्रतिपादित किया है कि यह विविधता तब वरेण्य बनती है जब ऐक्य भाव हो। उदाहरण के लिए पेड मे अलग-अलग पत्ते, फूल और फल है पर उन सबकी एकता वृक्ष के बीज और जड से बधी हुई है। इसी तरह हाथ की अगुलिया अलग-अलग है, पर उन सबकी शक्ति हथेली से जुडी हुई है। इसी प्रकार देश मे अलग-अलग धर्म, भाषा, जाति और व्यवसाय के लोग है, पर वे सब परस्पर प्रेम, सहयोग, और मैत्री भाव से जुडे हुए है। 'आत्मवत् सर्व भूतेषु'', 'वसुधैव कुटुम्बकम्' 'मित्ती मे सव्व भूएसु' के पीछे यही दृष्टि रही है। बडे-बडे दार्शनिको, और रहस्यवादी कवियो ने जीव और ब्रह्म की एकता का गुणगान किया है। सन्त कबीर ने अनुभूति की गहराई मे पैठकर कहा—'जल मे कुम्भ,

कुम्भ मे जल है, बाहर भीतर पानी । फूटा कुम्भ जल-जल ही समाना, यह तथ कथ्यो ग्यानी ।' अर्थात् सरोवर मे घडा है और घडे मे जल है । सरोवर ब्रह्म के समान है और घडे मे रहा हुआ जल जीव के समान है । यह जीव ब्रह्म का ही अश है । जिस प्रकार मिट्टी के घडे की परत सरोवर के पानी से घडे मे रहे हुए पानी को अलग करती है वैसे ही मन के विकार जीव को ब्रह्म से अलग करते है । जिस प्रकार घडे के फूटने पर घडे मे रहा हुआ पानी पुन सरोवर के पानी मे मिल जाता है, उसी प्रकार मन के विकार नष्ट होने पर जीव ब्रह्ममय हो उठता है ।

सामाजिक और राष्ट्रीय सदर्भ मे यह विकृति ही एकता मे बाधक है, और यह विकृति है सकीर्ण मनोवृत्ति अपना-अपना स्वार्थ, जातीयता, प्रान्तीयता, सम्प्रदायवाद । भेद मे अभेद की अनुभूति होने पर भावात्मक एकता पुष्ट होती है ।

वैचारिक स्तर पर एकता का अर्थ है—समानता । अपने से परे जो शेष सृष्टि है, उसके प्रति अनुरागात्मक सवध । समानता की ऐसी अनुभूति के क्षणो मे ही सन्त कवीर कह उठते हे— जाति पाति पूछे नही कोई, हरि को भजे सो हरि को होई ।' सन्त नानक गा उठते है—"ना मे हिन्दू ना मै मुसलमान, पच तत्त्व का पुतला, नानक मेरा नाम ।" जब मैत्री भाव प्राणी मात्र के प्रति उमड पडता है तब भेद रहता ही नही । इसी स्तर पर जगत् और ब्रह्म की एकता के भी दर्शन होने लगते है । "लाली मेरे लाल की, जित देखो तित लाल । लाली देखने मै गई, मै भी हो गई लाल । इस तरह की अनुभूति होने पर स्वार्थ परमार्थ मे बदल जाता है, शक्ति सेवा का रूप ले लेती है । पर जहा यह एकात्मक अनुभूति नही होती, वहा भेद बना रहता है और शक्ति सत्ता के साथ जुडकर विघटन का ताडव नृत्य कराती है ।

इस भावात्मक एकता के चिन्तन मे बुद्धिजीवियो की बडी भूमिका है । यदि बुद्धि स्वार्थ मे डूबी हुई है तो उसे विभिन्नता में एकता के नहीं, भिन्नता के, समता के नहीं विषमता के दर्शन होंगे । पर यदि बुद्धि प्रज्ञा से स्थित है, परमार्थ के साथ गतिशील है, हृदय की सहगामिनी है तो उसमे अनेकान्त दृष्टि का विकास होगा । यह विभिन्नता मे निहित एकता के सूत्र को पकडेगी, तब वह मधुमक्खी की प्रक्रिया को अपनायेगी । मधुमक्खी जो विविध रगो के फूलों से रस ग्रहण करती है, पर उनसे जो शहद बनाती है वह एक ही रग का, एक ही स्वाद का होता है मधुर-मीठा । समष्टि भाव का बोध होने पर मनुष्य भेद-अभेद मे और द्वैत-अद्वैत मे बदल जाता है । व्यक्ति अपने लिए नहीं, समष्टि के लिए जीने लगता है । वह अपने को परिवार के लिए, परिवार को गाव के लिए और गाव को प्रान्त के लिए, प्रान्त को देश के लिए समर्पित कर देता है । वैदिक ऋषियो ने सह-अस्तित्व और सामुदायिक भाव को अपने विभिन्न मत्रो मे स्पष्ट किया है—

सहनाववतु सहनौ भुनक्तु, सह वीर्य करवावहै ।
तेजस्विनाऽवधीतमस्तु, मा विद्विषावहै ॥

अर्थात् हम सब एक दूसरे की रक्षा करें, हम प्राप्त साधनो का साथ-साथ उपभोग करे, हम साथ-साथ पराक्रम करे, हमारा अध्ययन तेजस्वी हो, हम परस्पर द्वेष न करे ।

संगच्छध्व सवदध्व सवो मनासि जानताम् ।
देवा भाग यथापूर्वे संजनाना उपासते ॥

अर्थात् सब साथ-साथ चलो, साथ-साथ बोलो, एक दूसरे के मनो को जानो, जिस प्रकार देवता पहले एक दूसरे को जानकर एक दूसरे की सेवा करते थे, वैसे तुम भी करो ।

भगवान् महावीर ने "परस्परोपग्रहोजीवानाम्" अर्थात् परस्पर उपकार करते हुए जीवन जीने को ही सच्चा जीवन माना है और इसी अनुभूति के धरातल पर उन्होने सत्य और अहिसा का उपदेश दिया है ।

पर आज बडे दुख की बात है कि राजनैतिक और आर्थिक स्वार्थो के कारण विविधता मे एकता के

भाव को हृदयगम करने की भावना दुर्बल और दृष्टि धूमिल होती जा रही हे । जहा सत नानक ने "आदम की जात सभी एक ही पहचानो" कहकर मनुष्य-मनुष्य मे एकता को प्रतिष्ठापित किया वहा आज मनुष्य को मनुष्य न समझकर उसके साथ पाश्विक व्यवहार किया जा रहा है । जिस राम ने अयोध्या से चलकर लका तक गुह-निपाद, शबरो तक के मन को जीता और सामाजिक समन्वय को पुष्ट किया वही क्षेत्र आज भापा-भेद और सकीर्ण मनोवृत्ति के कारण दग्ध है । मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन, सास्कृतिक एकता की पुष्टि का आन्दोलन है। रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य, सन्त नामदेव, तुकाराम, एकनाथ, जाभोजी, दादू, रज्जव, मीरा, हेमचन्द्राचार्य आदि ने एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त मे घूम-घूमकर जो अलख जगाई उसी के फलस्वरूप, विदेशी आक्रान्ताओ के बीच मे भी हमारी अस्मिता और सस्कृति सुरक्षित रह सकी । आज तो हम स्वतन्त्र हैं । उन भक्त सतो और कवियो द्वारा जागृत अलख को हमे और अधिक तेजस् बनाना है । हमे यह समझना है कि जो अनेकता के तत्व है, वे आवश्यकताओ के विभाजन और आवश्यकताओ की पूर्ति के साधन रूप हैं । इनकी माग भौतिक इच्छाओ की पूर्ति के लिए हे । जीवन का सत्य भोगवृत्ति नही है । इस कारण अनेकता रूप साधनो के निमित्त से अखण्ड मानवीयता खण्डित नही होनी चाहिये । भावात्मक एकता की पुष्टि एव अखड मानवता की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि हम अपनी विविधता को द्रष्टा बनकर देखे न कि भोक्ता बनकर उसका अपने स्वार्थ के लिए दुरुपयोग करे । यह द्रष्टा भाव ही हमे अणु से विभु बनायेगा, वैभव-सम्पन्न बनायेगा । तब अनन्त से हमारा जुडाव होगा । सत रज्जव के शब्दो मे—

रज्जव बूंद समन्द की, कित सरके कहं जाय ।
साझा सकल समन्द सो, त्यू आतम राम समाय ।।

जिस प्रकार अथाह व अनन्त जल से भरे हुए समुद्र की एक बूद चाहे किधर भी चली जाए, सरक जावे वह समुद्र का ही भाग बनी रहती है, उसी प्रकार व्यक्ति बूद की तरह है और समग्र राष्ट्र समुद की तरह । यह समग्रता का दृष्टिकोण ही भावात्मक एकता का आधार है ।

—सी २३५ ए दयानन्द मार्ग, तिलकनगर, जयपुर-४

समाज सेवा भी साधना है

△ सौभाग्यमल जैन

श्रीमद् स्थानाग सूत्र मे वर्णित दस धर्म (ग्राम, नगर, राष्ट्र धर्म आदि) के प्रति स्वनाम धन्य स्वर्गीय पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने समाज के सम्मुख महत्व प्रतिपादित किया था। समाज मे जो इने-गिने आज राष्ट्रीय भावना के व्यक्ति है वे उस आह्वान का परिणाम है जो स्वर्गीय पूज्यश्री ने उस समय रखा था। जैन समाज भी स्थानीय ग्राम नगर या राष्ट्र की जनता की इकाई है, उसे इनकी समस्याओ मे अपना योगदान देना होगा।

जैन साहित्य मे श्रीमद् 'उत्तराध्ययन सूत्र' का महत्वपूर्ण स्थान है, उसमे एक स्थान पर कहा गया है-

चत्तारि परमंगाणि, दुल्लहाणि य जंतुणो।
माणुसतं, सुई, सद्धा, सजम च वीरियं ॥

तात्पर्य यह है कि जगत मे मानव भव दुर्लभ है। असीम पुन्यो से मनुष्य योनि मे जन्म होता है। उक्त गाथा मे 'माणुसत' का प्रयोग किया गया है। मेरे नम्र विचार मे भाव यह है कि मनुष्यत्व के गुण सहित (मानवीय गुण सम्पन्न) व्यक्ति दुर्लभ है। उपनिषद के ऋषि ने भी मनुष्य को श्रेष्ठतर माना है— "नहि मानुषात् श्रेष्ठतर हि किंचित्' इस्लाम परम्परा मे मनुष्य को सृष्टि, जगत (खलक) मे अशरफ (श्रेष्ठ) बताया गया उसे "अशरफुल मखलूकात' कहा गया है। सब परम्पराओ मे मनुष्य को उत्तम योनि माना किन्तु जैन धर्म ने मनुष्य की गरिमा को बहुत ऊचा उठा कर देवत्व से भी महत्वपूर्ण माना है। यह सुनिश्चित है कि मानव जीवन का लक्ष्य निःश्रेयस (मुक्ति, मोक्ष) प्राप्त करने के लिये देव को भी मनुष्य जन्म लेना पडेगा। जैन धर्म की मान्यता के मुताबिक मनुष्य असीम अनन्त शक्ति का पुज है। उसी मे यह क्षमता है कि वह अपनी सुप्त (सोई हुई) परमात्म शक्ति का प्रस्फुटन कर सके। निश्चय नय की दृष्टि से प्रत्येक प्राणी शुद्ध, बुद्ध है उसमे और पूर्ण काम (सिद्ध अवस्था) की आत्मा के मौलिक गुणो मे कोई अन्तर नही है। यह शुद्ध बुद्ध अवस्था आत्मा की वर्तमान अशुद्ध दशा के कारण अप्रगट है। वैदिक ऋषि का 'अह ब्रह्माऽस्मि, सोऽह' का नाद्य इस विचार की पुष्टि करता है। सती मदालसा अपने गर्भ शिशु को लोरियो के द्वारा यह सिखाती थी—

शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि, निरंजनोऽसि।
संसार माया परिवर्जितोऽसि ॥

वेदात के अनुसरण मे सूफी परम्परा का सत सरमद देहली की सडको पर तत्कालीन मुगल बादशाह औरगजेब के शासनकाल मे 'अनल हक' (अह्म ब्रह्माऽस्मि) बुलन्दी के साथ कहता चला जा रहा

ा। वह उसकी सुप्त ईश्वरीय शक्ति (परमात्म तत्व) का इजहार था किन्तु बादशाह की दृष्टि मे यह इस्लामी सिद्धात के प्रतिकूल था। इस कारण सन्त को सूली पर चढाने का दण्ड दिया गया। सूली पर से भी सन्त प्रसन्नता पूर्वक यही उद्‌घोष करता जा रहा था। सक्षेप मे यह कि मनुष्य मे निहित इस सुप्त दशा (शुद्ध दशा) को किस प्रकार जागृत किया जावे, यह महत्वपूर्ण है। यह शुद्ध दशा कही बाहर से आयात नही होने वाली है। अपितु मानव को अन्त-र्मुखी होकर अपनी साधना मे लगकर प्रकट करना है।

जैन दर्शन की मान्यता के मुताबिक मनुष्य की शुद्ध दशा प्रकट होने या ईश्वरत्व प्रकट होने मे कर्मो का आवरण मुख्य कारण है। यह आवरण शुद्ध दशा के ऊपर सूफी या अद्वेत की भाषा मे 'दुई' (द्वैत) का पर्दा है। यह आवरण या पर्दा हटाये विना या नष्ट हुए विना शुद्ध दशा प्रकट नही हो सकती है। प्रसिद्ध कवि तथा दार्शनिक डॉ इकबाल ने कहा था—

ढूंढ रहा है इकबाल अपने आप को
गोया मुसाफिर और मंजिल एक है।

द्वैत का पर्दा हट जाते ही मनुष्य अपने स्व-भाव (शुद्ध दशा) मे आ जाता है। यहा सब्जेक्ट (Subject) और आब्जेक्ट (Object) विषय और विषयी या गुण-गुणी एकाकार हो जाते है। कर्मो के आवरण या द्वैत के पर्दे के लिये साधना(तप) द्वारा अनिवार्य है। जैन दर्शन मे तप मुख्य रूप से बाह्य तथा आभ्यन्तर दो भागो मे विभाजित है। लेखक के नम्र मत मे बाह्य तप व्यक्तिगत साधना है। मनुष्य अनशन आदि द्वारा तपश्चरण करता है। आभ्यन्तर तप मे मनुष्य अपनी व्यक्तिश साधना के साथ अन्य की सेवा भी करता है। आभ्यन्तर तप मे उदाहरणार्थ 'वैयावच्च' (सस्कृत मे वैयावृत) भी शामिल है। यह तप अन्य की सेवा द्वारा ही हो सकेगा। तात्पर्य यह है कि जैन दर्शन द्वारा मान्य साधना या तपश्चरण केवल व्यक्तिगत नही अपितु अन्य की सेवा द्वारा भी की जाती है। वैयावृत्य को तो अधिक महत्व देकर यह प्रावधान किया गया कि तीर्थंकर गौत्र के लिये बीस कारणो मे यह भी एक कारण है।

उपर्युक्त तथ्यो से यह निष्कर्ष निकलता है कि जैन दर्शन में जहा व्यक्तिश साधना पर बल दिया गया है वही अन्य की सेवा द्वारा भी साधना को महत्व दिया है। तीर्थंकर पद प्राप्त महापुरुषो की स्तुति (णमोत्थुणम या शक्र स्तव) मे 'तिन्नाणम तारयाणम' शब्दो का प्रयोग किया गया है। वह अपनी साधना द्वारा ससार समुद्र से तिर जाते है साथ ही अन्यो को इस पथ का अनुसरण करने के लिये मार्गदर्शन करते है। तीर्थंकर महावीर को अपनी साढे बारह वर्षीय साधना के पश्चात् आत्म साक्षात्कार (केवल्य प्राप्ति) हो गया। जैन दर्शन मे आत्मा का लक्षण उपयोग(ज्ञान)माना है, 'जीवो उवओग लखणो' इसी कारण आत्म साक्षात्कार की स्थिति को केवल (Only) ज्ञान कहा गया होगा। तात्पर्य यह कि उस स्थिति मे केवल (सिर्फ) ज्ञान ही रह जाता है। आत्मा तथा ज्ञान (गुण-गुणी) एकाकार हो गये। केवल ज्ञान के पश्चात् महावीर लगभग ३० वर्ष तक स्थानीय जनता को सन्मार्ग पर लाने के लिये ग्रामा-नुग्राम विहार करके पथ प्रदर्शन करते रहे। उन्होने गणधर गौतम के एक प्रश्न के उत्तर मे स्पष्ट कहा कि जो दीन-दुखी, रोगी की सेवा करता है, वह धन्य है। एक सुभाषित मे कहा गया है—

श्लोकार्थेन प्रवक्ष्यामि, यदुक्तम् ग्रन्थ कौटिभिः।
परोपकाराय पुन्याय पापाय परपीडनम्॥

किंतु वर्तमान के जीवन सघर्ष या योग्यतम के अस्तित्व (Survival of the fittest) के युग मे एक कवि ने ठीक ही कहा था—

बस एक रह गई थी, मजहबे इन्सानियत की बात
बामज्ले खुदा, आज वह भी जुर्म हो गई॥

जबकि वास्तविकता यह है उर्दू के एक कौल के अनुसार—

क्या करेगा प्यार वह भगवान को
क्या करेगा प्यार वह ईमान को ।
जन्म लेकर गोद मे इन्सान की,
प्यार कर न पाया जो इन्सान को ॥

तथागत बुद्ध द्वारा प्रणीत बौद्ध धर्म की एक शाखा 'महायान' की मान्यता के अनुसार भगवान बुद्ध केवल स्वय मुक्त नही होना चाहते अपितु ससार के प्रत्येक प्राणी को दुख मुक्त करके मुक्त होना उनका लक्ष्य है । यह एक अनुपम सकल्प है ।

जब हम साधना या सेवा शब्द का प्रयोग करते है तब स्वाभाविक रूप से साधना के साथ साधक, साध्य तथा सेवा के साथ सेव्य तथा सेवक शब्द भी उपस्थित हो जाते है । साधक मनुष्य है । और उसका साध्य नि श्रेयस है । यह उसे व्यक्तिश साधना या अन्य (सेव्य) की सेवा द्वारा प्राप्त हो सकती है । वह अन्य एक व्यक्ति भी हो सकता है, समाज भी हो सकता है । व्यक्तियो के समूह का नाम ही समाज है । तात्पर्य यह है कि मनुष्य चाहे व्यक्तिगत साधना करे, अन्य व्यक्ति या समाज की सेवा करे, वह उसके लक्ष्य प्राप्ति मे सहायक है । एक अग्रेज विचारक ने ठीक ही कहा था जिसका सक्षेप मे सार यह है कि **ईश्वर की प्रार्थना मे उठे सौ हाथ की अपेक्षा किसी के प्रति करुणा से दान देने के लिए उठा एक हाथ महत्वपूर्ण है ।**

यह अनिवार्य है कि जब कोई व्यक्ति अन्य व्यक्ति या समाज की सेवा करे तो निष्काम सेवा (यशकीर्ति की कामना रहित) हो उसमे सेव्य के प्रति हीनत्व की भावना साथ ही हृदय मे सेवा का अहम भाव न हो तभी वह नि श्रेयस की प्राप्ति मे सहा-यक हो सकती है । अन्यथा कषाय बन्ध होना स्वा-भाविक है । उससे कर्म बन्ध ही होगा जो उसके लक्ष्य मे भटकन पैदा करेगा । इस अवसर पर दिनाक २७, २८, २९ जून १९८१ को अ भा जैन विद्वत परिषद द्वारा जलगाव (महाराष्ट्र) मे आयोजित गोष्ठी के कार्यकारी दल के निष्कर्ष का कुछ अंश देना अप्रासगिक नही होगा जिसमे कार्यकर्ता की अभिवृत्तियो तथा गुणो का जिक्र किया गया है—

१. वह सरल, विनम्र, सहनशील हो ।
२. उसकी वाणी मे माधुर्य, औदार्य हो ।
३. वह स्वार्थ तथा प्रशसा से ऊपर उठकर काम करे ।
४. वह सदाचारी हो त्याग तथा सेवा की भावना से ओतप्रोत हो ।
५. वह निरभिमानी हो ।
६ वह सदैव मानवीय दृष्टिकोण से कार्यरत हो ।
७. वह मिलनसरिता का सदैव परिचय दे तथा सब को साथ लेकर चले ।
८. नियमितता भी एक आवश्यक गुण है ।

यह सत्य है कि ये अभिवृतिया तथा गुण एक आदर्श है । एक मनुष्य मे सबका दर्शन हो पाना असम्भव नही तो मुश्किल अवश्य है । यदि हमें औसत दर्जे के व्यक्ति भी सामाजिक कार्य मे रस लेने वाले उपलब्ध हो जावे तो यह सन्तोष का विषय होगा ।

दुर्भाग्य से जैन समाज मे सेवावृति की काफी कमी रही । हमारे पूज्य मुनिराजो का उपदेश अधिक तर व्यक्तिश साधना पर रहा, उसी पर अधिक बल दिया गया । इस कारण भी जैन समाज सेवा के क्षेत्र मे पिछडा रहा । इससे जैन धर्म को क्षति उठानी पडी है । श्रीमद् स्थानाग सूत्र मे वर्णित दस धर्म (ग्राम, नगर, राष्ट्र धर्म आदि) के प्रति स्वनाम धन्य स्वर्गीय पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने समाज के सम्मुख महत्व प्रतिपादित किया था । समाज में जो इने-गिने आज राष्ट्रीय भावना के व्यक्ति है वे उस आह्वान का परिणाम है जो स्वर्गीय पूज्यश्री ने उस समय रखा था । जैन समाज भी स्थानीय गाम नगर या राष्ट्र की जनता की इकाई है, उसे इनकी समस्याओ मे अपना योगदान देना होगा । यदि सेवा के क्षेत्र मे हम इसाई धर्म प्रचारको का उदाहरण समक्ष रखे और उनकी सेवा भावना के अनुसार कार्य हो

(ईसाई मिशनरियो के धर्म परिवर्तन के उद्देश्य को लेकर सेवा का कार्य अनुचित है) तो समाज के लिये शुभ होगा । इसका कदापि यह अर्थ नही है कि जैन समाज सेवा या समाज सेवा की दिशा मे शून्य है । कई सस्थाये कार्यरत है किन्तु जैन समाज मे जितना उत्साह चाहिये, उतना नही है । इसके लिये यह आवश्यक है कि हमारे श्रमण वर्ग अपने उपदेशो की धारा को प्रभावशाली तरीको से इस ओर मोड दें तथा श्रद्धालुजन को विश्वास दिलावे कि सेवा के कार्य भी मानव जीवन की लक्ष्य प्राप्ति मे सहायक है ।

सक्षेप मे यह कि समाज सेवा भी एक साधना है केवल यही नही महत्वपूर्ण साधना है जिससे स्वय के जीवन के उत्कर्ष के साथ-साथ समाज, धर्म का भी उत्कर्ष निहित है । —सुजालपुर मडी (म प्र)

प्रारम्भ और समाप्त

मोतीलाल सुराना, इन्दौर

बात कुरूक्षेत्र की है और महाभारत के समय की । वे लडे और खूब लडे । यो समझो कि सारा मैदान लाशो से भरा पडा था । आसमान मे मड-राती चीले लाशो को आ-अकार खा रही थी। शमीक ऋषि अपने शिष्यो सहित जब उधर से आश्रम की ओर लौट रहे थे तब चिडिया के दो नन्हे-नन्हे बच्चो को चहचहाते देखा । शिष्यो के आश्चर्य का ठिकाना न रहा । गुरुजी से पूछा भगवत्, यह युद्ध स्थल लाशो से पटा हुआ है और यहा ये दोनो बच्चे जीवित कैसे ?

शका का समाधान करते हुए महर्षि ने कहा—उडती हुई चिडिया को किसी योद्धा का तीर लगा, जब वह गिर रही थी तब उसके दो अडे गिरे जो जमीन पर आकर फूट गये और ये दोनो बच्चे उन अडो मे से निकले । पर ये बच कैसे गये—शिष्यो ने पूछा तो ऋषि राज बोले—हाथी के गले का घण्टा सयोगवश गिरा और इन दोनो को ढक लिया । फिर इन्होने श्रम कर मिट्टी खोदी, क्योकि घण्टे का वजन बहुत था । तथा फिर ये पूरा जोर लगाकर घण्टे की बाजू से निकल आये । अब तुम इन्हे आश्रम मे ले चलो व इनकी रक्षा करो ।

पर जब अभी तक इन दोनो की रक्षा जिस किसी शक्ति ने की वह अब आगे इसकी रक्षा नही करेगी क्या ? तो महर्षि बोले—अदृश्य शक्ति का काम समाप्त हो गया । अब तो यहा मनुष्य को दया का काम प्रारम्भ होता है । मानवता इसी मे है कि देवी शक्ति से बचे हुए को अनुकम्पा और दया का दान दे ।

राष्ट्र जिनका चतुर्थ जन्म शताब्दी वर्ष मना रहा

मानवतावादी कवि बनारसीदास

□ श्री संजीव भानावत

जीवन के कठोर अनुभवो और सघर्षशील थपेडो ने कवि की आत्म-चेतना को झकझोरा। वह मानवता के जागरूक प्रहरी के रूप मे उठ खडा हुआ। उसने श्रृगार भाव मे पगी अपनी "नवरसपदावली" को गोमती की धार मे फेंक, 'समयसार नाटक' के रूप मे आत्म तत्त्व को सहेजा, समेटा, और अनुभव किया कि मनुष्य-मनुष्य एक है, एक ही प्राण-चेतना सबमे व्याप्त है।

आज से ४०० वर्ष पूर्व स १६४३ मे माघ शुक्ला एकादशी रविवार को जौनपुर मे मध्यमश्रे के परिवार मे एक बालक का जन्म हुआ जिसका नाम विक्रमाजीत रखा गया। बालक के पितामह मूल मुगल उमराव के मोदी थे और पिता खरगसेन ने कुछ समय तक बगाल के सुलतान सुलेमान पठान के र मे चार परगनो की पोतदारी की लेकिन बाद मे शाहजादा दानियाल (अकबर के तीन बेटो मे से एक) सरकार मे इलाहाबाद मे जवाहरात का लेन-देन करते रहे। भगवान् पार्श्वनाथ की पूजा-उपासना के पश् उनके जन्म स्थान बनारस के नाम पर बालक विक्रमाजीत का नाम बनारसीदास रखा गया। यही बा आगे चलकर क्रान्तिकारी समाज सुधारक, अध्यात्म चिन्तक, मानवतावादी कवि और हिन्दी के प्रथम आ चरित "अर्द्ध कथानक" के लेखक के रूप मे प्रसिद्ध हुआ।

बनारसीदास उन विरले व्यक्तियो मे थे जिन्होने अकबर, जहागीर और शाहजहा—इन तीन मु बादशाहो के राज्य का निकटता से अध्ययन कर उसकी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक एव सास्कृ गतिविधियो का अपने आत्मचरित के माध्यम से यथार्थ, प्रामाणिक, खरा, स्पष्ट चित्र अकित किया जो स भारतीय साहित्य मे बेजोड है। उस समय मोटे रूप से मुगल बादशाह ही अपना आत्मचरित लिख रहे पर बनारसीदास ने राजवैभव और पद-प्रभुता से परे हट, कर अपने सामान्य जीवन की सफलता-असफलत सबलता-दुर्बलता का 'अर्द्ध कथानक' मे ऐसा सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है जो उनकी स्वाधीनचेता आ का दस्तावेज होने के साथ-साथ तत्कालीन युग का सवाक् चित्रपट है।

कवि का जीवन सघर्ष का जीवन रहा। ५ वर्ष की अवस्था मे सग्रहणी और ६ की अवस्था चेचक का आक्रमण। १६ वर्ष की अवस्था मे विवाह। जिस दिन नववधू के साथ घर मे प्रवेश किया, उसी दिन इनकी नान का स्वर्गवास और घर मे बहिन का जन्म। इस प्रकार कवि ने एक साथ जन्म, मृत्यु एवं विवाह सम्पन्न होते देखे

नानी मरन सुता जनम, पुत्रवधू आगौन।
तीनौ कारज एक दिन, भए एक ही भौन॥

कवि ने जिस युग मे जन्म लिया वह राजनै-
क अत्याचारो एव सामाजिक उत्पीडन का युग था।
र्मिक अन्ध विश्वासो से जीवन और समाज जकडा
गा था। कवि स्वय तन्त्र, मन्त्र और थोथी पूजा-
ासना का शिकार हुआ। सस्ते प्रेम-पचडे मे भी
लझा। व्यापार क्षेत्र मे ठगा गया, छला गया।
नेक व्यसनो से आक्रान्त हुआ। तीन-तीन विवाह
िये। नौ सन्ताने हुई पर एक भी जीवित न
ची। जीवन के कठोर अनुभवो और सघर्षशील
पेडो ने कवि की आत्म-चेतना को झकझोरा। वह
ानवता के जागरूक प्रहरी के रूप मे उठ खडा
ुआ। उसने शृगार भाव मे पगी अपनी 'नवरस-
दावली" को गोमती की धार मे फेंक, 'समयसार
ाटक' के रूप मे आत्म तत्व को सहेजा, समेटा और
नुभव किया कि मनुष्य-मनुष्य एक है, एक ही प्राणी-
ेतना सबमे व्याप्त है—

एक रूप हिन्दू तुरक, दूजी दशा न कोय।
मन की दुविधा मान कर, भए एक सौ दोई॥
दोउ भूले भरम मे, करै बचन की टेक।
"राम-राम" हिन्दू कहै, तुर्क "सलामालेक"॥
इनके पुस्तक बांचिए, वेहू पढ़े "कितेब"।
एक वस्तु के नाम दो, जैसे "सोभा" जेब।

कवि की दृष्टि में प्राणी मात्र की एकात्मता
समा गई। वह भेद में अभेद और द्वैत में अद्वैत का
दर्शन करने लगा। दुविधा का अन्त हुआ। घट-घट
में रमा "राम" सर्वत्र दिखाई दिया—

तिनको दुविधा जे लखे, रंग-बिरंगी चाम।
मेरे नैननि देखिए, घट-घट अन्तर राम॥

आत्मा ही राम है। विवेक रूपी लक्ष्मण और
सुमति रूपी सीता उसके साथी है। शुद्ध भाव रूपी
वानरो की सहायता से वह रणक्षेत्र मे उतरता है।
ध्यान रूप धनुष की टकार में विषय-वासनाए भागने
लगती है और धारणा की अग्नि से मिथ्यात्व की
लका भस्म हो जाती है। प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे
यह "सहज संग्राम" निरन्तर होता रहता है।

बिराजै रामायण घट मांही।
मरमी होय मरम सो जानै।
मूरख मानै नाही॥

कवि मे सामाजिक चेतना का स्वर ओजपूर्ण
अभिव्यक्ति लिये हुए है। जाति, धर्म, सम्प्रदाय व
मतवाद का उसकी दृष्टि मे कोई महत्व नही। जन्म
से कोई बडा नहीं होता, बडप्पन सत्कर्मो पर निर्भर
है। ब्राह्मण वह है जिसकी दृष्टि ब्रह्ममुखी है—

जो निहचै मारग गहै गहै ब्रह्म गुन लीन।
ब्रह्मदृष्टि सुख अनुभवै, सो ब्राह्मण परवीन॥

और वैष्णव वह नही है जो केवल तिलक
लगाता है, माला जपता है, बल्कि वह है जो प्राणी-
मात्र मे हरि के दर्शन करता है—

जो हर घट में हरि लखै, हरि बाना हरि बोल।
हर छिन हरि सुमरन करै, विमल वैसनव सोइ॥

और मुसलमान कौन ? जो अपने मन पर
नियन्त्रण करता है, अल्ला की मर्जी के मुताबिक
चलता है—

जो मन मूसै आपनो, साहिब के रूख होई।
ग्यान मुसल्ला गहि टिकै, मुसलमान है सोइ॥

कवि ने स्थान-स्थान पर बाह्य आडम्बर और
ज्ञान रहित क्रियाकाड का मखौल उडाया है। परम
तत्व का मर्म जाने बिना किताबी ज्ञान चाहे कितना
ही हो जाय, बाह्य तप चाहे क्यो न किया जाय, वह
व्यर्थ है—

जो महन्त है ज्ञान बिन, फिरै फुलाए गाल।
आप मत्त औरनि करै, सो कलिमांहि कलाल॥

कवि की दृष्टि में वेष का महत्व नही, महत्व
है निर्मल, विशुद्ध आत्म-भाव का—

भेषधार कहै भैया भेष ही मे भगवान्,
भेष मे न भगवान्, भगवान् भाव मे।

अपने अज्ञानी मन को "भोंदू" नाम से
सम्बोधित कर कवि ने कहा है—

मोहूं भाई, देति हिय को आगें ।

जो हृदय की आग से दगना सीख लेता है, उसके लिये कोई पराया नही रहता, दुविधा का अन्तर हट जाता है—

वालम तुहू तन, चितवन गागरि फूटि ।
अंचरा गो फहराय सरम गै छूटि ॥

द्वैत भाव के विनाश से उसमें और प्रिय मे कोई अन्तर नही रहता । दोनो की जाति एक है प्रिय उसके घट मे है और वह प्रिय मे । प्रिय सुख-सागर है तो वह सुख-सीमा, प्रिय शिव मन्दिर है तो वह उसकी नीव, प्रिय ब्रह्मा है तो वह सरस्वती, प्रिय माधव है तो वह कमला, प्रिय शकर है तो वह पार्वती, प्रिय जिनदेव है तो वह उसकी वाणी, प्रिय योगी है तो वह उसकी मुद्रा—

पिय सुखसागर, मै सुखसीव,
पिय शिवमन्दिर, मै शिवनीव ।
पिय शंकर मै देवि भवानी,
पिय जिनवर मै केवल वानी ।

इस प्रकार आत्मानुभूति के क्षणो मे कवि ने आत्मा और परमात्मा के सम्बन्धो की माधुर्यपूर्ण अभिव्यक्ति की है ।

यद्यपि कवि का जन्म श्रीमाल जाति के विहोलिया गोत्र मे एक जैन परिवार मे हुआ पर वे समग्र मानवता के लिये जीवन पर्यंत सघर्षरत रहे । ११० वर्ष को पूर्ण उत्कृष्ट आयु मानकर ५५ वर्ष की अवस्था मे उन्होने जो "अर्द्धकथानक" लिखा वह ६७५ दोहा-चौपाइयो मे निबद्ध पद्यबद्ध आत्मकथा है । इसमे अपनी मूर्ख-ताओ और असफलताओ पर वे खूब हसे है । जिस साहस और निष्ठा के साथ कवि ने यह वृतान्त लिखा है वह तत्कालीन भारतीय जनमानस का प्रामाणिक इतिहास बन गया है ।

कवि का दूसरा महत्वपूर्ण ग्रन्थ है 'समयसार नाटक" जो आचार्य कुन्दकुन्द विरचित प्राकृत ग्रन्थ 'समयपाहुड' एव उस पर सस्कृत मे अमृत चन्द्राचार्य द्वारा लिखी गई 'आत्मख्याति, नामक टीका को आधार बनाकर लिखा गया है । उसमे दोहा, चौपाई, सोरठा छप्पय, सवैया, कवित्त आदि ७२७ छद हैं । इसके १३ विभाग है जिन्हे 'द्वार' कहा गया है । जीव अजीव के सम्बन्धो एव आत्मतत्व-विचारणा जैसे गूढ विषय को सरल-सरस बनाकर प्रस्तुत करने में कवि को विशेष सफलता मिली है । 'बनारसी विलास' कवि का महत्वपूर्ण सकलन-ग्रन्थ है जिसमें विविध काव्य रूपो और काव्य शैलियो/छन्दो का प्रयोग है। कवि ने एक ओर तत्कालीन युग मे प्रचलित अन्ध विश्वासो पर कुठाराघात किया है तो दूसरी ओर आत्मा-परमात्मा के रहस्यानुभवो को वाणी दी है।

६ फरवरी १९८७ माघ शुक्ला एकादशी को पूरे देश में कवि का ४०० वा जन्म-दिवस, विविध ज्ञान-गोष्ठियो के रूप मे मनाया गया । आवश्यकता इस बात की है कि कवि जिन जीवन-मूल्यो के लिये सघर्षरत रहा, हम उन्हे अपने जीवन में उतारे। वे मूल्य है—

सर्वधर्मसमभाव, मानव-एकता, [illegible] सत्यनिष्ठा, स्वाभिमान, सतत जागरुकता और स्पष्टवादिता ।

—सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलकनगर, जयपुर

प्रतिक्रमण: एक अध्ययन

△ महोपाध्याय चन्द्रप्रभसागर

△

प्रतिक्रमण वास्तव मे आत्मशोधन की आध्यात्मिक एव मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। आध्यात्मिक दृष्टि से प्रतिक्रमण के द्वारा आत्मा की शुद्धि एव आत्मा का अवलोकन होता है और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रतिक्रमण के द्वारा विकीर्ण चित्त एव ऊर्जा का एकीकरण होता है। इस प्रकार प्रतिक्रमण का सिद्धात अध्यात्म-दर्शन एव मनोविज्ञान-जगत को महावीर स्वामी की महत्वपूर्ण देन है।

''प्रतिक्रमण' जैन आचार–दर्शन का एक विशिष्ट शब्द है। जैन-आगमो एव आगमेतर जैन साहित्य मे प्रतिक्रमण के स्वरूप, माहात्म्य एव विधि-विधान के सम्वन्ध मे विस्तारपूर्वक विवेचन हुआ है। जैन धर्म में प्रतिक्रमण की परम्परा साधारणतया अनादि/प्राचीनतम मानी जाती है, किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि-कोण से इतना तो निश्चित है कि ऋषभदेव से पार्श्वनाथ की मध्यवर्ती परम्परा मे प्रतिक्रमण जिनोपदिष्ट साधना-मार्ग का अनिवार्य अ ग नही वन पाया था। पार्श्वनाथ अथवा उनसे पूर्ववर्ती तीर्थङ्करो की परम्परा एव महावीर की परम्परा के भेद का एक मुख्य कारण प्रतिक्रमण की मान्यता भी है। महावीर स्वामी की धर्म-देशना को ग्रन्थो में सप्रतिक्रमण धर्म कहा गया है। 'आवश्यक–निर्यु क्तिक' के आधार पर प्रथम एव अन्तिम तीर्थंकर के शासन मे प्रतिक्रमण-युक्त धर्म ही प्रतिपादित किया गया है—

सपडिक्कमणो धम्मो पुरिमस्य य पच्छिमस्य य जिणस्स।

'सूत्रकृताग सूत्र' भगवती सूत्र इत्यादि आगमो के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा के वहुत से श्रमणो ने पार्श्व परम्परा को छोडकर महावीर के पचयाम/पच महाव्रत और सप्रतिक्रमण-धर्म को स्वीकृत किया। 'कल्पसूत्र' आदि ग्रन्थो के आधार पर परिज्ञात होता है कि महावीर के पूर्ववर्ती तीर्थंकरो की परम्परा में श्रमण-साधक लोग प्रतिकमण तभी करते थे जव उनके द्वारा दुष्कृत्य, अनाचार या नियम-भग हो जाता, परन्तु भगवान महावीर ने अपने श्रमण-वर्ग के लिए प्रति–क्रमण प्रतिदिन करणोय वताया फिर चाहे दुष्कृत्य, अनाचार या नियम भग हुआ हो या न हुआ हो। महावीर के अनुसार दुष्कृत मिथ्याकरण एव निरन्तर जागृति हेतु प्रतिक्रमण आवश्यक क्रिया है। इसीलिए दैनिक प्रतिक्रमण के अतिरिक्त समय-समय पर विशिष्ट प्रतिक्रमण करने का निर्देश दिया गया। प्रतिक्रमण के छ भेद इसी तथ्य की सूचना देते है। यथा—दैवसिक प्रतिक्रमण, रात्रिक प्रतिक्रमण, पाक्षिक प्रतिक्रमण, चातु–र्मासिक प्रतिक्रमण, वार्षिक/सावत्सरिक प्रतिक्रमण और जीवनान्तिक प्रतिक्रमण। जैन शास्त्रो में तो यहा तक कहा गया है कि यदि श्रमण प्रतिक्रमण नही करता है तो वह अपने श्रमणत्व से च्युत हो जाता है और श्रावक यदि प्रतिक्रमण नही करता है तो वह अपने को श्रावक कहने-कहलाने का अधिकार नही रखता।

इस प्रकार वर्तमान जैन साधना का प्रथम सोपान प्रतिक्रमण है। जैन साहित्य में 'प्रतिक्रमण' शब्द का प्रयोग अत्यधिक होने के कारण जैन विद्वानों ने इस शब्द की विभिन्न दृष्टिकोणों से व्याख्या की है। फलस्वरूप प्रतिक्रमण का अर्थ-विस्तार हुआ। 'प्रति-क्रमण' शब्द मे मूलतः 'प्रति' उपसर्ग है और 'क्रम' धातु। इनमें 'प्रति' का अर्थ है उल्टा एवं 'क्रम' का अर्थ है पद-निक्षेप, लौटना अर्थात् वापस आना—यही प्रतिक्रमण का शब्दार्थ है। यह वापसी कहा से और कैसे हो—इसी के समाधान एवं उत्तर मे 'प्रतिक्रमण' का अर्थ-विस्तार हुआ। 'योगशास्त्र-स्वोपज्ञ-वृत्ति' में प्राप्त उल्लेखानुसार प्रतिक्रमण के सम्बन्ध मे आचार्य हेमचन्द्र का अभिमत है कि शुभ योग से अशुभ योग की ओर गये हुए अपने आपको वापस शुभ योग मे लौटा लाना प्रतिक्रमण है।

आचार्य कुन्दकुन्द ने 'नियमसार' मे बताया है कि वचन-रचना मात्र को त्यागकर जो साधु रागादि भावो को दूर कर आत्मा का ध्यान करता है, उसी के प्रतिक्रमण होता है। आचार्य के अनुसार ध्यान मे लीन साधु सब दोषो का परित्याग करता है। इस-लिए ध्यान ही समस्त अतिचारो/दोषो का प्रतिक्रमण है—

मोत्तूण वयणरयणं, रागादीभाववारणं किच्चा।
अप्पाणं जो झायदि, तस्स दु होदि त्ति पडिक्कमणं।८३।
झाणणिलीणो साहु, परिचागं कुणइ सव्वदोसाणं।
तम्हा दु झाणमेव हि, सव्व दिचारस्स पडिक्कमणं।९३।

इसी प्रकार 'समयसार' मे कहा गया है कि पूर्वकृत कर्मों के विपाक रूप शुभ-अशुभ भावो से आत्मा को अलग करना प्रतिक्रमण है

कम्मं जं पुव्वकयं सुहासुहं मणेय वित्थर विसेयं।
तत्तो णियत्तदे अप्पयं तु जो सो पडिक्कमणं ।।४०३।।

"मूलाचार" के अनुसार निन्दा तथा गर्हा से युक्त साधक का मन, वचन, शरीर के द्वारा द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के व्रताचरण-विषयक दोषो की आलोचना पूर्वक शुद्धि करना प्रतिक्रमण है—

दव्वे खेत्ते काले भावे य कयावराहसोहणयं।
णिंदणगरहणजुत्तो, मणवचकायेण पडिक्कमणं।१.२८।

आचार्य हरिभद्रसूरि ने "आवश्यकवृत्ति" म प्रतिक्रमण का विस्तृत अर्थ प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार प्रतिक्रमण के तीन अर्थ होते है—

(१) प्रमादवश स्व-स्थान से पर-स्थान में अर्थात् स्वधर्म से परधर्म मे गये हुए साधक का पुनः स्वस्थान/स्वधर्म मे लौट आना ही प्रतिक्रमण है।

(२) क्षायोपशमिक भाव का औदयिक भाव मे परिणत होने बाद जब साधक पुन औदयिक भाव से क्षायोपशमिक भाव मे लौट आता है, तो यह प्रतिकूल गमन के कारण प्रतिक्रमण कहलाता है।

(३) अशुभ आचरण से निवृत्त होकर मोक्ष फलदायक शुभ आचरण में निःशल्य भाव से प्रवृ होना—यह प्रतिक्रमण है।

"सर्वार्थसिद्धि" एवं तत्वार्थ "राजवार्तिक" कहा गया है कि कर्म के वश प्रमाद के उदय से मेरे द्वारा दुष्कृत्य हुआ है, वह मिथ्या हो—इस प्रका के प्रतिकार को प्रगट करना प्रतिक्रमण है—

'मिथ्या दुष्कृताभिधानादभिव्यक्तप्रतिक्रिया प्रतिक्रमणम्

"धवलाटीकाकार' के अनुसार पाच प्रकार महाव्रतो मे लगे हुए कलक को प्रक्षालित करने नाम प्रतिक्रमण है—

'पचमहव्वएसु, कलक-पक्खालण पडिक्कमण णाम

"नियमसार-वृत्ति" मे उल्लेखित है कि अर्त के दोषो के लिए जो प्रायश्चित किया जाता है, व प्रतिक्रमण है।

प्रतिक्रमण के सम्बन्ध मे पूर्ववर्ती विद्वानो अतिरिक्त आधुनिक विद्वानो के मन्तव्य भी उल्लेखनी है। एलाचार्य मुनि विद्यानन्दजी ने प्रतिक्रमण व आत्म-शुद्धि एव आत्मान्वेषण की प्रक्रिया बताया है। आचार्य नानालालजी म सा के अनुसार प्रतिक्रमण विभाव से स्वभाव मे वापसी है। युवाचार्य महाप्रज्ञ

ने प्रतिक्रमण को ग्रन्थि-शोधन की आधार–भूमिका बताया है। साध्वी कनकप्रभाश्री प्रतिक्रमण का अर्थ करती हैं स्वयं का स्वय में होना। डॉ सागरमल जैन ने प्रतिक्रमण को पाप स्वीकृति और आत्म-आलोचना की परम्परा बताया है। मुनि नगराजजी प्रतिक्रमण को आत्मावलोकन तथा आत्मपरिमार्जन का साधन बताते है। डॉ नेमीचन्द जैन के मतानुसार जाले से बाहर होना प्रतिक्रमण है डॉ प्रेमसुमन जैन ने लिखा है कि उस तट से इस तट तक आना प्रतिकमण है।

उक्त अनेक विद्वानो के मन्तव्यो का आशय यही है कि अतिक्रमण से पुन लौटना ही प्रतिक्रमण है। प्रतिकमण का विपर्याय है आक्रमण। आक्रमण का अर्थ होता है–दूसरे पर हमला करना या अपना विस्तार करना। अतिक्रमण सीमोल्लघन का बोधक है। प्रतिक्रमण इसका उलटा क्रम है। हमलो की वापसी, प्रत्यावर्तन, खण्ड-खण्ड में विभक्त चित्त को समेटना एव अपने घर लौट आने की यात्रा—यही प्रतिक्रमण है। शीघ्रबोधगम्यता के लिए प्रतिक्रमण को "टर्न अबाउट" कहा जा सकता है। जिस प्रकार व्यक्ति शत्रु-पक्ष पर आक्रमण करके वापस आ जाता है, सूर्य सायकाल मे अपनी रश्मियो को समेट लेता है, पक्षी सान्ध्य–वेला मे अपने नीड मे पहुच जाता है, उसी प्रकार स्वय मे आ जाना प्रतिक्रमण है अर्थात् चित्त का जिन–जिन से सम्बन्ध योजित है, उन–उन से चित्त की वापसी प्रतिक्रमण है। अभिप्राय यही है कि प्रतिक्रमण विकीर्ण चित्त/चैतन्य/आत्म-ऊर्जा–का सगृहीत रूप है अथवा सगृहीत करने की पद्धति है।

इस प्रकार हम देखते है कि प्रतिक्रमण के दो अर्थ हाते हे—(१) तात्विक अर्थ और (२) व्यावहारिक अर्थ, तात्विक अर्थ की दृष्टि से आत्म–केन्द्र की ओर बढने का प्रयास करना प्रतिक्रमण है तथा व्यावहारिक अर्थ की दृष्टि से प्रतिक्रमण सूत्रो/पाठो द्वारा अथवा निन्दन-गर्हण आदि के द्वारा कृत दोषो का शोधन प्रतिक्रमण है।

प्रतिक्रमण चौथा आवश्यक कर्म है। आवश्यक कर्म छ, है। 'अनुयोगद्वार' सूत्र मे ये षडावश्यक निर्दिष्ट है—(१) सामायिक, (२) चतुर्विंशतिजिनस्तव, (३) वन्दना, (४) प्रतिक्रमण, (५) कायोत्सर्ग, (६) प्रत्याख्यान—

'सामाइयं चउवीसत्थओ वंदणय।
पडिक्कमण काउसग्गो पच्चक्खाणं ।।७४।।'

यद्यपि इन छ, आवश्यक कृत्यो मे प्रतिक्रमण का स्थान चतुर्थ है, किन्तु वर्तमान मे इन सारे आवश्यको को एक ही 'प्रतिक्रमण' शब्द से उपमित एव व्यवहृत किया जाता है। वस्तुत सामायिक के द्वारा व्यक्ति मे समता की प्राण-प्रतिष्ठा होती है। तत्पश्चात् दूसरे आवश्यक के द्वारा वह नैतिक तथा साधनात्मक जीवन के आदर्श पुरुप के रूप मे जिनेश्वर तीर्थकर की स्तुति करता है। तीसरे आवश्यक कर्म मे वह साधनामार्ग के पथ–प्रदर्शक गुरु को सविनय वन्दन–ज्ञापन करता है। प्रतिक्रमण नामक चौथे आवश्यक के द्वारा कृतपापो की आलोचना, आत्म–अन्वेपण और ग्रन्थि-शोधन के लिए प्रयत्न करता है। पाचवे आवश्यक कर्म मे शारीरिक चचलता एव देहा-सक्ति का त्याग किया जाता है और छठे आवश्यक प्रत्याख्यान के द्वारा आगामी दोषो के त्याग का सकल्प होता है। इस प्रकार यह साधना का क्रमिक विकसित रूप हुआ। हा, यहा पर यह सकेत अनि–वार्यत देय है कि प्रतिक्रमण का अर्थ विस्तार हो जाने के कारण आजकल प्रतिक्रमण मे उक्त सारे गुणो की उपस्थिति अपरिहार्य बताई जाती है।

प्रतिक्रमण वास्तव में आत्मशोधन की आध्या–त्मिक एव मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है। आध्यात्मिक दृष्टि से प्रतिक्रमण के द्वारा आत्मा की शुद्धि एव आत्मा का अवलोकन होता है और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्रतिक्रमण के द्वारा विकीर्ण चित्त एव ऊर्जा का

एकीकरण होता है। इस प्रकार प्रतिक्रमण का सिद्धांत अध्यात्म–दर्शन एव मनोविज्ञान-जगत को महावीर स्वामी की महत्त्वपूर्ण देन है।

प्रतिक्रमण किसका किया जाता है—इस सबंध मे जैनाचार्यों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से निर्देश दिये है। इसी का निर्वचन करते हुए आचार्य भद्रबाहु ने 'आवश्यक-नियुक्ति' मे लिखा है कि मिथ्यात्व, असयम, कषाय तथा अप्रशस्त शारीरिक, वाचिक एव मानसिक व्यापारो का प्रतिक्रमण करना चाहिए। प्रकारान्तर से भद्रबाहु ने आवश्यकसूत्रान्तर्गत वदित्तुसूत्र में निम्नांकित तथ्यो का प्रतिक्रमण करने का निर्देश दिया है—

(१) श्रावक तथा श्रमण के लिए निषेध किये गये कार्यों का आचरण कर लेने पर, (२) जिनोपदिष्ट कार्यों का आचरण न करने पर, (३) सशय एव अश्रद्धा के उपस्थित हो जाने पर तथा (४) असम्यक् सिद्धातो का प्ररूपण करने पर प्रतिक्रमण करना चाहिए। 'स्थानाग-सूत्र' मे जिन छः तथ्यो का प्रतिक्रमण करना चाहिए उनका निर्देश इस प्रकार किया गया है—१. उच्चार प्रतिक्रमण अर्थात् मल आदि के निक्षेपण या विसर्जन करने के बाद तत्सबधी तथा ईर्यापथिक प्रतिक्रमण करना, २ प्रस्रवण प्रतिक्रमण अर्थात् मूत्र करने के पश्चात् तत्सम्बन्धी तथा ईर्यापथिक प्रतिक्रमण करना, ३ इत्वर प्रतिक्रमण अर्थात् भूल या अपराध होते ही उसी समय उसका प्रतिक्रमण करना, ४ यावत्कायिक प्रतिक्रमण अर्थात् समस्त जीवन के लिए पापो से निवृत्त होने का सकल्प करना, ५ यत्किंचिन्मिथ्या प्रतिक्रमण अर्थात् सावधानी पूर्वक जीवन-यापन करते हुए असावधानी से किसी भी प्रकार का असयम पूर्ण आचरण हो जाने पर उस त्रुटि को स्वीकार करना और उसके प्रति प्रायश्चित करना, और ६ स्वप्नान्तिक प्रतिक्रमण अर्थात् विकृति व वासना के कारण कुस्वप्न–दर्शन होने पर उसके प्रति पश्चात्ताप करना।

स्थानागसूत्रकार ने जिन छः बातो के प्रतिक्रमण करने का निर्देश दिया है, वे श्रमण–वर्ग के प्रतिक्रमण से सम्बन्धित है। उसके अतिरिक्त जैनाचार्यों ने पचाचार से भी प्रतिक्रमण का सम्बन्ध घोषित किया है। दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, तपाचार, और वीर्याचार—इन पाच आचारो का सम्यक्तया पालन न करने से दर्शनातिचार, ज्ञानातिचार, चारित्रातिचार, तपातिचार और वीर्यातिचार–इन पाच प्रकार के अतिचार/दोष होते हैं। इन अतिचारो के शोधन के लिए प्रतिक्रमण किया जाता है।

आशय यही है कि श्रमण–वर्ग को पचमहाव्रतों से सबधित असयम, अयतनाचार आदि दोषो का प्रतिक्रमण करना चाहिए। श्रावक-वर्ग को अहिंसाणुव्रत, सत्याणुव्रत, अचौर्याणुव्रत, ब्रह्मचर्याणुव्रत, (स्वदार सन्तोषव्रत) परिग्रह-परिमाणुव्रत—इन पाच अणुव्रतो में, दिशापरिमाणव्रत, उपभोगपरिमाणव्रत, अनर्थदण्ड परित्याग व्रत—इन तीन गुण अणुव्रतो में सामायिकव्रत, देशावकाशिकव्रत, पौषधोपवासव्रत, अतिथिसंविभागव्रत—इन चार शिक्षाव्रतो में लगने वाले अतिचारो का प्रतिक्रमण करना चाहिए। प्रतिक्रमण किसका करना चाहिए, इस सम्बन्ध मे श्रमणसूत्र, वदित्तुसूत्र, श्रमण प्रतिक्रमण सूत्र, क्षुल्लक प्रतिक्रमण सूत्र, सावग पडिक्कमण सुत्त आदि अवलोकनीय है।

जैन धर्म के प्राचीन ग्रन्थो मे जो प्रतिक्रमण-विषयक ग्रन्थ उपलब्ध होते है, उनमे सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'आवश्यक सूत्र' प्राप्त होता है। चूंकि प्राप्त साक्ष्यो से यह बात पूर्णरूपेण निश्चित है कि प्रतिक्रमण ईसा से पूर्व ही जैन साधना-पद्धति का एक अनिवार्य अग बन चुका था। अत 'आवश्यक सूत्र' पर अनेक विद्वानो ने विस्तारपूर्वक व्याख्या ग्रन्थ लिखे है। उन व्याख्या-ग्रन्थो मे आचार्य भद्रबाहु विवेचित 'आवश्यक नियुक्ति' और जिन भद्रगणि क्षमाश्रमण विवेचित 'विशेषावश्यक भाष्य' उल्लेखनीय है। दिगम्बर परम्परा मे प्रतिक्रमण सम्बन्धी प्राचीन साहित्य का अभाव-सा है। वस्तुत आचार्य कुन्दकुन्द के द्वारा व्यावहारिक प्रतिक्रमण को विषकुम्भ कह दिये जाने के कारण दिगम्बर–परम्परा में निश्चय प्रतिक्रमण पर

अधिक वल दिया जाने लगा। यही कारण है कि इस परम्परा का प्रतिक्रमण सम्बन्धी साहित्य समृद्ध नही हो पाया। 'समयसार'.'नियमसार' आदि दिगम्बर ग्रन्थो मे जो प्रतिक्रमण के सम्बन्ध मे वर्णन उपलब्ध होता है वह लगभग निश्चय प्रतिक्रमण से ही प्रभावित है। वर्तमान मे श्वेताम्वर एव दिगम्बर परम्परा मे सामान्यत. प्रतिक्रमण करने की जो प्रक्रिया है, वह शब्दसाम्यपूर्ण तो नही है, किन्तु अर्थ/ध्येय-साम्य अवश्य है। सचमुच, प्रतिक्रमण ने दोनो परम्पराओ मे व्यापक रूप धारण किया है। आज आवश्यकता है कि हम प्रतिक्रमण का सम्बन्ध श्वेताम्वरत्व/दिगम्बरत्व की सकीर्णता से हटकर आत्मा एव जीवन के साथ जोडें। प्रतिक्रमण की परम्परागत प्रणाली को तो हमें मानना ही है, परन्तु हम जिस प्राकृत-भापा में प्रतिक्रमण करते है उसके लिए यह अपेक्षा है कि हम या तो प्राकृत-भापा का प्राथमिक शिक्षण प्राप्त करे अथवा हिन्दी, गुजराती आदि भापाओ मे प्रतिक्रमण के अनुवाद के द्वारा उसे समझे ताकि प्रतिक्रमण हमारे लिए लाभदायक सिद्ध हो सके। जो व्यक्ति प्रतिक्रमण के मूल पाठो का अर्थ नही जानता और मात्र शब्दोच्चारण करता है, उसकी क्रिया निर्जीव एव निष्प्रभ होगी। प्रतिक्रमण सूत्रो का एक–एक शब्द मन्त्र रूप है। अर्थबोध एव श्रद्धासहित प्रतिक्रमण–सूत्रो का प्रयोग करने पर ये महाफलदायक सिद्ध होगे।

—श्री जितयशाश्री फाउण्डेशन,
९ सी, एस्प्लानेड रो ईस्ट, कलकत्ता-७०००६९

मनोबल की विजय

△ मोतीलाल सुराना इन्दौर

नोवुनागा नाम का जापान के सुप्रसिद्ध सेनापति मे यह खूबी थी कि वह कम साधनो से एवं थोडे से सैनिको से भी अपने से ज्यादा साधन सैनिको वाले शत्रुओं से डरता और अन्त मे विजयश्री हासिल करता था। उसके पास अपने सैनिको का मनोबल बढाने की अद्वितीय कला थी।

एक बार ऐसा हुआ कि लडते-२ सैनिको की सख्या कम हो गई तो शत्रु के खूखार सैनिको के आगे नोवुनागा ने अपने सैनिकों का मनोबल वढाने के लिये एक नई तरकीव आजमाई। सध्या को लडाई बद होने पर अपने सैनिको को वह एक मदिर मे ले गया और मूर्ति के सामने अपनी जेव से तीन सिक्के निकालकर सैनिको से वोला—मै तीन सिक्के तीन वार उछालूगा। यदि हमारी जीत होने की आशा होगी तो सिक्के सीधे चित्त पडेगे। सिक्के उछालने पर एक, दो, तीन तीनो वार तीनो सिक्के चित्त पडे। सभी सैनिक जोर-जोर से चिल्लाने लगे—हमारी जीत निश्चित है, जीत, जीत, जीत।

दूसरे दिन सुवह लडाई प्रारम्भ हुई। शत्रु के चार गुना सैनिक होते हुए भी नोवुनागा के सैनिको को विजय हुई। विजय समारोह मे नोवुनागा ने सैनिको के मनोवल की सराहना की तथा रहस्य पर से परदा उठाते हुए वताया कि तीनो सिक्के पर आगे व पीछे एक ही चित्र वाला निशान था।

मनोवल और आत्म विश्वास की सदैव विजय होती है।

जैन श्रावकाचार व उनक
सामाजिक

□ डॉ. सुभाष कोठारी

△

> सामाजिक व्यवस्था व धार्मिक सिद्धान्त परस्पर साथ-साथ चलें, इस दृष्टिकोण को ध्यान मे रखते हुए ही शायद तीर्थंकरो ने इस प्रकार मनोवैज्ञानिक वृतों व नियमो का प्रावधान किया होगा ।

भारतीय सभ्यता व सस्कृति का विश्व के इतिहास मे महत्त्वपूर्ण स्थान है । यहा के ध व आध्यात्मिक वातावरण ने हमेशा दुनिया को प्रभावित किया है । साधना के क्षेत्र को हमारे ऋषि महर्षि दो भागो मे विभक्त किया है । साधु-साध्वी और गृहि, उपासक या श्रावक । गृहि उपासक व श्रावक स की उस श्रेणी मे आते है जिसमे व्यक्ति नियमित रूप से सासारिक कार्यों को करते हुए भी अपने आ उत्थान की ओर अग्रसर होने के लिए जीवन को सयमित करता है । जैन धर्म को आधार मानने वा जैन व्रतो के रूप मे इनका उल्लेख किया है।

जैन व्रत—मनुष्य को केवल आध्यात्मिक व धार्मिक सिद्धातो का ज्ञान कराने वाले ही नह अपितु सामाजिक सौहार्द व प्रम के पर्यायवाची भी है । फर्क सिर्फ दृष्टि का है । अगर ऊपर-ऊपर से जाय तो ये व्रत, नियम, प्रत्याख्यान, त्याग, धर्म व अध्यात्म का रूप दिखाई पडते है और अन्तरग से अ किया जाय तो ये ही व्रत समाज सुधार कुरीतियो का निवारण, सहअस्तित्व व भाईचारे के ही प्रतीक है।

जैन व्रतो के निर्माता तीर्थंकर बाह्य व आन्तरिक भावो को जानते-देखते व समझते थे । प युगानुकूल परिस्थितियो के अनुसार जन-मानस की भावना व देशकाल की स्थिति को ध्यान मे रखकर दि गया उपदेश ही सार्थक होता है इस मन स्थिति से उस समय अन्याय व अत्याचार का साम्राज्य था । पशु व मनुष्यो की आहुतिया दी जाती थी, स्त्रियो से धार्मिक अध्ययन-अध्यापन व अनुष्ठानो के अधिकार छ लिये गये थे, उनको सडको पर बेचा जाता था, शुद्रो को तो समाज मे खडे रहने तक का स्थान नही था।

महावीर ने इन सबके विरोध मे मार्मिक उपदेश दिये, स्त्रियो को दीक्षा देकर वैदिक सिद्धा को आश्चर्यचकित कर दिया, शुद्रो को धार्मिक अधिकार देने के साथ अपने शिष्य बनाए । इस तरह उन्ह एक नैतिकतावादी, समाजवादी समाज रचना का सिंहनाद किया ।

महावीर यह जानते थे कि हर व्यक्ति साधु न बन सकता है न बनेगा । चतुर्विध सघ की स्थापना मे साधु-साध्वी और श्रावक-श्राविका के विभाजन के साथ ही जैन व्रत व आचारो का भी विभाज किया । श्रावक-श्राविका सद्‌गृहस्थ बनकर धार्मिकता के साथ-साथ सामाजिक व राष्ट्रीय कर्त्तव्यो की भी अपना ध्यान केन्द्रित करें, यही प्रतिपादन अपने उपदेशो मे किया । यही कारण है कि स्थानाग सूत्र

धर्मों के विवेचन मे ग्राम धर्म, नगर धर्म, राष्ट्र
, पाखण्ड धर्म, कुल धर्म, गण धर्म, सघ धर्म, श्रुत धर्म,
रित्र धर्म व अस्तिकाय धर्म का वर्णन किया ।[1]

धार्मिक व सामाजिक जागरण के लिए श्रावका-
र को जब हम देखते है तो सात व्यसनो का त्याग
बारह व्रत महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं। यही हमे
वन को नियमित ढग से जीने की प्रेरणा देने के
थ समाज व राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्यो का बोध
राते है। जैनागमो व परवर्ती साहित्य मे इस
पयक महत्त्वपूर्ण तथ्य पाये जाते है।

– स्थानांग — **२– समवायांग**
– उपासक दशांग — **४– विपाक**
– एवं आवश्यक सूत्र आदि आगमों साथ-साथ — **६– तत्वार्थ सूत्र**
७– श्रावक प्रज्ञप्ति
– योग शास्त्र — **९– रत्नकरण्डक—श्रावकाचार**
१०–वसुनन्दि श्रावकाचार
११–सागार धर्मामृत आदि ऐसे ग्रन्थ है जिनमे जैन व्रतो का विस्तार वर्णित है।

जैन सूत्रो के मूल स्त्रोत आगमादि ग्रन्थ ही है। नागरिक जीवन निर्माण के आधार वे ही ग्रन्थ होते हैं जिनमे कर्त्तव्यो का धार्मिक परिवेश मे चिंतन किया जाता हो।

सप्त व्यसन और उनकी अनुपयोगिता :—

सप्त व्यसनो का त्याग जैनाचार का प्रारम्भिक बिन्दु माना जाता है। श्रावकाचार के सभी ग्रन्थो मे जुआ, मास, शराब, चोरी, परस्त्रीगमन, वेश्यागमन व शिकार के स्पष्ट त्याग का विधान है। क्योकि ये ऐसी बुराईया है जिनके सेवन करने से व्यक्ति का विवेक कुठित हो जाता है, बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और विवेक कुठित होते ही अन्य सभी बुराईया मानव जीवन मे प्रविष्ट हो जाती है। इन बुराइयो ने सदियो से इस देश की सस्कृति को दूषित किया है। हाल ही मे देश की जासूसी करने वाले जिन अनेक लोगो के काण्ड प्रकाश मे आये वे सब शराब आदि के व्यसनी थे। पाश्चात्य जगत मे दस हजार विद्यार्थियो मे से पाच–पाच हजार विद्यार्थियो पर शाकाहार व मासाहार का परीक्षण करने के उपरात यह पाया गया कि मासाहारियो मे क्रोध क्रूरता व हिंसादि गुणो का प्राधान्य होता है और शाकाहारियो मे क्षमा दया व वीरता की मुख्यता।[2]

बारह व्रत :—

हमारे पूर्वाचार्यों, तीर्थकरो ने गृहस्थावस्था में रह कर जीवन निर्माण के लिए बारह व्रतो का विधान किया। इनमे ५ अणुव्रत तीन गुणव्रत व चार शिक्षाव्रत है। कही–कही गुणव्रत व शिक्षाव्रत का सयुक्त नाम शीलव्रत भी पाया जाता है। ये व्रत हमारे सुसमाज की सरचना के रामबाण है। इनका यथावत् पालन समाज व राष्ट्र मे सुव्यवस्था, सह–अस्तित्व व प्रेम भाव उत्पन्न करा सकता है।

अहिंसा पहला व्रत है इससे दया व करुणा के भाव जाग्रत होते है। इन्ही को ध्यान मे रख कर अतिचारो (व्रत भग होने के कारण) के माध्यम से यह बात स्पष्ट कर दी थी कि किसी प्राणी को बाधना, पशुपक्षी के अग छेदना, पीटना, अधिक भार लादना दोष है।[3] यह वर्तमान के सामाजिक जगत् मे भी पूर्ण प्रासगिक है, सामाजिक दृष्टि से वह क्रूर व राज्य व्यवस्था की दृष्टि से वह अपराधी है।

१– स्थानाग सूत्र-१०/७६०
२– श्रावक धर्म की प्रासगिकता का प्रश्न-डा. सागरमल जैन पृ. १४
३– पच अइयारा जाणिमव्वा न सामयरियव्वा। तंजहा वंधे वहे छविच्छेए अइभारे भतपाण वोच्छेए। उवासकदशाओ सूत्र-४१ उपासकदशांग टीका-पृ. २७, श्रावक प्रज्ञप्ति २५८, रत्नकरण्डक श्रावकाचार ५२, योगशास्त्र-२/५८

असत्य भाषण नहीं करना द्वितीय व्रत है। गन्थो मे यह स्पष्ट उल्लेख है कि सामाजिक वातावरण को दूषित करने वाले वचन बोलना-बुलाना, गलत सलाह देना, स्वार्थ हेतु असत्य घोषणा करना, आपत्तीजनक अस्त्र-शस्त्र रखना व्रत भंग के कारण हैं।[1] यह सब वर्तमान समाज व्यवस्था मे सटीक बैठता है। समाज व्यवस्था व राष्ट्रहित मे व्यवधान इन्ही के माध्यम से डाला जाता है। पजाब मे हो रहे हत्याकाण्ड, समाज मे आपसी वैमनस्य, विरोध ये सब इसके उदाहरण माने जा सकते हैं।

तीसरा व्रत बिना स्वामी की अनुमति कोई वस्तु ग्रहण नही करना है। चोरी की वस्तु खरीदना राजकीय नियमो की अवहेलना करना, वस्तुओ मे मिलावट करना, करो का बचाव करना धार्मिक नियमो का खण्डन है।[2] यह वर्तमान समाज व्यवस्था का कितना बडा अपराध है, कहने की आवश्यकता नही है। यदि हर व्यापारी इनका सेवन नही करे तो समाज के हर वर्ग को कितना लाभ हो सकता है।

चौथी विचार धारा काम प्रवृत्ति पर मर्यादा रखती है। अपनी स्त्री को छोडकर बाकी सभी स्त्रियो से ससर्ग का त्याग करना ब्रह्मचर्य सिद्धान्त है।[3] परन्तु इस सैद्धान्तिक बात को छोडकर मनुष्य जब अन्य रूप मे अपना वैचारिक दृष्टिकोण बना लेता है तो बलात्कार, व्यभिचार जैसी भावना सहज ही उजागर हो जाती है। पाश्चात्य जगत मे एड्स नामक बीमारी जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर फैल रही है, वह इसी का दुष्परिणाम है। परिवार, समाज व राष्ट्र की शांति एव व्यवस्था के लिए इसकी उपयोगिता निर्विवाद है।

पाचवी विचारधारा मे सम्पत्ति एव वस्तुओं को सीमित करने की बात आती है, साम्यवाद का बात आती है और समानता का सिद्धान्त उत्पन्न होता है "जहा लाहो तहा लोहो"। उत्तराध्ययन की यह उक्ति सार्थक ही है कि व्यक्ति का जैसे-जैसे लाभ बढता जाता है, उसकी तृष्णा भी वैसे-वैसे ही बढ जाती है। परिग्रह के कारण समाज मे विषमता बढती है क्योकि यह सीधे-सीधे समाज को प्रभावित करता है। इसका अर्थ यह नही कि समाज मे लोग पैसा न रखे। समाज के लोग आर्थिक, राजनैतिक, बौद्धिक रूप से अपना-अपना विकास करें क्योकि जब तक ऐसा नही करेगे धर्म की प्रतिष्ठा इस भूतल पर टिकी नही रहेगी। जैनियो के पास पैसा लूट से नहीं मेहनत से आया है।

अर्जन व सग्रह बुरा नही है परन्तु जब इसका आधार शोषण या विषमता हो जाता है तब यह समाज व राष्ट्र के लिए जहर हो जाता है। समाज असहयोग करे तो सम्पत्ति का सग्रह करना तो दूर रहा अर्जन करना भी कठिन हो जायेगा। शायद इसी बात को ध्यान मे रखकर मार्क्स ने (केपिटल इज सोसियल पावर) 'पूजी एक सामाजिक शक्ति' कहा है।[4]

यह हमारा दुर्भाग्य है कि जब मानवता का एक बडा भाग भूख व अभावग्रस्त है, पानी व अन्न

१– उपासकदशाग सूत्र १/४२, उपासकदशाग टीका पृ. २८

२– "विरुद्ध नृपयोराज्यं विरुद्ध राज्यमृतस्यातिक्रमोतिक्रमोऽति लघन विरुद्ध राज्यमिल धनम्" उपासकदशाग टीका पृ. ३१
श्रावक प्रज्ञप्ति टीका पृ. १५८

३– आवश्यक सूत्र पृ. ३२४

४– जिनवाणी-अपरिग्रह विशेषांक पृ. ११७

के अभाव से अकालग्रस्त है वही दूसरी और वैभव विलास के विशाल प्रदर्शन होते है । अमेरिका मे अनाज का मूल्य कम न हो इसके लिए लाखो टन अनाज समुन्द्र मे फेक दिया जाता है । दूध की कीमत घटे नही इसलिए लाखो गाये काट दी जाती है, यह सब क्या है ? यह सब सास्कृतिक विकृति है जो समाज व विश्व को खतरा उत्पन्न कराती है ।[1]

इसीलिए अपरिग्रह सिद्धान्त को यदि समाज व राष्ट्र के सदर्भ मे देखा जाय तो यह न केवल उत्पादन वृद्धि मे सहायक होता है वरन् साम्राज्यवाद व आर्थिक हिंसा पर भी रोक लगाता है ।

श्रावकाचार के वर्णन मे गुणव्रतो का विधान किया गया है । दिशाव्रत नामक गुणव्रत मे गमनागमन की सीमा निश्चित करने को कहा गया है जब व्यक्ति देश विदेश की सीमा भूल जाता व क्षेत्र वृद्धि[2] कर लेता है तो सामाजिक वैमनस्य व परिवार का विघटन होता है । तुच्छ १ या २ फीट जमीन के लिए हुए भाई-भाई पिता-पुत्र के सघर्ष हम सब जानते, देखते ही हैं । इसलिए वर्तमान युग मे इस व्रत का अत्यधिक महत्त्व है । प्रत्येक व्यक्ति, समाज व राष्ट्र अगर अपनी सीमाए निश्चित कर ले तो सघर्ष स्वत ही मिट जायेंगे । प जवाहरलाल नेहरू के पचशील सिद्धान्त मे इसी बात पर बल दिया था ।

सातवें उपभोग परिभोग व्रत मे पन्द्रह कर्मादानो का वर्णन करते हुए कहा गया है कि व्यक्ति को उन्ही व्यवसायो को करना चाहिये जिससे समाज व राष्ट्र मे विकृति या कुरीति उत्पन्न न हो । श्रावकाचारो मे गृहस्थो के १५ निषिद्ध व्यवसाय बताये गये है ।[3] इनमे जगल मे आग लगाना, जगल कटवाना, रथादि बनवाकर बेचना, पशुओ को किराये पर चलाना, खान खोदना, हाथी मारकर व्यापार करना, लाख का व्यापार करना, मधु मास का व्यापार करना, विष का व्यापार करना, बालो का व्यापार करना, अस्त्र-शस्त्र का व्यापार करना, बैल आदि को नपु सक बनाना । जगल मे आग लगवाना, झील सरोवर को सुखाना, वैश्या आदि से पैसा एकत्र करना शामिल है ।

उपर्युक्त व्यापारो मे से आज भी ऐसे अनेक व्यापार है जिनके करने से समाज पर बुरा प्रभाव पडता है, ये हमारे समाज व राष्ट्र की सभ्यता का नाश करने वाले है ।

इसी तरह अनर्थदण्ड अनर्थकारी हिंसा पर रोक लगाता है । क्योकि बिना प्रयोजन भूमि खोदना, आग लगाना, हरे पेड पौधो को काटना सामाजिक व राष्ट्रीय धरोहर का नाश करना है जो हमारे पर्यावरण सरक्षण के विरूद्ध भी है ।

शिक्षाव्रतो मे सामायिक, देशावकाशिक, पोषध व अतिथि-सविभाग है । ये आध्यात्मिक जीवन को उन्नत करने के व्रत है, सामूहिक तत्वज्ञान व चर्चा, सामाजिक व आध्यात्मिक सबधो की दृढता का द्योतक होता है । इनमे मानव मात्र के प्रति सेवा, समर्पण, सहयोग, सहभागिता, अभाव ग्रस्त समाज के भाइयो के प्रति अपने कर्त्तव्य का बोध होता है ।[4]

१– जिनवाणी अपरिग्रह विशेषांक पृ. १२२

२– (अ) 'उड्ढदिसिपमाणाइक्कमे, अहोदिसिपमाणाइकम्मे, तिरियदिसिपमाणाइकम्मे खेतवुढ्ढी, सइअन्तरद्धा'
—उवासकदशाओ १/५०

(ब) 'अननुस्मरणं स्मृत्यन्तरा धनम् सर्वार्थसिद्धि-७३०

३– उवासगदशाओ, योग शास्त्र-३/९८-१००, श्रावक प्रज्ञप्ति २८७-२८८, सागार धर्मामृत ५/२१,२३

४– सर्वार्थसिद्धि-७/२१, पुरुषार्थ सीद्धयुपाय-१४३

इस प्रकार जैन श्रावकाचार में उसकी सामाजिकता पर संक्षेप में चर्चा करने के उपरान्त यह स्पष्ट हो जाता है कि श्रावकाचार के सिद्धान्त सामाजिक कर्त्तव्यो के पर्यायवाची है। सामाजिक व्यवस्था व धार्मिक सिद्धान्त परस्पर साथ-साथ चले, इस दृष्टिकोण को ध्यान मे रखते हुए ही शायद तीर्थंकरो ने इस प्रकार मनोवैज्ञानिक व्रतो व नियमो का प्रावधान किया होगा। अगर इनका व्यवहारिक जगत मे प्रयोग किया जाय तो निश्चय ही हमारा वर्तमान जितना सुन्दर, सुखी, और समृद्ध होगा उससे कही अधिक हमारे भविष्य के कर्णधार इस नैतिक वातावरण के आधार पर समाज व राष्ट्र को मजबूत बना सकेंगे।

हमें चाहिये कि हम ऐसे धर्म-समाज की स्थापना करे जो जन-जन तक महावीर के संदेशों को पहुंचाये। अगर हमारा युवा आगे बढ़कर इस पुनीत कार्य मे हाथ बटायें तो निश्चय ही हमारा धर्म उन व्यक्तियो तक भी पहुंचेगा जो जैन होते हुए आज भी उससे अनभिज्ञ है।

—शोध अधिकारी, आगम-अहिंसा-समता एव प्राकृत संस्थान
उदयपुर (राजस्थान)

बहाना चिपकने का

☐ मोतीलाल सुराना, इन्दौर

उस तेली को नारदजी बार-बार धर्म करनी करने को कहते और वह एक था जो कभी लडकी की शादी की तो कभी लडके की शादी का बहाना कर जाता और एक दिन वह मर गया। नारदजी ने ज्ञान में देखा कि वह तो इसी घर मे बैल बन गया है। बैल से पूछा-अब क्या इरादा है? तो बैल ने नारदजी को कहा-इस घर का परिवार बहुत बड़ा है। यदि मै रात-दिन मेहनत न करूंगा तो बेचारा परिवार भूखे मर जावेगा और हुआ यह कि परिवार का तो कोई मरा नही पर बैल मर गया।

नारदजी को चैन कहा देखा-बैल मरकर इसी घर मे कुत्ता हो गया है तो कुत्ते से बोले-धर्म करनी के लिये कुछ सोचा क्या, तो कुत्ते ने जवाब दिया-कल ही पडोस मे चोरी हो गई थी। मेरे पर पूरी-पूरी जवाबदारी है। मै एक मिनिट भी इधर-उधर जाऊं तो यह घर चौपट हो जावेगा। नारदजी कुछ दिन बाद आये। कुत्ता मरकर साप बन गया था। साप से बात चलाई तो नारदजी को टके सा जवाब मिला। देखते नही, चूहे कितने पैदा हो गये है। साप ने कहा-मै इनका सफाया न करू तो इस घर का दीवाला ही निकल जावे। और थोडे दिन बाद साप भी मर गया। नारदजी ने देखा साप निर्जीव पडा है। घर का सब काम बरकरार चल रहा है। साप की आत्मा नारदजी से बोली-जितना पाप किया है उससे कही ज्यादा धर्म करनी करूगा तो ही सद्‌गति मिलेगी और वह आत्मा—पश्चाताप करने लगी। ससारी लोग ससार के पाप के काम को महत्त्व देते है तथा सद्‌कार्य न करते हुए कुछ न कुछ बहाना बना लेते है।

भाग्यशाली-अभागे

□ नथमल लूणिया

हमारे मे से कितने लोग ऐसे है जो इन अमूल्य ज्ञान रत्नो से अपने आपको अलंकृत करने मे सचेष्ट है ? कितने ऐसे हैं, जो इन अनुपम-हीरे-जवाहरातो से अपने अन्तर की जेबे भर कर समृद्ध हो रहे है । लगता है हम मे से अधिकाश व्यक्ति आलस्य एव प्रमादवश इन सुलभ आध्यात्म-रत्नो के प्रति न केवल उदासीन ही बने हुए है बल्कि इनकी उपेक्षा भी कर रहे है और भौतिक कंकड़-पत्थरो मे उलझ कर नाहक ही भटक रहे है । ऐसी हालत में क्या हम सचमुच 'भाग्यशाली-अभागो' की गिनती मे नही आ जाते है ?

शीर्षक देख कर चौकने या हैरान होने जैसी बात नही है । विश्वास कीजिए 'भाग्यशाली-अभागे' भी होते है, और है । मैं आकाश पाताल की बात नही कर रहा सच पूछिए तो हमारे और आपके बीच ही बहुत से ऐसे महानुभाव मिल जायेगे जिनको 'भाग्यशाली-अभागो' का खिताब दिया जा सकता हैं । आप कहेगे, वाह ! यह कैसे, जो भाग्यशाली है, वे अभागे क्यो ? और जो अभागे है वे भाग्यशाली कैसे ?

मै आपसे निवेदन करू कि आज जिन हीरे, पन्ने और माणक आदि बहुमूल्य रत्नो की राशिया हमे दीख रही है उनकी उपलब्धि का इतिहास कितना कष्ट कर एव श्रम साध्य रहा हे, यह हम सभी जानते है । बीहड जगलो मे अवस्थित ऊंची-२ पर्वत श्रेणियो के मार्ग मे दूर दूर तक फैली दुर्गम घाटियो, अधेरी गुफाओ एव पृथ्वी के गर्भ मे समायी हुई भयानक खदानो के अगणित चक्कर लगाते-लगाते बडी मुश्किल से कही एक-आध बडी या छोटी चट्टान ऐसी दीख जाती है, जिसके अन्तराल मे ये बहुमूल्य नीधिया अपना कलेवर छिपाये रहती है । फिर इन्हे प्राप्त करके साफ और शुद्ध करना, बारीकी से तराश कर सुघड और सलौना रूप देना तो और भी अधिक श्रम-साध्य होता हे ।

फर्ज कीजिए, अगर इतने कष्ट साध्य ये बहुमूल्य रत्न हमारे लिए सुलभ हो जाय इनके ढेर के ढेर चौराहे पर पडे मिल जाय और साथ ही इनसे अपनी जेबे भर-भर कर घर ला सकने की निर्बाध एव निरापद छूट भी मिल जाय तो निश्चय ही यह हमारे लिऐ भाग्यशाली होने जैसी बात होगी किन्तु इतना होते हुए भी अगर हम इस सुअवसर से लाभ न उठाए,आलस्य एव अकर्मण्यतावश इन बहुमूल्य रत्नो से अपनी जेबे न भरकर ककड एव पत्थरो मे ही उलझे रह जाय, तो क्या यह हमारे लिये दुर्भाग्यपूर्ण बात नही होगी? ऐसी स्थिति मे, क्या हम 'भाग्यशाली अभागे' नही कहे जायेगे ?

आप कहेंगे—जी, किस दुनिया मे रहते है, आप ? ऐसे अभागे बसते होंगे कही दूर, किसी अज्ञात प्रदेश मे । हमारे-इर्द-गिर्द तो ऐसा एक भी अभागा ढूढने से भी नही मिलेगा । अगर कही ऐसे स्थान का सुराग भी मिल जाय तो सच मानिए, हम किसी को कानो-कान खबर तक नही होने दे और ऐसे कपड़े

सिलाए जिनमे आगे-पीछे अन्दर-बाहर जेबें ही जेबें हो, और उस स्थान पर पहुच कर दोनो हाथो से अपनी जेबे भर-भर कर अपने घर तक इस द्रुत गति से रन बनाना शुरु करे कि कभी कोई क्रिकेट का खिलाडी हमारे मुकाबले मे रन बना पायेगा। बस ऐसी निरापद छूट और लूट का अता-पता कोई बता तो दे।

हा तो आइये, मै आपको स्मरण करा दू उन बहुमूल्य एव अलौकिक रत्नो का, जो इन पूर्व चर्चित रत्नो से कई गुना अधिक अनमोल एव अद्वितीय है, साथ ही उनकी उपलब्धि का इतिहास भी अत्यन्त श्रम साध्य रहा है। फिर भी हमारा परम साभाग्य है कि ये अलौकिक रत्न अत्यन्त सुलभ रूप मे हमारे चतुर्दिक विद्यमान ह। इनसे अपने आपको समृद्ध बनाने की सबके लिए खुली एव निर्बाध छूट भी ह।

हमारे देश, भारत वर्ष की कतिपय मान्य विशेषताओ मे से एक ह—आध्यात्मिकता। यहा के प्राचीन एव अर्वाचीन ऋषि मुनियो ने गिरी-कदराओ मे, निर्जन जगलो एव दुर्गम पर्वत शिखरो पर वर्षो तक अपना जीवन तपा-तपा कर, त्याग और सयम के सहारे अन्तर की गहराइयो मे उतर कर आत्मज्ञान रूपी रत्नो के जिस खजाने को उपलब्ध किया, उसे उन्होने कभी भी छिपाकर नहीं रखा, बल्कि उस अनुभूत ज्ञान राशि की अगम्यता को सुगम एव सरल बनाकर जन-समूह मे वितरण कर दिया। आत्मगुणो से प्रकाशमान मुक्ता, मणियो की लडिया आज भी हमारे आस-पास हर क्षेत्र मे लहरा रही है और सत जन हमे इनसे लाभान्वित होने के लिए प्रतिदिन सचेत भी कर रहे है।

भगवान् महावीर ने साढे बारह वर्षों तक सघन वनो, पर्वत शिखरो, भयावनी गुफाओ, निर्जन एव खतरनाक स्थानो मे तप, त्याग, ध्यान एव मौन का एकाकी जीवन बिताया। अपने साधना काल मे उन्होने अनेकानेक कष्ट एव उपसर्ग सहे। ठिठुरा देने वाली बर्फीली हवाओ और आग बरसाती लू की लपटो के दुर्धर्ष प्रहारो को उन्होने नगे बदन पूर्ण शाति ए[व] प्रसन्नता पूर्वक सहा। इस प्रकार अतिदुष्कर साधना के बल पर जिन अनुपम-अनमोल आत्म-रत्नो की उपलब्धि उन्हे हुई उनका अपने लिए ही बटोर क[र] उन्होने नही रखा बल्कि रत्न राशियो के उस आलोक का उपयोग उन्होने अज्ञानाधकार में भटकते ज[न] मानस को ज्योतिर्मय बनाने में किया।

उनके अनुयायी शिष्यो ने आगे जाकर उ[न] अगाध ज्ञान गरिमा को आगमो के रूप में लिपिब[द्ध] कर सुरक्षित रखा। आज उन पर अनेको चूर्णि[यां], निर्युक्तिया, भाष्य एव टीका ग्रन्थ आदि उपलब्ध [हैं]। साथ ही आज का भौतिक विज्ञान भी हमारे सू[क्ष्म] शरीर में होने वाले स्पदनो तथा लेश्याओ द्वारा निर्मि[त] अन्तर्भावो की झाकियो को यन्त्रो एव उपकरणो द्वा[रा] दृष्टि गम्य बनाने की दिशा में प्रयत्नशील हैं। सुना है, उन्हे कुछ हद तक अपने प्रयासो में सफलता भ[ी] मिली है। आशा है, धीरे-धीरे उनकी उपलब्धिया आज के तर्कशील जन-मानस को सर्वज्ञो द्वारा बताए गए लोक परलोक एव आत्मा से सम्बन्धित उनके अनुभूत तथ्यो के प्रति आस्थावान बना सकेंगे। इ[स] प्रकार हमारा यह परम सौभाग्य है कि दुर्लभ ए[व] अलौकिक ज्ञान की ये रत्न राशिया हमें अनायास ह[ी] सुलभ हो रही है और इस दृष्टि से निश्चय ही ह[म] अतिभाग्यशाली है।

किन्तु, फिर भी हमारे मे से कितने लोग ए[से] है जो इन अमूल्य ज्ञान रत्नो से अपने आपको अलकृ[त] करने मे सचेष्ट हैं? कितने ऐसे है, जो इन अनुपम हीरे-जवाहरातो से अपने अन्तर की जेबे भर कर समृद्ध हो रहे है। लगता है हम मे से अधिकाश व्यक्ति आलस्य एव प्रमादवश इन सुलभ आध्यात्म-रत्नो क प्रति न केवल उदासीन ही बने हुए है बल्कि इनकी उपेक्षा भी कर रहे है और भौतिक ककड, पत्थरो मे उलझ कर नाहक ही भटक रहे है। ऐसी हालत मे क्या हम सचमुच 'भाग्यशाली-अभागो' की गिनती मे नहीं आ जाते है?

आज हमारे पठन-पाठन की रुचि एवं दृष्टि भी निम्न स्तर के साहित्य की ओर झुकती जा रही है। यह निश्चय ही एक बहुत बुरा संकेत है। फलस्वरूप दिनो दिन हमारा नैतिक पतन एव मानवीय गुणो का ह्रास होता जा रहा है। आज प्राय हर घर मे वासनोत्तेजक उपन्यासो, तथाकथित सत्य कथाओ एव गुमराह करने वाली सिने पत्रिकाओ का ढेर लगा हुआ मिलता है। रेल एव बसो की यात्राओ मे, प्रतीक्षा की घडियो एव फुर्सत के क्षणो मे हम ऐसे ही अर्थ-हीन साहित्य मे उलझ कर अपने वर्तमान एव भविष्य को बिगाड रहे हैं। भावी पीढी के नैतिक एव चारित्रिक मार्गदर्शन की दिशा मे यह एक सर्वोपरि विचारणीय बात है।

उपवास, एकातर एव लम्बी-लम्बी तपस्याए करना निश्चय ही निर्जरा का मार्ग है। किन्तु यह भी सच है कि बहुत कम लोग ही इस तरह की तपस्याए करने में सक्षम होते है। किन्तु, अनसन रूप तप ही मात्र तप नही होता। स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग, सेवा एव आत्म-निरीक्षण आदि भी तप माने गए है। इन से भी कर्मो की निर्जरा होती है। असल मे ये ही वे महत्वपूर्ण खदाने है, जिनसे हमारे ऋषि मुनियो ने आत्म-ज्ञान रूपी अलौकिक रत्नो का नि सरण किया था। स्वाध्याय के सम्बन्ध मे तो यहा तक कहा गया है कि—'नहि अत्थि न वि अहो ही सज्झाय सम तवोकम्म।'

अत नित्य प्रति सुविधानुसार आगमवाणी अथवा इन पर आधारित सत्-साहित्य का स्वाध्याय के रूप मे अनुशीलन कर सहज ही निर्जरा एव आत्म-विकास के पथ पर बढा जा सकता है। काश, हम यो अपनी सहज उपलब्ध भाग्यशालिता को बरकरार रख पाते।

—नवरग, लालजी मार्केट, पटना

वचन भग से सर्वनाश

❀ मोतीलाल सुराना

वह सिरमौर वंश का शासक था—नाम था मदनसिंह। राजा था तो कुछ न कुछ शौक अवश्य चाहिये। इसे न तो शिकार का शौक था, न निशानेबाजी का। बस शौक था तो एक-नटो के खेल देखना। कभी-कभी जादू का खेल देखने मे भी राजा मदनसिंह अपना समय बिताता था।

एक बार जब मदनसिंह के राज्य मे नटो का काफिला आया तो शहर के एक-दो प्रमुख लोगो ने राजा के सामने नटी के करतब की तारीफ की। बस फिर क्या था। राजा ने नटो के काफिलो को राजमहल मे बुलवाया व नटी के करतब देखे। नटी रस्से पर काफी देर तक नाच करती तथा इधर-उधर और उधर से इधर दौडकर आती थी। राजा ने सभी दर्शको के सामने नटो को बुलाया तथा बोले—हम गिरि गगा के आर-पार रस्सा बधवा देते हैं। अगर तुम इस पार से उस पार तथा उस पार से इस पार नाचते हुए आ जाओगी तो तुम्हे ईनाम मे आधा राज्य दे दूगा।

राजा की इस अजीब शर्त को सुनकर सभी दरबारी आश्चर्य मे पड गये, पर किसी की हिम्मत न हुई कि वे इस बात का विरोध करें। नटी नाचते हुए गिरि-गगा के आर-पार बन्धे रस्से पर गई व वापस पूरा रास्ता पार कर आ रही थी तो आधा राज्य जाते देख राजा ने इशारा किया। एक कर्मचारी ने तलवार से रस्सा काट दिया। नटी नदी मे गिरकर मर गई। डूबते हुए नटी ने राजा को शाप दिया कि इस नदी की बाढ मे तू, तेरा परिवार और तेरा राज्य सब डूब जाएगा। तेरा सर्वनाश होगा।

सचमुच अतिवृष्टि हुई और सर्वनाश हो गया। लोभवश वचनभग नही करना चाहिये।

लोक कल्याण के संदर्भ मे महावीर की साधना

△ डॉ. मानमल कुदाल

△

महावीर ने जहा तत्व चितन का नवनीत हमे दिया वहा आत्म विकास और समाज विकास के मूल मत्रो को प्रस्तुत कर जीवन की सर्वांगिणता की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट किया । महावीर ने यह सिद्ध कर दिया कि आत्म-साधना और समाज-विकास के मार्ग एक दूसरे के विरोधी न होकर सहयोगी है। सच तो यह है कि आत्म-साधना के पश्चात् ही सामाजिक मूल्यो का सृजन किया जा सकता है ।

विश्व के सास्कृतिक इतिहास मे समय-समय पर ऐसे अनेक महापुरुष हुए है जिन्होंने मानव कल्याणकारी मार्ग की ओर चलने को प्रेरित किया है तथा मनुष्य को पाशविक दासता से निकालकर उर्द्धगामी बनने का साहस दिलाया है । ऐसे व्यक्ति किसी एक देश, जाति, समाज और धर्म की निधि न होकर मानव जाति की सम्पत्ति बन गये । उन्होने जो कहा वह मानव इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठ के रूप मे समझा गया । अतीत मे अनेक महापुरुषो का इतिहास काल के कराल गाल मे समा गया । फिर भी अनेक परम्पराओ ने ऐसे महापुरुषो की जीवन गाथाओ को आत्मसात् कर आज भी जीवित रखा है । श्रमण परम्परा इनमे से एक है जिसने भारत के प्राचीन महापुरुषो के जीवन और चिन्तन को विरासत के रूप मे सजोया है।

इस परम्परा के पुरुषो को अर्हत् एव तीर्थंकर के नाम से सम्बोधित किया जाता है । इसमे प्रथम तीर्थंकर ऋषभ और अन्तिम तीर्थंकर महावीर हुए है ।

महावीर के समय मे भारत की स्थिति बड़ी विषम थी । सामाजिक क्षेत्र मे मानव-मानव के बीच दूरी थी । वर्ग भेद का बोलवाला था । मूक प्राणियो के प्रति दया भाव उठ गया था । नारी की स्थिति दयनीय थी । वह दासता में जकड रही थी । सामान्य तबके के लोगो का शोषण हो रहा था। धार्मिक स्वतन्त्रता नही थी । मानव अधिकार बडे नाजुक दौर मे थे, उनका दिन दहाडे हनन होता था। व्यक्ति की सत्ता लगभग मिट चुकी थी । सब ओर अराजकता छायी हुई थी अत जनता अशान्त थी । ऐसे समय मे महावीर का जन्म होना मानवता के लिए वरदान सिद्ध हुआ । महावीर के समय में अनेक विचार धाराओ को मानने वाले चिन्तक थे । चिन्तन की विभिन्न मान्यताओ के रहते भगवान् महावीर का तत्व चिन्तन की गहराई मे उतरना स्वाभाविक था । सत्य को विभिन्न दृष्टिकोणो से देखना यह उनकी विशिष्ट उपलब्धि थी ।

महावीर को ऐसा लगा कि राज–भवनो मे रहकर जनहित की बात करना प्रभावकारी नहीं हो सकता । इसके लिए स्वजनो की परिधि को विस्तृत करना होगा । प्राणीमात्र के कल्याण की बात सोचनी होगी । इसलिए उन्होने श्रमण दीक्षा ग्रहण की ।

महावीर के साधना काल मे अनेक उपसर्ग आए पर वे हमेशा शान्त रहे । विरोधियो के प्रति भी उनके हृदय मे द्वेष नही था । कठिन से कठिन परिस्थितियो मे भी उनकी साधना का दीप जगमगाता रहा । अन्तत महावीर की आत्मा ने लम्बी साधना के बाद अपने स्वरूप के सत्य से साक्षात्कार किया ।

महावीर अब अपनी साधना और चिन्तन की उपलब्धियो को लोक-कल्याण के लिए प्राणी मात्र तक पहुचा देना चाहते थे । उन्होने जन सामान्य की भाषा मे ही अपना दिव्य उपदेश दिया जिसे अर्धमागधी भाषा (प्राकृत) के नाम मे जाना गया है । उनके उपदेशो मे जगत के स्वरूप की व्याख्या, आत्मा और कर्म का विश्लेषण, आत्म-विकास के मार्ग का प्रतिपादन, व्यक्ति और समाज के उत्थान की बात तथा हिंसा-अहिंसा का विवेक आदि का विवेचन था । जब राजा-महाराजाओ से उनकी चर्चा होती थी तो वे उन्हे लोक शासन के सूत्र समझाते, जब वे कृषको, कर्मकारो और व्यापारियो से मिले तो उन्होने उन्हे जीविकोपार्जन मे प्रामाणिक रहने की बात कही । किसी के अधिकार हडपने-हनन करने से मना किया तथा सदाचार का जीवन जीने की कला सिखायी । वे जब नारी समाज को लक्ष्य कर बोलते तो उसे अपनी शक्ति को पहचानने के लिए प्रेरित करते । जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे नारी के विकास की सम्भावनाओ पर प्रकाश डालते । उन्होने तत्व और धर्म के वास्तविक स्वरूप की व्याख्या कर आत्म कल्याण का मार्ग सभी के लिए प्रशस्त किया । इस तरह महावीर के उपदेशो ने बौद्धिक, धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक जीवन को समग्र रूप से प्रभावित किया । उन्होने जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात किया । इसीलिए कहा जाता हे—महावीर व्यक्ति नही थे, एक विचार थे ।

महावीर ने जहा तत्व चिंतन का नवनीत हमे दिया वहा आत्म विकास और समाज विकास के मूल मत्रो को प्रस्तुत कर जीवन की सर्वांगिणता की ओर भी हमारा ध्यान आकृष्ट किया । महावीर ने यह सिद्ध कर दिया कि आत्म-साधना और समाज-विकास के मार्ग एक दूसरे के विरोधी न होकर सहयोगी है । सच तो यह हे कि आत्म-साधना के पश्चात् ही सामाजिक मूल्यो का सृजन किया जा सकता है । महावीर का जीवन इस बात का साक्षी है । उन्होने अपनी साढे बारह वर्ष की ध्यान साधना के परिपूर्ण होने के पहले कोई प्रतिबोध नही दिया । वे इस बात के दृढ समर्थक प्रतीत होते है कि आधारभूत सामाजिक मूल्यो का निर्माण आत्म-साधना के बिना कार्यकारी नही होता । अत. उन्होने अपनी साधना के परिणामस्वरूप आत्मानुभूति की । पर वे यही रुके नही । उनका शेष जीवन सामाजिक समस्याओ से पलायनवाद का न होकर उन समस्याओ के स्थाई और आधारभूत हल को ढू ढ निकालने का सघर्ष था । महावीर ने अपने जीवन का अधिकाश भाग सामाजिक मूल्यो के निर्माण मे ही लगाया । इतिहास इसका साक्षी है । वे बैठे नही, किन्तु चलते ही गये यह था महावीर के जीवन मे "स्व" और "पर", "मै" और "तू" का समन्वय । जो लोग केवल महावीर को केवल आत्मानुभूति का पैगम्बर समझते है, वे उनके साथ न्याय नही करते है । महावीर तो आत्मानुभूति और समाज-सृजन दोनो के जीते-जागते उदाहरण है ।

भगवान् महावीर ने व्यक्ति के पूर्ण विकास के लिए एक ओर तो जहा आत्म-विकास का पथ प्रशस्त किया है, वहा दूसरी ओर उन्होने लोक कल्याण के लिये सामाजिक मूल्यो का सृजन किया । महावीर ने जिन मूलभूत सामाजिक मूल्यो को उद्घाटित किया है—वह है—"अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकान्त ।" ये तीनो मूल्य महावीर के सामाजिक अनुसधान के परिणाम हैं । आत्म-साधना मे महावीर ने लौकिक व्यवस्था के आधारभूत तत्वो की उपेक्षा नही की ।

उनका मन कह उठा कि अहिंसा की प्रतिष्ठा मनुष्य-मनुष्य में व्याप्त भेद को समाप्त करने में है। ऊँच-नीच, छुआ-छूत हिंसा की पराकाष्ठा है। प्रत्येक मनुष्य का अस्तित्व गौरवपूर्ण है। उसकी गरिमा को बनाये रखना अहिंसा का सुमधुर संगीत है। समाज में प्रत्येक मनुष्य चाहे स्त्री हो या पुरुष उसे धार्मिक स्वतन्त्रता है। अहिंसक समाज कभी भी वर्ग-शोषण का पक्षपाती नही हो सकता। महावीर ने दलित से दलित लोगो को सामाजिक सम्मान देकर उनमे आत्म-सम्मान प्रज्वलित किया। वास्तक मे जब महावीर ने हरिकेशी चाण्डाल को अपने गले लगाया तो अहिंसा अपने पूरे रूप मे आलोकित हुई। पुरुष के समान स्त्री को जब महावीर ने प्रतिष्ठा दी तो सारा समाज अहिंसा के आलोक से जगमगा उठा। अहिंसा का यह उद्घोष आज भी हमारे लिए महत्वपूर्ण बना हुआ है। समाज मे अहिंसा के प्रयोग की परिपूर्णता उस समय हुई जिस समय महावीर ने धर्मचक्र के प्रवर्तन के लिए जनता की भाषा को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। यह महावीर की जनतान्त्रिक दृष्टि का परिपाक था। महावीर जानते थे कि भाषा किसी भी व्यक्ति के लिए उतनी ही महत्वपूर्ण होती है जितना की उसका जीवन। भाषा का अपहरण जीवन का अपहरण है। इसलिए अहिसा की मूर्ति महावीर जहा जाते वहा ऐसी भाषा का प्रयोग करते जो जनता की अपनी होती थी। महावीर अहिंसा के क्षेत्र मे मनुष्य तक ही नही रुके। इसलिए वे कह उठे कि प्राणीमात्र अन्तत एक है इसलिए किसी भी प्राणी को सताना, मारना और उसे उद्विग्न करना हिंसा की पराकाष्ठा है।

महावीर इस बात को भली-भाति जानते थे कि आर्थिक असमानता और आवश्यक वस्तुओ का अनुचित सग्रह समाज के जीवन को अस्तव्यस्त करने वाला है। इसके कारण एक मनुष्य दूसरे मनुष्य का अपहरण करता है और उसको गुलाम बनाकर रखता है। मनुष्य की इस लोभ वृत्ति के कारण समाज अनेक कष्टों का अनुभव करता है। इसीलिए महावीर ने इस आर्थिक असमानता को मिटाने का अनूठा उपाय बताया है अपरिग्रह। परिग्रह के सब साधन सामाजिक जीवन मे कटुता, घृणा और शोषण को जन्म देते है। अपने पास उतना ही रखना जितना आवश्यक है, बाकी सब समाज को अर्पित कर देना, अपरिग्रह पद्धति है। धन की सीमा, वस्तुओ की सीमा, ये सब स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए जरुरी है। धन हमारी सामाजिक व्यवस्था का आधार होता है और कुछ हाथो मे इसका एकत्रित हो जाना समाज के बहुत बड़े भाग को विकसित होने से रोकना है। जीवनोपयोगी वस्तुओ का सग्रह समाज मे अभाव की स्थिति पैदा करता है। ऐसे परिग्रह के विरोध मे महावीर ने आवाज उठाई और अपरिग्रह के सामाजिक मूल्य की स्थापना की।

मानवीय तथा आर्थिक असमानता के साथ साथ वैचारिक मतभेद भी समाज मे द्वन्द्व को जन्म देते है, जिनके कारण समाज रचनात्मक प्रवृत्तिया को विकसित नही कर सकता। वैचारिक मतभेद मानव मन की सृजनात्मक मानसिक शक्तियो का परिणाम होता है पर इसको उचित रूप मे न समझने से मनुष्य-मनुष्य के आपसी मतभेद सकुचित सघर्ष के कारण बन जाते है और इससे समाज शक्ति विघटित हो जाती है। समाज के इस पक्ष को महावीर ने गहराई से समझा और एक ऐसे सिद्धान्त की घोषणा की कि जिससे मतभेद भी सत्य को देखने की दृष्टि बन गई और व्यक्ति समझने लगा कि मतभेद-दृष्टि पक्षभेद के रूप मे ग्राह्य है, मनभेद के रूप मे नहीं। वह सोचने लगा कि मनभेद सघर्ष का कारण नहीं किन्तु विकास का द्योतक है। वह एक उन्मुक्त मस्तिष्क की आवाज है। इस तथ्य को प्रकट करने के लिए महावीर ने कहा कि वस्तु एकपक्षीय न होकर अनेक पक्षीय है। इस सामाजिक मूल्य से विचारो का घर्षण ग्रहणीय बन गया। मनुष्य ने सोचना प्रारम्भ किया

कि उसकी अपनी दृष्टि भी उतनी ही न होकर दूसरे की दृष्टि भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। उसने अपने क्षुद्र अहं को गलाना सीखा। इस सामाजिक मूल्य ने सत्य के विभिन्न पक्षो को समन्वित करने का एक ऐसा मार्ग खोल दिया जिससे सत्य की खोज किसी एक मस्तिष्क की बपौती नही रह गई। प्रत्येक व्यक्ति सत्य के एक नये पक्ष की खोज कर समाज को ौरवान्वित कर सकता है। महावीर ने कहा कि रिसमाप्ति वस्तु के किसी एक पक्ष के जानने मे नही …न्तु उसके अनन्त पक्षो की खोज मे है। इस सामाजिक मूल्य ने वैचारिक अनुचित सघर्ष को समाप्त कर दिया और कन्धे से कन्धा मिलाकर चलाने के लिए आह्वान किया। अनेकान्त समाज का गत्यात्मक सिद्धान्त है जो जीवन मे वैचारिक गति को उत्पन्न करता है।

अत यह कहा जा सकता है कि महावीर का सारा जीवन आत्म साधना के पश्चात् सामाजिक मूल्यो के निर्माण मे ही व्यतीत हुआ। इसी कारण महावीर किसी एक देश, जाति व समाज के न होकर मानव जाति के गौरव के रूप मे प्रतिष्ठित हुए।

—सुखाडिया विश्व विद्यालय, उदयपुर

सदर्भ ग्रन्थ—भगवान् महावीर जीवन और उपदेश

पुरुषार्थ

❀ कर्म तुम्हारे बनाये हुए है, कर्मों के बनाये तुम नही हो। फिर तुम इतने कायर क्यो हो रहे हो कि अपने बनाये कर्मों से आप ही भयभीत होते हो। कर्म तुम्हारे खेल के खिलौने है। तुम कर्मों के खिलौने नही हो।

❀ होनहार के भरोसे पुरुषार्थ त्याग देना उचित नही है। पुरुषार्थ के बिना कार्य की सिद्धि नही होती।

❀ तुम भाग्य के खिलौना नही हो वरन् भाग्य के निर्माता हो। आज का तुम्हारा पुरुषार्थ कल भाग्य बन कर सखा की भाति सहायक होगा।

❀ उत्साही पुरुष पर्याप्त साधनो के अभाव मे भी अपने तीव्र उत्साह से कठिन कार्य भी साध लेता है।

❀ लोग क्रिया से मुह मोड़कर पुरुषार्थ हीन वन रहे है। स्वय परिश्रम न करके दूसरो के परिश्रम पर गुलछर्रें उडाना चाहते है, यही लडाई-झगडे का वीज है।

❀ जिन गुणो को सिद्ध प्राप्त कर सके है, उन्हे हम भी पा सकते है।

❀ मुक्ति का मार्ग लम्वा है और कठिन भी है, यह सोचकर उस ओर पैर ही न वढाना एक प्रकार की कायरता है।

—आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा

जैन धर्म परदेश में

□ श्रीमती गीता जैन

आज वैसे तो जैन धर्म की सही आवश्यकता तो समग्र विश्व को है, खासकर पश्चिम की भौतिक संस्कृति के लिए तो जैन धर्म अति आवश्यक है जिससे कि शस्त्रो के प्रति गलत दौड और तीव्र हिंसा के क्रूर प्रयासो से उन्हे बचाया जा सके । दुनिय के 'वॉर मिसाईल्स' के सामने अपनी 'पीस मिसाईल्स' अहिंसा अपरिग्रह और अनेकातवाद (स्याद्वाद) रखना ही एकमात्र अच्छा उपाय रहा है ।

अभी कुछ थोडे वर्षों पूर्व तक नदी, समुद्र और छोटी-छोटी टेकरियो और पहाडियो को लेकर आस-पास के क्षेत्र के लोगो से अरस-परस अनजान होते थे, इसलिए कि आवागमन के साधन तब नहीं थे और न ही रेडियो, वेतार, टेलीफोन आदि की सुविधाए थी । परन्तु आज तो सात समुद्र के पार या हिमालय और अल्पस जैसे विशाल पर्वत भी आसानी से लाघे जा सकते है । इसी कारण से आज आदमी-आदमी के वीच का व्यवहार सम्पर्क, सस्कृति का आदान-प्रदान सात समुद्र पार भी सहज सभव बन गया है । इससे आदमी-आदमी के अधिक करीव आया है, आदान-प्रदान धर्म सस्कृति आदि का अधिक सम्भव बना है।

आज का युग वैज्ञानिक युग है । आवागमन के तेज साधनो के विकास को लेकर आज तो दुनिया अधिक नजदीक आई है । एक दूसरे का अन्तर समाप्त हो रहा है । आज हम हजारो किलोमीटर दूर तक गिनती के समय मे पहुच सकते है । मिनटो मे हम दूर सुदूर देशो से बात कर सकते है । घर बैठे टी वी, वीडियो के माध्यम से देश परदेश की यात्रा कर सकते है । विश्व भर कीघटनाओ से वाकिफ हो सकते है, उन्हे निजी आखो से देख सकते है ।

वर्षो पूर्व जब अनेक मुश्किलो से परदेश जाया जाता था, तव भी साहसी प्रवासी और व्यापारी दूर-दूर के देश-परदेश मे पहुच जाते थे तो फिर आज जब यात्रा की इतनी सुविधाए उपलब्ध है तब सहज ही मानव सुलभ प्रवास जिज्ञासा सबको दूर-दूर तक खिच ही ले जाती है । उद्यमी व्यापारियो ने तो देश-परदेश मे अनेक स्थानो पर अपनी व्यावसायिक पेढिया, ऑफिस आदि स्थापित कर आयात-निर्यात के अपने व्यापार मे अच्छी वृद्धि कर ली है । इस तरह इस तेज जेटयुग का विस्तृत लाभ इन व्यापारियो ने उठाया है जिसके फलस्वरूप आज विश्व के हर कोने मे हम भारतीयो को देख सकते है । जैन समाज मूलभूत सस्कारो से व्यापारी समाज ही है, इस तरह जैन धर्म भी व्यापार के साथ-साथ विश्व के प्रत्येक भाग तक पहुचा गया है । व्यापारियो के साथ-साथ जैन शिक्षित युवा वर्ग भी अच्छी आमदनी की उम्मीद मे अच्छी तादाद मे विदेश पहुच चुका है । इस तरह आज जैन समाज की काफी अच्छी सख्या परदेश मे स्थाई हो गई है । दूसरे समाज की बजाय जैन समाज मे शिक्षा का अनुपात काफी अच्छा है । इस दृष्टि से जैन समाज अपनी उद्यम बुद्धि, परिश्रम, सूझबूझ, साहस आदि के कारण साधन सम्पन्न भी है । भगवान् महावीर

के आदर्श गुणो से जैनों मे उदारता, सहिष्णुता, प्रेम व दया की भावना का विकास हुआ है इसलिए यह समाज हमेशा ही अन्य सभी के साथ हिल-मिलकर रहता आया है ।

इस तरह देश परदेश से अति तीव्र गति से रहन-सहन, पहनावा, रीति रिवाज, खानपान आदि की लेन-देन अपने आप होती गई । इनके साथ-साथ धर्म का आदान-प्रदान भी शुरू हुआ । जैन धर्म प्राणी करुणा का महान् धर्म है जिसके प्रति अनेक अजैन लोगो का आकर्षित होना स्वाभाविक है । फलस्वरूप अनेक विदेशी अजैनियो ने जैन धर्म का अध्ययन पूर्ण उत्साह से शुरू किया । कइयो ने वहा की लाइब्रेरी से प्राप्त पुस्तकों से अध्ययन किया तो अनेक ने भारत की यात्रा कर इस महान् धर्म के प्रति अपनी अधिक से अधिक जिज्ञासाए शात करने का, अधिक से अधिक जैन धर्म का अध्ययन करने का प्रयास किया जिससे कि वे इस धर्म की बारीकियो को समझ सके, जैन तत्वो को समझ सके ।

आज जर्मनी की युनिवर्सिटीज मे जैन धर्म पर विभाग खुले है, जहा पर अनेक जर्मन विद्वान् जैन धर्म पर, जैन ग्रथो पर अच्छा रिसर्च (शोध-कार्य) कर रहे हैं । न सिर्फ सशोधनकार्य बलिक जैन धर्म के अलभ्य ग्रन्थो का यत्नपूर्वक जतन भी कर रहे है । जापान के लोगो का भी जैन धर्म के प्रति आकर्षण कम नही है, वहा भी युनिवर्सिटीज मे अध्ययन सशोधन आदि का कार्य हो रहा है । वहा के एक विद्वान् डॉ. टाकोशी शिनोडा अहमदाबाद और पूना मे काफी दिनो तक रहे और जैन अनेकातवाद का अच्छा अध्ययन भी किया । यू. एस ए और यू के मे तो हजारो जैन बसे हुए है । वहा वे धर्म की पावन अस्मिता का गौरव तो रखते ही है । साथ ही साथ अपने धार्मिक त्योहारो का भी पूरे उत्साह से आयोजन करते है । पर्युषण पर्व मनाते हैं, तप, ध्यान आदि भी नियमित करते है । वहा भी देरासर, उपाश्रय, लायब्रेरीज, प्रवचन हॉल आदि बने हुए है । इस तरह परदेश मे बसे लोगो की धर्म भावना दिन पर दिन बढती जा रही है । वैसे भी आज के युग मे जहा हथियारो की होड मे दिन पर दिन क्रूरता बढती जा रही है । वहा मानवीय भावना की श्रेष्ठता, करुणा का भी उदय हो रहा है । इसी के फलस्वरूप वहा के लोगो में जैन धर्म के प्रति भूख बढती ही जा रही है । तो दूसरी तरफ इस मामले में उनकी बढती हुई मुश्किले भी ध्यान मे आ रही है ।

जो लोग भारत से वहा जाकर बसे है उन्हे तो अपनी मातृभाषा और जैन धर्म का ज्ञान है, श्रद्धा भी है और उनमे से काफी लोग तो जैन तत्वज्ञान से भी अवगत होते है । वहा बसने के बाद उनके यहा जनमी सतानो में उस नई पीढी में अपनी संस्कृति, अपनी मातृभाषा और तत्वज्ञान के बारे मे काफी अज्ञान होता है । मातृभाषा के अभाव मे उनका सम्पर्क माध्यम ही टूट जाता है जो काफी चिंताजनक है । परदेश निवासी जैन समाज के लिए अपनी धर्म सस्कृति-तत्वज्ञान की रक्षा और आज के अति भौतिकवादी के सामने पुरातन अध्यात्मवाद की रक्षा करना एक बहुत बडी जिम्मेदारी का काम है । हालाकि वहा का प्रवासी जैन समाज उसके लिए पूर्णतया सजग है, चिंतित भी है और उसी के फलस्वरूप वे लोग वहा पर अधिक सक्रिय बने है । वे अब प्रतिवर्ष भारत से जैन विद्वानो को, तत्वचिंतको को, धर्मप्रचार, तत्वज्ञान एव धर्म परिचय वगैरा कार्यो के लिए स्वय प्रेरित होकर आमन्त्रित करते रहते है । उनके लिए तमाम आने-जाने की व्यवस्था आयोजन आदि भी करते रहते है जिससे कि उनकी भावी पीढ़ी को धर्मदर्शन मिलता रहे ।

मुनि श्री सुशील कुमारजी, श्री चित्रभानुजी, डॉ हुकुमचन्द भारिल्ल, डॉ. कुमारपाल देसाई आदि अनेक विद्वान् वहा की भूमि पर जैन धर्म को ज्ञान

ज्योति द्वारा धर्मगंगा का प्रचार कर रहे हैं। उन्हें इस पावन यज्ञ मे सफलता मिले, केवल इतनी शुभेच्छा देकर क्या हम हमारा फर्ज पूरा समझेंगे ? भारत के जैन समाज का भी इस मामले मे बहुत बडा फर्ज है। यहा के धर्म प्रेमी लोग इस पुनीत कार्य मे तन-मन-धन से सहयोग हेतु तत्पर रहने चाहिए। यहा के विद्वानो को चाहिए कि वे वहा के लिए धर्म प्रचार हेतु साहित्य, प्रवचन आदि का सहयोग करे जिससे कि जैन सस्कृति का प्रचार व जतन हो सके।

देश–प्रदेश मे बसे जैन समूह अगर सगठित रूप से, योजनाबद्ध तरीके से प्रयास करेगे तो काफी अच्छा व उपयोगी कार्य हो सकेगा। कारण कि भारत की तरह वहा अभी तक 'गच्छ' साम्प्रदायिकता की भावना का विस्तार नही हुआ है इसलिए वहा 'गच्छ' फिरको के भेद-भावो का असर नही है। वहा के सभी जैन मिल-जुल कर आपसी स्नेहभाव से रहते हैं। वहा की भावना, जैन यानि जैन। इसी परिभाषा से वहा जैन धर्म की अधिक उत्तम सेवा हो रही है। वहा की औरतें शिक्षित है इसलिए ऊपरी क्रिया काण्डो की बजाय विशेष तत्वज्ञान मे रुचि लेती हैं जिससे छोटे साम्प्रदायिक भेदभाव नहीवत है, जिससे एकता का विशाल दृष्टिबोध मिलता है, उनमें जैन तत्वज्ञान के मर्म को समझने, जानने की तीव्र इच्छा देखने को मिलती है। 'क्रमबद्ध पर्याय' या 'नय चक्र' जैसे गूढ विषयो की जानकारी भी वे प्राप्त करना चाहती हैं। जैन संस्कृति व तत्वज्ञान की सुरक्षा के लिए वे भारतवासी जैनो से भी अधिक विशेष आतुर होती है बल्कि अपने धर्म की सही कीमत उन्हे प्रदेश मे ही समझ मे आती है, यह एक उज्ज्वल पक्ष है।

वहा के जैन जैनधर्म की पुस्तके भारत से मगाते है, उनका पठन-पाठन व चिन्तन मनन करते हैं। धर्म साहित्य द्वारा हम वहा के जैन समाज के लिए बहुत कुछ कर सकते है, यह सभी जानते है कि धर्म साहित्य कितना प्रभावशाली माध्यम हो सकता है, जिसकी पकड बहुत गहरी व दूरगामी होती है। वैसे साहित्य को प्रदेश के जैन समाज हेतु विशेष रू से तैयार कराने की जरूरत है। वहा के स्कूलो पढने वाले बच्चो के लिए उनकी समझ योग्य सर भाषा मे वैसा साहित्य तैयार कराने की खास जरूर है। साथ ही साथ चित्रकथाओ द्वारा भी धर्म साहि का सबल आकर्षक माध्यम तैयार कराके लाखो सख्या मे वहा भेजने की जरूरत है। बचपन से शिक्षा के साथ-साथ इस माध्यम द्वारा प्रदेश मे बस वाले उन जैन बालको को धर्मज्ञान दिया गया तो उनके बाल सस्कारो को और अधिक मजबूत करेगा

आज वैसे तो जैन धर्म की सही आवश्यक तो समग्र विश्व को है, खासकर पश्चिम की भौति सस्कृति के लिए तो जैन धर्म अतिआवश्यक है जि कि शस्त्रो के प्रति गलत दौड और तीव्र हिंसा क्रूर प्रयासो से उन्हे बचाया जा सके। दुनिया 'वॉर मिसाईल्स' के सामने अपनी 'पीस मिसाईल अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकातवाद (स्याद्वाद) रख ही एकमात्र अच्छा उपाय रहा है।

श्री चित्रभानुजी की प्रेरणा से जैन मेडिटे इटरनेशनल सेन्टर की न्यूयार्क, पीट्सबर्ग, पेनीसिल्वा-निया, केनेडा और बोस्टन मे स्थापना हुई है। उन्होंने वहा के जैन धर्म प्रेमियो को भारत की जैन तीर्थ यात्राए कराके सस्कृति प्रचार व दर्शन का महत्वपूर्ण काम भी किया है। वे निश्चित व ठोस प्रयासो द्वारा धर्म रक्षा के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान कर रहे है। समय आ गया है कि हम भी यहा रहते हुए वहा के प्रवासी जैन बधुओ के लिए इसी तरह के ठोस प्रयासो द्वारा सहयोग कर सकते है। हमे भी अपने बुजुर्गो द्वारा भौतिक सम्पत्ति के साथ-साथ धार्मिक संस्कारो का उत्तराधिकार मिलता आया है तो इसी तरह का धार्मिक उत्तराधिकार आज की समग्र जैन पीढी को अपनी आने वाली पीढियो को

सुपुर्द करना है और यह उत्तराधिकार धार्मिक नैतिक आध्यात्मिक सस्कारो द्वारा ही दे सकते है। जिस तरह हमे पिछली अनेक शताब्दियो से भगवान् महावीर का पावन सन्देश मिलता आया है, ठीक वही परपरा हमे भी आगे जारी रखनी है। भारत मे सामाजिक वातावरण द्वारा बालको को धार्मिक सस्कार, उपासना और सात्विक निरामिष भोजन आदि के मिलते ही रहे है परन्तु परदेश मे बसने वाले बच्चो मे ये सस्कार डालने की जिम्मेदारी हमारी है जिसकी उपेक्षा करने से हम सभी धर्म दोष के भागी बनेगे। एक पीढी की उपेक्षा भावी अनेक पीढ़ियो तक पहुंचेगी जो अक्षम्य होगी इसीलिए हम सभी को समयसर सचेत होना जरूरी हे।

परदेश मे प्रति सप्ताह शनि-रविवार को दो छुट्टिया होती है, जिसमे की एक छुट्टी वे अपने आराम मनोरजन या सामाजिक व्यवहार कार्यों हेतु उपयोग करते है। वहा जो स्थान-स्थान पर प्रवचन हाल वगैरा बना दिए जाए तो छुट्टी के दूसरे दिन का वे लोग इस धर्म कार्य हेतु उपयोग कर सकेंगे। उस दिन वहा इकट्ठा होकर प्रवचन भक्ति सगीत, स्वामी वात्सल्य, तत्व चर्चा, शास्त्रोक्त माहिती, इतिहास, कला दर्शन ओडियो-विडियो प्रवचन, वीडिओ आदि का आयोजन भी कर सकते है जिससे कि उनमे सतत धर्म सस्कार जाग्रत रह सके। श्री तीर्थंकरो, जैन महानुभावो, श्रेष्ठियो, साधु महाराजाओ के जीवन चरित्र, दीक्षा महोत्सव, पर्युषण उत्सव, वगैरा की फिल्म तैयार करके हम उन्हे भेज सकते है। आज के लिए उपलब्ध वैज्ञानिक साधनो का उपयोग करना हमारा फर्ज हे और समाज को उसके लिए विशेष प्रवासी धर्म बन्धुओ के लिए करना चाहिए।

इसी तरह वर्ष मे एक दो बार आस-पास नजदीक के सभी शहरो की जैन प्रजा का सामूहिक मिलन आयोजित करना चाहिए और उसके लिए उपरोक्त प्रचार सामग्री साहित्य साधनो का अधिक से अधिक उपयोग करने के लिए हमे ये साधन वहा भेजने चाहिए। भारत की जैन सस्थाओ को अपने यहा से बडे-बडे विद्वानो को वहा भेजना चाहिए, उनके कार्यक्रम आयोजित कर अथवा उनके प्रवचनो के ओडियो विडियो कैसेट्स भेज कर धर्म जाग्रति का काम करना चाहिए।

उनके मार्ग दर्शन हेतु अमुक प्रशिक्षित व्यक्तियो को कायमी रूप से वहा भेजने की व्यवस्था की जाय ताकि उनके माध्यम से यह धर्मज्ञ स्थायी रूप से जारी रह सकेगा। उनके निर्वाह खर्च की जिम्मेदारी समाज को उठानी चाहिए। वे वहा की भाषा के जानकार हो साथ ही वहा की भाषा मे ही प्रचार साहित्य तैयार कराया जाय, यह जरूरी है। ये मार्गदर्शक प्रशिक्षित विद्वान् जैन साहित्य इतिहास, कला तत्वज्ञान नियमो आदि से सुपरिचित होने चाहिए।

वहा के बच्चो को सामान्यतया तीन महीनो का अवकाश भी होता है। छोटी-छोटी टुकडियो मे उन बच्चो को भारत यात्रा के लिए बुलाना चाहिए। यहा उनके लिए धार्मिक शिविरो के साथ ही साथ जैन तीर्थ यात्रा धामो की प्रवास व्यवस्था भी करनी चाहिए जिससे कि अपनी धर्म सस्कृति का प्रत्यक्ष ज्ञान व दर्शन उन्हे मिल सके। जैन सस्थाओ, सास्कृतिक केन्द्रो की मुलाकात और साधु महात्माओ के प्रत्यक्ष दर्शन-प्रवचन आदि उन्हे मिल सके जिससे कि उन्हे धर्म के सही स्वरूप से अवगत कराया जा सके। वहा के बच्चो को अग्रेजी के सिवाय दूसरी भाषा का ज्ञान लगभग नही के बराबर ही होता है, अत इस बात को भी हमे ध्यान मे रखते हुए ही प्रयास करने चाहिए।

इसके लिए एक ही मार्ग है, जैन तत्वज्ञान का सार, अग्रेजी तथा अन्य भाषाओ मे तैयार करना चाहिए जो कि वहा के बच्चो को सिखाया जा सके। यहा के धर्मगुरु विद्वान्जन और वहा भेजे गये अपने प्रशिक्षित मार्गदर्शक इस कार्य को काफी सरलता मे

कर सकेंगे जिससे उनके लिए धर्म समझना काफी सरल और सुगम होगा और बालक पूरे उत्साह से सीखेंगे और ग्रहण कर सकेंगे ।

प्रमुख परदेशी जैन भारत मे धर्मज्ञान, तत्वज्ञान आदि की जिज्ञासा हेतु आते हैं तो उन्हे हमे अपने यहा आवास-निवास, शिक्षण, साहित्य, लायब्रेरी ग्रन्थो आदि की सहुलियतें देनी चाहिए और इससे भी आगे जाकर जरूरत पडने पर खर्च तक का सहयोग देना चाहिए कि वे अपने थोडे आवास समय के दरम्यान अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त कर सके । वे यहा से ज्ञान साधना लेकर प्रदेश मे हमारे धर्मदूत का महत्वपूर्ण कार्य कर सकेंगे । आज तो विदेश की भूमि पर जैन देरासर भी स्थापित हुए है और अन्य जैन सेन्टर्स भी बन चुके है जिसके लिए प्रतिभा सम्पन्न एव शिक्षित जैन बन्धुओ का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । उनके इन प्रयत्नो मे अधिक शक्ति से सहयोग देना यहा के समाज का प्रथम फर्ज है जिसे पूरा करना ही चाहिए ।

इस सम्बन्ध मे अन्य मित्रो के साथ जब भी चर्चाए होती है, तब सुझाव सूचना तो सभी को पसन्द आते है, परन्तु एक ही बात पर जाकर चर्चा अटक जाती है कि **'ये सब कौन करेगा ?' 'कौन जिम्मेदारी लेगा ?'**

अरे भाई—यह कोई अकेले दुकेले आदमी का काम नही है । इसे तो सगठन द्वारा ही पूरा किया जा सकता है । आज का युग ही सगठन का है जो काम पहले कभी राजा-महाराजाओ द्वारा धन व शक्ति से होता था, आज वह शक्ति किसी व्यक्ति मे नहीं बल्कि उससे भी अधिक सगठन मे होती है। सगठन से सम्बन्धित जैन श्रेष्ठीजन ही वैसे राजा-महाराजा का काम कर सकते है ।

अगर सभी ने तय कर लिया, सस्थाओ ने इसे एक कर्तव्य मान कर अपनी प्राथमिक प्रवृति का रूप दे दिया तो फिर क्या मुश्किल है ? विद्वान्, सत महात्मा, साहित्य आदि सभी उपलब्ध हैं, केवल प्रचार का माध्यम तैयार करना वहा के लिए प्रशिक्षित विद्वान्, मार्गदर्शक आदि भेजना, ये सभी कार्य आसानी से पूरे हो सकेंगे । जिसके फलस्वरूप वह हमारे धर्म के सस्कार हमारी अपनी ही भावी पीढ़ी मे गहरे उतरेंगे—साथ ही साथ अन्य परदेशी जिज्ञासुओं को धर्म दीक्षा, धर्मज्ञान दिया जा सकेगा अन्यथा उनके धर्म भ्रष्ट होने का सस्कार भ्रष्ट होने का जिसकी कि आज के भौतिक युग मे पूरी सम्भावना है—**का दोष केवल हमारी अकर्मण्यता को होगा।**

आखिर तो यह सब हमारी-आपकी-सभी की सक्रियता पर ही निर्भर करेगा, वही हमारी सफलता का मापदण्ड होगा—**तो संकल्प करें उस धर्म कार्य का, तैयार होकर दूसरो को तैयार करें, धर्म के लिए धर्ममेघ कार्य में ।** ☐
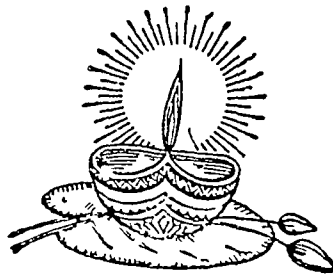
राष्ट्रीय एकता में जैन व्यवसायियों का योगदान

❀ प्रो. सतीश मेहता

△

वर्तमान समय में हमारे राष्ट्र में अनेक जैन व्यवसायी है जो राष्ट्रीय एकता को कायम करने एव मानव को दानवो से मुक्ति प्रदान करने में सहायक है । जैन व्यवसायी पूरे देश में अर्थात् आसाम, प. बगाल, बिहार,गुजरात,उडीसा, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, पजाब उत्तरप्रदेश आदि अनेक राज्यो मे(व्यापार, वाणिज्य, उद्योग, पेशा) व्यवसाय कर रहे है और व्यवसाय से प्राप्त लाभ का उपयोग न केवल स्वय ले रहे हैं बल्कि वे इस लाभ का उपयोग मानव मात्र के लिए अर्थात् मानव कल्याण के लिए कर रहे है ।

भारत एक विशाल देश हैं । विशाल देश होने के कारण हमारे देश मे अनेक प्रकार की प्राकृतिक, भौगोलिक एव सामाजिक विविधता देखने को मिलती है । देश मे विभिन्न धर्म व भाषाए है,तथापि भारतीय जनजीवन मे एक मौलिक तथा आधारभूत एकता विद्यमान है । इस प्रकार का मूल स्रोत भारतीय सस्कृति है । "विभिन्नता मे एकता" भारतीय सस्कृति का मूल मत्र रहा है । भारतीय विचारको ने प्राचीन काल से ही भारत की आधारभूत एकता की कल्पना की थी । उन्होने जीवन व उसकी समस्याओ के प्रति समान दृष्टिकोण तथा सार्वभौम नैतिक एव आध्यात्मिक आदर्शों की स्थापना की थी ।

हमारी सस्कृति मे मानव-कल्याण की भावना पर वल दिया गया है । व्यवसायी भी मानव कल्याण पर ध्यान देते है और राष्ट्रीय एकता मे सहायक होते है क्योकि ये मानव के पाच दानवो से मुक्ति प्रदान करने मे सहायक होते है—अर्थात् आवश्यकता, बीमारी, अज्ञानता, गन्दगी और वेकारी को दूर करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है । यदि ये दानव देश मे रहेगे तो राष्ट्रीय एकता की वात सोचना ही सभव नही होगा ।

किसी राष्ट्र का विकास उस देश के व्यवसायियो पर निर्भर करता है एव व्यवसायी राष्ट्र की एकता के सूत्रधार कहे जा सकते हैं । व्यवसाय का उद्देश्य भले ही लाभ कमाना प्रमुख रहा हो परन्तु वदलते हुए समय व प्रतिस्पर्धा के युग मे लाभ तक सीमित न रहकर सामाजिक उत्तरदायित्वो को पूरा करना भी उसका मुख्य दायित्व है । अर्थात् सेवा करते हुए, मानवीय दृष्टिकोण रखते हुए लाभ कमाना । आज व्यवसायी-ग्राहक, अशधारी, पूर्तिकर्ता, सरकार, राष्ट्र और स्थानीय समुदाय (ममाज) के प्रति दायित्वो को पूरा करते हुए व्यवसाय करता है और राष्ट्रीय एकता मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है ।

वर्तमान समय मे हमारे राष्ट्र मे अनेक जैन व्यवसायी हैं जो राष्ट्रीय एकता को कायम करने एव मानव को दानवो से मुक्ति प्रदान करने मे सहायक हैं । जैन व्यवसायी पूरे देश मे अर्थात् आसाम, प बगाल, बिहार, गुजरात, उडीसा, कर्नाटक, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, पजाव, उत्तर प्रदेश आदि अनेक राज्यो

मे (व्यापार, वाणिज्य, उद्योग, पेशा) व्यवसाय कर रहे है । और व्यवसाय से प्राप्त लाभ का उपयोग न केवल स्वय ले रहे है बल्कि वे इस लाभ का उपयोग मानव मात्र के लिए अर्थात् मानव कल्याण के लिए कर रहे है ।

जैन व्यवसायियो ने व्यवसाय से प्राप्त लाभ से अनेक ट्रस्ट, पुस्तकालय, स्कूल, कालेज, धर्मशालाए, वाचनालय औषधालय, सेवा सस्थान स्थापित कर लोक कल्याण मे उल्लेखनीय योगदान दिया है । जैसे—महावीर विकलाग सेवा समिति, महावीर इन्टरनेशनल आदि आदि ।

जैन व्यवसायियो ने आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक, सास्कृतिक सभी क्षेत्रो मे अपना योगदान देकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए राष्ट्रीय एकता स्थापित करने मे सहयोग दिया है ।

जैन शास्त्रो मे उल्लेखित है कि—जैन धर्म के आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव दीक्षा से पूर्व भारत मे सर्व प्रथम असि, मसि, कृषि, और शिल्प जैसे लौकिक कर्मों के जनक माने जाते है और उन्ही के पुत्र भरत के नाम पर हमारे देश का नाम भारत पडा ।

असि कार्यकर्ता क्षत्रिय, मसि कार्यकर्ता ब्राह्मण और कृषि कार्यकर्ता वैश्य कहलाये । तीनो ही कर्मों मे जिनकी स्वाभाविक प्रवृति और गति नही थी वे कर्मकार शुद्र कहलाये । आदि तीर्थंकर ने इन चारो ही वर्णों को समान माना और ऊच-नीच का भेद नही रखा ।

आज के युग मे धन कमाने की प्रतिस्पर्धा चल रही है और देश मे व्याप्त बेरोजगारी बढ रही है । ऐसे समय मे जैन व्यवसायियो ने जाति-पाति के भेदभाव व ऊच-नीच की भावना को दूर कर सभी को चिकित्सा, शिक्षा, रोजगार, प्रोत्साहन (छात्रवृति, पुरस्कार) प्रदान किया है ।

भारत की आर्थिक समृद्धि मे आरम्भ से ही जैन व्यवसायियो की सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका रही तथा वर्ण के जातीय स्वरूप ग्रहण करने पर भी जैन समाज ने व्यापार, वाणिज्य, कृषि आदि सभी [illegible] सर्वांगीण वृद्धि की है ।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि देश की आर्थिक स्थिति और समृद्धि के प्रमुख स्तम्भ जैन देश के हर भाग के आर्थिक क्षेत्रों के सयोजक व सचालक रहे हैं ।

भारत का प्रथम जगत सेठ जो राजस्थान की ही देन था । नागौर के इस सेठ का उडीसा, बगाल बिहार के अर्थतन्त्र पर पूर्ण प्रभुत्व था । देश के अनेक पूर्वी राज्यो मे इनके व्यवसाय का जाल बिछा हुआ था । यह सेठ बगाल के नवाब सिराजुद्दौला को भी समय-समय पर सहायता करता था । यह अपने समय मे विश्व का प्रमुख सामुद्रिक व्यापारी था ।

दोशी गोत्र के चित्तौड के वैश्य व्यापारी तोलाशाह का व्यापार बगाल व चीन तक होता था । इनका चीन मे भी व्यवसाय का जाल-सा बिछा हुआ था । तोलाशाह के पुत्र कर्माशाह ने गुजरात के बादशाह को विपत्ति के समय लाखो रुपये व लाखो का कपडा देकर सहयोग दिया इसी तरह—इतिहास मे अनेक उदाहरण जैन व्यवसायियो के मिलते हैं जो राज्य की स्मृद्धि, प्रगति व एकता के प्रतीक हैं ।

यदि हम राजस्थान राज्य की तरफ नजर डाले तो ज्ञात होगा कि राजस्थान के बाहर भाग्य आजमाने जाने वाले व्यापारियो एव साहूकारो मे जैन साहूकारो की सख्या अधिक रही । सुदूर अनजान प्रदेशो मे जाना और वहा बसना सरल काम नहीं था फिर भी जैन साहूकारो ने अद्भुत साहस का परिचय दिया । बगाल, बिहार, आसाम, मद्रास आदि प्रान्तो मे अनेक प्रसिद्ध जैन गद्दियो की स्थापना हुई । प्रारम्भ मे ये लोग बेनियन हुए । फिर मुनीम और दलाल हुए । किन्तु वर्तमान मे हम उन्हे बैकर, प्रमुख कपड

के बडे व्यापारी,प्रधान जूट बेलर,अग्रिम पक्ति के लोहे के व्यापारी, चाय बागानो के स्वत्वाधिकारी के रूप मे देखते है। साथ ही साथ ऐसे अनेक जैन परिवारो का उल्लेख मिलता है जो कि एक लौटा-डोर लेकर कमाने के लिए बाहर निकल पडे और हजारो मील की दूरी तय करके अनजाने इलाको मे बस गये और वहा व्यापार-वाणिज्य द्वारा अच्छी सम्पत्ति अर्जित की और उन इलाको मे जैन धर्म का आलोक भी फैलाया।

जैन व्यवसायियो द्वारा विभिन्न उद्योगो की स्थापना की गई हैं, जिनमे प्रमुख है सूती वस्त्र, जूट, सीमेट, वनस्पति घी, कागज, ऊन, पाईप, फिल्म, मशीनरी पार्ट, घडियो के पार्टस, चाय, अफीम, रसायन, एग्रो उद्योग, हीरे, जवाहरात आदि-२। जैन व्यवसायियो द्वारा स्थापित विभिन्न उद्योगो मे ऊच-नीच व वर्ग भेद से हटकर सभी को रोजगार प्रदान किया गया है। साथ ही साथ सभी जाति एव धर्मो के लोग साथ उठते-बैठते व कार्य करते है। इससे-इनमे सहयोग एव एकता की भावना का विकास होता है। उद्योग के कारण ही तो सभी एक जगह एकत्र हुए हैं अत. यहा जाति व धर्म से ऊपर उठकर राष्ट्र को प्राथमिकता देते हुए कार्य किया जाता है। अधिकाशत समाज-उत्थान के कार्य भी उद्योगपतियो द्वारा किये जाते हैं। अनेक ऐसे उद्योग है जिनके मालिक व सचालक जैन होने के बावजूद भी सभी धर्मों के प्रतीक विविध देवी-देवताओ के मन्दिर, मठ, गुरुद्वारा आदि एक ही स्थान पर एक साथ उद्योग के परिसर मे स्थापित किये है जो राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है। उद्योगो की स्थापना से राष्ट्रीय आय व प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ-साथ गरीबी-निवारण व राष्ट्रीय समृद्धि बढी हैं।

देश के प्रमुख उद्योगपतियो व व्यवसायियो मे प्रमुख है साहू श्रेयास प्रसाद जैन, शाति प्रसाद जैन, अशोक कुमार जैन, खेलशकर दुर्लभजी, जवाहरलाल मुणोत, गणपतराज बोहरा, सरदामल काकरिया, मोहनमल चोरडिया, छगनमल मूथा, गुमानमल चोरडिया, सुरेन्द्र रामपुरिया, शिखरचन्द चौधरी, चुन्नीलाल मेहता, किशनचन्द बोथरा, जुगराज सेठिया, रिखबचन्द बैद, भवरलाल बैद, दीपचन्द भूरा, जयकुमार लिण्गा, भवरलाल बाठिया, जगदीशराय जैन, अमृतलाल जैन, हरिभाई कोठारी, हरीशचन्द जैन, ज्ञानचन्द कोठारी शान्ति भाई कोठारी, सुन्दरलाल कोठारी आदि। साहू जैन द्वारा १९६३-६४ मे नियत्रित कम्पनिया २६ थी जिनकी प्रदत्त पूजी ६० करोड रु व सम्पत्तिया ६७ ७ रु करोड थी जो दिन-दूनी रात-चौगुनी बढी है। अत हम यह कह सकते है कि जैन व्यवसायियो द्वारा स्थापित उद्योग राष्ट्रीय एकता मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।

जैन धर्म लोक धर्म है। इसके सिद्धात लोक-कल्याण की भावना के प्रतिविम्ब है। भगवान् महावीर ने लोक-सेवा को महान् धर्म बतलाया था। उन्होने अहिंसा को परम धर्म कहा। महावीर ने कहा—'जीओ और जीने दो।' इस कथन के अनुसार प्रत्येक समर्थ, शक्तिवान एव सम्पन्न का यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वह समाज के असहाय, पीडित, अभावग्रस्त लागो की सहायतार्थ अपनी शक्ति व धन का सदुपयोग करे और परमार्थ को जीवन मे आवश्यक समझे।

जैन धर्म मे अध्ययन, मनन, स्वाध्याय चिन्तन आदि को महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है। ज्ञान का समुचित प्रकाश पा कर ही मानव अपने स्वरूप को पहचान सकता है। अपने को पहचान कर और पाकर ही मानवतात्मा मुक्ति की राह पकड सकती है। जैन धर्म का प्राणी मात्र के लिए निर्दिष्ट पथ है स्वप्रयत्नो से आत्मा को क्रमश ऊर्ध्वगामी बनाते हुए परम लक्ष्य को प्राप्त करना, कर्म-मुक्त होना, स्वय शुद्ध प्रबुद्ध परमात्मा बन जाना और कहना न होगा इस लक्ष्य की प्राप्ति का प्रथम सोपान आधारभूत सोपान 'शिक्षा' है, ज्ञान है।

इसलिए जैन व्यवसायियो द्वारा राष्ट्र के विभिन्न भागो मे अनेक शिक्षा-संस्थाओ का निर्माण व संचालन, पुस्तकालयो, वाचनालयो की स्थापना व संचालन, अध्ययनरत छात्रो की सुविधा के लिए छात्रावासो का संचालन, साहित्य का प्रणयन व प्रकाशन, स्वाध्याय, मनन व चिन्तन के लिए अन्य धार्मिक व सार्वजनिक संस्थाओ की स्थापना, शास्त्र व सत् साहित्य के पठन व श्रवण की परम्परा, ज्ञान गोष्ठियो का आयोजन, जिनका बिना भेदभाव के सभी लाभ उठा सकते है। शिक्षण शिविरो का आयोजन आदि अनेक प्रवृत्तिया है जिनके माध्यम से जैन व्यवसायी देश मे व्याप्त अज्ञानान्धकार को नष्टकर ज्ञान की समुज्जवल प्रभा विकीर्ण करता रहा है। इनमे प्रमुख है—जैन इन्जीनियरिंग कालेज मद्रास, जैन स्कूल कलकत्ता, दिल्ली, जैन सुबोध कालेज, वीर बालिका महाविद्यालय जयपुर, रामपुरिया कॉलेज व रामपुरिया एम बी ए इन्स्टीट्युट, जैन कॉलेज बीकानेर तेरापन्थ महाविद्यालय राणावास, विश्वभारती लाडनू, व उदय जैन महाविद्यालय कानोड (उदयपुर), श्री थानचन्द मेहता कला एव उद्योग संस्थान राणावास आदि आदि। प्राइमरी, सैकण्डरी, हायर सैकण्डरी विद्यालय तो हर क्षेत्र मे जैन व्यवसायियो की प्रमुख भूमिका रही है। इन विद्यालयो, महाविद्यालयो मे सभी जाति के छात्र अध्ययनरत है अत राष्ट्रीय एकता की ये (शिक्षण संस्थाए) प्रतीक है।

पुस्तके ज्ञान राशि का संचित कोष है अत पुस्तकालय स्थापित करना एक पवित्र कार्य है। पुस्तकालय अच्छे समाज के निर्माण मे कितने सहायक हो सकते है, यह कोई अप्रकट सत्य नही।

जैन व्यवसायियो ने अनेक सार्वजनिक पुस्तका-लय व वाचनालय स्थापित किए है जो राष्ट्र की वृद्धि मे महत्त्वपूर्ण योगदान कर रहे है। इनमे प्रमुख है—आचार्य श्री विनयचन्द ज्ञान भण्डार जयपुर, अगर-चन्द भैरोदान सेठिया जैन लायब्रेरी बीकानेर अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार रतलाम, श्री जैन शास्त्र भण्डार संग्रहालय जैसलमेर श्री सन्मति पुस्तकालय जयपुर, विश्वभारती पुस्तकालय सरदारशहर व जैन साहित्य शोध विभाग पुस्तकालय जयपुर, पी वी शोध संस्थान वाराणसी आदि।

जैन व्यवसायियो द्वारा विभिन्न स्थानो पर एलोपैथिक, आयुर्वेदिक तथा होम्योपैथिक चिकित्सालय व औषधालय खोले गये है। जैन धर्म मे दीन-दुखियो की सेवा को जो महत्त्व प्राप्त है, वह भावना इन संस्थाओ के द्वारा साकार होती दिखाई देती है। इनमे प्रमुख है—सन्तोकबा दुर्लभ जी मेमोरियल अस्पताल जयपुर, अमर जैन मेडिकल रिलिफ सोसायटी जयपुर, सेठिया जैन होम्योपैथिक औषधालय बीकानेर, मेडिकल रिलीफ सोसायटी मद्रास, कलकत्ता व जैन औषधालय लुधियाना, रतलाम आदि प्रमुख है।

जैन व्यवसायियो द्वारा स्थापित महावीर विकलाग सेवा समिति व महावीर इन्टरनेशनल ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। महावीर विकलाग सेवा समिति विकलागो को कृत्रिम अ ग मुफ्त मे देता है, जिससे ये परिवार व समाज पर भार न बन सके। विकलागो को रोजगार प्रदान करने मे भी इस समिति ने महत्वपूर्ण कार्य किया है।

महावीर इन्टरनेशनल ने रक्तदान, नेत्रदान जैसे महत्वपूर्ण कार्य किये है। साथ ही साथ गरीब व जरूरतमन्द व्यक्तियो को मुफ्त दवाई भी उपलब्ध कराते है। अनेक जैन व्यवसायी अपने ट्रस्ट के द्वारा असहाय, गरीब व विधवा को आर्थिक सहयोग प्रदान कर रहे है। स्वस्थ नागरिक बनाने मे भी समाज-सेवी संस्थाओ का महत्वपूर्ण योगदान है।

जैन व्यवसायियो द्वारा स्थापित अनेक संस्थाओ, ट्रस्टो द्वारा अनेक क्षेत्रो मे पुरस्कार प्रदान किये जाते है—जैसे अ भा साधुमार्गी जैन संघ द्वारा स्व प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार, तेरापन्थ

सभा द्वारा अणुव्रत पुरस्कार, भारतीय ज्ञान पीठ द्वारा ज्ञान पीठ पुरस्कार आदि आदि ।

उपर्युक्त सभी तथ्यो से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि देश भर मे व्यवसाय (व्यापार, वाणिज्य, उद्योग, पेशा) के क्षेत्र मे जैन व्यवसायियो का सचालन व्यापक स्तर पर था और आज भी है । जैन व्यवसायी प्राचीन समय मे राज-कोपो तक को आर्थिक सहयोग प्रदान करते थे और वर्तमान मे सरकार को भी शिक्षा सस्थान-सचालन, चिकित्सालय, पुस्तकालय, वाचनालय व उद्योग स्थापित करके महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान करते रहे हे । इसके साथ ही साथ हम इन धनाढ्य श्रेष्ठियो मे धर्म धुरीणता और लोकोपकार की भावना का प्राचुर्य पा है । आज भी इनमे अपने कार्य और धर्म पर अविचल रहना व देश का आर्थिक दायित्व वहन करना पाया जाता है । अपने व्यसन रहित जीवन, रक्त, वर्ण और कर्म की श्रेष्ठता और अनुपालन से आरम्भ से ही जैन भारतीय समाज मे सबसे समृद्ध व देश की आर्थिक स्थिति के सयोजक-नियोजक रहे है और इन्ही गुणो के कारण भविष्य मे भी रहेगे । अत स्पष्टतया कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय एकता मे जैन व्यवसायियो का योगदान अमूल्य रहा है व भविष्य मे भी रहेगा । □

—श्री जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, वीकानेर (राज)

कुछ परिभाषायें

सकलन—**श्री चम्पालाल छल्लाणी**

जन्म—जन्म कर्ज ली हुई एक छोटी रकम है, जिसका कि भुगतान जीवन मे कई-कई वार और कई-कई किस्तो मे करना होता है ।

मृत्यु—मृत्यु एक वडी रकम है जिसे जीवन मे एक ही वार और एक ही किस्त मे चुकाना होता है ।

आयु—आयु एक डोरी है कही कच्ची, कही पक्की और कही गाठ जुडी । कहा से कव टूट जाय कोई ठिकाना नही ।

जीवन-जीवन एक गुब्वारा है सास का, अधिक हवा भरोगे फूट जायगा और यदि इसकी हवा एक वार निकल गई तो दुवारा फूलेगी भी नही ।

भोग—भोग खुद छोडकर चले जाये तो दुःख होता है स्वयं उन्हे छोड़ दे तो सुख होता है ।

कठपुतली नाटिका—

मंगलम् महावीरम्

□ डा० महेन्द्र भानावत

△

> कभी किसी चीज का अभिमान मत करो और न धीरज खोओ । आत्मबल रखो, सफलता जरुर मिलेगी ।

❀ दृश्य पहला ❀

कठपुतली का पारम्परिक मच, वैशाली का एक गाव, भगवान् महावीर के जन्म की खबर से पूरा गाव आनन्द विभोर है । लगता है जैसे गाव की चप्पा-चप्पा भूमि हरियाई हुई है । गृह वधुएं मकानो की लीपा-पोती कर अपने आगनो को मांडनो के विविध चौक सातियो से पूर रही है । गृह देहली पर पगल्यों तथा फूल-पत्तियो की कलात्मक वेलें खीच रही है । छोटी-छोटी लड़किया भी पखी, चटाई, गेंददडी तथा गाडूले जैसे माडनो मे मिट्टी, खडी की लाले मोती पो रही है—प्रत्येक घर आंगन और गाव का हर मन अखूट खुशियो मे भरा फूला नही समा रहा है । मच के पीछे इन्ही माडनो की विविध दृश्यावलिया दिखाई जाती है । मच पर दो युवतिया माडने, मांडनें मे लगी है । वे गीत गाती जा रही है—

> कंकूरे पगल्ये महावीर जलमिया ।
> केसर रे पगल्ये महावीर जलमिया ।।
>
> नाच्या घर आंगन गेरू मांडस्यां ।
> रतन कटोरे ओ मेदी घोलस्यां ।।
>
> घूमर घालो ए सइयां संग में,
> आछा नगतर मे कुवर कुखिया ।

इतने मे गावबलाई ढोलदार के साथ एलान करता है—

भाग्यशाली राजा सिद्धार्थ और भागवती रानी त्रिशला के तेजस्वी राजकुमार ने जन्म लिया है । (ढम ढम ढम) राज्य के प्रत्येक घर-गांव मे सात दिन तक खुशिया मनाई जायेगी (ढम ढम ढम) । कई ख्याल तमाशे वाले आयेगे और आप लोगो का मन बहलायेगे । (ढम ढम ढम ढम ढम ढम ढम ढम) प्रस्थान । इनके जाते ही मच पर नक्काल आता है जो अपने घोडे की नकल बताता है ।

नक्काल—घोड़ा (हिन् हिन् हिन् कर पूछ हिलाता है) बहुत सुन्दर घोडा (नचाता है)

> केसर कस्तूरी सा रंग ।
> जिसका कसा हुआ है तंग ।।
> खाता पिश्ता दाख बदाम ।
> हवा में चलना इसका काम ।।

लगे एडी, पहुचे अकाश

(घोडा ऊपर चला जाता है) ।

नक्काल—अरे ! घोड़ा कहा चला गया ?

पुतलीवाला—ऊपर

न०—ऊपर कहा ?

पु०—अन्तरिक्ष मे

न०—क्या करने ?

पु०—मून देखने ।

न०—तुम क्यो नही गये ?

पु०—मुझे नही ले गया ।

न०—क्यो ?

पु०—कहता है कि तुम यही रहो मै तुम्हारे लिये यही मून ला दूंगा ।

(इतने मे घोडा मच पर आ जाता है)

पु०—लो, यह आ गया मून देख कर ।

न०—(घोडे को पुचकार कर) घोडा, घोडा, बहुत थक गया । (मालिश करता है)

मालिश-मालिश

कम्फरटेबल इसकी पीठ ।
एयरकन्डीशन है सीट ॥
लेकर महावीर का नाम ।
पहुचो कुन्डनपुर कुल ग्राम ॥

(दोनो चले जाते है)

❁ दूसरा दृश्य ❁

कठपुतली का वही मच । गाव के बाहर पीपल का पेड । महावीर और उनके दो ग्राम साथी रामा ओर किशना । तीनो की उम्र कोई आठ-दस वर्ष, पेड कूदनी खेल खेलने के लिए आये हैं । पेड से थोडी दूर एक पत्थर रखा हुआ है जिसे पेड की टहनी से कूदकर जो पहले छुए वही विजयी कहलाये ।

महावीर—अरे, रामा किशना कहा गया ?

रामा—किशना कमीज खोलकर आ रहा है (प्रवेश) ।

म०—देखो भई, यह वृक्ष कैसा रहेगा खेलने के लिए ।

रा०—बहुत अच्छा रहेगा ।

कि०—इसकी डालिया भी बडी अच्छी फैली हुई है । झुलने-कूदने मे आनन्द आजायेगा ।

म०—आनन्द तो आ जायेगा मगर इससे कूदना जितना तुम्हे आसान लग रहा है, वैसा नही है ।

रा०—ऐसी क्या बात है ?

म०—बात तो कुछ नही बच्चूजी, जब गिरोगे तब नानी याद आ जायेगी ।

कि०—नानी वानी तो क्या याद आये पर हा, थोडा सभलकर खेलना पडेगा ।

म०—थोडा नही, पूरा ही सभलकर खेलना पड़ेगा, नही तो हाथ-पाव तोड बैठोगे और घर मे पिटाई होगी सो अलग ।

रा०—यू तो हिम्मत हारने वाले नही है, लो ये चढा (चढने का प्रयत्न करता है मगर पूरा चढ नही पाता है) ।

म०—वाह रे हिम्मतवर, क्या ताकत पाई है ? (महावीर उसे सहारा देकर चढ़ाते है) लगा जोर और लगा । इतना ही नही चढ पाया तो क्या खेलेगा खाक ?

कि०—वाह रे रामा ! देख ली तेरी पहलवानी बडी भुजाए फैलाता है और जघा फटकारता है ।

रा०—क्यो शेखी बघारते हो । खुद ही चढकर बता दो तो गोलिया खिला दू अभी चार । और नही तो हो जाये दस-दस की शर्त ।

म०—तुम दोनो इधर रहो । मै बताता हू चढने की तरकीब । बल तो ठीक है मगर बल से भी अधिक कल की जरूरत है । तुम्हारा बल तो तुमने आजमा ही लिया, अब देखो मेरी कल । (महावीर वृक्ष पर पाव रखते ही हाथ से डाली पकडकर चढ जाते है) गोलिया तुम्ही खाओगे कि मुझे भी खिलाओगे । आओ चढो मेरे सामने । (एक-एक कर दोनो को महावीर हाथ पकडकर ऊपर खीच लेते है) देखो भाई, वो रहा पत्थर । डाल मे कूदकर

जो उसके पास पहुंचे वो ही जीतेश्वर । शर्त-वर्त कुछ नही । बोलो ठीक है ? (दोनो-हां ठीक है कहते है और तब महावीर एक दो-तीन कहकर तीसरी ताली मे वहा से कूदकर पत्थर छूने का इशारा करते है। तीसरी ताली लगते ही रामा किशना इधर-उधर भागते है परन्तु डाली से कूदने की उनकी हिम्मत नही होती । महावीर डाल से लटककर जोर-जोर से झूलते है । चकरी खाते है, टागे फैलाते है, फूदका-फूदकी करते है और दोनो से कहते है—बोलो बेटो क्या हो गया ? ताकत कहा चली गई ? बडे शूरवीर हो तो कूद जाओ न ! यह कहते ही दोनो साहस कर कूद पडते है परन्तु वे उठते है तब तक महावीर पहले ही पत्थर को जा छूते है)

म०—आओ, विश्राम करलो थोडा।

रा०—तुम तो यार बड़े तेज निकले ।

कि०—छोटे पर बडे खोटे हो ।

म०—अरे, खोटे तो वे होते हैं जो चलते नही है, रुक जाते है । रुक तुम गये और खोटा मुझे बता रहे हो । खोटा ही सही । इससे क्या पडने वाला है टोटा । कहो तो एक दाई और हो जाय ।

रा०—बिल्कुल हो जाय । अबकी बार देखना मेरा करिश्मा ।

म०—बतादो-बतादो क्यो पीछे रहते हो। पहले भी बता ही चुके हो । अब फिर बतादो ।

कि०—हा-हा, बता देंगे । ऐसी क्या बात है ? अरे अन्न यो ही थोडेई बिगाडा है ।

म०—अरे ललुए, कौन कह रहा है कि तुमने अन्न बिगाडा है । अन्न खा-खाकर तो तुम बडे बहादुर और बलिष्ठ बन गये हो ।

रा०—क्यो ताना मारते हो यार ।

म०—अरे, इसमे ताने की क्या बात है ? हाथ कगन को आरसी क्या ? हो जाय एक-एक दाई और ।

कि०—हा, हो जाओ तैयार ।

रा०—तैयार

म०—तो एक, दो और ये तीन ।

(तीन कहते ही तीनों वृक्ष पर चढने का उपक्रम करते है । महावीर जान-बूझकर नहीं चढते है । पहले दोनों को चढ़ाकर फिर चढते है मगर जब डाली से उतरते है तो महावीर सम्पूर्ण वृक्ष को हिलाकर वही से पत्थर पर जा कूदते है । दोनो देखते रह जाते है और फिर होडा-होडी चल पडती है ।)

म०—कभी किसी चीज का अभिमान मत करो और न धीरज खोओ । आत्मबल रखो, सफलता जरुर मिलेगी ।

रा०—वाकई यार, बात तुम्हारी सही है सोलह आना ।

कि०—हडबडी और होड़ा-होडी दोनो ही मिलकर काम बिगाड देते है ।

म०—चाहो तो एक बार और खेल लो । अबकी बार विजय तुम्हारी दिखती है ।

रा०—हा, तो करलो तैयारी ।

कि०—मै तो तैयार हू ।

म०—तो कौन तैयार नही है ?
एक..........दो ....

रा०—अरे, ठहरो-ठहरो ! वो देखो वृक्ष की डाल पर सर्प जैसा क्या दिखाई दे रहा है ?

कि०—अरे, सर्प ही दीख रहा है बडा भयकर नाग है! देखो, जीभ निकाल रहा है और फूफकार मार रहा है ।

म०—करने दो यार उसको जो भी करे, अपना तो खेल चालू रखो । बिना कसूर के वो किसी का क्या कर लेगा ?

कि०—दो-चार पत्थर मारो, अभी चला जायेगा।

(दोनो उस पर पत्थर फैंकते हैं पर वह टस से मस नही होता है। तब वे महावीर को वहा से चल देने को कहते हैं । महावीर चलने की बात पर आनाकानी कर उसे पकडने को उद्यत होते है)

म०—ठहरो, ठहरो, डरते क्या हो ? मै अभी उसे पकडकर राह लगाता हू ।

(दोनो महावीर को रोकते है पर महावीर उनकी एक भी नही सुनकर उसे पकडने को वृक्ष पर चढ जाते है । साप जोर-जोर से फन फैलाता है, फूफकार मारता है पर महावीर तनिक भी विचलित नही होकर उसका फन और पूछ पकड़ लेते है । यह देख रामा किशना कापने लग जाते है । महावीर नीचे कूदकर साप को छोड देते है । साप चुपचाप अपनी राह पकडता है)

म०—डरो मत । विना सताये कोई किसी का कुछ नही विगाड सकता । अपन चुपचाप खेल रहे थे । अपने वीच मे स्वय साप आया तो आखिर उसे ही हार खाकर जाना पडा ।

रा०—चलो अव रात्रि होने को है । घर चले ।

कि०—मुझे तो वडा डर लग रहा है । साप ही साप दीख रहा है ।

म०—चलो, चलो, डरो मत । सवसे आगे मैं चलता हू । (तीनो का प्रस्थान)

❀ दृश्य तीसरा ❀

गाव के वाहर एकात मे महावीर ध्यान मग्न खडे है । सूर्यास्त का समय उधर से दो वालक खेत से आ रहे होते हैं । वे वीच मे महावीर को देख कुछ समय तक खडे रह जाते है । परन्तु जव महावीर न हिलते-डुलते है तो उन्हे क्रोध आ जाता है । वे उनकी ओर छोटे-छोटे ककड फेंकते है । महावीर पर उसका भी कुछ असर नही होता है । तव वे धूल फेंककर आनन्दित होते है । इस वीच उधर से एक ग्वाले को अपने वैल सहित आते देख दोनो भागते हुए नजर आते हैं। ग्वाला महावीर की ओर देखता है।

ग्वाला—महाराज जे रामजी की । (महावीर की ओर से कोई उत्तर नही मिलने पर) साधू वा राम राम । (महावीर पूर्ववत् ध्यान मग्न है)। अरे ओ पाखडी ! राम राम करते मेरी जीभ घीसी जा रही है और यह वेटा आखे वन्द कर खडा है । वोलो कि अभी कुल्हाडी से तेरह तूम्वडे कर दू (थोडा ठहरकर) । वा मत वोल ये दोनो वैल छोडकर जा रहा हूं, इनकी पूरी निगरानी रखना । यदि ये इधर-उधर हो गये तो ढोगपना निकाल दूंगा । (यह कहकर वह चला जाता है और कुछ समय मे वापस आकर अपने वैल वहा नही पाता है) वैल कहा गये ? अरे वोल तो सही । (महावीर चुप है) वैल वता देना नही तो अभी एक वार की देरी है । रास्ता भुला दूगा । (वह नजदीक आकर महावीर को घूरता है) वेटा न हिलता है, न डुलता है । इतने मे एक उसी का परिचित किसान नवला उधर से आता दिखाई देता है । वह उसे आवाज लगाता है ।

नवला—अरे नवला, ए नवला ! जरा इधर आना तो। (नवला आवाज सुनकर वहा आता है) देख तो ये ढोगीराम मैं इनके भरोसे अपने वैल छोडकर गया और पीछे से इन्होने उन्हे गायव कर दिये ।

नवला—ऐसा नही हो सकता । ये तो पूरे तपस्वी है, देखता नही आखे मूद रखी है, कोई करके तो देखे ।

ग्वाला—भगवान ने आखें दी देखने के लिए उसके तो करम ही फूटे है । सूझता होता हुआ भी अन्धा वना हुआ है ।

नवला—तू तो पागल दीखता है तू भी वन्द करके तो

देरा दो मिनट के लिए ही । मैंने कल सुना कि एक साधु महात्मा बड़ा तेजस्वी, उसका कोई मुकाबला नही । वह यही तो नही है ।

ग्वाला—हुआ रे हुआ ।

नवला—हुआ क्या ? शकल सूरत से तो वही दीखते हैं । कैसा कातिवान चेहरा, क्या रूप दिया है भगवान ने ।

ग्वाला—भाई तू कुछ भी कह आजकल कोई भरोसा नही । ढोंगी-पोंगी ज्यादा है । पता नही कौन कैसा हो ?

नवला—सो तो चेहरे से ही पता लग जाता है । शरीर से ही पता लग जाता है । शरीर इनका कितना लावण्यमय है । ऐसे भागवानो के दर्शन का पुण्य मिलना भी एक बडी बात होती है ।

ग्वाला—तुम कुछ भी कहो, मै मानने वाला नही । मै तो तब इनको मानू जब मेरे बैल यही इसी वक्त बतला दें ।

नवला—ऐसे सत महात्माओ से तुम्हारे बैलो का क्या लेना-देना ? खैर तुम जानो तुम्हारा काम । (इतने मे ग्वाले का लड़का ग्वाले को ढूंढता हुआ आ निकलता है । ग्वाले को देखकर-)

लड़का—काकाजी ओ काकाजी आज ! इतनी दूर क्या कर रहे हो ?

ग्वाला—तेरे बाप को रो रहा हू, तुझे नही प[illegible] हजार रुपयो के बैल यहा से चम्पत हो गये

लड़का—अरे, बैल चम्पत हो गये, किसने कहा ? [illegible] तो मैंने बाधे है, घर पर ।

ग्वाला—कब ?

लड़का—कोई घण्टा भर हो गया ।

ग्वाला—सच !

लड़का—सोलह आना पाव रत्ती ।

नवला—बोल, अब तो सच्चा है साधु ।

ग्वाला—सच्चा पूरा । हीरा है हीरा !

(चरणो मे गिरकर) मुझे क्षमा करो भगव[illegible] म पापी आपको समझ नही पाया । फि[illegible] ही मे आपको कुछ का कुछ समझ लिया मुझे क्षमा करो । मेरा कहा सुना माफ कर[illegible] (तीनो वहा से चल पडते हैं । महावीर [illegible] वत् ध्यान मग्न है । परदा गिर जाता है

—३५२, श्रीकृष्णपुरा, उदयपुर (रा[illegible]

कहानी

नई जिन्दगी

□ डॉ. शान्ता भानावत

△

> सुनीता को अपनी गलती का अहसास हुआ । वह सोचने लगी–मै आज तक जिन लोगो को पिछड़ा और निम्न स्तर का समझ कर उनकी उपेक्षा करती आई हूं आज उन्ही ने मेरी प्राण रक्षा की है । वह मा से बोली–तुम्हारी सेवा और सहयोग की भावना का फल मुझे आज मिला है ।

घडी ने टन–टन करके आठ वजाये । सुनीता उनीदे नेत्रो को मलती हुई आकर किचन से लगी डाइनिग टेवल की कुर्सी पर धम्म से वैठ गई । कुछ क्षण मौन रहने के वाद मुह फुलाकर कहने लगी–मम्मी ! तुम्हे मैने कितनी वार कहा कि इस दीवाल घडी को मेरे वेड रूम से हटा दो । यह मरी कभी पाच वजायेगी, कभी छह और कभी आठ, नौ । देखो न ! इसने तो मेरी नीद ही हराम करदी । घडी की ओर दात किटकिटा कर देखती हुई वोली–मम्मी ! इसने तो मेरे स्वप्न के ससार मे आग लगा दी । मुझे वहुत अच्छा सपना आ रहा था ।

१८ वर्ष की जवान लडकी को आठ वजे आखे मलती और ऊघती हुई देखकर मा को क्रोध तो वहुत आया पर अभी सुवह ही सुवह वेटी का मूड विगड जायेगा, यही सोच, शात भाव से उसने कहा–वेटी ! प्रात इतनी देर तक सोना तुम्हे शोभा नही देता । देखो, पक्षियो को, उन्हे प्रात काल का आभास कितना जल्दी हो जाता है । मुर्गा चार वजे से वाग देने लगता है और तोता, मैना, चिडिया आदि प्रात काल होते ही उन्मुक्त गगन मे अपनी उडानें भरने लगते है । तुम तो मानव हो, प्रात उठकर न सामायिक, न माला और देखो दस वजे तो तुम्हे कॉलेज पहुचना है । कव निपटोगी ? कव नाश्ता और कव खाना होगा तुम्हारा ?

मम्मी की वात उसे अच्छी न लगी । वह तुनक कर वोली–मम्मी, आप तो हमेशा वेतुकी वातें करती हो । कभी सामायिक, कभी माला । मुझे आपकी ये रूढिवादी परम्पराए विल्कुल पसन्द नही हैं । देखो न, अपनी पडौसन श्रीमती वत्रा को । वे भी तो ६ वजे सोकर उठती है । विस्तर पर ही चाय लेती है । जव फ्रेश हो लेती हैं तव घर का काम करती है । और मिसेज छावड़ा को देखो । वे भी औरत हैं । न राम का नाम लेती है न कृष्ण का । देखो उनका खानपान और उनकी रगरेलिया । कल ही श्रीमती वर्मा मुझे कालेज से आते समय वस मे मिल गई थी । कह रही थी–भई ! तुम्हारी मम्मी तो वावा आदम के जमाने की हैं । कभी व्रत करेगी, कभी उपवास । हमारे घर आयेगी तो कहेगी आज यह नही खाना, कभी कहेगी वह नही खाना । नित्य नियम भी उन्होने वहुत ले रक्खे हैं । कहती रहती है धरम-करम करने से गति अच्छी होती है । यह कहते-कहते ठहाका लगाकर वे कहने लगी–अरे पगली वेटी ! मरने

के बाद कौन जाने क्या होगा ? यह जनम मिला है तो इसमे जितना खा ले, वही अपना है। तुम्हारी मम्मी तो बेकार ही मे शरीर गला रही है। भई, हमारा तो सिद्धान्त है 'खाओ, पीओ और मौज करो देखो, बेटी सुनीता ! अपना तो सिद्धान्त है कि खूब खाओ और तान कर सोओ।

सुनीता ने मन ही मन सोचा—वर्मा आटी ठीक ही तो कह रही है। कल ही मैंने एक 'प्ले' पढा था। उसमे भी तो यही लिखा था—इट, ड्रिंक एण्ड बी मेरी। फिर भगवान ने इस ससार मे जितनी भी चीजे बनाई है, वे हमारे खाने-पीने के लिये ही तो है। मम्मी तो सारे दिन कहती रहती है—खाने-पीने की चीजो की मर्यादा रक्खो, पहनने-ओढने की चीजो की सीमा निर्धारित करो। व्यसनो से दूर रहो, यह किताब पढो, वह किताब पढो। भला यह भी कोई मा है। मुझे जीवन मे कोई स्वतन्त्रता नही। मै आज ही मम्मी से कह दूगी—यह करो, वह न करो के तुम्हारे इन बन्धनो ने मुझे बेडियो मे जकड दिया है। मैं अब इन बधनो को और बर्दाश्त नही कर सकूगी। मुझे पक्षियों की भाति उन्मुक्त गगन मे विचरण करने की स्वतत्रता चाहिये। ये सारे बधन मेरे जीवन मे बाधक है।

इतने मे घडी ने टन-टन करके ६ बजाये। सुनीता का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। क्रोधावेश मे आकर उसने टेबल पर पडे काच के गिलास को जमीन पर दे मारा और बोली—मम्मी ! एक घटे से चिल्ला रही हू कि एक कप चाय बना दो, पर तुम हो कि तुम्हारे कान पर जू तक नही रेंगती। तुम्हे पता नही है कि मुझे १० बजे कालेज पहुचना है। सुनीता पैर पटकती हुई उठी और बिना मजन, कुल्ला और चाय के ही किचन से बाहर निकल आई।

सुनीता की मा को पुत्री का यह व्यवहार कतई पसद नही आया। उसने एक बार तो मन ही मन सोचा कि वह अपनी बेटी से कह दे कि इस तरह मुझ पर क्रोध करने की तुम्हे आवश्यकता नही है अपना काम खुद कर लिया करो। पर वे उस बा को अच्छी तरह से समझ गई थी कि इस सम बोलना आग मे घी का काम करेगा। इसलिये मौन रही।

सुनीता का पारा अब भी ठडा होक नीचे नही उतरा था। ग्लास रूम मे बनी वार्ड खोलकर अपने कपडे उसने लेने चाहे तो पता च कि कपडो पर प्रेस भी नही हुई है। क्योकि दो दि से धोबिन नही आ रही थी। उसके पास अब इत समय भी नही था कि वह कपडो पर इस्तरी कर ले। बिना इस्तरी के कपडे देख सुनीता के त बदन मे आग लग गई। उसने एक-एक कर अलमा से कपड़े बाहर निकाल कर फेंक दिये और मा कहने लगी—तुम मा हो या कोई दुश्मन ? मेरे क तैयार क्यो नही रखे ? अब मै क्या पहन कर जाऊ बोलो, बोलती क्यो नही ?

मा ने शात भाव से कहा—बेटी ! धोबन प दिन से बीमार हो रही है। परसो जब कपडे ध आई थी तो उसे बहुत तेज बुखार हो रहा था इसलिये मैने उससे कह दिया कि जब तक तू ! स्वस्थ न हो, मत आना।

धोबन के न आने की बात सुन सुनीता चेहरा एकाएक फिर तन गया। वह मुह चढा बोली—तुमने नौकरो को सिर पर चढा रखा है धोबन को बुखार आ गया तो उसकी छुट्टी, बर्तन स करनेवाली के सिर मे दर्द हो गया तो उसकी भी छु और ऊपर से उनको दवाई देवो, चाय पिलाओ करती रहो तुम बेगार।

बेटी ! तुम इसे बेगार कहती हो। ! बेगार नही है। यह तो मानव सेवा है। सेवा मान का सबसे बडा धर्म है। सुना है तुमने मदर टेरे का नाम ? वे मानव सेवा के क्षेत्र मे बहुत ब कार्य कर रही है। अधे, अपाहिज, कोढियो की सेवा

कर वे उन्हे नया जीवन दे रही है। 'देती होगी, नया जीवन वे। मुझे तो ऐसे लोगो से घृणा है घृणा!' मा का उपहास करते हुए सुनीता कहती रही—क्या तुम भी मदर टेरेसा बनने जा रही हो? सेवा, दया-दान आदि के नाम पर पिताजी की पूंजी लुटा मत देना, नही तो क्या बुढापे मे भीख मागोगी। कल बाढ पीडितो के चन्दे मे कितने रुपये दिये थे तुमने?

बात-बात मे क्रोध, आलस्य, प्रमाद! गरीब, अपग, और असहायो के प्रति उपेक्षा पूर्ण रवैया, यह सब देख मा का कलेजा विदीर्ण हो रहा था। वह मन मसोस कर बोली—अरे बेटी! क्या बीमार नौकरो के साथ सहानुभूति रखना उन्हे सिर पर चढाना है? क्या अपग, अपाहिज, सकटग्रस्त लोगो की सहायता करना धन लुटाना है? सद्कार्यो मे विद्या और धन का जितना उपयोग किया जाय उतने ही वे बढते हे।

मा की बात का बिना प्रत्युत्तर दिये सुनीता ने जैसे-तैसे जल्दी-जल्दी दो कपडो के इस्तरी की और पहनकर बिना कुछ खाये-पिये ही कालेज के लिये घर से रवाना हो गई। जाते समय मा को यह भी नही बताया कि आज उसकी कक्षाए कितने बजे तक चलेंगी और वह घर कब तक आयेगी।

सुनीता को कॉलेज तक पहुचने के लिये पुलिया से बस लेनी होती थी। उसकी नजर कलाई पर बंधी घडी पर पडी। साढे नौ बज रहे थे। बस रवाना होने मे पाच मिनट शेष थे। सुनीता ने अपनी चाल तेज की। मा से हुई तकरार के कारण उसका मन और मस्तिष्क भारी हो रहा था। वह सोच रही थी—मम्मी कह रही थी, विद्या और लक्ष्मी गरीबो के लिये या सद्कार्य मे खर्च करने से बढती है तो मुझे क्या है, लुटाये वह? नोकरो को भी भले ही खूब राह दे। भुगतेगी वे ही, मुझे क्या करना? यह सोचते-सोचते बस स्टेण्ड आ गया, सुनीता को पता नही चला। तब तक ९-३५ हो गये थे। देखते-देखते बस हार्न लगाकार रवाना हो गई। सामने रवाना होती बस को देख सुनीता शीघ्रता से उस पर चढने लगी, पर फाटक पर लगा हैण्डल उसके हाथ मे नही आ सका और वह चलती हुई बस से गिर पडी। बस से गिरते ही सुनीता अचेत हो गई। आस-पास लोगो की भीड इकट्ठी हो गई। सुनीता के सिर से खून बह रहा था। चश्मा टूट कर दूर जा गिरा था। शरीर पर भी काफी खरोचे पड गई थी। सब लोग यही कह रहे थे—कौन लडकी है? किसकी है? कहा घर है? पर किसी मे हिम्मत नही थी कि उसे अस्पताल पहुचाये। तभी सिर पर कपडे का गठ्ठर लिये उधर से एक धोबन आई। एकत्रित भीड़ को देखकर वह लोगो के बीच घुस गई। सहसा अचेत सुनीता पर उसकी नजर पडी। वह उसे पहचान गई। उसने कपडो का गठ्ठर एक ओर फेका और खून से लथपथ सुनीता को छोटे बच्चे की भाति अपने कधे पर उठा कर चल दी रिक्शे की खोज मे। मुश्किल से वह दस कदम ही बढी होगी कि उसे एक रिक्शा मिल गया। उसमे बैठते हुए उसने रिक्शा वाले को जनरल हास्पिटल चलने को कहा। उस समय उसकी जेब मे एक पैसा भी नही था। अस्पताल पहुच कर रिक्शे वाले ने जब अपनी मजदूरी मागी तो धोबन ने अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए उसे अपनी चादी की अगूठी खोल कर दे दी।

धोबन ने सुनीता को इमरजेन्सी वार्ड मे भर्ती करवाया। उसके मरहम पट्टी करवाई तथा टिटनस के इन्जेक्शन के साथ ही आवश्यक दवाई दिलवाई। करीब दो घटे बाद सुनीता को होश आया। सिर की चोट और हाथ-पैरो के दर्द से वह कराहती हुई बोली—मूली धोबन! तू यहा कैसे? मम्मी कहा है? धोबन ने कहा—बेबीजी मम्मी अभी आ रही हैं।

सुनीता के होश मे आने पर डाक्टर ने उसे घर जाने की छुट्टी देदी। धोबन ने फिर उस रिक्शे वाले को बुलाया और उसमे सुनीता को बिठा कर

उसके घर ले आई। फाटक खोलने की आवाज सुनते ही सुनीता की मा बाहर आई। सामने देखती है कि सुनीता के सिर पर पट्टी बधी है और धोवन उसका हाथ पकड कर ला रही है। सुनीता की मा को वस्तु स्थिति समझने मे देर न लगी। धोवन से घटना की जानकारी प्राप्त कर सुनीता की मा ने धोवन को गले लगा लिया और कहा—बहन ! तुमने सुनीता को आज नई जिन्दगी दी है। तुम धन्य हो। यह कहते-कहते उसका गला भर आया।

सुनीता को अपनी गलती का अहसास हुआ। वह सोचने लगी—मैं आज तक जिन लोगो को पिछडा और निम्न स्तर का समझ कर उनकी उपेक्षा करती आई हू, आज उन्ही ने मेरी प्राण रक्षा की है। वह मा से बोली—तुम्हारी सेवा और सहयोग की भावना का फल आज मुझे मिला है। मा ने स्नेहपूरित नेत्रो से कहा—बेटी ! तुमने प्रमाद और क्रोधावेश मे अपने समय और शक्ति का अपव्यय न किया होता तो आज यह दिन नही देखना पडता। सुनीता के हृदय मे पश्चाताप की अग्नि जल रही थी। वह बोली-मा, मुझे क्षमा करो। तभी सुनीता को छाती से लगाते हुए मा ने कहा—बेटी ! सुबह का भूला शाम को घर आ जाता है तो भूला नही कहाता।

सी—२३५-ए, तिलक नगर, जयपुर।

नीति, धर्म जुदा-जुदा

नीति और धर्म मे बहुत अन्तर है। नीति को धर्म नही कहा जा सकता। नीति सीमित है, धर्म विराट् है। उदाहरणार्थ एक पडोसी अपने निकटवर्ती पडोसी की सेवा, सहायता इस भावना से करता है कि मेरी जरूरत मे वह मेरी सहायता करेगा, तो यह उसकी नीति है। इसी दृष्टि मे धर्मी यह सोचता है कि मेरी आत्मा के समान जगत की समस्त आत्माए है। मुझे यथा-समग्र आत्माओ की बिना आकाक्षा के सहायता करनी चाहिए। और, वह यथास्थान करता है, तो वह धर्म का रूप अदा करता है। नीति मे स्वार्थांश रह सकता है जबकि धर्म मे स्वार्थ का अ श नही रहता। नीति मे अपेक्षा से लेन-देन की भावना रहती और धर्म मे यह बात नही रहती। नीति के साथ धर्म की भावना जुड जाय तो सोने मे सुहागा मिल जाय। पूर्वोक्त पडोसी के उदाहरण मे यदि कर्त्ता की भावना आत्मीयता के साथ निस्वार्थता एव कर्त्तव्य परायणता से जुड जाय तो वहा धर्म का रूप उपस्थित हो सकता है। धर्म के बिना नीति, प्राणरहित शरीर की भाति कही जा सकती है।

—आचार्यश्री नानेश

आह्वान

डा. इन्दराज बैद

साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ।
साथ चलना ही नही, आगे निकलना है तुम्हे ॥

(१)

लोग देखो आज बढकर आसमा को चूमते ।
बादलो की वाटिका की सैर करते, झूमते ।
तुम जो अपनी रूढ़ियो को तोड़ते, मरोड़ते,
तो आज उनके साथ तुम भी चंद्रमा पर घूमते ।
अर्चना विज्ञान की अविलब करना है तुम्हे ।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हें ॥

(२)

जागो, पुरानी रूढियो की बेड़ियो को मोड़ दो ।
बेबसी पर तरस खाओ, दहेज का दम तोड़ दो ।
बेटा अगर लाख का तो बेटी सवा लाख की,
व्यापारियो, औलाद का व्यापार करना छोड दो ।
गरीब कन्याओ को घर की बहू करना है तुम्हे ।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ॥

(३)

सोची कभी समाज की सुकुमारियो की भी दशा ?
काटा गरीबी ने प्रथम, तो फिर वैधव्य ने डसा ।
फूल सा मुखड़ा जवानी मे यदि कुम्हला गया,
कौन दोषी नवयुवाओ, यह अंध समाज का नशा ।
फिर आज उनकी माग मे सिंदूर भरना है तुम्हे ।
साथियो ! संभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ॥

(४)

एक-दूजे की उडाओ, वह हसी अच्छी नही है ।
भाइयो ! चेतो, यह फूट आपसी अच्छी नही है ।
देखता ससार तुम्हारा घर-फूंक तमाशा चाव से,
ये रोज की, दिन-रात की दानाकसी अच्छी नही है ।

रोटी कटे इकदांत ऐसे मिल के रहना है तुम्हें।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ।।

(५)

भूल गये क्या महाजनो ! उस चढते हुए ग्राक को ?
लाल, पीली, केसरी, उन पगड़ियो की बाक को ?
दे दिया धन पीढियो का जिसने स्वदेश के लिए,
भूल गये अपने पुरखा भामाशाह की नाक को ?

सर्वस्व अपना देश पर न्यौछावर करना है तुम्हे ।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ।।

(६)

कवि तुम्ही से कह रहा है सुनो लक्ष्मी के लाड़लो !
उठो, माता सरस्वती की अब आरती उतार लो ।
पाया नही ज्ञान तो ऐश्वर्य धरा रह जायेगा ।
व्यर्थ गठरी अर्थ की सिर पर धरी, उतार लो ।

दीप ज्ञान का महल मे फिर आज धरना है तुम्हें ।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ।।

(७)

कर्म ऐसा करो कि वह मनुष्यता का कर्म बने ।
सत्य, समता, त्याग की समग्रता का मर्म बने ।
महावीर के अनुयायियो, उगो तो सूर्य की तरह,
यत्न ऐसा करो कि तुम्हारा धर्म जग का धर्म बने ।

ठान लो कि मनुजता को जग धर्म करना है तुम्हे ।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ।।

(८)

न धर्म में, न कर्म मे औ' न ही देश की भक्ति मे,
शत्रु को भी उर से लगाने की पुनीत प्रवृत्ति मे,
न कम थे कभी, न कम हो अभी, तुम किसी से भाइयो,
न ज्ञान मे, विज्ञान मे, श्रम-साधना ओ'सपत्ति मे ।
पीढ़ियों के वास्ते कुछ धर के चलना है तुम्हे ।
साथियो ! सभलो, समय के साथ चलना है तुम्हे ।

—कार्यक्रम अधिकारी आकाशवाणी केन्द्र, पटना (बिहार)

जैसी करणी, वैसी भरणी, बनते और बिगड़ते हैं।

--नथमल लूणिया

मन डमरू सा डोले पल-पल, चित चंचल, तन, प्राण भी,
जैसी करणी, वैसी भरणी, बनते और बिगडते है।
दृष्टि बदलते सृष्टि बदल गई, मौसम और बहारे भी।
जीने के अंदाज बदल गये, नखरे, नाज, नजारे भी।
निशि वासर के क्रम में लिपटा, कालचक्र ढलता जाये,
चंग चढ़े अरमान हमारे, दहक रहे अंगारे भी।
आखों वाले अंधे अनगिन, श्रवण सहित लाखो बहरे।
सिंधु वक्ष पर बल खाती सी, बेकाबू अल्हड़ लहरे।
पावों वाले पगु बने हैं, मूक बने जिव्हा वाले,
अपने हाथो बुने जाल में, फंसते जाते है गहरे!
आंख मूंद अंधियारा करते, बन जाते अनजान भी,
नियति बदलती थी पहले, नर नीयत आज बदलते है।
दिन सो जाता भरी दुपहरी, जगती मध्य निशाए हैं।
ताक झाक मे नोंक झोंक मे, सबकी सजग निगाहे है।
वेश साधु का, काम ठगो का, लूट-पाट, धोखा-धमकी,
आज हवाओ का दम घुटता, दहसत भरी दिशाएं है।
लुटते थे राही पहले भी, अब राहे लुट जाती है।
प्राण छूटने से पहले ही, विकल सास घुट जाती है।
तेल पकौडो से पहले पीने वालो के क्या कहने,
गर्भाधान नही घटना का, अफवाहें उड जाती है।
झूठ, कपट जिह्वा पर रखते, जेबो में व्यवधान भी,
बात बना करती थी पहले, आज बतंगड बनते है।
सीताये पकडी जाती हैं, आलिंगन अभिसारो मे।
शीलभद्र कोठो पर मिलते, संत मिले हत्यारो में।
सेवा के सौदागर पनपे, अनुदानो की ले पूंजी,
बाग उजाडे माली, मिलते अपराधी रखवारों में।
खुलती जाती पोल निरंतर, पडो की, जजमानो की।
धर्म-कर्म की, पाप-पुण्य की, बिखर रही परिभाषाए,
खेल रहे है खेल खिलाड़ी, बन आई शैतानो की।
पूजा, पाठ, प्रार्थना बदली, त्याग, विराग विधान भी,
अर्थानर्थ बदलते पहले, अब परमार्थ बदलते हैं।
जैसी करणी, वैसी भरणी, बनते और बिगड़ते हैं॥

गीत-

आओ, हम अपने को जानें !

डा. नरेन्द्र शर्मा 'कु

क्या-क्या जान गये हम जग मे,
ज्ञान समेट लिया हर पग मे,
हर विज्ञान हमारी चेरी—
सेवारत उद्यत हर मग मे ।
पर अपने को जान न पाये,
हम क्या है ? पहचान न पाये,
भटक रहे है तम मे पल–पल,
अन्तर्ज्ञान–विहान न आये ।

हम क्या है ? क्या ध्येय हमारा ? आओ, हम 'निज' को पहचाने ।

माया-ठगिनी हमे रिझाये,
तरह तरह के स्वाग रचाये,
चित्त-जलाशय मैला-मैला—
अपना बिम्ब नही दिख पाये ।
मन चंचल कैसे बध पाये ?
हाथो मे क्या पवन समाये !
कितना दुष्कर मन का निग्रह—
बुद्धि विकल पल-पल चकराये ।

बस, 'अभ्यास' 'विराग' निरन्तर जीवन का सम्बल अनुमाने ।

यह तन रथ है एक हमारा,
उसमें बैठा 'जीव' विचारा,
बुद्धि-सारथी इसे चलाये—
मन की वल्गा, एक सहारा ।
इसे इन्द्रिय-अश्व ढो रहे,
इधर-उधर दिग्भ्रमित हो रहे,
कही 'सारथी' बहक न जाए—
पल-पल ये अपशकुन हो रहे ।

कहीं अश्व रथ गिरा न जाये, क्षरण क्षरण इस वल्गा को ताने ।

७ च २, जवाहर नगर, जयपुर-४

卐

□ प्रो. सुन्दरलाल बी. मल्हारा

दान है प्रेम का परिणाम

प्राणी वनस्पति से पोषित होते है और मानव प्राणियो के सहारे जीवित है। परस्पर सहयोग ही प्राणिमात्र का धर्म है, सर्व प्रथम कर्त्तव्य है। इसमे अहसान का स्पर्श भी नही है। यदि है तो अनुग्रह की भावना है, धन्यता का अहसास है कि उसने मेरा दान स्वीकार कर मुझे अनुग्रहित किया, मुझे सम्पत्ति के मोह से कुछ प्रमाण मे मुक्त होने मे सहयोग दिया।

कस्बे मे एक वस्त्रदान समारम्भ है। प्रमुख अतिथि के हाथो बाल–मन्दिर के छोटे-छोटे बच्चो को वस्त्र बाटे जा रहे हैं। नाम पुकारे जाने के साथ ही शिक्षिका एक बच्चे को खडा करती है तथा उसे स्टेज तक खीच लाती है। बच्चा गहरे सकोच से अपने नन्हे-नन्हे हाथो से पोशाक प्राप्त करता है और आया के साथ पीछे चला जाता है। आयाए बच्चो के जूते, पुराने कपडे उतार कर उन्हे नये-नये कपडे पहना रही हैं। मटमैले, बेढब, श्यामल शरीरो पर श्वेत स्वच्छ कपडे अलग-थलग से दिखायी दे रहे है। जिन्हे कपडे नही मिले है वे सुबक-सुबक कर रो रहे है और दूसरे नये-नये कपडो को निरख-निरख कर प्रमुदित हो रहे है। बच्चो के दुख–सुख कितने सहज और कितने स्पष्ट होते हैं।

वस्त्रदान के साथ ही साथ अतिथियो के धुआधार लेक्चर भी चल रहे है। वक्ताओ के शब्दो मे जो बात प्रमुख रूप से प्रकट हो रही है वह दाता की महानता, उसकी स्तुति, उसकी जी खोल कर वाह-वाही। कोई उन्हे कर्ण की उपमा दे रहा है तो कोई उन्हे धर्मराज दानवीर, शूरवीर आदि नामो से पुकार कर स्वयम् को धन्य समझ रहा है। पर बच्चो की ओर शायद ही किसी का ध्यान है। शीत की सुहावनी धूप मे दमकते उनके चेहरो से किसी को सरोकार नही है। वे तो बस दाता के गुणगान मे लगे हैं। उनकी भावनाए उमड रही है और श्रोता गद्‌गद् हो रहे हैं। बाद मे दाता तथा वक्ताओं का पुष्प मालाओ से स्वागत किया जाता है और अन्त मे दाता की ओर से वक्ताओ और मेहमानो को एक बढिया भोज दिया जाता है, और इस प्रकार करीब तीन घण्टे बिता कर सभी अपने-अपने घर लौट जाते है।

दान की यह परम्परा :

यह दान देने और दान लेने की परम्परा अति प्राचीन है। भारतीय सस्कृति मे दान का बडा गौरव गाया गया है। कहा गया है, दानी मृत्यु के बाद सीधे स्वर्ग मे जाता है, जहा उसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है—सुन्दरी, सुरा, महल, मन चाहे पक्वान्न, सगीत, कला तथा सदाबहार यौवन। स्वर्ग के लिये दान जरूरी है, दान के लिये गरीब जरूरी है और भारत मे गरीबो की कभी कमी नहीं रही है। एक बुलाओ तो हजार मिल जाते है। अत दान के लिये दूसरे शब्दो मे स्वर्ग के लिये यहा बडे अवसर है। गरीब ऐहिक सुख के लिये दान ले रहे है तो दानी पारलौकिक सुख के लिये दान दे रहे है, स्वार्थ दोनो मे है,

फिर चाहे एक छोटा स्वार्थ हो और दूसरा बड़ा, एक नीचा है और दूसरा ऊंचा। दूसरी ओर स्वार्थ को शास्त्रो मे सारे पापो का मूल कहा गया है। मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिये धर्म को बड़ा एडजस्टेबल बना दिया है। राजनेता अपने ढग से, धनी, सत्ताधारी अपने ढग से तो साधु-सन्यासी और गरीब अपने ढग से मोड लेते है।

सहयोग जरूरी है :

यह ठीक है व्यक्ति व्यक्ति को सहयोग दे, उसकी मदद करे,क्योकि हम सभी मानव परस्पर एक दूसरे से हजार-हजार मार्गो से जुड़े है। कोई हमारे लिये अन्न उगा रहा है, कोई कपडा बुन रहा है, कोई घर बना रहा है, कोई पुल ला रहा है, कोई पानी की व्यवस्था कर रहा है, कोई अनुसधान कर रहा है, कोई मनोरजन जुटा रहा है। ऐसी अवस्था मे यदि हम एक दूसरे को सहयोग देते है तो वह खुद का ही सहयोग है। इस प्रकार का सहयोग लेकर या देकर पतित नही,अपितु गौरवान्वित ही होते है। वस्तुत. दूसरा हम से अलग नही है। वह हमारा ही रूप है, और यह सहयोग हमे विकसित करता है, समृद्ध करता है। हमे अहसास कराता है कि हम धरती से, धरती के इन्सानो से, सारे प्राणियो से जुडे है। हम किसी का शोषण नही कर रहे हैं, हम तो हर किसी का उसका हक लौटा रहे है। हम ऐसा कर स्वयम् बढ रहे है और दूसरो को भी बढा रहे है। जीवन की यही रीति है, यही मार्ग है। हमारा तथाकथित दान क्या सही माने मे सहयोग है? क्या इसमे एक गहन समता की भावना है? क्या इसमे वह सहजता है, निर्मलता है, पवित्रता है? यदि हम इस तथाकथित दान की मानसिकता पर जरा गहराई से विचार करे तो पता लगेगा कि इसमे एक ओर बडप्पन है तो दूसरी ओर दीनता है। एक विवशता से हाथ फैला रहा है तो दूसरा दान देकर अपना बडप्पन जाहिर कर रहा है। एक अपने सम्मान को बेच रहा है तो दूसरा दान देकर सम्मान अर्जित कर रहा है। ऐसा दान हमारे दिलो को निकट नही अपितु दूर ले जाता है। इसमे ऊँच-नीच की भावनाए समाप्त होने के बजाय अधिक तीव्र हो उठती है। एक ओर गर्व को तो दूसरी ओर दीनता को पोषण मिलता है।

दान की मानसिकता :

दान की मानसिकता क्या है? क्या दानी उद्देश्य दीन के दुख को मिटाना है? दान दे उसे अपने समकक्ष लाना है या यह करुणा का ऐसा उद्रेक है कि दाता अभावग्रस्त व्यक्ति का देख नही सकता? यदि दाता की भावना सच ही गरीब के दुख को मिटाने की होती या दीन ऊंचा उठाने की होती या गहन प्रेम की अनुभूति साथ दान दिया जाता तो क्या आज समाज मे इ दीनता, इतनी हीनता, इतनी क्रूरता तथा इतनी सं शून्यता दिखायी देती? व्यक्ति-व्यक्ति के बीच इतनी असमानता होती? इतना एक दूसरे का शो होता? एक दूसरे का विश्वासघात होता? इ विपरीत वे परस्पर बड़े भाई-चारे से रहते। उ सम्बन्धो मे प्यार का प्रकाश होता। उनके अन्तक मे शान्ति की सरिता बहती।

दान बना है अहम् की तृप्ति :

वस्तुत: अधिकाश मनुष्य दान भी स्वार्थ लिये देते है। कोई मान के लिये,कोई नाम के लि कोई अपने अहम् के पोषण के लिये, तो कोई के लिये दान देता है। धर्मगुरु समझाते हैं "तुम दोगे तो परमात्मा तुम्हे दस लाख देगा। तुम जन्म मे दोगे तो, तो प्रभु तुम्हे अगले जन्म मे देगा जहा तुम्हे सभी प्रकार की सुविधाए मिलेंगी इसका यही अर्थ हुआ कि दान के पीछे भी हम लाभ-वृत्ति ही काम कर रही है। अधिक पाने लिये हम कुछ दे देते है।

इस प्रकार के दान से हम केवल अपने अ को तृप्त करते है न कि उसे जिसे हम दान दे

है। अतः इस प्रकार का दान सही रूप मे दान नही कहलाता क्योकि यह स्वार्थवश दिया जाता है और इस प्रकार ऐसे दान से दाता और गरीब दोनो पतित हो जाते हैं और आज बहुधा यही हो रहा है ।

दान कैसे पावन बने ?

दान कैसे पावन बने ? किस प्रकार यह कल्याणकारी बने ? किस प्रकार यह देनेवाले और लेनेवाले दोनो को गरिमा प्रदान करे ? दोनो को ऊपर उठाए, दोनो को मुक्त करे । एक को सम्पत्ति के बन्धनो से तथा दूसरे को अभाव के बन्धनो से । क्या यह सम्भव है ? इसके लिये गहरी विचारशीलता की आवश्यकता है । वस्तुत पूरा प्राणी जीवन ही एक दूसरे के सहयोग पर टिका है । किसी भी प्राणी के लिये अकेले जीना सम्भव ही नही है। वनस्पति पानी, हवा और जमीन के विविध क्षारो से जीती है, प्राणी वनस्पति से पोषित होते हैं और मानव प्राणियो के सहारे जीवित है । परस्पर सहयोग ही प्राणिमात्र का धर्म है, सर्वप्रथम कर्त्तव्य है । इसमे अहसान का स्पर्श भी नही है । यदि है तो अनुग्रह की भावना है, धन्यता का अहसास कि उसने मेरा दान स्वीकार कर मुझे अनुग्रहित किया। मुझे सम्पत्ति के मोह से कुछ प्रमाण मे मुक्त होने मे सहयोग दिया । अथवा दाता के सहयोग से आवश्यकताओ से विमुक्त हो जीवन को योग्य मार्ग की ओर ले जा सका ।

दान है ऋण-मुक्ति का साधन :

दान वस्तुत मानवता के ऋण से मुक्त होने का एक श्रेष्ठ उपाय है । हमारे पास आज जो कुछ भी है वह आखिर कहा से आया? क्या हम उसे जन्म के साथ लाये थे ? नही । इस सम्पत्ति को हमने वस्तुत मानव एवम् अन्य प्राणियो के सहयोग से ही अर्जित किया है । यदि हमने सम्पत्ति अर्जन मे सहयोगी प्रत्येक घटक को उसका पूरा हक दे दिया होता तो क्या हमारे पास सपत्ति का इतना सचय हो पाता ? सचमुच यह प्रेम का अभाव ही है कि हम इतनी सम्पत्ति अर्जित कर लेते है । मनुष्य प्राणी के अलावा अन्य किसी भी प्राणी मे इतनी परिग्रह की भावना नही है, और सम्भवत· यह इसलिये कि मनुष्य ने अपनी बुद्धिमत्ता को अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति मानकर उसका उपयोग अपने निजी स्वार्थों के लिये किया । मानवीय बुद्धि व्यक्ति की निजी धरोहर है या यह अखिल मानव जाति से मिली एक विरासत है । अत इसका उपयोग निजी स्वार्थ के लिये न होकर पूरी मानवता के कल्याण के लिये होना जरूरी है । जे कृष्णमूर्ति ने कितना ठीक कहा है—"धन सचित कर मरने का अर्थ है, जीवन व्यर्थ गवा देना ।" अत मुख्य बात तो यह कि धन सचित ही न हो और यदि हो ही गया तो उसे बाट देना जरूरी है ।

दान एवम् स्वतंत्रता :

वस्तुत दान तो स्वतत्रता की दिशा मे उठाया गया पहला कदम है । दान तो आनन्द का दूसरा नाम है । जब हम दूसरो को आनन्दित करते हैं तो वह आनन्द हमारे पास ही लौट आता है । दूसरे को दिया गया दान वस्तुत· खुद को ही दिया गया दान है । क्योकि दूसरा हमसे अलग नही है । दान तो एक ऐसा प्रवाह है जो दो दिलो को जोडकर उनमे एकात्मता पैदा कर देता है । फिर वे एक दूसरे मे आसानी से प्रवेश कर सकते है । यह दो मार्गों को मिलाने वाला सेतु बन जाता है और यह दोनो को ही प्रेम से आप्लावित कर देता है । दोनो दिलो को यह एक साथ एक लय से झकृत कर देता है । उन्हे एक ही रग मे, प्यार के रग मे डुबो देता है ।

प्रेम के अभाव मे दान सौदा है ·

लेकिन ऐसा दान तभी सम्भव है जब वह बिना किसी अपेक्षा से, बिना किसी लाभ से, बिना किसी नाम या मान की इच्छा से, बिना किसी स्वार्थ मे दिया जाय । उसमे ऊच-नीच की भावना न स्वर्ग

भी न हो । सहज सहयोग की भावना हो, अनुग्रह की भावना हो, समानता की भावना हो,आदर की भावना हो । और यह तभी सम्भव है जब दान इस प्रकार दिया जाय कि दाहिने हाथ से दिये गये दान की खबर वायें हाथ को भी न लगे । किसी भी किस्म का दिखावा न हो, पूर्ण रूप से सहज हो, निजी हो । ऐसा दान ही दोनो को ऊपर उठा सकेगा—देने वाले को भी और पाने वाले को भी और यह तब हो सकेगा जब हमारा हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो। प्रेम के अभाव मे दिया गया दान एक सौदा मात्र है।

—६८, जिना पेठ, प्रधान डाकघर के

जलगाव (महारा

समता का लो सहारा

☐ समस्त दु खो की जड ममत्व भाव मे है । जिसका ममत्व भाव जितना सगीन होगा उसका दु ख भी उतना ही सगीन होगा । ममत्व भाव की जड जब तक मानव के अन्तरग जीवन मे फैली हुई है तब तक दु ख के अ कुर प्रस्फुटित होते ही रहेगे । दु खो के अ कुरो को जलाने एव ममत्व की जड को खत्म करने के लिए मानव को समत्व भाव का सहारा लेना चाहिए । समत्व भाव के आधार पर उसे प्रिय के प्रति राग भाव एव अप्रिय के प्रति द्वेप भाव को मिटाने का प्रयास करना चाहिए ।

☐ ससार के चित्र-पट पर अनेक तरह के चित्र उभरते हे । उन चित्रो को देख कर मानव कई वार घवडा जाता है । वह उसमे राग-द्वेप करने लग जाता है । उस मानव को समता दृष्टि से सोचना चाहिए कि यह घवराहट उसके लिए कतई योग्य नही है । उसकी योग्यता समभाव मे है । चित्र पर न मुग्ध होना और बुरे चित्र पर न क्षुब्ध होना, समता के सहारे ही सम्भव हो सकता है ।

☐ दु खप्रद लगने वाली घटनाए समत्व के सहारे सुखप्रद वन जाया करती है । व्यक्ति के विचारो का यह चमत्कार है । व्यक्ति अपने समत्व भाव के विचारो के भयकर दु ख मे भी सहानुभूति कर सकता है ।

—आचार्य श्री नानेश

△ कन्हैयालाल डूंगरवाल, एडवोकेट

कैसी समाज सेवा ?

△

> मेरी ऐसी मान्यता है कि यदि जैन समाज देश मे सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था के परिवर्तन की ओर भी ध्यान दे और ऐसी शक्तियो को अपना नैतिक और साधनो का वल प्रदान करे तो एक अच्छी व्यवस्था कायम करने मे सफलता मिल सकती है । जीवन मे सदाचार, शाकाहार, स्वदेशी चीजो का व्यवहार, काले धन का निषेध, देश मे उत्पन्न समस्याओं के समाधान मे सक्रिय योगदान, और सेवा भाव के द्वारा हम देश और समाज को वदल सकते है और हम स्वय अपने जीवन को सार्थक वना सकते है । जरूरत है सकल्प की और मैदान मे कूदने की ।

आजकल राजनेता, अफसर, व्यापारी, सस्थाए चाहे सामाजिक या धार्मिक कैसी भी हों सब कहती है 'सेवा कर रहे है । इतनी धार्मिक और राजनैतिक तथा सामाजिक सस्थाए होते हुए भी आम जनता सेवा मे वचित है । देश के ७० प्रतिशत लोग गरीवी की सीमा रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे हैं और निम्न मध्यम श्रेणी भी अपनी आवश्यकताओ की पूर्ति नही कर पाती है। रोटी, कपडा, मकान, शिक्षा, चिकित्सा, रोजगार जैसी वुनियादी जरूरते अधिकाश जनता की पूरी नही होती । कहने को अनाज के मामले मे हम आत्मनिर्भरता का दम्भ भरते है किन्तु प्रतिव्यक्ति अनाज की खपत कम हो रही है क्योकि क्रय शक्ति निरन्तर गिर रही है ।

वढती हुई जनसख्या के मान से हमारे सव साधन कम पड रहे है । रोजगार मूलक उद्योग लगाने के वजाय हम कम्प्यूटरो, स्वचालित मशीनो एव वहुराष्ट्रीय कम्पनियो के जाल मे फसकर उपभोक्तावाद की ओर वढ रहे है । इस अन्धी दौड के कारण अव दिनो-दिन समाज सेवा के लिये समय कम मिलने लगा है ।

वुद्ध, महावीर, गाधी के देश मे अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, आस्तेय, ब्रह्मचर्य, लोकतन्त्र, विकेन्द्रीकरण आदि के सिद्धान्तो की माला जपने वाली सरकारें और लोग महान् परिग्रहवादी, हिंसक, भ्रष्टाचारी, व एकाधिकारवादी वनते जा रहे है । समाज के ऐसे माहोल मे समतावादी समाज के वजाय घोर विपमता फैलती जा रही है । ऐसे मे कही-कही लोग दीन-दुखियो के लिये धर्मशाला, शिक्षण सस्था, मन्दिर-मस्जिद, चिकित्सालय आदि का निर्माण करवाते है । कोई अन्नकूट खोलते है । कोई नेत्र शिविर या या कोई और रोग परीक्षण या कैम्प लगाते है । विकलागो को सायकल, लकडी के पैर, मरीजो को दवाइया, गरीव विद्यार्थियो को पुस्तकें आदि दिलवाते है । इसको खराब तो कोई कैसे कहेगा पर एक दृष्टिकोण यह भी है कि इस

प्रकार के दान से समाज में कथित दानवीरो की ओर आक्रोश के बजाय श्रद्धा पैदा होती है जिससे समाज मे यथास्थितिवाद की शक्तिया मजबूत होती है। परिवर्तन की आग ठंडी होती है।

फिर भी यह बात निर्विवाद है कि चाहे पूजीवादी, साम्यवादी, समाजवादी या अन्य किसी भी राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था मे समाज सेवा की गुजाईश हमेशा रहेगी। कोई भी सरकार आम जनता की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति नही कर सकती। समाज में आध्यात्मिकता जगानी चाहिये। अध्यात्म के साथ ही करुणा, दया, सवेदना जगेगी। सवेदना से ही दीन दुखियो की सेवा का भाव जगता है। सवेदना से ही 'समता' स्थापित करने की प्रेरणा मिलती है।

आज हम सवेदनहीन होते जा रहे है। पहले कोई भी अपने पडोसी, सहयात्री, राहगीर किसी पर कोई भी मुसीबत आती थी तो लोग तत्काल सहायता के लिये तत्पर हो जाते थे। आज बीच मे बोलने वाले के लिये खतरा पैदा हो गया है। अन्यमनस्कता का भाव पैदा हो गया है इसलिये तत्काल जब सहायता या सेवा की जरूरत हो आदमी उससे किनारा करना चाहता है। जरूरतमन्द को सहायता देना हमारा नैतिक दायित्व है, यह भाव जगना चाहिये और उसके मुताबिक काम होना चाहिये।

गाधीजी ने सत्य, अहिसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य सभी पर जोर दिया था और उसे मूर्तरूप देने के लिये गृह उद्योग, खादी, स्वदेशी भावना, आर्थिक और राजनैतिक विकेन्द्रीकरण पर बल दिया था। अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध समूह ही नही बल्कि व्यक्ति भी लड सके, इसके लिये सत्याग्रह का अमोघ अस्त्र उन्होने काम मे लिया और दुनिया को एक नई चीज दी। गाधी के इन्ही विचारो को यदि हिन्दुस्तान कार्य रूप मे परिणित करता तो हम आज दुनिया को अणुबम, शस्त्रो की होड, युद्ध और तबाही के बजाय शाति, निशस्त्रीकरण, समता, सम्पूर्ण क्राति का सदेश देते। हम युद्ध हथियारों की होड मे शामिल हो रहे है। पड़ोसी मुल्को से आपस में धार्मिक, साम्प्रदायिक और भाषावार झगड़ो मे उलझ रहे है।

आज आदमी धर्म और शासन दोनो से न[illegible] नही खाता। उनका अनुशासन नही मानता। चुनाव के जरिये काले धन को मान्यता मिल रही है। तस्कर लोग धार्मिक कार्यों मे आगे आकर सामाजिक मान्यता प्राप्त कर रहे हैं। इसलिए समाज सेवा के एकांगी रूप को पकडने से वाछित फल की प्राप्ति नही होगी। गाधीजी पूजीवादियों को समाज का ट्रस्टी बनने के लिए कहते थे। आज वह भाव कहा है? वर्ग सघर्ष के द्वारा प्राप्त साम्यवादी व्यवस्था मे भी एक शासक वर्ग अलग ही बन जाता है जो आम जनता पर अपना मजबूत शिकजा रखता है। वर्ग सघर्ष हिसक हो यह जरूरी नही है पर अहिंसक तरीके से तो होना ही चाहिये। बिना सघर्ष के जुल्म और विषमता मिटना कठिन है। आज पूजीपति, अफसर व नेतृवर्ग सब उपभोक्ता संस्कृति और पाश्चात्य सभ्यता मे डूब रहे हैं। बम्बई मे ओबेराय होटल मे एक 'रोजिटरी केफै' है जिसमे दो आदमियो के भोजन का १०-१२ हजार रुपया एक टाईम का ये समाज के ट्रस्टी खर्च करते है। इसी प्रकार धर्म मे अपरिग्रह के सिद्धान्तो वाले अधिक से अधिक परिग्रह किसी भी जरिये से चाहे उचित अथवा अनुचित हो, जोडते है। समग्र देश मे लोक भाषा, लोक भूषा, लोक भोजन और लोक भवन की संस्कृति का प्रचलन होना आज अति आवश्यक है।

जैन दर्शन हमे चिंतन के आधार पर समता वादी समाज के निर्माण की ओर, निष्काम समाजसेवा की ओर प्रवृत्त करता है किन्तु हमारे यहा समाज और राज्यव्यवस्था ऐसी है कि आदमी यह जानते हुए भी कि गलत कर रहा है अधिक से अधिक पूजी और धन इकट्ठा करने मे लगा रहता है क्योंकि हमारे यहा सामाजिक सुरक्षा जैसा स्वास्थ्य-रोजगार और

ढापे की पेशन, वच्चो की शिक्षा-दीक्षा आदि की
ोई व्यवस्था नही हे। इसलिए भारतवासी जीवन
र उलझा ही रहता है। ऐसे मे समाज सेवा का
ाम उसे रेगिस्तान मे झील जैसी शाति देता है।
री ऐसी मान्यता है कि यदि जैन समाज देश मे
ामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था के परि-
र्तन की ओर भी ध्यान दे और ऐसी शक्तियो को अपना
तिक और साधनो का वल प्रदान करे तो एक अच्छी
यवस्था कायम करने मे सफलता मिल सकती है और
दि देश मे वेकारी, वेरोजगारी, भ्रष्टाचार, गरीबी
मट जाये तो फिर वह एक आदर्श श्रावक वन श्रमण
सस्कृति को आनन्द पूर्वक जी सकता है। परिपाटी
की सेवाओ के साथ-साथ इस प्रकार की नई सेवाओ
पर भी हमारा ध्यान जाना चाहिये। जीवन मे सदा-
चार, शाकाहार, स्वदेशी चीजो का व्यवहार, कालेधन
का निषेध, देश मे उत्पन्न समस्याओ के समाधान मे
सक्रिय योगदान और सेवा भाव के द्वारा हम देश
और समाज को वदल सकते हैं और हम स्वय अपने
जीवन को सार्थक वना सकते हैं। जरूरत है सकल्प
की और मैदान मे कूदने की।

—गाधी वाटिका के पास, नीमच (म प्र)

शीतल पानी

शीतल पानी के पास जैसे कोई गर्मी से तपा हुआ
प्राणी पहुचता है, वह जैसी शीतलता, शान्तता प्राप्त
करता है उससे भी वढकर ससार की विषय-वासनाओ
की आग से सतप्त वना हुआ मानव साधु के निकट
जाकर अनल्प शाति की अनुभूति करता है। पवित्र
शुभ मानस तन्त्र का प्रभाव अवश्य पडता है। वास्त-
विक साधु का मानस अत्यन्त पवित्र मात्र शाति की
सांस ले सकता है। जो शाति न डॉक्टर दे सकता
है, न वकील दे सकता है और न अन्य कोई। इसी-
लिए कहा जाता है 'तीर्थ भूता हि साधव।' साधु-
जीवन मे रमण करने वाले साधु तीर्थ भूत होते हैं।
यह स्थिति कैसे निष्पन्न होती है। इस स्थिति के
निष्पन्न होने मे जितनी मानसिक साधना काम करती
है उतनी दूसरी शक्तिया काम नही करती।

आचार्यश्री नानेश

व्यंग्य लेख
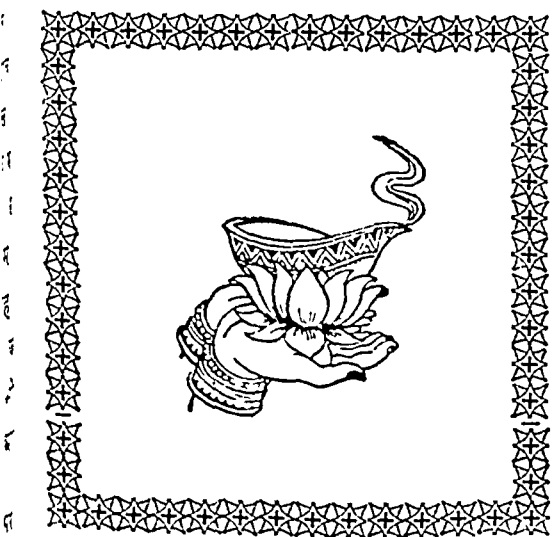
△ गणेश ललवानी

सेवा, क्यों और कैसी ?

△

> यदि हम अपनी आवश्यकताओ को सीमित कर ले तो हमारे चारो ओर जो हाय तौवा है, प्रतिस्पर्धा है जो कि जीवन को विक्षुब्ध बनाए हे, वह सब शात हो जाएगी। न मार्क्सवाद का झगडा रहेगा, न पू जीवाद का शोषण। आप प्रगति की बात कहेगे किन्तु वह प्रगति किस काम की जिसके ज्वालामुखी के मुख पर बैठकर हम एक विस्फोट की आशका से आतकित होते रहे और चन्द्रलोक की यात्रा की डीग मारते रहें।

सेवा पर कुछ लिखू तो क्या लिखू कारण मुझे आज तक यही समझ मे नही आया कि वे क्या है ? कैसे की जाती है ? मुझे तो यह प्रश्न उतना ही जटिल लगता हे जितना जटिल बक रूपी धर्म का प्रश्न था—पथ क्या है ? उसके उत्तर मे धर्मराज युधिष्ठर ने कहा था—जब श्रुति और स्मृति भिन्न भिन्न है। साथ ही इसे लेकर ऋषि मुनियो मे भी मतभेद हे तव यह वताना कठिन है कि पथ क्या है ? अत 'महाजनो येन गत स पन्था।' महाजन जिस रास्ते पर चलते है, वही पथ हे।

युधिष्ठिर के इस उत्तर से वक रूपी धर्म तो सन्तुष्ट हो गए पर मै नही हो सकता। उनके महाजन शब्द ने मुझे उलझन मे डाल दिया। हमारे देश मे मोदी या व्यवसायी को महाजन कहा जाता है। बगाल मे तो वणिक के लिए साधु शब्द का भी प्रयोग हुआ है। मोदी हो या व्यवसायी या वणिक पता नही इनका आचरण कभी महाजन या साधु जैसा रहा हो पर आज तो सर्वथा इसके विपरीत ही दृष्टि गोचर होता है। फिर राजेश खन्ना या हेमामालिनी जो कि अपने क्षेत्र के महाजन हैं क्या वे मुमुक्षु के लिए महाजन हो सकते है ? नही। जो तस्करी करना सीख रहा है वह क्या सत तुलसीदास जी को महाजन मान सकता है ? कदापि नही। उसका तो महाजन हो सकता है चार्ल्स शोभराज। उसे यदि आगे बढना है तो चार्ल्स के पथ पर ही चलना होगा। तभी तो कहता हू युधिष्ठिर के प्रत्युत्तर से कुछ भी निर्णय नहीं हो पाया कि पथ क्या है ?

सेवा के विषय मे भी मेरी उलझन का यही कारण है।

तेरापथी साधु जब कहते है मेरी सेवा करो तो उसका तात्पर्य होता है तुम आकर मेरे अकेलेपन को दूर करो। उधर रवीन्द्रनाथ कहते है—'एकला चलो रे।' किन्तु रवीन्द्रनाथ के कथन मे कुछ तथ्य दिखाई दे रहा है। कारण ससार मे हम अकेले ही आए है, अकेले ही जाएगे। योगीराज हरिहरानन्द अरण्यक के शिष्य महामेघ आरण्यक मधुपुर स्थित अपने आश्रम की एक कोठरी मे स्वय को बन्द रखते थे। न किसी से मिलना, न किसी से जुलना। साल मे एक वार भक्तो को दर्शन देते थे।। दिन मे एक वार सामान्य आहार लेते

थे । मेरी समझ मे नही आया कि वह पथ ठीक था या यह पथ जो गप्प लडाते रहते है एव नित नए प्रोग्राम बनाते रहते हैं । वे सेवा करते थे या ये करते है ? हा हिन्दू भक्त जब थाली परोसकर गुरु महाराज को कहता है—"महाराज, सेवा कीजिए" तो इसका अर्थ कुछ और होता है अर्थात् आप आहार ग्रहण करिए । यह भी ठीक ही है क्योकि किसी को आहार-दान से परितृप्त करने से अधिक और क्या सेवा हो सकती है ? फिर जब हम कहते हैं कि कहिए मैं आपकी क्या सेवा करू तो इसका अर्थ है मैं आपका क्या प्रिय कर सकता हू । यह भी ठीक है । एक सन्त के सम्मुख जब अलेक्जेण्डर जाकर खडा हो गया और बोला–'महाराज क्या सेवा करू आपकी ? तो उन्होने कहा–जरा बगल हट जाओ ताकि जो धूप आ रही है, वह आती रहे । और जब कोई व्यक्ति मुझे लिखते हैं–योग्य सेवा लिखे तो मै निरूत्तर हो जाता हू । कारण उनके लायक सेवा क्या होगी यह मुझे ढूढ निकालना होगा । क्योकि यह काम कोई आसान नही अत. मैं समझ जाता हू कि वे चाहते हे मै उन्हे कुछ नही लिखू ।

कभी-कभी मुझे स्वय पर ग्लानि होने लगती है कि मैने आज तक अपनी सेवा के अलावा किसी दूसरे की सेवा नही की । न देश सेवा के लिए जेल गया, न फासी पर लटका, न जन-सेवा के लिए रुपये एकत्रित किए, न पद-यात्रा की, न धर्म के नाम पर माथा फोडा, न किसी का घर उजाडा । लोग कितनी भाग-दौड करते ह और मै हू कि जहा का तहा खडा हू । तभी स्मरण हो आई मिल्टन (Milton) की वह पक्ति They also serve who stand and wait अर्थात् वे भी सेवा करते हे जो चुपचाप खडे हैं और इन्तजार करते हैं ।

Paradise Lost–के कवि मिल्टन अन्धे हो गए थे अत अन्धत्व के कारण वे जैसी चाहते थे वैसी भगवान की सेवा नही कर पाते थे । इसके लिए उनके मन मे बडी ग्लानि थी । तभी जैसे उनके अन्त करण मे कोई कह उठता है–'ईश्वर मनुष्य के कार्य को नही देखते उसके मानस को देखते है । उन्हे किस चीज की कमी है कि वे काम की प्रतीक्षा करेगे ? वे तो राज राजेश्वर है ।' एतदर्थ मेरा भी मन शान्त हो गया । मै जो कुछ नही करता हू, यह भी एक बडी भारी सेवा ही है आप इसे माने या न माने । गालब्रेथ जो कि भारत मे अमेरिका के राजदूत थे और अर्थ-शास्त्री भी, अपने एक ग्रन्थ मे अपनी पत्नी को धन्यवाद देते हुए लिखते हे कि उसने शात रहकर (by keeping quite) उनकी जो सेवा की है उससे लिए वे उसके आभारी है ।

मुझे पता नही उनकी पत्नी झगडालु थी या नही । शायद थी तभी तो उसे शात रहने पर साधुवाद (Complements) दिया । उसने शात रहकर गालब्रेथ को ग्रन्थ-रचना मे जो सहयोग दिया वह अमूल्य था । किन्तु झगडालु होना भी कोई बुरा नही है । सुकरात की पत्नी इतनी झगडालु थी कि सुकरात जरा देर भी घर मे नही टिक पाते । अत वे रास्तो मे भटकते हुए एथेन्स के नवयुवको को Corrupt करते यानि उनके माथे की धुलाई करते । सुकरात की पत्नी यदि झगडालु नही होती तो उसकी स्नेह छाया मे सुकरात का समय यू ही बीत जाता और हम प्लेटो के Dialogue से वचित रह जाते । सुकरात की पत्नी की सेवा गालब्रेथ की पत्नी जैसी ही अमूल्य सेवा थी ।

इसके विपरीत लीजिए बूना रामनाथ को । वे अपने अध्ययन और अध्यापन मे इतने मग्न रहते कि उन्हे अन्य कुछ भी अपेक्षित नही था । इसी कारण वे दरिद्र भी थे । पर उन्हे इसकी कोई चिन्ता नही थी । उनकी इस निस्पृहता की बात कृष्णनगर के महाराज कृष्णचन्द्र के पास पहुची । वे उन्हे देखने आए । उनकी पाठशाला को देखकर पूछा–आपको कोई अनुपपत्ति तो नही है ? अनुपपत्ति का अर्थ वे शास्त्रीय समस्या समझे । बोले–नही तो । जबकि राजा का आशय

था आर्थिक समस्या से । अन्तत: राजा ने स्पष्टीकरण करते हुए पूछा—कोई अभाव तो नहीं है ? उन्होंने कहा—नही, वह भी नही है । ग्रामगण दो मुट्ठी चावल दे देते है और मोदी थोडा सा नमक । और यह जो इमली का पेड है उसका पत्ता उबाल लेते है । राजा ने पूछा—और वस्त्र । रामनाथ ने कहा-सामने ही एक कपास का पेड है उसी की रुई मे ब्राह्मणी सूत कातकर कपडा बना लेती है । साल भर के लिए दोनो के दो कपडे तो हो ही जाते है । भला ऐसे निस्पृही को राजा क्या दे सकता था ? अत वे ब्राह्मणी के पास गए । सोचा, स्त्रिया अलकार-प्रिय होती है शायद कुछ मागें—पर वे थी जैसा पति वैसी पत्नी । उनके हाथ मे सुहाग का चिन्ह शाखा तक नही था । केवल एक मगल सूत्र बधा था । राजा ने उससे प्रश्न किया—कुछ चाहिए । तो उनका भी वही प्रत्युतर था कुछ नहीं चाहिए । राजा के द्वारा शाखों की बात उठाने पर बोली—शाखा नहीं है तो क्या हुआ, मगलसूत्र तो है। राजा वापस लौट गए ।

तो यह भी तो एक सेवा ही थी । यदि हम अपनी आवश्यकताओ को सीमित कर ले तो हमारे चारो ओर जो हाय तोबा है, प्रतिस्पर्धा है जो कि जीवन को विक्षुब्ध बनाए है वह सब शान्त हो जाएगी। न मार्क्सवाद का झगडा रहेगा, न पू जीवाद का शोषण। आप प्रगति की बात कहेंगे किन्तु वह प्रगति किस काम की जिसके ज्वालामुखी के मुख पर बैठकर हम एक विस्फोट की आशका से आतकित होते रहे और चन्द्रलोक की यात्रा की डीग मारते रहे ।

—सम्पादक तित्थयर, कलकत्ता

समता चिकित्सा

शरीर की चिकित्सा डाक्टर करते है । मन एव कर्मो की चिकित्सा समता करती है । मानसिक एव कर्म-रोगो से रुग्ण मानवो को समता चिकित्सा प्रणाली अपनानी चाहिए । सच्चे शारीरिक चिकित्सक तो आज के जमाने मे महगे एव कठिनाई से प्राप्त होते है । पर समता चिकित्सा करने वाले चिकित्सक को प्राप्त करके जागृत होकर इस प्रणाली को अपनाकर कर्म-रोग से मुक्त होने का प्रयास कीजिये ।

—आचार्य श्री नानेश

❀ श्रीमती गायत्री कांकरिया

सेवा : अहेतुक आत्म समर्पण

△
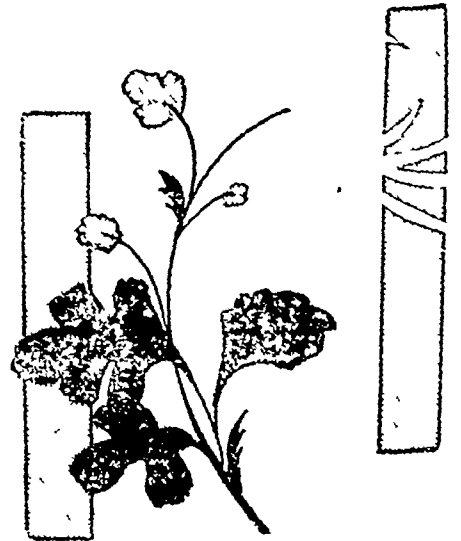
सेवा का ही दूसरा नाम अहेतुक आत्म समर्पण है । सेवा का ही नाम प्रेम है, सेवा का ही नाम आनन्द है और ज्ञान अर्जित कर हम सत्-चित्-आनन्द की ही तो प्राप्ति चाहते है । ·· मनुष्य जितना देता है उतना ही पाता है प्राण देने से प्राण मिलता है, मन से मन मिलता है, आत्मदान ऐसी वस्तु है जो दाता और ग्रहीता दोनों को सार्थक करती है ।

आनन्द की खोज मानव स्वभाव का अग है । जीवन मे आनन्द की स्फुरणा तभी स्फुरित होती है जव हम क्षण भर के लिये ही स्वय मे पहुचते हे परन्तु भ्रान्ति यही है कि हम दूसरे को ही कारण समझते है । 'सत्य' (सत्) की पहचान कठिन है । भाषा के 'य' से जुडकर 'सत्' 'सत्य' हो जाता है, जिसके अनेक अर्थ हो सकते है । अनुभूति को समझने के लिये अनुभूति के स्तर पर जाना जरूरी है । 'पर' का जानना चाहिये उससे कुछ पाने के लिये, अपनाने के लिये नही वरन् 'पर' से भिन्न 'स्व' की पहचान/खोज के लिये ।

इस जीव सृष्टि म मनुष्य ही सवसे अधिक क्रूर प्राणी है, फिर भी मनीषी मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ प्राणी एव सुसस्कृत मानते हैं·· ·····। मानव श्रेष्ठ प्राणी है । लेकिन कव ? उस समय जव वह अपना स्वार्थभाव छोड़ कर दूसरो के लिए अपना सर्वस्व समर्पित कर दे अन्यथा उसका मूल्य दो कौडी का भी नहीं । स्वार्थ ही मनुष्य को सवसे अधिक क्रूर बना देता है । जो आपत्तियो मे भी विचार निष्ठ रहता है, वुद्धि को विवेक से परिमार्जित करता है, मन मे अनुकम्पा रखता है, वही सच्चा मनुष्य है ।

प्रत्येक व्यक्ति भिन्न-भिन्न विचारो, कल्पनाओ का अत्यन्त रहस्यमय ईकाई होता है । देखा जाय तो सारा जीवन ही रहस्य से भरा होता है । अपने आसपास क्या कम रहस्य हैं ? लेकिन उनमे एकाध ही रहस्य मन को छु लेने वाला होता है । शरीर के निकट रहने वाले व्यक्ति मन के भी निकट हैं यह निश्चित नहीं । सत्य सदैव वैसा ही नहीं होता जैसा लगा करता है । कुछ घटनाए होती ही अटल हैं । साथ ही यह भी सत्य है कि कुछ घटनाओ के परिणाम टाले जा सकते हैं, इनके लिये लगन से प्रयत्न करना अत्यन्त आवश्यक है ।

कर्मवाद को स्वीकारते हुए सही पुरुषार्थ करते रहना ही जीवन की सच्ची साधना है । साधना कभी भी सामूहिक नहीं होती, बडी अमग स्थिति है यह । वैयक्तिक होते हुए भी साधना का परिणाम सामाजिक होता है । साधना से आनन्द की किरणें प्रस्फुटित होकर दूसरो को प्रभावित एव आदोलित करती है, जीवन मे [illegible] मनुष्यो का सचार होता है, आत्मबल की वृद्धि होती है ।

आज लाखों-लाख मनुष्य अज्ञानता, अभाव और विशृंखलित आत्म-चिन्तन से जर्जर है, दुर्दशा-ग्रस्त है । उनमें आत्मबल का संचार करना ही सेवा है । मनुष्य अपने पुत्र-कलत्र के लिये, धन, मान के लिये जो करता है वह तब तक असत् होता है जब तक अपने को सबसे पृथक समझने की बुद्धि बनी रहती है । इस पृथक्त्व बुद्धि पर विजय पाना ही तपस्या है । सद्गुरु के नेश्राय मे ही यह भावना फलित होती है । सच्ची श्रद्धा मनोबल को उर्ध्वगति देती है, और नमन के साथ ही समझ का जन्म होता है–

"झुकता वही है जिनमे जान है,
अकड़पन मुर्दे की पहचान है ।"

अच्छी चीज है, वह जीवन का अमृत है । किन्तु अकर्मण्यता और आशाहीनता जीवन का विष है । ज्ञान ही हमारी निर्णायिक शक्ति है । ज्ञान के विना सारे क्रियाकाड शून्य मे भटकने जैसे है । बुद्धि की शीतलता और निर्देशक गुरु का होना ज्ञान के के लिये अनिवार्य हे । जो लोग बुद्धि सम्पन्न है, उन्ही मे सुबुद्धि और शक्ति है । यह सुबुद्धि ही देवता हे, यह शक्ति ही देवता हैं । मनुष्य का कर्त्तव्य है जो दीन दुखी निरीह प्राणियो को कष्ट पहुचा रहे है उनका दमन करे । सामाजिक मंगल का उच्छेद करने वाले दड के भागी है, उनको दड देना मनुष्य का सहज धर्म है ।

परिवर्तन सृष्टि का अनिवार्य क्रम है । जड-प्रकृति की परिस्थितिया और मानव चित का सकल्प सघर्ष-रत है । जरूरत है साक्षी भाव लेकर ज्ञाता, दृष्टा बनने की । जितना ही चित्त सत्वस्थ होगा उतना ही अधिक सर्जनशील होगा । सच्ची उपासना निरन्तर शुभ कार्य करने की प्रेरणा देती है । सेवा का ही दूसरा नाम अहेतुक आत्म समर्पण है । सेवा का ही दूसरा नाम प्रेम है, सेवा का ही नाम आनन्द है और ज्ञान अर्जित कर हम सत्-चित्-आनन्द की ही तो प्राप्ति चाहते हैं ।' मनुष्य जितना देता है उतना ही पा है । प्राण देने से प्राण मिलता है,मन से मन मिल है, आत्मदान ऐसी वस्तु है जो दाता और ग्रही दोनों को सार्थक करती है ।

चैतन्य आत्मा ब्रह्माण्ड के कण-कण स न कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकता है । जरूरत है आख खोलकर देखने की । सही अर्थो मे एक सही दिशा-बोध की । सम्यक् सम्प्राप्ति हो जाने जीवन मे भटकाव नही रह पाता । जीवन मे का पर्याप्त महत्व हो, इसके लिये 'ज्ञान के का भी अपना महत्व पूर्ण उत्तरदायित्व होता शिक्षा का उद्देश्य मात्र अक्षर बोध ही नही-व्यक्ति के विकास के लिये स्नेह और अनुशासन दोना सही अनुपात मे जरूरी है तभी चरित्र निर्माण सकता हे । ऊची उपाधिया प्राप्त कर लेना ज्ञानार्जन नही है । ज्ञान आत्मानुभूति की धारा मनुष्य के नि श्वास मे 'ह'और श्वास मे'स' की सुनाई पडती हे । मनुष्य का जीवन क्रम ही हे क्योकि उससे ज्ञान का उपार्जन सभव है । ज्ञान विस्तृत और वितरित करने का साधन वाणी दूसरो के हृदय को स्पर्श करने की शक्ति होना का विशेष गुण है । मनुष्य की मन, वचन काया की शक्ति मे वाणी शक्ति ही अधिक प्रबल शरीर की एक सीमा है । मन की बात व्यक्त का माध्यम वाणी है जो व्यक्ति की परिधि को ला कर परिवार, समाज, राष्ट्र व विश्व को प्रभा करती चली जाती है ।

ससार मे प्रत्येक व्यक्ति गुरु बनना चाहता शिष्यत्व किसी को पसन्द नही । गुरु की ज्यो प्राप्त करके शिष्य भी दूसरो को ज्योति देने वा बने, तभी गुरु का सच्चा गौरव प्रकाशमान होता प्रबुद्ध के लिये गुरुजनो का कठोर अनुशासन ही को प्रिय लगता है । शिक्षा का अही अर्थ मुक्ति है सर्वप्रथम बधन का बोध करो और समझ कर तोडो । शिव और शक्ति का सम्मेलन क्षेत्र प्रत्य

शरीर की प्रत्येक गाठ मे है । जब क्रिया और इच्छा दोनो ज्ञान की ओर बढने लगते हैं तो नर नारी के पिंड मे चिन्मय शिव तत्व की ज्योति जगती है । सामाजिक मगल के लिये जो सहज प्रवृत्ति है, उसी का नाम धर्म है । धर्म कोई सस्था नही, सम्प्रदाय नही, वह मानवता की पुकार है । धर्म प्रेरणा है, धर्म मुक्ति दाता है ।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समस्त जगत के सुख-दुख, हास्य–रोदन का प्रभाव परोक्ष रूप से उस पर पडता है । एक प्रकार की बिना रीढ की साधना इन दिनो समूचे भारत को ग्रास बनाये जा रही है । मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धो की जड मे ही कही बडा दोष रह गया है । आज फैले भ्रष्टाचार से आखें नही चुराई जा सकती । सगठित होकर ही सगठित अत्याचार का विरोध कर सकते है । मनुष्य मे काम, क्रोध, लोभ, मोह स्वाभाविक रूप से विद्यमान रहते हैं । मन मे हजार वासनायें उठती रहती है । उनके अनुसार अगर व्यक्ति चलने लगे तो बडा विकट परिणाम होता है । देखना चाहिये इच्छा क्यो हो रही है और कहा ले जायेगी ? ज्ञान जिसके मूल मे है और ज्ञान ही जिसकी सम्पत्ति है वही क्रिया ठीक हो सकती है । सभी कर्म ज्ञान मे समाप्त हो जाते है । ज्ञान से विज्ञान सधता है और विज्ञान से विसर्जन (त्याग) की प्रेरणा मिलती है । अपनी करनी पार उतरनी ही सही है । 'दूसरा' निमित्त बन सकता है । अनेकान्त का ध्यान रखना अनिवार्यता है । अतीत प्रेरणा स्रोत हो सकता है । भविष्य स्वर्णिम आदर्श और कल्पना का ताना-बाना हो सकता है पर वर्तमान अपने हाथ मे होता है—

क्षण की आस क्षण भर की प्यास ।
क्षण मे ही बन सकता इतिहास ।
क्षण मे जीवन, क्षण मे मरण,
क्षण क्षण बदल रहा संसार ।
क्षण मे कुछ घटता अलौकिक,
क्षण की महिमा अपरम्पार ।·····

क्षण मात्र भी प्रमाद करना जीवन के अमूल्य समय को खोना है । महावीर ने कहा है–'समय गोयम! मा पमायए।' महत्वाकाक्षा ही ऊचा उठाती है। आत्मीय जनो ! निर्भयता जीवन सगीत का सबसे ऊचा स्वर है । स्वाभिमान है युवावस्था की आत्मा (मनुष्य अपनी श्रद्धा पर सदैव अभिमान करता है) । उदारता है यौवन का अलकार, स्वय जीवित रहकर दूसरो को जीने देने का अमूल्य साधन । समूचे शरीर मे चित् का शासन है, मन उसी का अनुचर है । आदत बदलने का सबसे बडा सूत्र है–ग्रन्थि तत्र का परिवर्तन, मन की यात्रा का परिवर्तन । तो क्यो न इसी क्षण को शुभ मुहूर्त मानकर सुविधाजनक रूपान्तरण की ओर अग्रसर हो । जो खुशी दूसरो की दृष्टि और रूचि पर आधारित या आश्रित होती है उसमे स्वय के लिये न सुविधा होती है न आराम । अपनी वस्तु को स्वय ही व्यवस्थित करना पडता है दूसरे मे यह सामर्थ्य नही । सकल्प की शक्ति से एकाग्रता सधेगी और साधना के पथ पर चलने की इच्छा जगेगी फिर कलान्ति भी आनन्ददायिनी होगी । सिर्फ प्रतिज्ञा का सफल होना ही बडी चीज नही वरन् प्रतिज्ञा करना ही बडी चीज है । अनासक्त भाव से अपने कर्त्तव्य-कर्म का निर्वाह करना ही व्यक्ति की श्रेष्ठ साधना है, आयाम अलग–अलग ह । सत्य, अहिसा, शिष्टता, सहिष्णुता, स्वाभिमान, रक्षा तथा आत्मोपम्य दृष्टि मानवता के आधार स्तम्भ हैं । अपने को मनुष्य सिद्ध कर सकना ही अभीष्ट है । अन्तश्चेतन मे यही अनुगूज है—

हमको मन की शक्ति देना,
मन विजय करें ।
दूसरो की जय के पहले,
खुद की जय करें ।····

सयोजक–महिला समिति, कलकत्ता

समाज सेवा : एक स्वेच्छिक कर्त्तव्य

□ पं. बसन्तीलाल लसोड़
न्यायतीर्थ, काव्यतीर्थ

समाज-सेवा और साधना हमारे देश की माटी की एक सस्कृति रही है और इधर वे ही लोग आते है जो आध्यात्मिक चिन्तन धारा से ओत-प्रोत होते है, जो परिवार की सीमा से ऊपर उठ कर कुछ समष्टिगत कार्य करने की ललक लेकर बढते है। वे यदि आर्थिक दृष्टि मे सम्पन्न होते है तो उनमे दान देने की प्रवृत्ति उभरती है या वे अपने अर्जित धन को अन्य सामाजिक कार्यो मे लगाते है। यदि उनमे प्रतिभा या नेतृत्व के गुण होते है तो वे सामाजिक धरातल पर समष्टिगत उपयोग करने-कराने मे समर्थ होते है।

समाज, एकता की एक शृ खला, एक जजीर है जिनमे धर्म, सस्कृति, साहित्य, भाषा, कला-कौशल, शिक्षा-दीक्षा, आचार-विचार, लोक-व्यवहार, व्यापार-व्यवस्था आदि अनेक कड़िया जुडी हुई है। हमारे पूर्वजो ने इन कडियो को सतत सुदृढ बनाया और हमारे लिए एक समृद्ध विरासत छोड गए जो विश्व धरातल पर हमारी एक विशेष पहचान है, एक गौरवशाली परम्परा है। हम इन कड़ियो को निरन्तर मजबूत बनाते जावे। अपनी सस्कृति, सस्कार, भाषा, रीति-रिवाज एव परम्पराओ को नही भूले एव इनके सवर्द्धन हेतु सदा प्रयत्नशील रहे, यही सच्ची समाज-सेवा है, एक साधना है।

सामाजिक कार्यों के प्रति रुझान, लोकोपकारी प्रवृत्तियो मे तन-मन-धन से यथाशक्ति योगदान समाज-सेवा के अ ग है। सच्ची समाज-सेवा मे समर्पण की, साधना की, सेवा की, त्याग की, सहिष्णुता की, प्रेम की महती आवश्यकता है। आज हम समाज-सेवा मे कितने लीन है, समाज के प्रति कितने समर्पित है यह नितान्त विचारणीय है ?

जो समाज भगवान् महावीर के समय एक ही शृ खला मे आबद्ध था उसमे धीरे-धीरे परिस्थितियो वश तनाव की स्थिति उत्पन्न होती गई। धार्मिक व्यापकता के स्थान पर धार्मिक सकीर्णता ने जन्म लिया और हम विभिन्न सम्प्रदायो एव गच्छो मे, पथो मे, वर्गो मे, विभाजित हो गए। आज हमारी स्थिति यह है कि हम इन पथो के प्रति अधिक वफादार है और इन्ही के पालन-पोषण व सवर्धन मे अपना गौरव व कर्त्तव्य समझने लगे है। आज हमे पथत्व की चिन्ता इतनी अधिक सता रही है कि हम जैनत्व, जैन साहित्य, जैन सस्कृति और जैन समाज के उन्नयन की चिन्ता भूल बैठे है। ये पथ, ये गच्छ नदी के उन दो किनारो की तरह बन गए प्रतीत हो रहे है जो कभी मिल नही पाते। वैसे हम विश्व स्तर पर अहिंसा, अनेकातवाद, भ्रातृत्व, मैत्री, दया आदि की दुन्दुभी बजा रहे है, पर जब हम अपने अन्दर झाकते है, आत्मनिरीक्षण करते है तो लगता है हम भगवान् महावीर के इन सिद्धातो को नदी मे विसर्जित कर रहे है। हमारी आपसी टकराहट, प्रतिस्पर्द्धा, अलगाववृत्ति ने हमे दिग्भ्रमित कर दिया है। वस्तुत देखा जाय तो आज सही दिशा मे ले जाने वाला कोई सशक्त नेतृत्व नही है। आज आवश्यकता है एक ऐसे मच की जिसका एक नेता हो,

क झण्डा हो, एक आचार संहिता हो, एक अनुशासन । यदि हम यह सम्भव कर सके तो यह समाज की [illegible]त बडी सेवा होगी ।

व्यक्ति-व्यक्ति से समाज बना है । व्यक्ति क्या ? व्यक्ति अपने विश्वास, विचार और आचार का तफल है । दृष्टि की विमलता से ही व्यक्ति का वन विमल और धवल बनता है । यदि यह विम-ता, धवलता हमारी समाज के तथाकथित पथ-प्रति-[illegible]पको, मठाधीशो और उनके कट्टर अनुयायियो मे [illegible]ाश भी व्याप्त हो जावे तो हमारी एकता की [illegible]मस्या हल हो सकती है । वैसे अनुभव व व्यवहार देखा है यह पथिक अभिनिवेष जितना पुरानी पीढी दृष्टिगोचर होता है उतना नई पीढी मे नही है । [illegible]र यदि कुछ युवको-युवतियो मे है भी तो वह अपने [illegible]ता-पिता या बुजुर्गो के कारण है । और लगता है [illegible] नई पीढी के विचारो के कारण धीरे-धीरे यह [illegible]रता की दीवारें ढहती चली जायेगी । जैसे इतिहास [illegible]पने आपको दोहराता है हम पुन एक होने को [illegible]तिवद्ध हो जावेंगे, वैसे यह सब कुछ भविष्य के गर्भ है पर इसके लिए भी आवश्यकता है उन मूल्यो [illegible]र गुणो के प्रबल प्रचार-प्रसार की जो हमारे पूर्वजो बताए हैं ।

यह निश्चित है शरीर को टुकडो मे नही सीचा [illegible] सकता है । खण्ड-खण्ड का विचार अखण्डता के [illegible]ए किया जावे तो सफलता सम्भव है । युवको मे [illegible]त्यात्मक शक्ति का असीम भण्डार है, जिनको यदि [illegible]ही उपयोग मे लिया जावे तो एक समतामय समाज [illegible]चना की प्रक्रिया सरल हो जावेगी । इसके लिये [illegible]ावश्यकता है हम युवक समाज को जागृत करें । उन्हे [illegible]तावें कि राष्ट्रीय धरातल पर हमारे समाज की स्थिति [illegible]या है । समाज मे एकता लाने की जिम्मेवारी उसके [illegible]त्येक सदस्य की है । हमे दूसरो के दोषो की चर्चा [illegible] व्यर्थ समय न गवा कर कर युवको के साथ-साथ [illegible]भी को इस समाज-सेवा मे प्रवृत होना चाहिये ।

समाज-सेवा का दूसरा पहलू लोकोपकारी प्रवृत्तियो का प्रचार-प्रसार व सामाजिक कार्यो के प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन करना है । बचपन मे मैंने देखा है आर्थिक दृष्टि से अच्छे से अच्छे समृद्ध व्यक्ति स्वय बहुत सादगी से रहते थे । वे स्वय पर, अपने परिवार पर बहुत कम व्यय करते थे पर परोपकार के लिए दिल खोल कर खर्च करते थे । यही कारण है कि हमे जगह-जगह कलाकौशल के भव्य अमर स्मारक, धर्मशालाए, कुए, बावडी, अस्पताल, प्राकृतिक चिकित्सालय, स्कूल कॉलेज, सास्कृतिक केन्द्र, मन्दिर, स्थानक, उपाश्रय, अतिथिगृह आदि नजर आ रहे है । आज भी हमारा समाज समृद्ध एव सम्पन्न है । धनिको की, कलाविदो की, बुद्धजीवियो की, दानवीरो की, शिक्षाविदो की, त्यागियो, तपस्वियो की कोई कमी नही है । समयानुसार अब हमे उद्योग व्यापार के साथ-साथ साहित्य, विज्ञान कानून, इन्जीनियरिंग, डाक्टरी, सगीत, सस्कृति, कलाकौशल आदि क्षेत्रो मे समाज को तेजी से अग्रसर करना चाहिये ताकि हम राष्ट्रीय जीवन धारा से जुडे रहे ।

आज का मानव भौतिकवाद की चकाचौध से भ्रमित हो रहा है । वह मृगतृष्णा मे धर्म और ईमान सब को भूल कर अनेक दुर्गुणो से ग्रसित हो गया है । इसका प्रभाव हमारी समाज पर भी पडा है और हमारे मे भी फैशन परस्ती, फिजूलखर्ची, अन्धविश्वास, आडम्बर आदि अनेक कुरीतिया व्याप्त हो गई है । लोकहित के कार्यो के बजाय वैभव के प्रदर्शन बढते जा रहे है । विवाह-शादी के अवसर पर अनाप-शनाप व्यय किया जा रहा है जिसका मध्यम वर्ग और अल्प आय वालो पर विपरीत प्रभाव पड रहा है । उदाहरण के तौर पर मृत्यु भोजो मे मृतात्मा की शाति के नाम पर हजारो रुपया उडा दिया जाता है । दहेज भी आज हमारी समाज मे पूर्ण रूप मे अपनी विकरालता की जडें जमा चुका है । आज यह सपन्नता, प्रतिष्ठा एव मान्यता की निशानी माना जा रहा है ।

मध्यमवर्गी पालक वर्ग इस दहेज राक्षस से बुरी तरह त्रस्त है। अच्छी निर्दोष कन्याएं भी अनुचित स्थानों पर फेंक दी जाती है। बेरोजगारी [illegible] मे व्याप्त है। आज हमारे समाज मे हजारो होनहार युवक इसी कारण अपनी प्रतिभा का सदुपयोग नही कर पाते है। लगता है 'जीवो और जीने दो' की हमारी कला गुम हो चुकी है।

विचारो की सकीर्णता के कारण आज समाज सेवा और समाज निर्माण की बात तो दूर रही स्वय का निर्माण भी कठिन होता जा रहा है। जिस शक्ति का उपयोग समाज कल्याण के लिए होना चाहिये वह समाज को विघटन के कगार पर धकेल रही है अत यदि निकट भविष्य मे इन कुरीतियो एव अभावो की ओर ध्यान नही दिया गया तो हमारा भविष्य धूमिल, अन्धकारमय होता जायेगा अत इनको दूर करने का हम बीडा उठावें, सकल्प लेवे तो यह हमारी समाज-सेवा का प्रशस्त सोपान होगा। युवक-युवतिया समाज के प्राण है और समाज मे फैली इन बुराइयो को दूर करने मे ये एक ऐसा माध्यम है जो समाज की आकाक्षाओ को पूर्ण कर सकता है। वह प्रण करे, लगन एव परिश्रम से काम करे तो सामाजिक प्रतिष्ठा को सवार सकता है अत इनको भी समाज सेवा के इस यज्ञ मे आगे बढकर योगदान करना चाहिए।

आज हमारे मानवीय नैतिक मूल्यो मे भी भारी गिरावट आ रही है अत इस समय नवयुवको को, बालक-बालिकाओ को सुसस्कारो की नैतिक एव धार्मिक शिक्षा देना बहुत जरूरी हो गया है ताकि भविष्य मे ये समाज के सुदृढ स्तम्भ बन सकें। इन्हे हमारी सभ्यता, सस्कृति, साहित्य और पुरातन कलाकौशल एव समृद्धि से भी परिचित कराना अति आवश्यक है। हमारे गौरवमय इतिहास की भी इनको जानकारी देनी चाहिए ताकि भविष्य मे एक सुसस्कारी नागरिक होने के साथ-साथ अपनी सेवाओ के माध्यम से ये समतामय समाज के निर्माण का स्वप्न पूर्ण कर सके।

हमारा अतीत बहुत गौरवशाली रहा है। ह[illegible] पूर्वजो से हमे जो महान् सांस्कृतिक धरोहर प्राप्त है, वह उनकी दीर्घकालीन साधना का परिणाम है उस धरोहर को हमे केवल सुरक्षित ही नहीं [illegible] है बल्कि उस साधना का अनुकरण भी करना है उन्होने धर्म की प्रेरणा देने के लिए विशाल, [illegible] कलाकौशल युक्त जो स्मारक बनाए, साक्षात् सत्[illegible] स्वरूप जो ज्ञानभण्डार स्थापित किए उनकी सुरक्षा,[illegible] भाल और उनसे ज्ञानवृद्धि के लिये भी जागरूक [illegible] आवश्यक है। ये कुछ ऐसे आयाम हैं जो अद्भुत [illegible] रूप लिए हुए है। ये प्रबल प्रेरणा-स्रोत हैं, [illegible] प्रकाश-स्तम्भ है। इनके द्वारा हम अपनी आत्मा [illegible] अज्ञानान्धकार को दूर कर जीवन-ज्योति जगा सकें। यह हमारी साधना के ऐसे सोपान, ऐसे प्रेरणा[illegible] होंगे जो युग-युगान्तर तक याद किये जाते रहेंगे।

समाज सेवा और साधना हमारे देश की मान्य[illegible] की एक सस्कृति रही है और इधर वे ही लोग आ[illegible] है जो आध्यात्मिक चिन्तन धारा से ओत-प्रोत होते हैं जो परिवार की सीमा से ऊपर उठ कर कुछ समष्टि गत कार्य करने की ललक लेकर बढ़ते है। वे यदि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न होते है तो उनमे दान देने की प्रवृत्ति उभरती है या वे अपने अर्जित धन को अन्य सामाजिक कार्यों में लगाते है। यदि उनमे प्रतिभा और नेतृत्व के गुण होते है तो वे सामाजिक धरातल पर समष्टिगत उपयोग करने-कराने मे समर्थ होते हैं।

आज के इस अर्थ प्रधान कलुषित वातावरण मे जहा भौतिकवाद का बोलबाला है वहा आध्यात्मिक चिन्तन धारा विरले ही लोगो मे मिलती है। आज-कल व्यापार, राजनैतिक मच, साहित्य सृजन, पत्रकारिता आदि अर्थ व आत्मतुष्टि के विशेष साधन बन रहे हैं। आज अधिकाश व्यक्ति स्वार्थ पूर्ति के लिए समाज-सेवा मे घुसते है किन्तु जो समाज-सेवा को अपना कर्त्तव्य समझ कर समाज सेवा मे आते है और समाज के लिए समर्पित होकर काम करते है, वे ही सच्चे

धक होते हैं। वे सम्मान के भूखे नही होते है। स्वार्थ भाव से सेवा करते हे। आज नि स्वार्थ सेवा । समाज मे कोई कदर नही हे और इसी से समाज त्रक वहुत कम सामने आते है। विदेशो मे तो समाज वा एक व्यापार है जिसमे केवल स्वार्थ की गन्ध होती है पर अपने देश मे समाज-सेवा एक स्वेच्छिक कर्त्तव्य है जिसमे सुगन्ध होती है और यही सुगन्ध समाज को सुवासित करती हे। आज इसी सुवास से समाज को सुवासित करने की महती आवश्यकता है।

—मण्डी प्रागण, नीमच (म प्र)

आदमी—	आदमी एक ब्लॉटिंग-पेपर है, जिस पर कुछ भी और कैसा भी लिखा जाये, अक्षर सुवाच्य नही रहते।
दर्द—	दर्द एक अनुभव हे, जो किसी को होता ह, किमी को नही।
वर्षगाठ—	वर्षगाठ अभावग्रस्त व्यक्ति की मानसिक और अस्थायी प्रसन्नता हे।
निष्ठा—	निष्ठा एक आकृति हे, किसी के लिए धुधली, मटमैली-सी किसी के लिए उजली सवरी-सी।
अभिनन्दन—	अभिनन्दन एक सम्पर्क है। जव चाहो जुड जाए, चाहो टूट जाए।
स्वार्थ-परार्थ—	स्वार्थ जीवन के पशुपन की निशानी ह। परार्थ ही मनुष्य जीवन का सही सम्वल है।

☐ डा. मनोहर शर्मा
भूतपूर्व सम्पादक, श्रमणोपासक

जैन विद्वानों द्वारा संस्कृत के माध्यम से प्रस्तुत लोक कथाएं

△

> कहना न होगा कि इन कथा-ग्रन्थों का विवेचनात्मक अध्ययन अनेक दृष्टियों से अत्यन्त उपयोगी है। इनमें एक साथ ही लोक और शास्त्र दोनों का जीवन दर्शन है। अतः इनकी सामाजिक उपयोगिता स्पष्ट है। इसी प्रकार इनका अनुसंधानात्मक अध्ययन साहित्यिक दृष्टि से भी असाधारण महत्व रखता है।

राजस्थान की कथाए राजस्थानी भाषा के अतिरिक्त सस्कृत भाषा के माध्यम से भी बडी सख्या मे सकलित की गई है। इस विषय मे जैन विद्वानो द्वारा सगृहीत कथाकोश गन्थ बडे महत्वपूर्ण है। उनमे प्राचीन शास्त्रीय-कथाओ के साथ ही अनेक लोक-प्रचलित कथानको को भी स्थान दिया गया है। इस दृष्टि से मुनिश्री राजशेखर सूरि (समय पन्द्रहवी शती) का 'कथा कोश' (विनोद-कथा-सग्रह सहित), श्री शुभशील गणि का 'पचशती प्रबोध सम्बन्ध' (स १५२१) तथा मुनि श्री हेमविजय गणि का 'कथारत्नाकर' (स १६५७) आदि विशेष महत्वपूर्ण है। ये ग्रन्थ सस्कृत भाषा मे लिखे गए है परन्तु साथ ही इनमे यत्र-तत्र लौकिक गाथाए भी सकलित कर ली गई है।

राजस्थानी तथा गुजराती लोक-कथाओ के अध्ययन हेतु ये ग्रथ बडे उपयोगी है। इस दृष्टि से यहा लौकिक कथानक पर प्रकाश डालने की चेष्टा की जाती है, जिससे कि इन ग्रथो का वास्तविक महत्व स्पष्ट हो सके। अनुसधान हेतु यह एक उतम विषय है।

करहा म करि करवकडो

किसी गाव मे एक ब्राह्मण रहता था। वह ग्रहण के समय भी दान लेता था। उसकी पत्नी उसे ऐसा न करने के लिए कहती थी परन्तु वह मानता न था। कालान्तर मे ब्राह्मण मरकर ऊट बना और उसकी पत्नी मृत्यु के बाद राजपुत्री हुई। राजपुत्री का विवाह हुआ तो उसी ऊट पर सामान लादा गया और वह अपने पीहर से ससुराल के लिए बिदा हुई। सामान के अति-भार से वह ऊट कराहने लगा तो राजपुत्री ने उस पर ध्यान दिया। अब उसे पूर्व-भव का वृत्तान्त स्मरण हो आया और वह ऊंट से बोली—

करहा म करि करवकड़ो,
भार घणो घर दूरि।
तूं लेतो हूं वारती,
राहु गिलंते भूरि॥

इतना सुन कर ऊट को भी पूर्व-भव का स्मरण हो आया और उसे बड़ा पछतावा हुआ। आखिर उसने अनशन के द्वारा शरीर छोड दिया और वह स्वर्ग को गया।

मुनि श्री शुभशील गणि द्वारा संकलित यह कथा कर्म फल का प्रकाशन करने हेतु एक सुन्दर उदाहरण है।

कार्तिक मास मे राजस्थानी महिला वर्ग द्वारा एक पुण्य-कथा विशेष रूप से कही और सुनी जाती है। उस का नाम 'इल्ली घुणियो' है। उसमे अनाज मे रहने वाली एक 'इल्ली' (कीट) घुन से कहती है कि वह भी उसकी तरह कार्तिक स्नान करे। परन्तु, धुन ऐसा नही करता। फलत दूसरे जन्म में 'इल्ली' राजकुमारी वनती है और घुन मेढा (घेंटा) वनता है। राजकुमारी का विवाह होने पर वह मेढा भी उसे प्राप्त हो जाता है। जव उसे प्यास लगती है तो वह चिल्लाता है और कोई उसे पानी नही पिलाता तो वह राजकुमारी से कहता है—

"रिमको-झिमको ए, श्यामसुन्दर वाईए,
थोडो पाणीड़ो प्या।"

इस आवाज पर पूर्व-भव को स्मरण करके राजरानी उसे कहती है—

"मैं कैवै छी ओ, तू सुणै छो ओ,
दई म्हांरा घुणिया, कातिगड़ो न्हा।"

नई रानी के इन शब्दो की चर्चा उसकी अन्य सौतो मे फैलती है तो वह राजा को समस्त पूर्व-वृत्तान्त सुना देती है। राजा भी कार्तिक-स्नान के महत्व को समझ जाता है।

उपर्युक्त कथा का एक रूपान्तर भी श्री शुभशील गणि ने प्रस्तुत किया है। तदनुसार वन मे रहने वाले एक कठियारे की स्त्री स्वय जगली पुष्पो एव नदी जल से प्रभु सेवा करती है और अपने पति को भी ऐसा करने के लिए कहती है। परन्तु वह उसकी वात पर ध्यान नही देता। कालान्तर मे कठियारी मर कर राजपुत्री और फिर राजरानी वनती है। कठियारा पहले ही की तरह सिर पर लकडी का भार रखकर बेचता फिरता है। उसे देखकर राजरानी को पूर्व-भव स्मरण हो आता है और वह कहती है—

अड़वी पती, नईअ जल,
तोई न वूहा हत्थ।
अज्ज एइ कवाड़ीह,
दीसई साईज अवत्थ॥

गाथा काफी पुरानी है। आचार्य सोमप्रभ सूरि विरचित 'कुमारपाल प्रतिवोध' मे इसका निम्न रूप प्राप्त है—

अड़विहि पती, नइहि जलु,
तो वि न वूहा हत्थ।
अवोनह कवाड़िह,
अज्ज विसज्जिए वत्थ॥

(अटवी के पत्ते और नदी का जल सुलभ था तो भी उसने हाथ नही हिलाए। हाय, आज उस कावड वाले के तन पर वस्त्र भी नही है।)

आज भी यह कथा कार्तिक मास मे कही जाती है। इसकी गाथा का प्रचलित रूप इस प्रकार है—

कातिगड़े नंह न्हाइया.
नर नंह जोड़या हत्थ।
सावघण बैठी समदरां,
तेरी वाह ही गत॥

कहना न होगा कि इन कथा-ग्रन्थो का विवेचनात्मक अध्ययन अनेक दृष्टियो से अत्यन्त उपयोगी है। इनमे एक साथ ही लोक और शास्त्र दोनो का जीवन दर्शन है। अत इनकी सामाजिक उपयोगिता स्पष्ट है। इसी प्रकार इनका अनुसधानात्मक अध्ययन साहित्यिक दृष्टि से भी असाधारण महत्व रखता है। यह सामग्री एक साथ ही सस्कृत तथा लोक भाषाओ (राजस्थानी और गुजराती) से जुडी हुई है। विशेषता यह है कि यह सम्पूर्ण सामग्री सत्कर्म के लिए प्रेरणा देने वाली है, भले ही विभिन्न वर्गों के लोगो की अपनी विधि कैसी भी हो। यह उदारता का क्षेत्र है, जो सबके लिए समान रूप से हितकारी है। निश्चय ही यह सामग्री रजक भी कम नहीं है और यही कारण है कि काफी पुराने समय से यह रूपान्तर ग्रहण करती हुई आज भी जन-साधारण मे अत्यन्त लोकप्रिय है।

—१९, कैलाश निकुंज, रानी बाजार, बीकानेर

समाज-सेवा और साधना

□ पं. गुलाबचन्द शर्मा

मानव जाति ने विकसित मस्तिष्क, वाणी और अगूठे के सदुपयोग पूर्वक सुख-शाति एव साधना के पथ पर चलकर देवत्वमय जीवन, सभ्यता और सस्कृति का निर्माण किया है। अपनी विशेषताओ तथा लक्ष्य के प्रति सजगता से मानव ने सामाजिकता का ताना-बाना बुना है और वह भी इतनी दृढता से कि अरस्तू जैसे महान् दार्शनिक ने घोषित कर दिया कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अरस्तू के इस कथन से समाज के साथ मनुष्य के सम्बन्धो की गहराई स्पष्ट हो जाती है। मनुष्य समाज से अलग नही हो सकता। अत. समाज और मानव के सम्बन्धो को सुसस्कृत बनाने के सशक्त माध्यम के रूप मे सेवा का जन्म हुआ। मानव-सेवा और समाज-सेवा ऐसे माध्यम है, जो एक साथ मनुष्य और समाज दोनो को जोडते है। वैसे समाज-सेवा मे मानव-सेवा स्वत अन्तर्निहित है।

सेवा का यह विन्दु विकसित होते-होते विराट सिन्धु का रूप धारण कर लेता है, जिसके परिणामस्वरूप कला, साहित्य, विज्ञान, सस्कृति और सभ्यता हमारे सामने आते हैं। इस सेवा का स्वरूप भी कई प्रकार का होता है, जैसे समाज की बुराइयो से सघर्ष करना, धार्मिक प्रवृत्तियो के विकास हेतु जागरूक रहना। सेवा का वटवृक्ष विशाल है और परिवार, जाति, धर्म आदि की आधार भूमि मे अवसर पाकर यह विकसित होता है।

मानव अपने जीवन मे सुख के बाद शाति चाहता है और वह उसे समाज तथा सेवा के माध्यम से ही प्राप्त हो सकती है। समाज, सेवा के महत्व से सुपरिचित है और सेवा-भावना को प्रोत्साहित करने के लिए हर प्रकार का प्रयास करता है। सेवाभावी, कर्मवीर, दानवीर आदि विशेषण व्यक्ति को सामाजिक मान्यता से ही प्राप्त होते हैं। समाज-सेवा मनुष्य को महान् कार्य करने की मात्र प्रेरणा ही नहीं देती अपितु क्षेत्र भी प्रदान करती है। इसी के बल पर वह देवत्व प्राप्त कर लेता है।

समाज से प्राप्त सेवा-भावना से मनुष्य की धर्म श्रद्धा दृढ होती है और उसका जीवन धार्मिक बन जाता है। गम्भीरता से सेवा के मनोविज्ञान को समझे तो 'हमे एक कल्याणकारी खजाना प्राप्त हो सकेगा, कारण कि समाज-सेवा की भावना से समाज की बुराइयो का नष्ट होना स्वाभाविक है। सच्चा सेवाभावी बन जाने पर मनुष्य दहेज व मृत्युभोज जैसी बुराइयो पर धन व्यय न करके अच्छे धार्मिक कार्यों पर व्यय करेगा, जिससे समाज की बुराइया समाप्त होगी और मानव को आत्मशाति एव आत्मकल्याण की भावना प्राप्त होगी।

इस स्तर पर पहुच कर सेवा एक साधना का रूप ग्रहण कर लेती है। सेवा और साधना मिलकर जिस अमृत तत्व का निर्माण करते है, उससे सुख-सम्पत्ति और सरस्वती का समन्वय होता है, जिससे मन वीणा जागृत होकर वैराग्य का पथ प्रशस्त करेगी। जीवन एक साधना का रूप ले लेगा। जीवन सकल्पमय, श्रद्धामय, साधनामय हो जाएगा और उससे समाज, राष्ट्र और विश्व का कल्याण होगा। ऐसे सेवाधर्मी व्यक्ति चाहे साधु, श्रावक या साहित्यकार कुछ भी बने, समाज को गौरव मडित करेंगे।

आइये! हम सब मिलकर अपने जीवन को सेवा और साधनामय बनावे।

—छोटीसादडी (राज)

साधुः विशेषणों का विशेषण

□ डा. नेमीचन्द जैन

साधु की आगमोक्त अस्मिता पर तो विचार हुआ है, किन्तु उसकी लोकोक्त इबारत पर बहुत कम सोचा गया है। 'उत्तराध्ययन' एक ऐसा संकलन सूत्र है जिसके पन्द्रहवे अध्ययन मे भिक्खू/साधु के व्यक्तित्व पर, उसकी गुणवत्ता पर गहराई से विचार किया गया है। इसमे आये सोलह श्लोक जहा एक ओर साधु के व्यक्तित्व की उदार समीक्षा करते है, वही दूसरी ओर वे "टॉर्च-बेअरर" का काम भी करते है। लगता है जैसे सोलह मशालो का एक जुलूस आगे-आगे चल रहा हो साधु के, जो उसे रोशनी देता हो इतनी कि उसकी साधना फलवती हो सके, कामधेनु सिद्ध हो सके।

साधुओ पर तो मेरा ध्यान गया है, किन्तु उनके व्यक्तित्व पर विचार करते हुए 'साधु' शब्द के विभिन्न अर्थों पर भी ध्यान गया है। सोचता रहा हू कि यह शब्द कैसे बना और कितने अर्थ है इसके ? जिस रूप मे आज यह प्रचलित है क्या साधुवर्ग आज इसे उसी अर्थ मे जी रहा है, या इसके जीते-जी वह अर्थान्तरो की अन्तहीन मृगमरीचिका मे फस-उलझ गया है ?

व्याकरण की आख से साधु शब्द सज्ञा भी है और विशेषण भी। सज्ञा के रूप मे इसके मायने है-मुनि, यति, सज्जन और विशेषण के रूप मे सुन्दर, शोभन, प्रतिमित, परिनिष्ठित, मानक, आदर्श, भला, अच्छा, उचित, सतुलित, चतुर, योग्य, मुनासिब, वाजिब।

प्राकृत मे इसका रूपान्तर है 'साहु' और लोक- भाषाओ मे 'हाउ'। 'साहु' का अर्थ है साधु और 'हाउ' का अर्थ है अच्छा। साहु और हाउ दोनो ही साधु मे से विकसित शब्द हैं।

सज्ञा और विशेषण के रूप मे इसके जो अर्थ सामने आये है, वे लोकप्रयुक्त है और समाज की उस मगल-कामना के परिचायक है, जो सदैव औचित्य और शालीनता का ध्यान रखती रही है। जब हम "साधु भाषा" कहते है, तब हमारा ध्यान भाषा के उस मानक रूप पर होता है, जिसके द्वारा हम समाज के उस विद्या क्षेत्र की अभिव्यक्ति करते हैं जिसमे जटिल और गहन विषयो का अध्ययन-अनुसधान होता है। इसी के द्वारा हमारी वैज्ञानिक, शास्त्रीय, न्यायिक राजनैतिक,पुरातात्विक, तार्किक तथा कलागत धारणाओ की सूक्ष्मतर विवेचनाए होती है। इसी मे से मानव की सर्वोत्कृष्ट मेधा अंगडाई लेती है।

जैनधर्म मे 'साधु' को साधना की बुनियाद निरूपित किया गया है। जैन साधना की आधार भूमि है 'साधु'। साधु के आगे की सीढ़ी है 'उपाध्याय'। उपाध्याय के आगे का सोपान है 'आचार्य', आचार्य के आगे का 'अरिहन्त' और अन्तिम है 'सिद्ध'। इस तरह साधु यदि नींव है, तो सिद्ध शिखर है। नींव से

शिखर तक की यह यात्रा स्थूल यात्रा नही है वरन् भीतर-भीतर निरन्तर होने वाली एक अत्यन्त अलौकिक/अव्यक्त यात्रा है—ऐसी, जिसकी सूचना बाहर के लोगो को कम, किन्तु साधक को अधिक और अविराम/प्रतिपग मिलती है ।

साधु की आगमोक्त अस्मिता पर तो विचार हुआ है, किन्तु उसकी लोकोक्त उदारता पर बहुत कम सोचा गया है । 'उत्तराध्ययन' एक ऐसा सकलन-सूत्र है जिसके पन्द्रहवें अध्ययन मे भिक्षु/साधु के व्यक्तित्व पर, उसकी गुणवत्ता पर गहराई से विचार किया गया है । इसमे आगे सोलह श्लोक जहा एक ओर साधु के व्यक्तित्व की उदार समीक्षा करते है, वही दूसरी ओर वे 'टॉर्च-बेअरर' का काम भी करते हैं । लगता है जैसे सोलह मशालो का एक जुलूस आगे-आगे चल रहा हो साधु के, जो उसे रोशनी देता हो इतनी कि उसकी साधना फलवती हो सके, कामधेनु सिद्ध हो सके ।

कहा गया है कि साधु अपने विहार मे चाहे वह अतस्तत्व की खोज के लिए हो, या बाहर-प्रतिपल अप्रतिबद्ध होता है । वह किसी से सचालित नही होता बल्कि वह एक ही निष्कर्ष पर तमाम उसूलो को कसता है, निकष है—अध्यात्मसिद्धि के लिए, आत्मोपलब्धि के लिए कौन-सी स्थितिया हेय है और कौन-सी उपादेय ? उसका परमोच्च लक्ष्य होता है आत्मानुसधान, आत्मा की मौलिकताओ को अप्रच्छन्न करना । उसकी सारी शक्ति/सम्पूर्ण सामर्थ्य आत्मगवेषणा मे लगता है । वह स्वय का दीपक स्वयं बनता है, मूलतः वह "आगमचक्षु" होता है । उसकी साधना इतनी प्रखर और तेजोमय होती है कि उसमे हो कर आगम को जर्रा-जर्रा देखा जा सकता है । वह न तो बधता है और न ही बाधता है, वह मात्र सम्यक्त्व को खोजता है और यत्न करता है उन सारे मुलम्मो को उतार फेकने के जो उसे प्रवंचित करते है, गतव्य तक पहुंचने मे अडचन डालते है । वह चलता जाता है और होता जाता है इस तरह कुछ कि उसके इस चलने ... मे उसका आत्मतत्व प्रकट होने लगता है । वह ... दनो को हटाता जाता है और विमलताओ ... का हर सम्भव प्रयत्न करता जाता है । वह ... दर्शन का मर्मी होता है—अप्रतिबद्ध, पूर्वाग्रहमुक्त ... पथ का पथिक । वह, यह, या वह पहले से ... नही चलता बल्कि खुद खोजता है और पाता है ... लोगो की छत्रछाया मे जो उससे पहले हुए हैं ... उसके समकालीन हैं और जिन्होंने आत्मतत्त्व ... उसकी सम्पूर्णता मे जानने/पाने का प्रयास किया ...

साधु वह है, जिसकी किसी भी वस्तु ... या व्यक्ति मे मूर्च्छा नही है । जो अनासक्त ... प्रतिपल । जो न किसी वस्तु से बधता है, न ... वस्तु उसे बाध पाती है, वह निर्बन्ध/निर्ग्रन्थ, ... एकल चलता है उन तमाम विकारो और दोषों ... अलगाता हुआ जो उसकी अध्यात्मयात्रा मे विघ्न ... है, इसीलिए उसे सागर की उपमा दी गयी है । ... है. वह "बहि क्षिप्तमल." होता है अर्थात् जि... समुद्र अपने भीतर से मथ-मथ कर मलो को ... रहता है, ठीक वैसे ही साधु भी अपनी साधना ... अपने अतरग के मल बाहर फेंकता रहता है ... मे, प्रतिक्रमण मे, सामायिक मे—प्रतिपल, प्रतिप...

जिस तरह वह यह सब करता है, वि... प्रयोगशालाओ मे भी वही/वैसा होता है किंतु वि... प्रयोगशाला का कार्य भौतिक होता है—उसका ... दृश्य बनता है, किन्तु साधु के भीतर का को... नही बनता, वह निरन्तर अपने काम मे लीन ... है और अमूर्च्छित चलता है । "मूर्च्छा" जैनाग... एक पारिभाषिक शब्द है, जिसका अर्थ है गहन अ... अंधा मोह—ऐसा मोह जो अनात्म को आत्मतत्... स्तर पर देखने लगता है । जब कोई किसी व... जो उसकी अपनी नही है, अपनी—बहुत अपनी—... लगता है, तब मूर्च्छा प्रकट होती है । मूर्च्छा ग... तब होती जाती है, जब आसक्ति प्रगाढ होती है

' को 'निज' मानने लगता है-एक भ्राति मे धस ता है ।

जैनागम मे परिग्रह को मूर्च्छा कहा गया है । धु, इसीलिए, अ तरग/वाह्य मूर्च्छा को उत्तरोत्तर ाता है । सयम के द्वारा वह उस पर कावू पाता । मूर्च्छा के कई द्वार है । वह आहार, भय, मैथुन ही से भी हमला कर सकती है । साधु सतर्क/ प्रमत्त रहता है और द्वार खुले रख कर हरेदारी करता है । जो किसी भी वस्तु/स्थिति मे च्छित नही है, वह है भिक्षु । अमूर्च्छित महामुनि स/स्वाद के लिए कभी नही खाता, वह सिर्फ इस- लए भिक्षा लेता है ताकि जिये और अपने लक्ष्य की ोर कदम उठाये रहे ।

'उत्तराध्ययन' के सत्रहवें अध्ययन मे कहा गया कि वह अलोलुप, रस मे अगृद्ध, जिह्वाजयी, अमू- च्छित रहता है और अपने लक्ष्यविन्दु पर एकाग्र लता है । अनासक्ति उसके जीवन का मूलाधार ोती है ।

वह सव सहता है । हर्ष-विषाद, लाभ-हानि, ुख-दुःख, सयोग-वियोग, राग-द्वेष, माटी-स्वर्ण सवमे समत्व रखता है । उसके लिए कही कोई मूर्च्छा नही होती--सव समान होते हैं । वह निराकुल होता है । आकुलता मूर्च्छा मे, विषमता मे होती है, समत्व मे आकुलता के होने का कोई प्रश्न ही नहीं है । यही कारण है कि साधु समत्व मे जीता है और उसी को अपने जीवन की वुनियाद वनाता है उसके लिए उसकी निजता इतनी उदार हो वनती है कि प्राय सभी आत्मवत् हो जाते है । उसकी इन सघन आत्मवत्ता मे से अहिसा का परमोत्कृष्ट रूप व्यक्त होता है । वह अभीत हो जाता है, होता जाता है । कहा गया है कि अभय अहिसा का परि- पाक है । वह अहिसा की चरम सीमा है । अहिसक न तो किसी से डरता है, और न किसी को डराता है । ऐसी कोई वजह ही नही वच रहती कि वह किसी से भयभीत हो । भय को जीतने पर अहिसा आपोआप अपनी परमोत्कृष्टता मे उस पर प्रकट हो जाती है ।

साधु आत्मगवेषी होता है । वह ढूढता है आत्मा को, स्व-भाव को । शरीर मे बैठी उस आत्मा को जिसे लोग अक्सर देख नही पाते है । होता बहुधा यह है कि लोग देह को ही आत्मा मान वैठते है और उसमें मूर्च्छित हो जाते हैं । इन—ऐसी बीहड स्थि- तियो मे शुरू होती है साधक की शोध-यात्रा ।

ध्यान रहे सत्य की खोज का काम गहन तिमि- रान्ध मे शुरू होता है । शरीर की जडताओ के बीच आत्मा की एक किरण जव साधक को छूती है, उसके भीतर भिदती/उतरती है तव शुरू होती है उसकी सच्ची गवेषणा । एक सयत, सुव्रत, दूसरे साधुओ के साथ रहने वाला साधु ही आत्मगवेषणा का अधिकारी हो सकता है । सच्चा आत्मगवेषी अमूर्च्छित और परिपूर्ण सयम मे चलता है । उसकी यात्रा अविराम चलती है, वह एक पल को भी रुकता नही है, तव तक वह पुरस्सर रहता है जव तक उसे आत्मसिद्धि की परमनिधि नही मिल जाती ।

भिक्षु कुतूहल नही करता । वह कही रुकता ही नही है, कहीं विधता ही नहीं है, उसके कही आरक्त/आसक्त होने का प्रश्न ही नही उठता । वह सदा तपस्वी होता है । तप मे उसका एक-एक क्षण वीतता है । उसके साधना के दीपक की लौ अखण्ड- अकम्प गलती है ।

वह विद्याओ को केवल आत्मसिद्धि मे जानता है, उनका लौकिक उपयोग नहीं करता । वह तन्त्र- मन्त्र, टोने-टोटको का भूल कर भी इस्तेमाल नहीं करता । आत्म-विद्या की अबाध/उत्तरोत्तर उपलब्धि मे जो भी शक्तिया उसके भीतर वनती/उभरती हैं, उनका वह सिर्फ आत्मानुसधान मे उपयोग करता है, आजीविका उसमे मे नहीं लेता । वह जानता है, किन्तु उनका उपयोग लौकिक लाभ के लिए नहीं करता ।

कहा गया है- जो विज्जाहि न जीवइ स भिक्खू—जो विद्याओ के द्वारा आजीविका नही करता—वह भिक्षु है । आज ऐसे साधु बहुत सारे हैं जो लौकिक विद्याओं के जरिये आजीविका कर रहे है ।

जो साधु "सथव" सस्तव/परिचय नही करता, वह भिक्षु है । भिक्षु कभी कोई ऐसा परिचय नही करता जिससे उसे सुविधाए मिले, आराम मिले, सुख मिले । उसका मार्ग सुविधा भोग का मार्ग नही है, वह कटकाकीर्ण रास्ता है । वह निराकुल मन से अपनी यात्रा करता है, रुकता नही है—सुविधा की याचना नही करता, असुविधा या सकट से कभी विचलित नही होता । सकट मे से वह परीक्षित होता है और हर आपदा, उपसर्ग को एक सुविधा मानता है, आध्यात्मिक संपदा की तरह स्वीकार करता है । इसीलिए कहा गया है—**जो सथव न करेइ स भिक्खू** जो परिचय (सस्तव) नही करता वह भिक्षु है ।

जो अनिष्ट-योग और इष्ट-वियोग मे भी अविचलित/अकम्प बना रहे, वह है साधु । चाहे जैसी विषमता हो साधु प्रद्वेष नही करता । जो प्रतिकूलताओ मे सुमेरु की तरह अकम्प/अविचल रहता है, वह साधु है और जो अनुकूलताओ की खोज अथवा याचना नही करता वह साधु है । सतोष और साधुत्व मे घनिष्ठ सम्बन्ध है । ऐसा सम्भव ही नही है कि जहा साधुत्व हो वहा सन्तोष न हो और जहा सन्तोष हो वहां साधुत्व की कोई जीवन्त सम्भावना न हो । कहा गया है—**जे तत्थ न पउस्सई स भिक्खू**— जो ऐसी विषमताओ/प्रतिकूलताओ मे भी प्रद्वेष नही करता, वह भिक्खू है ।

जो मन, वचन और काया से सुसवृत्त है, वह भिक्षु है । यहा "सुसवृत" शब्द पर ध्यान दीजिये । सवृत और विवृत के व्यतिरेक को समझिये । विवृत खुलाव को कहते है और सवृत(सवरित) बद को, अत जिसने मन, वाणी और काया के द्वार/कपाट बद कर लिए है, वह भिक्खू है, वह साधु है । साधु इन द्वारो पर अप्रमत्त चौकी रखता है । वह प्रतिक्षण दे[खता] है कि कही कोई अनचाहा/अयोग्य अतिथि तो द्वार खटखटा रहा है । वह तमाम दस्तको के उत्तर देता, सिर्फ सम्यक्त्व की दस्तक सुनता है ।

जो प्रान्तकुलो (पतकुलाई)—सामान्य घरों [से] भिक्षा लाता है वह साधु है । यहा "प्रान्तकुल" [शब्द] पर ध्यान दे । सामन्त/भौगिक कुल यहा नहीं [कहा] गया है—प्रान्तकुल कहा गया है; स्पष्ट सकेत है कि वह जो प्रान्तकुलीन(कॉमन मेन) है वह सर्वहारा और कम-से-कम मूर्च्छाओ में जीवन बिता रहा है, अमूर्च्छित महामुनि ऐसे ही अत्यल्प अपरिग्रही के द[्वार] मे अपनी भिक्षा का आकलन करता है । जिसे 'अन्तिम आदमी' कहा गया है, प्रान्तकुल मे उसी की ओर इशारा है, अत अन्तिम आदमी का ख्याल जो र[ख] रहा है, वह साधु है, जो पक्ति मे खडे प्रथम आदमी का ध्यान रख कर अपनी साधुचर्या चला रहा है, व[ह] साधु नही है—वह असाधु है या फिर साधुत्व/मुनित्व की बारहखड़ी से अपरिचित है ।

जो डरता नही है, वह साधु है । यह बहुत सीधी किन्तु अत्यन्त प्रखर कसौटी है साधुत्व की। साधु डरे क्यो ? कोई कारण नही है कि वह भयभीत हो । वस्तुत. वह कही भी/कैसे भी भयाक्रात नहीं है। वह न भयभीत है, न भवभीत अपितु भववीत होने के मार्ग मे अनवरत यत्नशील है । उसका युद्ध सब भयो से है और वह लगातार उन पर अपनी जय-पताका फहराता जा रहा है । उसने अपनी इस अ[विराम] यात्रा मे, जो निरन्तर है, न तो किसी की दासता को स्वीकार किया है और न ही कही किसी निराशा का शिकार वह हुआ है ।

वह प्राज्ञ है अर्थात् जानता है गहराई मे समत्व के मर्म को, आगम के परमार्थ को । वैषम्य को, असमजस को, पसोपेश को वह खत्म कर चुका है । वह जहा भी आख पसारता है उसे समता की धडकन थिरकती नजर आती है । उसने वस्तु स्वरूप को जाना है, वह

(शेष पृष्ठ १२० पर)

रजत-जयन्ती के उपलक्ष्य मे आयोजित—
राष्ट्रीय निबन्ध प्रतियोगिता में प्रथम

"आतंक व असंतुलन के वर्तमान परिवेश में समता की सार्थकता"

△ कुमारी कहानी भानावत

△

> समता की सार्थकता, विषम परिस्थितियो मे ही अधिक कारगर होती है। जब चारों ओर हाहाकार हो, लूट-खसोट हो, आतककारी और आततायियों का बोलबाला हो, अशाति और अव्यवस्था का साम्राज्य हो तब कोई व्यक्ति इन सारी परिस्थितियो के बीच में भी संतुलित और सयमित रहते हुए परम समता-वान बना रहे तो ही उसकी सार्थकता है।

आज का युग कुठा, अशाति, सन्त्रास, आतक, असन्तुलन, विषमताओ तथा विविध ऊहापोहो का युग कहा जाता है। ज्ञान-विज्ञान तथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे जैसी सक्रामक स्थिति विगत अर्द्धशताब्दी मे आयी वैसी पिछले सैकडो वर्षो मे देखने को नही मिली। भौतिक समृद्धि और वैज्ञानिक उन्नति मे हमने बहुआयामी प्रगति की। अतरिक्ष तक को छान मारा। परमाणु का आविष्कार किया मगर आत्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्र मे जो ऊचाइया हमारे ऋषि-मुनियो तथा महापुरुषो ने नापी थी, हम उन्हे विस्मृत कर गये।

जगत गुरु कहलाने वाला भारत अब वह भारत नही रहा। राम, कृष्ण, ईसा, बुद्ध, और महावीर जैसे ईश्वरीय पुरुष इस धरती पर अवतरित हुए। उन्होने अपनी वाणी और व्यवहार के द्वारा जो कुछ कर दिखाया वह हमारे समाज और देश का आदर्श बन गया। इन्ही के कथनी और करनी के मेल-जोल से हमारी भारतीय सस्कृति के उदात्त तत्त्व विकसित हुए परन्तु अब वैसी सस्कृति, वैसे संस्कार, वैसी सभ्यता और वैसी जीवनधर्मिता नही दिखाई देती। आज दुनिया एक हो गयी मगर मनुष्य एक नही हुआ। आदमी-आदमी मे भेद-विभेद हो गया है। वह आत्मीयता और उदात्तता जो सबको एक सूत्र मे बाधती थी, अब देखने को नही मिलती।

प्रेम और शाति, सद्भाव और सहिष्णुता की धाराए जैसे हमारे जीवन से सूख गयी। रिश्ते-नाते और भाईचारा के सबध और शब्द हमारे जीवन-कोष से निकल गये। अब वाद-विवाद, वितडावाद अधिक हावी हो गया है। जो आदमी पहले समूह मे, समाज मे सयुक्त रूप से विचरण करने का आदी था वह अब अपने आप मे एकात, व्यक्तिनिष्ठ और जुदा-जुदा रहना पसन्द करता है। इसलिए सयुक्त परिवार भी टूटे, खण्ड-खण्ड हुए।

खण्ड-खण्ड होने की इस प्रक्रिया मे विखण्ड और पाखण्ड अधिक पनपा। ऊंच-नीच के भेद बढ़े। भौतिकता की चकाचौंध ने अपने आप को ही सर्वाधिक महत्व दिया। इससे समाज या अन्य व्यक्ति हमारे प्रेम और सौहार्द का पात्र नही रहा। हर जगह टूटन ही टूटन और बिखराव की स्थिति पैदा हुई तो जीवन का संतुलन बिगड़ना और आतक तथा विषमता का हावी होना स्वाभाविक था।

शिक्षा हमारे जीवन की महत्वपूर्ण धुरी है। परन्तु यह शिक्षा भी जीवन निर्माण की सही दिशा नही दे पायी है। अपनी जमीन, संस्कृति और संस्कारो से जुडी हुई शिक्षा जीवन मे सरसता, समरसता और आत्मशक्ति का विकास करती है। परन्तु हमारे ऊपर पश्चिमी सभ्यता ने इस कदर अपना असर जमा रखा है कि हम उसी का अन्धानुकरण करते है। हमारे जीवन की विषमता की स्थिति का यह भी एक बहुत बडा कारण है। इस शिक्षा ने जहा हमे अपनी मेहनत और श्रम से तोडा है, वही अपनी संस्कृति और संस्कार से भी मोडा है। पहले शिक्षा का चालचरण 'अ' मने 'अनार', 'आ' मने 'आम' से शुरू होता था।

निश्चय ही आम और अनार रस से भरे सरस फल है जो जीवन मे सरस रस का संचार ही नहीं करते वरन् उसे पुष्ट, तरोताजा तथा शक्तिवान भी बनाते है। बुद्धि और ज्ञान का विस्तार करते है। प्रकृति के निकट लाते है और आरोग्य प्रदान करते है। समता तथा समरस को बढावा देते है। आत्मिक विकास करते है और हमारी अन्तश्चेतना को उजला आयाम देते है परन्तु अब अत्याचार और आतंक का वातावरण बुरी तरह फैल गया है। आज का बच्चा ऐसी परिस्थितियो मे असन्तुलित और अस्त-व्यस्त हो गया है। अब शिक्षा के मापदण्ड भी बदल गये है जो जीवन को विसगतियो की ओर ही अधिक धकेल रहे है। ऐसी स्थिति मे आज का बच्चा 'अ' मने 'अत्याचार' और 'आ' मने 'आतंक' ही अधिक पढता, सुनता और देखता है।

शिक्षा मे सबसे बडा बदलाव यह भी आया कि जो शिक्षा पहले श्रवणेन्द्रिय यानी कान से सम्बन्धित थी वह अब चक्षु इन्द्रिय यानी आख से जा लगी है। कान वाली शिक्षा सीधी हृदय मे पैठती थी। आख वाली शिक्षा का उससे सम्बन्ध हट गया तो शिक्षा का दायरा अन्तर की गहराइयो और जीवन की ऊचाइयो को नही नाप पाया। इससे व्यक्ति बेरोजगार हो गया। इस बेरोजगारी ने भी आदमी को आतंकित और असंतुलित किया है।

आतंक व असन्तुलन के ऐसे परिवेश मे केवल समता ही ऐसा अस्त्र है जो हमारे जीवन को सार्थकता की कसौटी दे सकता है। समता का अर्थ सम और विषम, अच्छी और बुरी, हितकारी और अहितकारी स्थितियो मे एक जैसा भाव यानी समभाव रखने से है। यह कार्य जितना सरल है उतना ही मुश्किल है। कहने को तो तो सभी अपने को समता की महान् विभूति कह सकते है परन्तु जीवन व्यवहार मे वे उससे उतने ही कोसो दूर लगते है। इसलिए आज का मानव अशात, उत्पीडित और अनात्मिक अधिक लगता है।

हम जरा-जरा सी बात पर विचलित हो जाते है। कई बार अकारण ही हम विषमता को मान ले लेते है। भ्रातिवश भी हम अपनी समता को खाते नजर आते हैं। परायी चिंताओ से भी हम विचलित हो जाते है। हम अपने आप—को कभी नही तौलते। हमेशा दूसरो की ही गलतिया और बुराइया दिखती रहती है। इसलिए हम अपने ही परिवार, अपने ही परिजनो के बीच समता का वातावरण स्थापित नहीं कर पाते है। जिस बहू को बडे हरख के साथ सास अपने घर मे लाकर प्रसन्न होती है उसी बहू से उसका समभाव नही रह पाता है। वह उसे एक भिन्न परिवार की समझती रहती है। उसे यह मालूम नहीं कि यही बहू आगे जाकर स्वय उसकी जगह लेगी और इस घर की मालकिन कहलायेगी। यही उसका अपना घर है। जो उसका पीहर का घर था वह तो हमेशा के लिए छोड चुकी है परन्तु सास का हृदय कपाट उसे वह मान और स्थान नही दे पाता है इसलिए उस परिवार मे हमेशा ही चख-चख चलती रहती है। थोडे से स्नेह, प्यार और दुलार से जिस बहू को सास अपना बना सकती है उसी बहू का अपना विषम भाव देकर वह बहुत बडा कलह मोल ले लेती है।

समता को भावना की सार्थकता व्यावहारिक धरातल पर ही परखी जा सकती है । एक बहुत बड़ा धन्धा करने वाला व्यापारी लाभ के समय अति प्रसन्न रहता है और फूला नही समाता है किंतु वही यदि हानि के समय अशात, असतुलित और अन्य मनस्क हो जाता है तो हम उसे समभावी नही कहेगे । वह समतावान तभी कहलायेगा जब दोनो स्थितियो मे उसकी भूमिका एक जैसी रहेगी । न वह लाभ मे अधिक लोभी वनेगा, अति आनन्दित होगा और न हानि के समय अति अशात और दुखी होगा । जैसी स्थिति उसकी लाभ के समय रहती है, वैसी ही स्थिति यदि उसकी हानि के समय रहेगी तो ही हम यह समझेंगे कि उसमे समता और सहिष्णुता की सार्थक परिणति हुई है । ऐसा व्यक्ति आतक और असतुलन की चाहे कैसी ही परिस्थितिया उपस्थित हो जाए कभी भी अपने मन से, अपने पथ से विचलित नही होगा ।

भगवान् महावीर स्वामी तो समता की साक्षात् मूर्ति थे । अपनी साधना और तपस्या के दौरान उन्हे जो दारुण दुख और असाध्य कष्ट हुए, उन्होने उन सवका हसते-मुस्कराते पान किया । ग्वाले द्वारा उनके कानो मे कीले ठोके जाने पर भी वे जरा भी विचलित नही हुए और न उस ग्वाले पर ही उन्हे कोई क्रोध आया । इसलिए ग्वाले का प्रहार उन्हे जरा भी चोट नही दे पाया । यही स्थिति उनके द्वारा चण्डकौशिक सर्प के साथ रही । अत्यन्त गुस्से मे फुफकार मारते हुए जब साप ने उन्हे वुरी तरह डसा और अपना सारा जहर उगल दिया तव भी क्षमामूर्ति महावीर के मन मे उसके प्रति कोई ग्लानि, ईर्ष्या और द्वेष पैदा नही हुआ । यह महावीर की समता का ही सबसे वडा उदाहरण कहा जायेगा कि जिस स्थान पर साप ने उनको काटा वहा से दूध की धार फूट पडी । महावीर की समता ने साप के जहर को दूध मे परिवर्तित कर दिया । इससे स्पष्ट है कि कोई कैसी आतककारी और असन्तुलन की विषम से विषम परिस्थितिया हो, यदि हम मे समता भावो का पूर्णरूपेण समावेश है तो हमारे पर उनका कोई विपरीत असर नही पड सकता ।

सभी महापुरुषो ने इसीलिए जीवन मे समता की सार्थकता पर वल दिया और उसके व्यावहारिक दर्शन को जीवन मे उतारने और समदर्शी वनने का उपदेश दिया । परम पूज्य 'आचार्य नानेश' ने इसी वात को वडे ही सरल ढग से इन शब्दो मे कहा है—

"समदर्शी व्यक्ति मान-अपमान, हानि-लाभ, स्वर्ण-पत्थर, वन्दक-निन्दक इतना ही नही समस्त ससार के प्राणियो को आत्म-दृष्टि से देखता है । उसकी दृष्टि मे तृण और मणि मे अन्तर नही होता है । वह पुद्गल के विभिन्न पर्यायो को समझ कर उनके आधार पर अपने विचारो मे उथल-पुथल नही आने देता हे ।"

समता भाव अपनो के प्रति ही नहीं, सबके प्रति होना चाहिये । उसमे छोटा–बड़ा, छूत-अछूत, जात–पांत आदि का भेद नही होना चाहिये । आज यह भेद अधिक वढ गया है । कहने को तो हम सब एक है मगर वस्तुत है नही । समता आज हमारी वातो और कथा-किस्सो मे ही रह गयी है । अपने आचरण मे उसे बहुत कम ढाल पाये है । वर्तमान युग के सबसे वडे सत महात्मा गाधी का तो जीवन ही समता भावो से भरा–पूरा था । अपने सावरमती आश्रम मे वे सबको समभावो से देखते थे । यहा तक कि कस्तूरवा और आश्रम के साधारण से साधारण कार्यकर्त्ता के प्रति भी उनमे किसी प्रकार का कोई भेद नही था ।

समतावान व्यक्ति किसी साधक और योगी मे कम नही होता । जो साधु जरा-जरा सी वात पर उखड पडे, गुस्सा हो जाये, अपना आपा खो दे, वह सच्चा साधु नही कहा जा सकता । साधु का कोई वेश या भेष नही है । वह तो पूरे जीवन का व्यवहार है । जब तक वह अपनी इन्द्रियो और मन को वश मे नही कर लेता, साधु या साधक नही कहला

सकता। अगर किसी साधु में समता नही, संयम नहीं है, सहिष्णुता नही है,शाति नहीं है तो वह साधु नही है। परन्तु ठीक इसके विपरीत यदि किसी गृहस्थ में इन सब अच्छे भावो का बीजारोपण है तो वह गृहस्थ होते हुए भी साधु है। गाधी जी ऐसे ही साधु और सत महात्मा थे।

समता की सार्थकता, विषम परिस्थितियो मे ही अधिक कारगर होती है। जब चारो ओर हाहाकार हो, लूट-खसोट हो, आतककारियो और आततायियो का बोलबाला हो, अशाति और अव्यवस्था का साम्राज्य हो तब कोई व्यक्ति इन सारी परिस्थितियो के बीच मे भी सतुलित और सयमित रहते हुए परम समतावान बना रहे तो ही उसकी सार्थकता है।

आज वस्तुत. सबसे बडी आवश्यकता समता को जीवन के व्यावहारिक धरातल पर कथनी और करनी मे एक रूप देने की है। समय रहते हुए यदि हमने यह नही किया तो हम धीरे-धीरे साम्प्रदायिक धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषमताओ के शिकार बनते जायेगे, जिससे मानव-मानव के बीच अलगाव की दूरिया बढती जायेंगी। ऐसी स्थिति मे हमारे पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय दायित्व के प्रति हमारा विनय और विवेक अपनी समतावादी सस्कारो वाली सस्कृति को खो बैठेगा।

सारे विश्व मे मनुष्य जीवन की सर्वश्रेष्ठ ऊंचाइयो और अच्छाइयो के गुण और तत्व हमारे यही के महामानवो, ऋषि-मुनियो और सन्त-महात्माओ द्वारा प्रवर्तित हैं और उनसे जीवन उपयोगी और आदर्शयुक्त बना है। यही कारण है कि उद्वेग, आतक एव असन्तुलन जैसा कैसा ही परिवेश हो, समताशील, शुद्धाचरण, नैतिक जिम्मेदारिया जैसे गुण ही आज के गदलाते पर्यावरण को परिष्कृत कर सकते है। समता भावो की मानव कल्याणवादी इसी दृष्टि की आज सर्वाधिक आवश्यकता है। कहा है—

"विषमता के अन्धकार मे समता की एक ज्योति भी आशा की नई-नई किरणों को जन्म देती है।"

—आचार्य श्री नानेश

३५२ श्रीकृष्णपुरा, उदयपुर (राज)

(शेष पृष्ठ ११६ का)

वस्तुमात्र की अस्मिता का सम्मान करता है, अ
किसी का अपमान नहीं करता, और न ही यह मान
है कि उसका अपमान हुआ है/या होता है। जो ए
सहज साम्य मे जीता है और जिसके लिए मानापमान
मे फर्क ही नही रह गया है, ऐसे साधु मे जहरअमृ
एक जैसे होते है। वह शूल-फूल में भेद नहीं करत
और इसीलिए शूल-फूल भी उसमें कोई फर्क नहीं देखत।
उस सत्यार्थी की आंखो मे सत्य की खोज-पिपा
इतनी विदग्ध और तीव्र होती है कि सब कुछ उस
निमग्न होता है। उसका एकमेव लक्ष्य होता है कु
को अपनी सम्पूर्ण निजता मे पाना। उसकी साधना
असल मे, निजता को खोजने और पाने की साधना
होती है।

वह भीतर-बाहर सब जगह अकेला होता है। भीतर उसके रागद्वेष समाप्त हुए होते है, इसलिए अकेला होता है और बाहर रागद्वेष के तमाम हे निष्क्रिय हो जाते हैं इसलिए अकेला होता है। ए तलस्पर्शी नैष्कर्म्य के कारण उसकी तमाम स्वाभाविक ताए उन्मुक्त हो जाती है और वह निरन्तर शुद्ध तत्व क रूप मे उभर कर सामने आने लगता है। कहा गया है—**चेच्चा गिहं एगचरे स भिक्खू**—घर छोड कर प पाने के लिए जो अकेला चलता है--रागद्वेष से विजित वह भिक्षु है। यहा 'एगचरे' पद पर ध्यान दीजिये। वह अकेला चलता है। वह स्वायत्तता की खोज मे है। पराधीनताओ की जजीरे उसने निरन्तर काटी है अत एक सर्वथा स्वाधीन स्थिति मे वह लगातार उतरता जा रहा है। जो साधक पराधीनता को समझ कर स्वाधीनता का विलक्षण रसपान करता है, वह भिक्षु है।

ऐसे साधु विशेषणो मे लिप्त नही होते, बल्कि ससार को विशेषणो से विभूषित करते है। साधु-जीवन की गरिमा ही इसमे है कि वह भरपूर अप्रमत्तता से जिये और अलकारो को अलकृत करे, अलकारो से अलकृत न हो। अत जो विशेषणो का विशेषण है वह भिक्षु है, वह साधु है।

६५, पत्रकार कॉलोनी, इन्दौर (म प्र)
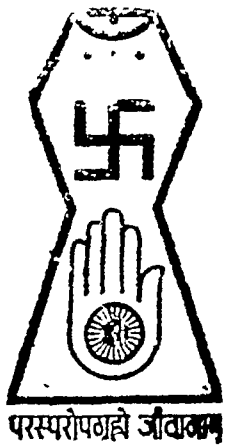
संघ-दर्शन

संघों गुणसंघाओ, संघो य विमोचओ य कम्माणं ।
दंसणणाणचरित्ते, संघायतो हवे सघो ।।

गुणों का समूह संघ है । सघ कर्मो का विमोचन करने वाला है । जो दर्शन, ज्ञान और चारित्र का सघात (रत्नत्रय की समन्वित) करता है, वह सघ है ।

स्मृति के झरोखे से :

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ की विकास कथा

△ सरदारमल काकरिया

आज जब देश भर मे और यहा तक कि विदेशो मे भी अनेक स्थानो पर श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ की स्थापना की २५ वी जयन्ती रजत जयन्ती वर्ष के रूप मे अपार हर्षोल्लास के साथ मनायी जा रही है। आज जब रजत जयन्ती वर्ष सघ के यौवन का साक्षी बन आने वाले स्वर्ण जयन्ती वर्ष की कल्पनाओं का समाज और राष्ट्र में सवेदन भर रहा है, आज जब संघ अपने २५ वर्षो के यशस्वी जीवन के शिखर पर आरूढ़ होकर प्रमुदित है, तब मेरा मन बार-बार २५ वर्ष पूर्व के उस क्षण को स्मरण कर पुलकित एव उल्लसित होता है, जिस क्षण ने हमारे इस प्रिय सघ को जन्म दिया। आशा और निराशा, विश्वास और उद्विग्नता, आस्था और अनास्था तथा श्रेय और प्रेय के बीच झूल रहे, डोल रहे समाज को निर्णायक स्वरो में, श्रेय का, चेतना का, आशा, आस्था और विश्वास का पथ प्रदर्शित करने वाले सघ-प्रसव जन्म के उस क्षण का स्मरण कितना रोमाचक और हर्षद है? केवल अनुभूति से ही जाना जा सकता है।

आज से २५ वर्ष पूर्व संघ-जन्म के समय की परिस्थिति कितनी तिमिराच्छन्न थी, कितनी निराशाजनक थी, कितनी चिन्ता जनक थी? आज की युवा पीढी तो बहुत सभव है, उतनी कल्पना ही न कर पाए। श्रमण सघ द्वारा प्रतिपादित समाचारी का साधु समाज द्वारा खुल्लम खुल्ला उलघन हो रहा था। स्थान-स्थान से शिथिलाचार के समाचार ज्वालामुखी से निकले तप्त लावे के समान समाज-जीवन को दग्ध कर रहे थे। पाली का कुख्यात काड भी इन्ही दिनो घटित हुआ था। जिसके कारण समग्र समाज मे भयाकर रोष व्याप्त हो गया था। इस काण्ड के समाचार पत्रो मे प्रकाशन से समाज नत शिर हो गया था, प्रत्येक श्रावक का माथा शर्म से झुक गया था। श्रमण सघ के प्रधानमत्री पडितरत्न श्री मदनलालजी म. सा. ने कार्य करना बन्द कर दिया था, बाद मे पद से त्यागपत्र भी दे दिया था, तब श्रमण संघ के उपाचार्य के दायित्व को निर्भयता और साहस से निभाने का प्रयास उपाचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. ने किया था। उपाचार्य श्री के शुद्धाचारी कडे कदमो ने, धर्मानुशासन बनाए रखने के उनके प्रयासो मे जब श्रमण संघ के शिथिलाचारी साधुओ तथा सम्प्रदायवादी श्रावको मे उथल-पुथल मच गई और जब जिनशासन की प्रभावना और धर्म शासन की स्थापना के दृढ संकल्प सहित श्री गणेशीलालजी म सा ने श्रमण सघ से पृथक होने का निर्णय ले लिया, तब समग्र देश का चतुर्विध सघ एक घोर सकट मे फसकर उबरने की आशा छोड़ हताशा का अनुभव करने लगा था, उस समय ऐसा लग रहा था, मानो श्रमण संस्कृति के भारत के गगन मण्डल मे घोर निराशा का साम्राज्य छा गया है। कभी न समाप्त होने वाली काल-रात्रि शुद्धाचार और

मर्यादा को मानो सदेव के लिए निगलने को ग्रा पहुची हो । कही से कोई प्रकाश की रश्मि नही दिखाई दे रही थी । समाज पथ भ्रान्त और व्यथित था । उस अधियारे को उजियारे में बदलने का सकल्प कुछ सकल्पशील मनो मे उद्वेलित हो रहा था । उस सकल्प की चमक का एक साक्षी होने के नाते, एक सहभागी होने के नाते कभी-कभी विद्युत प्रकाश की भांति वह सकल्प का क्षण मन-मस्तिष्क मे उभर आता है । वह सकल्प जिसने निराशा को आशा मे, अनास्था को आस्था मे बदल दिया था । सकल्प के उस क्षण की चमक, वह आलोक, आप सब के बीच बाटने को यह मन इस क्षण व्यग्र हो उठा है । [उस समय की स्थिति का कुछ दिग्दर्शन, उन दिनो प्रकाशित "निवेदन पत्र" मे भी उपलब्ध है ।]

हे अरुणोदय ! तुम को प्रणाम !!

निराशा के उस घने अंधकार को सहसा ही चीर कर उन दिनो उदयपुर मे विराजित परम श्रद्धेय आचार्य-प्रवर श्री गणेशीलालजी म. सा. ने अपने स्वास्थ्य की चिन्ताजनक स्थिति में चिन्तित समाज को चिन्तामुक्त करने वाली ऐतिहासिक घोषणा करते हुए मिती आसोज कृष्णा नवमी वि. स. २०१६ तदनुसार दि. २२ सितम्बर, १९६२ के पुनीत दिवस पर पंडितरत्न श्री नानालालजी म. सा. को युवाचार्य पद पर अभिषिक्त करने की घोषणा की । श्री गणेशाचार्यजी म. सा द्वारा आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म. सा की इस सम्प्रदाय और सघ के सचालन का दायित्व सौपने की घोषणा के साथ ही उपस्थित जन समूह मे उत्साह की लहर व्याप्त हो गई । आचार्य श्री जी ने आसोज सुदी २ स २०१६ को युवाचार्य पद की चादर प्रदान करने की तिथि निर्धारित की । इस निर्धारण के साथ ही सकल्प-विकल्प के बादल छटने लगे । घोर निशा के गर्भ से स्वर्णिम प्रकाश ने जन्म लिया । संघ के भविष्य पर लगे समस्त प्रश्न चिन्हों का विलोप हो गया । समाज जीवन मे एक शांत क्राति ने जन्म लिया और एक नवीन सूर्य का उदय हुआ । समाज जीवन को प्रकाश देने के लिए श्री गणेशाचार्यजी साहसिक निर्णय लेकर जैन जगत के सिरमौर और भास्कर बन गए । उन्होने युग सत्यो पर डाले गए अंधेरे के पर्दो को हटाया । उस पावन अरुणोदय को हम सभी के श्रद्धासहित अशेष प्रणाम ।

संघ संस्थापना :

गुरु गणेशाचार्यजी द्वारा पंडितरत्न श्री नानालालजी म. सा को युवाचार्य बनाने की घोषणा के सकेतो को सुज्ञ सुश्रावको ने समझा । हिलौरे ले रहे, उत्साह के बीच स्थित-प्रज्ञ होकर उन्होने समाज-हित-चिन्तन किया । समाज के प्रमुख धर्म प्रेमी वहा उपस्थित थे, जिनमे सुप्रसिद्ध श्रावक सर्वश्री जेठमलजी सेठिया, सतीदासजी तातेड, अजीतमलजी पारख, आसकरणजी मुकीम सभी बीकानेर के, सेठ विजयराजजी मूथा मद्रास, सेठ छगनमलजी मूथा बैंगलोर, भागचन्दजी गेलडा मद्रास, हीरालालजी नादेचा खाचरौद, कालूरामजी छाजेड उदयपुर, नाथूलालजी सेठिया रतलाम, भीखमचन्दजी भूरा देशनोक, बगड़ीवाली सेठानी लक्ष्मीदेवीजी धाड़ीवाल रायपुर प्रमुख थे । इन समाज सेवी बुजुर्गों ने कुछ नवयुवको को बुलाकर एक मीटिग की । उस मीटिग मे उपस्थित नवयुवको मे सर्वश्री जुगराजजी सेठिया, सुन्दरलालजी तातेड बीकानेर, महावीरचन्दजी धाडीवाल रायपुर के साथ मै सरदारमल काकरिया भी था । निरन्तर दो दिन तक गहन विचार-विमर्श पूर्वक चिन्तन के बाद निर्णय किया गया कि जिस दिन पडित रत्न श्री

नानालालजी म सा को युवाचार्य पद की चादर प्रदान की जावे, उसी दिन एक अखिल भारतीय स्तर की सस्था स्थापित की जावे जिसके सचालन हेतु पाच लाख रुपये का ध्रुव फड तथा एक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया जावे, जिससे समाज को निरन्तर वस्तुस्थिति से परिचित कराया जा सके। इस शुद्ध सगठन की स्थापना का विचार प्रकाश-पुज की भाति उदित हुआ और सर्वत्र हर्ष छा गया। समाज प्रमुखों के समक्ष एक निर्णायक चुनौती थी कि ४-५ दिन की अल्पावधि मे इस चिन्तन को किस प्रकार मूर्त्त रूप दिया जावे, किन्तु समाज के पैरो में पख लग गए थे और उसका मानस उत्साह, उमंग और कुछ कर दिखाने की ललक से भरा हुआ था। सघ का नामकरण जिनशासन की सुप्रतिष्ठित मर्यादा के अनुसार किया—**श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ**। संघ के प्रथम अध्यक्ष के पद पर भीनासर निवासी सेठ श्री छगनलालजी वैद कलकत्ता आसीन हुए। प्रथम मत्री परिषद के गौरवशाली सदस्यो के रूप में सेठ श्री भागचन्दजी गेलडा मद्रास तथा सेठ श्री हीरालालजी नादेचा खाचरौद उपाध्यक्ष, श्री जुगराजजी सेठिया मत्री, सहमत्रीद्वय श्री सुन्दरलालजी तातेड़ एव श्री महावीरचन्दजी धाडीवाल निर्वाचित किए गए। मुझे कोषाध्यक्ष का पद भार सौंपा गया। प्रथम कार्यसमिति सदस्यो के रूप मे सर्वश्री छगनलालजी वैद भीनासर, हीरालालजी नादेचा खाचरौद, भागचन्दजी गेलडा मद्रास, जुगराजजी सेठिया, सुन्दरलालजी तातेड बीकानेर, महावीरचन्दजी धाडीवाल रायपुर, सरदारमल कांकरिया कलकत्ता, छगनमलजी मूथा बैंगलौर, जेठमलजी सेठिया बीकानेर, नाथूलालजी सेठिया रतलाम, पुखराजजी छल्लाणी मैसूर, कन्हैयालालजी मेहता मन्दसौर, कन्हैयालालजी मालू कलकत्ता, कानमलजी नाहटा जोधपुर मदनराजजी मूथा मद्रास, श्रीमती आनन्द कवर पीतलिया रतलाम, प पूर्णचन्दजी दक कानौड, खेलशंकर भाई जौहरी जयपुर, भवरलालजी कोठारी, भवरलालजी श्रीश्रीमाल बीकानेर, किशनलालजी लूणिया बैंगलोर, कालूरामजी छाजेड उदयपुर, चादमलजी नाहर छोटीसादडी, गिरधरलाल भाई के जवेरी बम्बई, कन्हैयालालजी मूलावत भीलवाडा, लक्ष्मीलालजी सिरोहिया उदयपुर, सम्पतराजजी बोहरा दिल्ली, गुणवन्तलालजी गोदावत वघानामडी, श्रीमती नगीना बहिन चोरडिया दिल्ली, राजमलजी चोरडिया अमरावती एव गोकुलचन्दजी सूर्या उज्जैन को मनोनीत किया गया।

सघ का प्रधान कार्यालय बीकानेर मे रखने का निश्चय किया गया और बीकानेर सघ ने सहर्ष अपने रागडी चौक स्थित भवन को केन्द्रीय कार्यालय हेतु प्रदान किया। कार्यालय ने कार्य करना प्रारभ कर दिया और थोड़े ही दिनो मे श्रमण-सस्कृति के सवाहक, श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ के मुखपत्र **"श्रमणोपासक"** का प्रकाशन भी प्रारभ हो गया। श्रमणोपासक का देश मे हार्दिक स्वागत हुआ और ५०० प्रतियो से प्रारभ हुआ यह पत्र आज प्रतिपक्ष ४५०० के लगभग मुद्रित होता है।

संघ-विस्तार

आसोज सुदी २ सं. २०१९ को पडित रत्न श्री नानालालजी म सा के युवाचार्य पद प्रदान के पुनीत दिवस पर ही स्थापित यह संघ अपने कार्यकर्त्ताओ के अमित उत्साह और [illegible] की सूझ-बूझ मे दिन—दूनी रात-चौगुनी प्रगति करने लगा। इसके प्रभाव क्षेत्र के विस्तार की गति आश्चर्य चकित कर देने वाली है। सघ प्रवासो की धूम मच गई और वर्षा ऋतु मे जैसे सभी दिशाओ मे वेगवान निर्झर आकर अपने प्रवाह को महानदी मे समाहित-समर्पित कर देते है, उसी प्रकार इस सघ निर्माण के समाचार सुन-सुन कर कार्यकर्त्ताओं के

[illegible] विशेषाक

दल-बादल, उमड़-घुमड़ कर स्वग प्रेरणा से महोदधि में आ-आकर मिलने लगे। शीघ्र ही कार्यकर्त्ताओं का एक शक्तिशाली समूह बनता चला गया जिनमे सर्वश्री भवरलालजी कोठारी कन्हैयालालजी मालू, जसकरणजी बोथरा, हसराजजी सुखलेचा बीकानेर, चम्पालालजी आ गगाशहर, तोलारामजी भूरा, दीपचन्दजी भूरा, लूणकरणजी तोलारामजी हीरावत, तोलाराम जोसी देशनोक, श्रद्धेय (स्व.) श्री मूलचन्दजी पारख, नवयुवक श्री बनराजजी बेताला नोखा (स्व.) श्री अमरचन्दजी लोढा स्व. श्री पारसमलजी चोरड़िया, स्व श्री चादमलजी पा श्री कालूरामजी नाहर ब्यावर, श्री नेमीचन्दजी चोपड़ा, हस्तीमलजी नाहटा, श्रीमती प्रेमलता जैन अजमेर, स्व श्री स्वरूपचन्दजी चोरडिया, सर्वश्री सरदारमलजी ढ़ढ्ढा, घीसूलालजी ढ गुमानमलजी चोरड़िया, मोहनलालजी मूथा, उमरावमलजी ढढ्ढा, ज्ञानमलजी गुलेछा जय मालवा क्षेत्र से सर्वश्री स्व. कन्हैयालालजी मेहता मदसौर, स्व. श्री गोकुलचन्दजी सूर्या उज्जै पी. सी चोपड़ा, श्रीमती शान्ता मेहता एव श्री मगनमलजी मेहता रतलाम, छत्तीसगढ क्षेत्र श्री केवलचन्दजी मूथा, स्व. श्री जीवनमलजी बैद, स्व. श्री जुगराजजी बोथरा, श्री राणुलाल पारख, श्री भूरचदजी देशलहरा, प्राणीवत्सला श्रीमती विजयादेवीजी सुराणा व श्री चम्पालाल सुराणा, उदयपुर से सर्वश्री डूंगरसिंहजी डूंगरपुरिया, स्व श्री कुन्दनसिंहजी खिमेसरा, श्री फतेहमलजी हिगड, स्व. श्री हिम्मतसिंहजी सरूपरिया, श्री वीरेन्द्रसिंहजी लोढा, कलकत्ता से सर्वश्री भवरलालजी बैद, शिखरचन्दजी मिन्नी, बम्बई एवं गुजरात से सर्वश्री चुन्नीलालजी मेहता, पीर दानजी पारख, सुन्दरलालजी कोठारी व मोतीलालजी मालू, मारवाड से उदरमना सेठ श्री गणपतराजजी बोहरा, श्री सम्पतराजजी बोहरा, श्री गौतममलजी भडारी आदि श्रावक सारे भारत मे संघ को मजबूत बनाने के लिए जुट गए। सघ कार्य का तेजी से विस्तार होने लगा।

श्री गणेश स्मृति :

सघ स्थापना के मात्र चार मास पश्चात् ही आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. का स्वर्गवास हो गया। युवाचार्य श्री नानालालजी म सा. को आचार्य पद की चादर प्रदान की गई। स्व आचार्य श्री गणेशीलालजी म. सा. के देहावसान से ३–४ वर्ष पूर्व उदयपुर विराजने की अवधि मे उदयपुर सघ ने जो सेवाए दी, वे अविस्मरणीय हैं। अतः संघ कार्यसमिति ने अपनी बैठक मे स्व. श्री गणेशाचार्यजी की जन्म, दीक्षा और स्वर्गारोहण भूमि होने के नाते उदयपुर मे कोई शुभकार्य करने का निश्चय किया। सोच विचार के बाद उदयपुर रेल्वे स्टेशन के सामने ९ बीघा जमीन खरीदी गई तथा कालान्तर मे वहां एक आधुनिक सुविधायुक्त छात्रावास का निर्माण किया गया जो आज श्री गणेश जैन छात्रावास के रूप में भीलो की इस नगरी मे अपना एक विशिष्ट स्थान रखता है। छात्रावास की उपलब्धियां शिक्षा-संस्कार की दृष्टि से गौरवमय है।

रतलाम चातुर्मास :

संघ कार्यसमिति बैठके व प्रमुखो के प्रवास स्थान-स्थान पर हो रहे थे, इसी बीच आचार्य श्री नानालालजी म सा. का आचार्य पद ग्रहण के बाद प्रथम चातुर्मास रतलाम मे हुआ। रतलाम सघ का उत्साह देखते ही बनता था। आचार्य श्री के उपदेशों का भी लोगो पर जबरदस्त असर पड़ा ! एक ओर श्रमण वर्ग समाचारी के विरूद्ध चल रहा था, दूसरी ओर आचार्य श्री जी कठोर

क्रिया पालते हुए, शुद्ध समाचारी का पालन करते हुए, जिन शासन की शोभा बढा रहे थे। इससे अन्य समाजो के प्रबुद्ध वर्ग मे भी चेतना जगी। झुंड के झुड लोग आ-आकर सघ मे सम्मिलित होने लगे। सघ और श्रमणोपासक की सदस्यता बढती ही जा रही थी, सच कहे तो सदस्य बनने की होड लग रही थी। संघ निर्माण के समय सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र की अभिवृद्धि हेतु जो कल्पना की गई थी, वह साकार रूप धारण करने लगी थी। आचार्य श्री जी के जीवन से प्रेरित होकर अनेकानेक भव्य आत्माएं आत्म-साधना के पथ पर बढते हुए दीक्षित हो रही थी। रतलाम सघ, वहां के युवको और सेठानी श्रीमती आनन्दकवर पीतलिया का उत्साह देखते ही बनता था। महिलाओ मे नई जागृति हिलौरे ले रही थी।

स्वर्ण–तिलक : धर्मपाल

रतलाम के इस ऐतिहासिक चातुर्मास की पूर्णाहुति के पश्चात् आचार्य श्री नागदा पधारे। वहां पर गुजराती बलाई जाति के कुछ व्यक्ति आचार्य श्री की यशोगाथा सुनकर सेवा में उपस्थिति हुए और अत्यन्त पीडा भरे शब्दो मे निवेदन किया कि गुरुदेव! हमे भी स्वाभिमान से जीने की राह बताइये। क्या हम स्वाभिमान से नही रह सकते? क्या छुआछूत के अपमान की आग मे ही हमको जलना पडेगा? इस घोर अपमान की आग को सहने की अपेक्षा क्यों न हम मुसलमान या ईसाई बन जावे? गुरुदेव ने अमृतवाणी से उन्हे धैर्य प्रदान किया और शाति से आत्म निरीक्षण करने का परामर्श दिया। २-३ दिन के विचार-मन्थन के बाद आचार्य श्री जी ग्राम गुराडिया पधारे, जहा सामाजिक समारोह के प्रसंग से सहस्रो बलाई एकत्र हुए थे। चैत्र शुक्ला दशमी स २०२१ के स्वर्णिम प्रभात मे यशस्वी आचार्य के ओजस्वी आह्वान पर वहा उपस्थित हजारों लोगो ने आचार्यश्री से सप्त कुव्यसन के त्याग की प्रतिज्ञा ग्रहण की तथा सच्चाई से प्रतिज्ञा-पालन का विश्वास दिलाया। आचार्य श्री के प्रेरक उद्बोधन से वे लोग स्वयं को धन्य मानने लगे। आचार्य श्री जी को भी बलाई-भाइयो की सरलता, त्याग और निश्छलता को देखकर हार्दिक प्रसन्नता हुई और उन्होने बलाई–बन्धुओ को **धर्मपाल** कह कर सबोधित किया। उनके उन्नत ललाटो पर धर्मपाल नामकरण का स्वर्णतिलक अंकित कर उन्हे उत्तम जीवन जीने की प्रेरणा दी। भारतीय धर्मो के इतिहास मे यह एक स्वर्णिम दिवस बन कर अंकित हो गया। बलाई भाइयों ने भी अपने व्रत का दृढता से पालन किया और स्वय अपने समाज की व्यसन मुक्ति हेतु जुट गए।

गुराड़िया से प्रस्थान कर आचार्य श्री जी अनेक गावो मे गए, जहा बलाई निवास करते थे। सभी जगह आचार्य श्री जी के उपदेशो का जादू जैसा असर हुआ। दुर्व्यसन त्याग की होड़ सी लग गई। पूज्य गुरुदेव का आगामी चातुर्मास इन्दौर हुआ। वहा प्रथम धर्मपाल सम्मेलन श्री दीपचदजी काकरिया, कलकत्ता की अध्यक्षता मे हुआ। प्रमुख अतिथि के रूप मे मध्यप्रदेश के राज्यपाल श्री पाटस्कर महोदय भी पधारे। वे धर्मपाल प्रवृत्ति से बहुत प्रभावित हुए। उन्होने सघ के क्रियाकलापो पर प्रसन्नता प्रकट की और आचार्य-प्रवर की भूरि-भूरि प्रशसा की। सघ सदस्यो मे भी इस प्रवृत्ति की जानकारी से हर्ष की लहर दौड गई। शीघ्र ही सघ ने श्री धर्मपाल प्रचार प्रसार समिति की स्थापना की और आराध्य-गुरुदेव द्वारा प्रज्वलित ज्योति को और अधिक प्रज्वलित करने का निश्चय किया। सर्वप्रथम श्री गेंदालालजी नाहर

को धर्मपाल प्रवृत्ति का संयोजक बनाया गया, जिन्होंने आयु और जरा जीर्णता की भी
न करते हुए अध्यवसाय और लगन से रात-दिन दौड़ धूपकर, गांव और बस्तो मे प्रवास
धर्मपाल भाइयों के सहयोग से प्रवृत्ति कार्य को आगे बढाया । बाद मे श्रीसमीरमलजी काठे
प्रवृत्ति संयोजक बनाया गया । ज्यो-ज्यो धर्मपाल-प्रवृत्ति का कार्य बढा त्यो-त्यो सघ ने
अपेक्षाओ की पूर्ति की । इस क्षेत्र मे जीप की जरूरत महसूस होने पर दानवीर सेठ श्रीगण
राजजी बोहरा ने और मने अर्थ सहयोग कर सघ को जीप भेट कर दी । काम द्रुत गति
आगे बढा । गांव-गाव में धार्मिक पाठशालाए खुलने लगी, जिनकी सख्या १४० से भी
पहुंच गई । धर्मपाल छात्रो को छात्रवृत्तिया देकर व कानोड–छात्रावास मे भेजकर शिक्षित
के प्रयास किए गए । श्रीगोकुलचन्दजी सूर्या और उनके परिवार का विशेष योगदान मिला।
गणपतराजजी बोहरा तथा श्रीमती यशोदादेवीजी बोहरा तो प्रवृत्ति मे एकात्म ही हो गए
समाज उन्हे धर्मपाल पितामह के रूप मे सबोधित करने लगा । श्री काठेड़ ने बडी लगन
साथ प्रवृत्ति को आगे बढाया । वे आंधी-तूफान के वेग से कार्य सम्पन्न करने लगे । इसी स
सर्वोदयी कार्यकर्त्ता समाजसेवी मानवमुनिजी धर्मपाल प्रवृत्ति से जुडे। उनका योगदान अभिनन्द
है । उन्होने प्रवृत्ति मे जोश की एक नई लहर पैदा करदी । धर्मपाल क्षेत्रो मे पदयात्राओ
आयोजन इतने सफल हुए कि पश्चिम बंगाल के पूर्व उपमुख्य मत्री श्रीविजयसिंह नाहर ने आप
धर्मजागरण पदयात्रा को अनूठा और अनोखा सस्मरण निरूपित किया । पदयात्रा के दौर
ही पद्मश्री डॉ. नंदलालजी बोरदिया धर्मपाल प्रवृत्ति से जुडे और उन्होने अपनी महान् सेव
प्रदान की ! श्री गणपतराजजी बोहरा ने धर्मपाल क्षेत्रो मे चिकित्सा सुविधा जुटाने हेतु आप
अनुज श्री सम्पतराजजी बोहरा की स्मृति से श्रीमद् जवाहराचार्य स्मृति चल चिकित्सा वाहन भें
किया । आदरणीय श्री बोहराजी ने रतलाम के निकट दिलीपनगर मे श्री प्रेमराज गणपतरा
बोहरा धर्मपाल जैन छात्रावास हेतु भवन युक्त विशाल भूखड क्रय करके सघ को सौंपा
धर्मपाल क्षेत्रो मे धर्म-ध्यान हेतु स्थान-स्थान पर समता-भवनो का निर्माण किया गया। शिविरो
प्रवासो और पदयात्राओ की धूम ने धर्मपाल प्रवृत्ति को सारे भारतवर्ष मे चर्चित बना दिया। सघ
के प्रधान कार्यालय का भी इसके विकास मे महत्वपूर्ण योगदान रहा । कार्य-विस्तार के साथ
साथ सर्व श्री पी सी चौपडा, श्री चम्पालालजी पिरोदिया, श्रीमती बूरीबाई पिरोदिया(भामाजा
मामीजी) सहित अनेकानेक कार्यकर्त्ता प्रवृत्ति से जुडते चले गए और धर्मपालों की व्यसनमुक्ति का
यह अभियान 'ग्राम-व्यसन मुक्ति' का अभियान बन गया । सभी धर्मो और सभी वर्गो के लोग
इस श्रेष्ठ कार्य मे सहभागी बने । आचार्य-प्रवर की शिष्य-शिष्या मडली ने धर्मपाल क्षेत्र मे
विहार कर कार्य को आशीर्वाद प्रदान किया ।

पुरानी जीप खराब होने पर उसे बेचकर वर्त्तमान सघ अध्यक्ष उदारमना श्री चुन्नी
लालजी मेहता एव उपाध्यक्ष श्री चम्पालालजी जैन ब्यावर ने प्रवृत्ति-प्रवासो हेतु नई गाडी भेंट
की है । अभी प्रवृत्ति कार्य का सयोजन श्री पी सी चौपडा ५ क्षेत्रीय सयोजको के सहयोग से
कर रहे है । प्राय प्रतिवर्ष सघ अधिवेशन पर धर्मपाल सम्मेलन आयोजित किए जाते है। इस
प्रकार धर्मपालों मे एकात्म होने का महान् अभियान चल रहा है । आचार्य श्री के प्रति धर्मपालो
की गहन श्रद्धा है । गुरुदेव की कृपा से मालवा क्षेत्र के लगभग ६०० गावो के लाखो बन्धु

व्यसनमुक्त और सम्मानित जीवन बिता रहे है । धर्मपाल-समाज से एकात्म होते जा रहे है ।

छत्तीसगढ़ व महाराष्ट्र में धर्मोद्योत :

मालवा क्षेत्र से आचार्य-प्रवर विहार करते हुए छत्तीसगढ क्षेत्र . मे पधारे, जहां श्रावको की अच्छी संख्या है, किन्तु वहा चारित्रात्मा साधु-साध्वियो का आवागमन कम रहा है । आचार्य श्री जी के विचरण से क्षेत्र मे अपूर्व जागृति आई । रायपुर, दुर्ग और राजनांदगांव चातुर्मासो से सघ के कार्य क्षेत्र का असीम विस्तार हुआ । राजनादगाव मे एक साथ ६ दीक्षाओं का प्रसग शासन और सघ के गौरव का सुअवसर था । छत्तीसगढ़ से आपश्री महाराष्ट्र पधारे और अमरावती मे चातुर्मास किया, जिससे इस क्षेत्र मे जैन साधुओ के संबध मे व्याप्त भ्रान्त धारणाओ का निराकरण हुआ ।

उग्र विहार, संघ-विस्तार :

महाराष्ट्र से मालवा और अजमेर-मेरवाडा क्षेत्रों से होते हुए आचार्य-प्रवर व्यावर पधारे । यहा से मारवाड़ के नागौरादि को स्पर्शते हुए बीकानेर पधारे । जहां त्रिवेणी क्षेत्र (बीकानेर-गगाशहर-भीनासर) मे एक साथ १२ दीक्षाएं हुई जिससे समाज मे हर्ष और जागृति छा गई । थली प्रान्त के सरदारशहर तथा बीकानेर, देशनोक, नोखा तथा गगाशहर–भीनासर के चातुर्मास पूर्णकर आचार्य श्री व्यावर पधारे । गुरुचरणो के प्रसाद से सघ कार्य और प्रवृत्तियो का विस्तार होता ही चला गया । साधु और श्रावक के बीच का धर्म प्रचारक वर्ग तैयार करने की श्रीमद् जवाहराचार्य की कल्पना को साकार करते हुए देशनोक मे **वीर संघ** की स्थापना की गई । नोखा मे भगवान महावीर विकलाग समिति हेतु सहयोग जुटाया गया और यही पर **श्रीमद् जवाहराचार्य चल चिकित्सा वाहन** सघ को भेट किया गया । पुन व्यावर प्रवास के समय वहा एक साथ **१५ दीक्षाओ** का भव्य दृश्य उपस्थित हुआ । दलौदा के श्री सौभाग्यमल सांड परिवार के सदस्यों ने एक साथ दीक्षा ली । उन्होने **श्री सु. शिक्षा सोसायटी** की स्थापना की, जो सत - सती और वैरागी - वैरागिनो की शिक्षा-दीक्षा का श्रेष्ठ कार्य सुचारु रीति से कर रही है। इस संस्था मे श्री भीखमचन्दजी भूरा ने जबरदस्त अर्थ सहयोग किया । सस्था ने विद्वान पडित श्री पूर्णचन्दजी दक, रतनलालजी सिंघवी, रोशनलालजी चपलोत, कन्हैयालालजी दक और आचार्य चन्द्रमौलि के सहयोग से ज्ञान प्रसार मे महान् योगदान दिया है । सस्था के मत्री रूप मे श्री धनराजजी बेताला की सेवाएं स्मरणीय रहेगी । इसके गौरवशाली अध्यक्ष पद को सर्व श्री हिम्मतसिंहजी सरूपरिया, दीपचन्दजी भूरा और भवरलालजी कोठारी सुशोभित कर चुके है । स्व. श्री सरूपरिया की सेवाए बेजोड़ है ।

समता-प्रचार संघ :

बीकानेर क्षेत्र से आचार्य-प्रवर मारवाड़ क्षेत्र मे पधारे जहा जोधपुर, राणावास तथा अजमेर चातुर्मास हुए । जोधपुर चातुर्मास के समय **श्री समता प्रचार सघ** की स्थापना की गई और आज यह सस्था भारत के स्वाध्याय संघो मे अपना मूर्धन्य स्थान बना चुकी है । इसका मुख्यालय उदयपुर है । श्री समता प्र सघ प्रतिवर्ष सत-सती से वचित क्षेत्रो मे पर्युषण पर्वाराधन कराने अपने स्वाध्यायी भेजता है, जिनमे स्वनाम धन्य श्री गणपतराजजी बोहरा और श्री [illegible]

चोपड़ा भी सम्मिलित हैं। इस संघ के संयोजक श्री गणेशलालजी बया और उनके सहयोगी श्री मोतीलालजी चण्डालिया, वंशीलालजी पोखरना, सज्जनसिंहजी मेहता 'साथी' एव श्री सुजानमल जी मारू के प्रयास अभिनन्दनीय हैं। श्री बया ८५ वर्ष की उम्र मे भी इस कार्य मे प्राण-पण से जुटे है। वे धन्य हैं। संस्था संचालन मे संघ अध्यक्ष श्री चुन्नीलालजी मेहता ने उदात्त व प्रभूत सहयोग प्रदान किया है।

मधुर-मिलन :

आचार्य-प्रवर के मारवाड विचरण के समय संघ-प्रमुखो की इच्छा फलीभूत हुई कि समान समाचारी वाले सन्त-मुनिराज परस्पर निकट आवें जिससे समाज मे सुन्दर वातावरण बने। संयोगवश भोपालगढ़ में आचार्य श्री नानालालजी म. सा. और आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. का मधुर मिलन हुआ। दोनों आचार्यों ने वहा अनेक दिन समाज स्थिति का गहन विश्लेपण किया और आपस मे प्रेम सबध स्थापित किए, जिससे समाज में हर्ष की लहर दौड़ गई।

ज्ञान भंडार :

आचार्य श्री के उदयपुर चातुर्मास मे संघ ने स्व. श्री गणेशाचार्यजी की स्मृति मे श्री गणेश जैन ज्ञान भंडार, रतलाम में स्थापित करने का निश्चय किया, जिससे देश भर मे बिखरे श्रेष्ठ ग्रन्थो व सूत्रो का एक स्थान पर संकलन किया जा सके और साधु-साध्वी, वैरागी-वैरागिन और जिज्ञासु जन इस भंडार का शोध कार्यों हेतु उपयोग कर सके। संघ के सृजनात्मक चिन्तन को धन की कभी कमी नही रही। श्री गणेश जैन ज्ञान भंडार आज विद्या-शोध क्षेत्र में अग्रणी होकर कार्यरत है। इसके संयोजक श्री रखबचन्दजी कटारिया की श्रमनिष्ठा, लगन और सेवा अनुकरणीय है।

प्रवृत्ति-विस्तार :

साहित्य-प्रकाशन संघ की शक्ति के साथ-साथ इसकी प्रवृत्तियो का भी विस्तार होता चला गया। साहित्य समाज का दर्पण होता है। आज संघ द्वारा प्रकाशित साहित्य अपनेसमाज का सही चित्र उपस्थित कर रहा है। संघ ने श्रेष्ठ साहित्य प्रकाशित करने के लिए साहित्य प्रकाशन समिति का श्री गुमानमलजी चोरडिया के संयोजन में गठन किया है। समिति ने विपुल मात्रा मे उत्कृष्ट साहित्य का प्रकाशन किया है। संघ प्रकाशनो पर हमें गर्व है। संघ धर्मरूचि पाठको और पुस्तकालयों हेतु रियायती दर पर भी साहित्य सुलभ कराता है। संघ द्वारा अब तक अनेक ग्रन्थ, सूत्र व पुस्तकें प्रकाशित की जा चुकी है, जिनमे अन्तर्पथ के यात्री आचार्य श्री नानेश, श्रीमद् जवाहर यशो-विजय महाकाव्यम्, अष्टाचार्य गौरव गंगा, जिणधम्मो और आचार्य श्री नानेश . व्यक्ति और दर्शन जैसे सुप्रतिष्ठित ग्रन्थरत्नो सहित भगवती सूत्र तथा अन्तगड़ दशाओ पुस्तकाकार एवं पत्राकार भी समाहित है। भगवान् महावीर के पच्चीस सौ वे निर्वाण वर्ष के उपलक्ष्य मे संघ ने 'भगवान् महावीर एण्ड रिलेवेन्स ऑफ टु डे' का अंग्रेजी मे प्रकाशन किया जिसकी भूरि-भूरि सराहना पश्चिमी जर्मनी के फ्रेंकफूर्त नगर मे आयोजित विश्व पुस्तक मेले में की गई! आचार्य जवाहर

के शताब्दी वर्ष में भी संघ ने जवाहर साहित्य से चुनकर पांच विभिन्न विषयो पर पॉकेट बुक सिरीज मे पांच पुस्तकें प्रकाशित की जो खूब प्रशंसित हुई ।

साहित्य पुरस्कार : सघ ने साहित्य सृजन को प्रोत्साहित करने के लिए श्री माणकचन्दजी रामपुरिया के अर्थ सहयोग से स्व श्री प्रदीपकुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार की स्थापना की है, जिसके अन्तर्गत संप्रति १०,०००/- रु का पुरस्कार प्रदान किया जाता है । सघ इस पुरस्कार से अब तक सर्व श्री कन्हैयालाल लोढा जयपुर, मिश्रीलाल जैन गुना, सुरेश सरल जबलपुर को सम्मानित व पुरस्कृत कर चुका है । साहित्य के क्षेत्र मे ही शातिलाल जी सांड, बैंगलोर ने अपने पिताश्री की स्मृति में "स्व श्री चम्पालालजी साड स्मृति साहित्य पुरस्कार निधि" स्थापित की है, जिससे सघ प्रतिवर्ष ५१००) रु का पुरस्कार श्रेष्ठ रचना पर प्रदान कर सकेगा । सघ श्री माणकचन्दजी रामपुरिया और श्री शातिलालजी साड का आभारी है । सघ, पुरस्कार के चयनकर्त्ताओ का भी आभारी है जो निष्पक्षता पूर्वक अपनी सेवाएं प्रदान करते हे । **श्रीमद् जवाहराचार्य स्मृति व्याख्यानमाला**-सघ सम्यक् ज्ञान की आराधना हेतु ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा की स्मृति मे प्रतिवर्ष विशिष्ट विद्वानो के देश के कोने-कोने के व्याख्यान आयोजित करता है । अब तक सर्वश्री डॉ. नरेन्द्र भानावत, डॉ रामचद्र द्विवेदी, श्री भवानीप्रसाद मिश्र, डॉ रामजीसिह, डॉ नेमीचन्द जैन, डॉ. महावीरसरण जैन, डॉ. सागरमल जैन, डॉ इन्दरराज वैद, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा के व्याख्यान उदयपुर, जयपुर, कलकत्ता, रतलाम, मद्रास, जलगांव और अहमदाबाद मे आयोजित किए जा चुके हे ।

श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड की स्थापना करके सघ ने देश के कोने-कोने मे फैले धर्म प्रेमियों की धार्मिक शिक्षा और परीक्षा की आकाक्षा पूरी की है । कानोड निवासी प श्री पूर्णचन्दजी दक, तत्पश्चात् गगाशहर निवासी श्री प्रतापचन्जी भूरा ने इसे अपने खून-पसीने से सीचा । बोर्ड के विधिवत् कार्य, पुस्तकालय और निर्धारित पाठ्यक्रम से सुव्यवस्था पूर्वक हजारो विद्यार्थी लाभान्वित होते हैं । इसमे जैनधर्म की प्रारम्भिक जानकारी हेतु परिचय-प्रवेशिका से लेकर उच्च अध्ययन के लिए रत्नाकर(एम. ए के समकक्ष)स्तर तक के छात्र-छात्राए परीक्षा दे रहे है । अभी श्री पूर्णचन्दजी राका बोर्ड के पजीयक है और निष्ठा से अपना कार्य कर रहे हे । विशेप हर्ष की वात यह हे कि सत-सती और वैरागी-वैरागिनो के ज्ञानवर्धन मे भी धार्मिक परीक्षा बोर्ड सहयोगी बन रहा है ।

सघ कार्यकर्त्ताओ के रचनात्मक चिन्तन तथा दूर दृष्टि का जीता-जागता नमूना है, **आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत शोध सस्थान उदयपुर** । इस संस्थान की स्थापना का विचार आचार्य-प्रवर के उदयपुर चातुर्मास के समय उदित हुआ और शीघ्र ही संस्था ने मूर्त रूप धारण कर लिया । संस्था के निजी भवन का शिलान्यास कलकत्ता निवासी श्री नन्दनमलजी सुखाणी ने श्री गणेश जैन छात्रावास परिसर उदयपुर मे कर दिया है । संस्थान की स्थापना उदयपुर सघ और श्री अ भा सा जैन सघ के सहयोग से हुई । संस्थान श्री गणपतराजजी बोहरा एव श्री नन्दनमलजी सुखाणी के प्रभूत अर्थ सहयोग हेतु आभारी है ।

जैनोलॉजी विभाग : संघ ने उदयपुर विश्व विद्यालय मे श्री गणपतराजजी बोहरा और सु. शिक्षा सोसायटी के अर्थ सहयोग से २ लाख रुपये प्रदान कर जैनोलॉजी पीठ की स्थापना की है, जिससे जैन दर्शन तथा प्राकृत के अध्ययन-अध्यापन को प्रोत्साहन मिला है। धार्मिक शिक्षण व सुसंस्कार निर्माण हेतु सघ ग्रीष्मावकाश मे छात्र-छात्राओं के प्रशिक्षण शिविर आयोजित करता है। इसके लिए श्री बोहराजी के आर्थिक सहयोग से श्री प्रेमराज गणपतराज बोहरा साधुमार्गी जैन धार्मिक शिक्षण शिविर समिति की स्थापना की गई है, जो हजारों छात्रों को प्रशिक्षित कर रही है।

जीवदया और अहिंसा प्रचार :

सघ कार्यालय, सघ की महिला समिति और इसके जागरूक सदस्य देश भर जीवदया और अहिंसा प्रचार मे सलग्न है। छत्तीसगढ मे प्राणी-वत्सला श्रीमती विजयादेवी जी सुराणा के प्रयासो की जितनी सराहना की जाय कम है। उनका समर्पित सेवाभाव वंद्य है। इसी प्रकार दक्षिण में सघ के सहमत्री श्री केशरीचन्दजी सेठिया ने भगवान महावीर अहिंसा प्रचार सघ के माध्यम से एवं श्री चुन्नीलालजी ललवाणी जयपुर ने अहिंसा के क्षेत्र मे सराहनीय कार्य किए है।

महिला समिति :

महिलाओ में जागृति एवं प्रेरणा का संचार करने के लिए सघ के अन्तर्गत श्री अ. भा. सा. जैन महिला समिति की स्थापना स. २०२३ सेठानी श्रीमती आनन्दकवर जी पीतलिया के नेतृत्व मे की गई, जिससे महिलाओ मे अभूतपूर्व उत्साह उत्पन्न हुआ और उन्होंने सघ को सभी कार्यो और क्षेत्रो मे भरपूर सहयोग प्रदान किया है। प्रवास हो या पदयात्रा समिति कभी पीछे नही रही। समिति की द्वितीय अध्यक्षा सौ. श्रीमती यशोदादेवीजी बो चुनी गई और श्रीमती शान्ता मेहता मत्री वनी। उनके बाद अब तक श्रीमती फूलकुमारी काकरिया, श्रीमती विजयादेवीजी सुराणा, श्रीमती सूरजदेवीजी चोरडिया समिति की यशस्वी अध्यक्षाएं रह चुकी है। इन सबने एक से एक बढ़-चढ कर समिति की सेवा की। श्री विजयादेवी सुराणा, श्रीमती शान्ता मेहता, श्रीमती वनकंवर कांकरिया, श्रीमती स्वर्णलता बो और श्रीमती प्रेमलता जैन का मंत्राणी पद पर समर्पित सेवा भाव महिला समाज को प्रेरणा देता रहेगा। इन महिला अध्यक्ष और मत्री का योगदान कभी नही भुलाया जा सकता। अभी श्रीमती अचलादेवीजी तालेरा समिति अध्यक्षा हैं, जो सरलमना श्री कन्हैयालालजी तालेरा पूना की विदुषी धर्मपत्नी है। आचार्य श्री के पूना विचरण के समय की गई तालेरा परिवार की सेवाएं सदैव स्मरणीय रहेगी। समिति मंत्री श्रीमती कमला बाई बैद जयपुर है, जो आचार्य की अनन्य भक्त और बडी सजग व कर्मठ कार्यकर्त्री है।

समिति द्वारा जीवदया, छात्रवृत्ति. धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजन और महिला जागृति के अनेक कार्य किए जाते है। महिला स्वावलबन के क्षेत्र मे रतलाम का महिला उद्योग मदिर, महिला समिति की यशोगाथा का गान कर रहा है। इस उद्योग मन्दिर द्वारा बहिनें स्वाभिमान और स्वावलम्बन के साथ जीवन-यापन की सुविधाए जुटाई जा रही है। अब उ

न्दिर अपने निजी भवन मे चल रहा है। समिति को निजी भवन उपलब्ध कराने में सर्वश्री
पचन्दजी काकरिया, पारसमलजी काकरिया और श्री पूर्णमलजी काकरिया का विशेष योगदान
हा है। नया भवन का नाम **श्रीमती जीवनीदेवी कांकरिया महिला उद्योग मन्दिर** रखा गया
। इसका उद्‌घाटन श्रीमती अचलादेवीजी तालेरा समिति अध्यक्षा के कर कमलों से हुआ।
ी गणपतराजजी बोहरा और श्री चुन्नीलालजी मेहता के आर्थिक अनुदान से उद्योग मन्दिर
ाभान्वित हुआ है। रतलाम की बहिने उद्योग मन्दिर की सचालिका श्रीमती शान्ता मेहता के
ृत्व मे इस कार्य को यशस्वी बना रही है। समिति के बने पेटीकोट और जीरावण देश भर
ो लोकप्रिय है। श्री पीरदानजी पारख के उत्साह व जोश के कारण भवन अपने निश्चित समय
े बनकर पूर्ण हो गया।

समिति की अन्य कर्मठ कार्यकर्त्ता बहिनो मे श्रीमती रत्ना ओस्तवाल राजनांदगांव,
ीलम बहिन रतलाम, श्रीमती शांता मिन्नी, श्रीमती विमला बैद कलकत्ता, श्रीमती भवरीबाई मूथा
ौर श्रीमती धीसीबाई आच्छा रायपुर, श्रीमती कान्ता बोहरा और श्रीमती सोहन बाई मेहता इन्दौर,
श्रीमती शान्ता भानावत, श्रीमती प्रेमलता गोलछा जयपुर, श्रीमती कंचनदेवी सेठिया बीकानेर,
श्रीमती शैलादेवी बोहरा अहमदाबाद बहुत सक्रिय है। बुजुर्ग बहिनो मे श्रीमती सौरभकंवर मेहता
्यावर, डॉ. श्रीमती हीरा बहिन बोरदिया इन्दौर, श्रीमती कोमल मूणत रतलाम, श्रीमती लाड
बाई ढढ्ढा जयपुर, श्रीमती कचनदेवीजी मेहता मन्दसौर आदि का योगदान सराहनीय है।

समता युवा संघ :

सघ ने युवा शक्ति को सृजनात्मक कार्यो में जुटाने के लिए समता युवा संघ की
स्थापना की है और श्री भवरलालजी कोठारी, श्री हस्तीमलजी नाहटा के बाद अब श्री गजेन्द्र
सूर्या इन्दौर की अध्यक्षता तथा श्री मणिलाल घोटा रतलाम के मंत्रीत्व में यह संघ प्रगति पथ-पर
है। युवा हृदय स्व. श्री पारसराजजी सा. बोहरा की अध्यक्षता में युवासघ की प्रगति हेतु बडे
जोश से कार्य किया गया था। सर्वश्री मदनलाल कटारिया रतलाम, सुगनचद धोका, प्रेमचन्द
बोथरा मद्रास, गौतम पारख राजनादगांव, हसराज सुखलेचा और जयचन्दलाल सुखाणी
बीकानेर जैसे सैकडो युवा कार्यकर्त्ता इस सघ के सेवा प्रकल्पो मे कार्यरत है। युवक ही समाज
की भावी आशा है। हमारे उत्साही युवको में संघ का उज्ज्वल भविष्य झाक रहा है।

श्री अ. भा. समता बालक मण्डली–भी सघ की एक नई रचना है, जो बालक-
बालिकाओ मे सुसस्कार स्थापित करने और सेवा भाव जगाने मे सलग्न है। मंडली के प्रथम
अध्यक्ष श्री कपूर कोठारी का संगठन कौशल और वर्त्तमान अध्यक्ष श्रीश्रीमाल का धर्म उत्साह
सराहनीय है। वैसे इसके विधिवत् गठन से पूर्व बीकानेर-नोखा आदि अनेक क्षेत्रो मे श्री जयचंद-
लालजी सुखाणी ने बालक-बालिकाओ मे अद्‌भुत धार्मिक जागृति का कार्य इस मडली के माध्यम से
किया था। श्री जम्बूकुमारजी बाफणा भी कुन्नूर मे इसी प्रकार सेवारत हैं।

भागवती दीक्षाएं :

जिन शासन प्रद्योतक आचार्य प्रवर श्री नानालालजी म. सा. की नेश्राय मे अब
तक करीब २३३ भागवती दीक्षाए हो चुकी है। आपश्री की नेश्राय मे दलौदा के साड परिवार से

एक साथ चार, बीकानेर के सोनावत परिवार से भी एक साथ ८ दीक्षा और पीपलियामंडी के पूरे पामेचा परिवार की एक साथ दीक्षाए होना संघ और समाज का गौरव है। परिवार के परिवार दीक्षित होने से प्रभु महावीर के काल का स्मरण हो आता है। रतलाम में २५ दीक्षाओ के सामूहिक आयोजन से सैकडो वर्षो के स्थानकवासी समाज के इतिहास में एक जगमगाती ज्योति-शलाका स्थापित हो गई है। यह आचार्य-प्रवर का अतिशय और संघ का अनन्य श्रद्धाभाव है जो समाज और राष्ट्र को प्रदीप्त कर रहा है।

आपश्री के आज्ञानुवर्त्ती सन्त-सती वृन्द ने प्राय भारत के अधिकाश प्रान्तो मे अपनी प्रतिभा, समाचारी और ज्ञान साधना से धर्मोद्योत किया है। इन सन्तो की समाचारी का अद्भुत प्रभाव अखिल भारत मे दिखाई दे रहा है। अन्य सन्तो पर भी इन दृढ चारित्रिक क्रियाओ का प्रभाव पड रहा है। आपश्री का आज्ञानुवर्त्ती सत-सती मंडल बहुत अनुशासित और विनीत है तथा भगवान महावीर की पवित्र सस्कृति की रक्षा करते हुए विचरण कर रहे है। लगभग ५० सन्तो और सतियो ने रत्नाकर की परीक्षा उत्तीर्ण की जो एम.एम के समकक्ष है।

आचार्य-प्रवर की शातमुद्रा, विद्वत्ता, प्रश्नो के सहज-सरल समाधान की शैली और परम सन्तोषमयी समता दृष्टि से भौतिक चकाचौंध के इस युग मे भी आध्यात्मिक वातावरण प्रभावना निरन्तर बढ़ रही है।

एक आचार्य की नेश्राय मे शिक्षा-दीक्षा, प्रायश्चित्त और चातुर्मास की व्यवस्था देखने योग्य है। काश! ऐसी ही भावना और वातावरण अन्य श्रमण-श्रमणियो मे हो तो भव्य और आनन्दमय वातावरण बन जाय।

संघ-अध्यक्षो एवं मंत्रियों की गौरवमयी परम्परा .

संघ के प्रथम अध्यक्ष श्री छगनलालजी बैद भीनासर हाल कलकत्ता ने अपने ३ वर्ष के कार्यकाल मे अपनी मृदुभाषिता, सादगी और सरलता तथा भव्य व्यक्तित्व से समाज का मन मोहा और उसे नेतृत्व प्रदान किया। श्री गणपतराजजी बोहरा के ३ वर्षीय कार्यकाल पर ज्योतिर्धर आचार्य जवाहरलालजी म सा. की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। हिन्दी भाषा, स्वदेशी वस्त्र और खादी तथा राष्ट्र भक्ति की भावनाओं से ओत-प्रोत रहा उनका कार्यकाल। श्री बोहरा की कथनी करनी की एकता और ऋजुता ने सघ को समाज और राष्ट्र के धरातल पर आ प्रदान किया। श्री बैद और श्री बोहरा जी दोनो अध्यक्षों के कार्यकाल मे सघ मत्री श्री जुगराज सेठिया की निष्काम सेवाए प्राप्त रही और सहमत्री श्री सुन्दरलालजी तातेड की सगठन कुशलता ने सघ कार्य को तेजी से आगे बढाया। श्री बोहराजी के बाद श्री पारसमलजी काकरिया कलकत्ता ने अध्यक्ष पद सम्हाला। सरल हृदयी, उदारचेता और आचार्य श्री जी के अनन्य भक्त श्री काकरियाजी के ३ वर्ष के कार्यकाल मे सघ ने बहुमुखी प्रगति की। संघमत्री श्री जुगराज सेठिया और सहमत्री श्री सुन्दरलालजी तातेड की सेवाए यथापूर्व मिलती रही जो अविस्मरणीय है। सघ के चौथे अध्यक्ष खाचरौद-मालवा के सुप्रसिद्ध सेठ श्री हीरालालजी नादेचा व भव्य तथा सुलम्ब देहाकृति और मालवी पगड़ी से सुशोभित उन्नत ललाट और मित भा दृढ अनुशासन के पक्षधर श्री नादेचा ने अपने २ वर्ष के कार्यकाल मे साहस पूर्वक आचार्य हुक्मीचन्दजी म सा की सम्प्रदाय के प्रति अपनी युवाकाल से चली आ रही निष्ठा के अनु

संघ का नेतृत्व किया। सूझ-बूझ के धनी श्री जुगराजजी सेठिया मंत्री रूप में अनवरत सेवा प्रदान करते रहे।

इसके बाद आदर्श त्यागी, सुश्रावक युवा हृदय श्री गुमानमलजी चोरड़िया जयपुर सघ अध्यक्ष बने। आपने ३१ वर्ष की वय मे शीलव्रत धारण किया, ८ द्रव्यो की मर्यादा है और विभिन्न प्रकार के व्रत-तप करते रहते है। सरलता की प्रतिमूर्त्ति और दृढ अनुशासन पालक है। आपके ४ वर्षीय कार्यकाल मे १ वर्ष श्री जुगराजजी सेठिया तथा ३ वर्ष श्री भवरलालजी कोठारी मत्री वने। श्री चोरडियाजी और श्री कोठारीजी की जोडी बहुत अच्छी जमी और इस कार्यकाल मे संघ मे अपूर्व जोश आया तथा प्रवास—पदयात्रा का जोर रहा और नई-नई प्रवृत्तिया प्रारंभ हुई। श्री कोठारीजी ने सघ के प्रचार-प्रसार मे महत्वपूर्ण भाग लिया और स्वय अपने जीवन में भी अनेक प्रकार के त्याग-प्रत्यख्यान धारण किए।

संघ के ६ ठे अध्यक्ष पद पर शात स्वभावी श्री पी सी चौपडा रतलाम आसीन हुए। आपकी सक्रियता बेजोड रही। आपकी निर्णय क्षमता और सगठन कुशलता ने रतलाम जैसे वृहद् सघ को एक सूत्र मे बाधे रखा और २५ दीक्षाओ के भव्य आयोजन पूर्वक सघ और शासन की शोभा मे चार चाद लगाए। सघ-प्रवासो का नया कीर्त्तिमान स्थापित हुआ, सघ-सम्पत्ति की वृद्धि हुई और सघ अर्थ के क्षेत्र मे आत्मनिर्भरता की ओर बढा। श्री चौपड़ा के साथ एक वर्ष श्री भंवरलालजी कोठारी तथा दो वर्ष मैं मत्री पद पर रहा। सघ को आर्थिक सुदृढ़ता प्रदान करने वाली मूथा योजना एवं मद्रास मे सघ सपत्ति का निर्माण इसी समय हुआ। श्री चौपड़ाजी के बाद सघ के जाने-पहिचाने श्री जुगराजजी सेठिया अध्यक्ष और श्री पीरदानजी पारख, अहमदाबाद मत्री बने। श्री सेठियाजी के तपे-तपाए नेतृत्व मे अद्भुत क्षमता के धनी श्री पारख का उत्साह अहमदाबाद भावनगर चातुर्मास और दीक्षा के समय देखने योग्य था। श्री सेठियाजी के बाद श्री दीपचन्दजी भूरा सघ अध्यक्ष बने। पूर्वाचल का बेमिसाल प्रवास और २५ दीक्षाएं आपके कार्यकाल की स्वर्णिम घटना है। आप अनन्य गुरुभक्त है। आपके ३ वर्ष के कार्यकाल मे २ वर्ष श्री पारख व १ वर्ष श्री धनराजजी वेताला मत्री रहे। श्री वेताला अभी भी मत्री है, सरल स्वभावी, सौम्य एवं सर्वप्रिय है।

अभी श्री चुन्नीलालजी मेहता बम्बई सघ अध्यक्ष है। आप उदार हृदय, धर्मप्रेमी और अनथक व कर्मठ कार्यकर्त्ता है। समाजसेवा मे आपकी गहन रूचि है। आपका अतिथि प्रेम वेजोड है। देश मे स्थान-स्थान पर समता-भवन बनाने मे आपने दिल खोलकर दान दिया है। सघ की सभी प्रवृत्तियो मे आप सदैव अर्थ सहयोगी रहते है। शिक्षा से आपको गहरा लगाव है। जिस सघ मे इस प्रकार के अप्रमत्त और उदरमना नेता हो, वह सघ निश्चित रूपेण सौभाग्यशाली है।

श्री चम्पालालजी डागा विगत सोलह वर्ष से सहमत्री एव कोषाध्यक्ष के रूप मे सघ के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री गुमानमलजी चोरडिया, श्री पी. सी चौपडा, श्री जुगराजजी सेठिया, श्री दीपचन्दजी भूरा तथा वर्तमान अध्यक्ष श्री चुन्नीलालजी मेहता के साथ सघ सेवा मे तन-मन-धन से लीन हैं। सघ प्रवृत्तियो, कार्यालय एव प्रेस के कुशलता पूर्वक सचालन मे आप जो अप्रतिहत एवं अव्याहत रूप से निरन्तर सेवाए दे रहे है, वे असाधारण एव अद्वितीय है।

प्रगति-पथ :

आचार्य-प्रवर के प्रगतिशील कदमो के साथ-साथ सघ भी प्रगति पथ पर बढ़ता चला जा रहा है । उदयपुर के बाद आचार्य श्री के चातुर्मास क्रमश: अहमदाबाद, भावनगर, बोरीवली, घाटकोपर और जलगाव मे हुए और सर्वत्र धर्म की प्रभावना हुई । सघ कार्य प्रखरता के शिखर पर आरूढ होता चला गया । गुजरात मे दरियापुर सम्प्रदाय के साथ प्रेम सबध बने और बोरीवली तथा घाटकोपर चातुर्मासो मे सघ को श्री चुन्नीलालजी मेहता जैसे दानवीर अध्यक्ष और श्री सुन्दरलालजी कोठारी जैसे कुशल सघटक उपाध्यक्ष के रूप में प्राप्त हुए।

जैन दर्शन के अनेक उद्भट एव ख्याति प्राप्त विद्वानो डॉ. सागरमल जैन, डॉ. कमलचन्द सोगानी, डॉ. नरेन्द्र भानावत, डॉ. प्रेमसुमन जैन आदि का भी सहयोग इस सघ को सदैव प्राप्त होता रहा है और भविष्य मे भी उपलब्ध रहेगा, ऐसा विश्वास है । सघ के विशिष्ट कार्यों के सम्पादन, और सयोजन हेतु नेपथ्य मे रहकर श्री भूपराजजी जैन ने जो सेवाए दी तथा कार्यालय सचिव के रूप मे उन्होने जैसी शासन सेवा की है, वह प्रेरक और सराहनीय है। वर्त्तमान मे कार्यालय सचिव श्री नाथूलालजी जारोली कुशलता पूर्वक लगन के साथ सघ सेवाये दे रहे है । आज सघ कार्यसमिति के १५० सदस्य है और २०० शाखा सयोजक है। सघ कार्यकर्त्ताओ का जाल देश भर मे फैला हुआ है । सघ नित्य नवीन लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियो का शुभारम करता है और प्रत्येक क्षेत्र मे उसे सफलता मिलती है । रजत जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य मे प्रकाश्य श्रमणोपासक विशेपाक को लगभग ७ लाख रुपयो के विज्ञापन प्राप्त हो चुके है, जो कि एक कीर्तिमान है । सघ ने **समता पुरस्कार** के रूप मे समाज को गुणपूजा की ओर प्रवृत्त करने का प्रयास किया है । इक्कीस हजार रुपयो का प्रथम समता पुरस्कार तीर्थकर मासिक पत्रिका के सम्पादक डॉ नेमीचन्दजी जैन, इन्दौर को रजत जयन्ती समारोह मे प्रदान किया जायेगा ।

आज जब मै नजर उठाकर देखता हू सघ अधिवेशनो को, सघ प्रवासो को, युवको की रैलियो, महिलाओ की स्वाभिमानयुक्त रचनाधर्मिता को, बालको के संस्कार शिविरो को, प्रौढों की स्वाध्याय साधना को और इस चतुर्विध सघ के अगीभूत सत-सती वृन्द के तप, ज्ञान, वैराग्य और दर्शन को तो मस्तक श्रद्धा से झुक जाता है । २५ वर्ष पूर्व आज ही के दिन मेरी साक्षी मे मेरे विनम्र योगदान से, मेरी जिज्ञासा एवं उत्साह से जिस बीज का इस सघ के मौन–मूक समाज चिन्तको, साधको और सेवाधर्मियो ने आरोपण किया था, उसे विशालवट वृक्ष के रूप मे देखकर, उसी की छाया मे खडे होकर, सच कहू तो उसी की काया बनकर आज जिस हर्ष और आत्म गौरव की अनुभूति मै कर रहा हूं, वह इस सघ के हजारो–हजार सदस्यो का गौरव है, देश–विदेश मे फैले अनजान क्षितिज मे छिपे हुए, प्रत्येक कर्मयोगी का मूर्तिमन्त स्वरूप है ।

आइये ! हर्ष के इस अवसर पर अपने इस प्रिय सघ के विजय रथ को स्वर्णिम भविष्य की ओर बढाने मे फिर जुट जाए ।

सच ! अभी थकने का समय नही आया है । उपनिषद वाक्य की तरह चरैवेति-चरैवेति, चलते रहो-चलते रहो को हम महावीर वाणी-अप्रमत्त भाव को दृष्टिगत रखकर सार्थक करें ।

प्रस्तुति–जानकी नारायण श्रीमाली २-ए, क्विन्स पार्क, बालीगज, कलकत्ता

समाज सुधार हेतु कुछ क्रान्तिकारी कदम

△ चुन्नीलाल एच. मेहता
अध्यक्ष, श्री. अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ

मेरी धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्र मे रुचि जागृत करने का सम्पूर्ण श्रेय श्रद्धेय आचार्य श्री नानालाल जी म. सा को ही है। अहमदाबाद दीक्षा प्रसंग पर जब आचार्य श्री की सेवा का अवसर मिला तब गुरुदेव की अमृतमय वाणी को सुनकर मेरे जीवन पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि मेरे नास्तिक जीवन को आस्तिकता मे परिवर्तित कर दिया। साथ ही राह भटकते पथिक को सन्मार्ग की राह दर्शायी व धर्म के प्रति रुचि जागृत कर मानव-समाज की सेवा का बोध कराया। गुरुदेव के एक ही प्रवचन से मेरे जीवन मे इतना परिवर्तन आ जायेगा इसकी मैंने कभी कल्पना तक नही की थी। मुझे कर्त्तव्याकर्त्तव्य का ज्ञान कराकर मेरे ऊपर अनत कृपा की, जिससे प्रेरित होकर मैने अपने जीवन मे सिर्फ एक मानव सेवा का ही कार्य करने का निर्णय कर लिया है !

श्री अ भा सा जैन सघ अपने २५ वर्ष का रजत-जयन्ती काल पूर्ण कर २६ वे वर्ष मे प्रवेश करने जा रहा है। विगत २५ वर्षों मे हुई प्रगति रूप विशालकाय संस्था को देखकर हम गौरव का अनुभव करते है। जो अपने विविध आयामो के माध्यम से सम्पूर्ण मानव-समाज को प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से सेवाए प्रदान कर रही हे। और योग्य कार्यकर्ताओ के सरक्षण मे विकास मार्ग पर अग्रसर हे। हम सस्था की एक-एक प्रवृति पर दृष्टिपात करे तो हमारा मन प्रफुल्लित एवं गद्गद् होने लगता है। संस्था की प्रगति का श्रेय उन सभी सदस्यों को है जिन्होने तन, मन व धन से समर्पित होकर अहर्निश इसके क्रिया-कलापों को गतिशील बनाने मे सक्रिय सहयोग प्रदान किया है। योग्य मार्ग-दर्शको व गुरुदेव के शुभाशीर्वाद से संस्था सदैव फलती-फूलती रही है। संस्था द्वारा की जाने वाली सेवाएं हमेशा श्लाघनीय रही है। गुरुदेव की असीम कृपा से हमारी यह सस्था मानव सेवा मे सलग्न रहती हुई विकसित होती रहे, सस्था को समाज के कर्मठ, उत्साही, दानवीरों व योग्य मार्गदर्शको का सक्रिय सहयोग सदैव मिलता रहे, यही मै जिनशासन से हार्दिक इच्छा प्रकट करते हुए मगलकामना करता हूं।

इन्दौर मे १९ जुलाई ८७ को सघ के विशेष वार्षिक अधिवेशन में मेरे भूतकालीन अध्यक्षीय कार्यकाल की प्रशंसा एव सराहना की तथा सम्पूर्ण सघ ने अद्भूत स्नेह दर्शाकर मेरा अध्यक्षीय कार्यकाल आगामी वर्ष के लिए बढाकर सम्पूर्ण जैन समाज की सेवा का मुझे स्वर्ण अवसर प्रदान किया इसके लिए मै सम्पूर्ण जैन सघ का तहेदिल से आभारी हू।

यद्यपि विगत कार्यकाल मे मै समाज की सेवा का विशेष कोई कार्य नही कर पाया। मेरी जो आकाक्षाए थी वह मात्र आकाक्षाओं के रूप मे ही रह गई थी क्योकि जब मैं सघ ने मुझे इस पद पर आसीन किया तब मैं ५-६ माह

तो मात्र गतिविधियो से अवगत होने मे लगे तथा ६-७ माह से मै अस्वस्थ हूं। स्वास्थ्य लाभ के पश्चात् अब शीघ्र ही संस्था व समाज के हितार्थ कुछ क्रांतिकारी व चिरस्मरणीय कार्य करने की मेरी इच्छा है, जो कि मेरे मन मे पूर्व मे भी थी मगर परिस्थितियो ने मुझे विवश कर दिया था। अब उन्हे शीघ्र ही क्रियान्वित करना चाहता हू जिसके लिए सस्था व समाज के समस्त कर्मठ, सेवाभावी, उत्साही तथा तन, मन व धन से सक्रिय सहयोग प्रदान करने वालो का सहयोग अपेक्षित है।

१. संस्था का स्थायी फंड :—श्री अ भा. सा जैन सघ हमारे समाज की बहुत बडी सस्था है जिसके द्वारा सचालित अनेक प्रवृत्तिया समाज सेवा मे सलग्न है। मगर खेद की बात यह है कि सस्था की समस्त गतिविधियो को सुचारु रूप से चलाने के लिए सस्था को पर्याप्त मात्रा मे स्थाई फड के अभाव मे मीटिगो के माध्यम से धन डॉनेशन द्वारा जुटाना पडता है जो कि हमारी सस्था की सबसे बड़ी कमी है अतः अब मेरी ऐसी हार्दिक इच्छा है कि सस्था का पर्याप्त स्थाई फड बनाकर इसे स्वाश्रित बनाई जाय। जिससे भविष्य मे होने वाली जरुरतो की पूर्ति हेतु पराश्रित नही रहना पडे अत सस्था के समस्त अधिकारीगण से नम्र निवेदन है कि इस बिन्दु पर विचार कर सस्था को स्वाश्रित बनाने मे सहयोग प्रदान करावे।

२. दहेज प्रथा पर रोक के प्रयास :—इस मशीनरी युग मे आदमी मशीन की तरह दिन-रात काम करता हे मगर बदले में उसे जीवनोपयोगी साधनो की उपलब्धता औसत से भी कम होती है। निम्न वर्ग की स्थिति चक्की के दोनो पाटो के बीच जैसी बनी हुई है। ऐसे समय पर उसे यदि अपनी पुत्री के विवाह प्रसंग पर दहेज देने की स्थिति बने तो इसका अन्दाज आप खुद लगा सकते हैं कि उसके क्या हाल बनेगे। परिस्थिति मजबूरियो मे परिवर्तित हो जायेगी और परिवर्तित परिस्थिति अन्त मे भयानक रूप भी ले सकती है जिन्हे हम प्रतिदिन प्रकाशित होने वाले पत्र-पत्रिकाओ से घटना के रूप मे पढते है। उन्हे पढ़कर दूसरो का एहसास हो या न हो, दिल को ठेस पहुचे या न पहुचे मगर मेरे दिल को भयकर ठेस पहुचाती है। दहेज के लोभियो मे ग्लानि होने लगती है। विचारो मे तूफान उठने लगता है कि जो समाज सारे राष्ट्र की सेवा मे तत्पर है वह अपने ही घर मे बैठे इस दहेज रूपी विषैले सर्प को बाहर नही निकाल सका। अब हमे समाज की सेवा का कोई भी कार्य करना है तो सर्व प्रथम इस कुरीति को समूल नष्ट करना है जो कि भयंकर विशालरूप धारण कर समाज मे घुस बैठी है। इस हेतु आज की युवा पीढी यदि हमे सहयोग प्रदान करे तो सहज ही मे यह दहेज रूपी नाग हमेशा के लिये हमारे देश से पलायन कर जायेगा।

३. सामूहिक विवाहः—आज की परिस्थितियो व काल को देखकर सामूहिक विवाह के कार्यक्रम हमारे समाज मे शीघ्र ही आरम्भ करने चाहिये जिससे दहेज रूपी कुरीति को सदैव के लिये विश्रान्ति मिलेगी। इस प्रकार की विवाह पद्धति से निम्न व मध्यमवर्गी लोगो को सहज ही राहत मिल सकेगी। आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से भी उन्हे बहुत ही सहायता व राहत मिलेगी। अत इस कार्य की ओर मै सम्पूर्ण जैन समाज का ध्यान आकर्पित कर इसे क्रियान्वित करवाना चाहता हू। आशा है समस्त जैन समाज के सघ प्रमुख अपने क्षेत्र मे सामूहिक विवाह समितियो का गठन कर शीघ्र ही क्रियान्वित करवाने मे सहयोग प्रदान करेगे।

संघ अमर रहे

□ जुगराज सेठिया

भूतपूर्व अध्यक्ष–श्री अ. भा. सा. जैन संघ

साधुमार्गी जैन सघ से मुझे जोड़ने वालो प्रमुख श्री सुन्दरलालजी तातेड और श्री सरमल जी काकरिया है । उदयपुर मे सघ पना के समय श्री छगनमल जी सा. बैद ासर प्रथम अध्यक्ष चुने गये और मन्त्री पद देने का निर्णय लिया गया । इस पद पर नाम की चर्चा ने मुझे विस्मित-सा बना ा । अपनी अक्षमता का बोध करते हुए, स्पष्ट इन्कार कर दिया ।

साथी तुले हुए थे, मगर साथ ही साथ कथन के औचित्य का ध्यान रखते हुए, मुझे सहयोग देने का आश्वासन ही नही दिया, अनुभवी, सशक्त सहमन्त्री जो न केवल कामज मे ही मेरा हाथ बटाता, मगर सघ-सबधी तव्य जानकारियो से भी मुझे अवगत कराता ता । सहमन्त्री, शिक्षक और मत्री, शिक्षार्थी, सिलसिला जिस स्नेह से चला, वह आज भी वत् है ।

सघ स्थापना के समय यह कल्पना नही जा सकती थी कि यह बीज एक दिन वट- का स्वरूप धारण कर लेगा । सघ के खल भारतवर्षीय स्वरूप का उपहास किया ा था और आचलिक संघ के रूप मे भी अपने स्तित्व को स्थाई बना सके, इसमे सशय प्रगट या गया ।

सघ के इस विस्तार मे व्यक्तियो के सहयोग और अनुदान की सूची बनाना सभव नही, मगर यह कहना सही होगा कि इसके प्रसार का सारा श्रेय सघ के प्रत्येक सदस्य का है, जिसने तन, मन और धन से इसमे खुला योगदान दिया ।

संघ की उल्लेखनीय प्रवृत्तिया—

(१) धर्मपाल बन्धुओ मे चेतना की जागृति और कुव्यसनो से मुक्ति, (२) सद्-साहित्य-प्रकाशन (३) एक वृहद् ग्रन्थालय (४) छात्रावास एव शोध-सस्थान (५) छात्रवृत्ति (६) स्वधर्मी-सहयोग (७) धर्मजागरण हेतु पद-यात्रा (८) महिलाओ के लिये उद्योग केन्द्र (९) चिकित्सालय (१०) स्वाध्याय मडल आदि

सघ की यह एक विशेषता रही है कि जितनी प्रवृत्तिया चालू हुई, वे सब आज भी गतिमान है । इन प्रवृत्तियो के लिये आर्थिक साधन जुटाने, श्रम और समय, लगन और तत्परता की महत्वपूर्ण भूमिकाए प्रस्तुत करने वाले बन्धुगण भावी पीढी के प्रेरणा स्रोत रहेंगे ।

श्रमणोपासक –इतनी प्रचुर, सुरुचिपूर्ण सामग्री, शास्त्रीय ज्ञान एव सघ की गतिविधियो की विशद जानकारी इतनी कम लागत से देने वाला अपने ढंग का एक मात्र जैन पाक्षिक है ।

संघ मे भाई-चारे की जो छवि उभर कर सामने आई है और आती रहती है, वह विरली संस्थाओं में ही दृष्टिगत होती है । यहा पद चाहे नही जाते, कर्त्तव्य वोध की भावना से ग्रहण किये जाते हैं । पद, सत्ता का परिचायक नही, कर्त्तव्य बोधक है । यह चेप्पो का सघ नही, इसमें दरार नही, अन्दर से खोखला नही, नारगी का छलावा नही, भेद-प्रभेद नही, वल्कि सर्वांगीण, सम्पूर्ण है । ठोस आधार पर अवस्थित है ।

'नेकी कर और कुंए मे डाल,' यह क[illegible] वत हातिमताई के लिये मशहूर है । सघ में [illegible] कई हातिमताई है । एक हातिमताई तो [illegible] लिये धनराशि जुटाने मे सदैव सक्रिय रहते हैं संघ की विभिन्न योजनाओं को सुदृढ बनाने [illegible] अर्थ की कमी के कारण उन्हे कुम्हलाने [illegible] देते । कोथली का मुंह खुलवाने के गुर [illegible] है । सघ सजीव है । सघ प्राणवान है । [illegible] गतिमान है । संघ शक्तिमान है । सघ अ[illegible] रहे । —वीकानेर वूलन प्रेस, वीका[illegible]
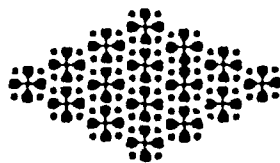
अर्हर्तपि याज्ञवल्क्य कहते है :-

आणच्चा जाव-जाव लोएसणा, ताव-ताव वित्तेसणा, जाव-जाव वित्तेसणा ताव-ताव लोएसणा, से लोएसणं च वित्तेसणं च परिण्णाए गो पहेण गच्छेज्जा णो महापहेण गच्छेज्जा ।

सावक को यह जानना चाहिए जव तक लोकेपणा है तव तक वित्तेपणा है । जव तक वित्तेपणा है तव तक लोकेपणा है । अत: सावक लोकेपणा और वित्तेपणा को परित्याग कर गोपथ से जाए, महापथ से न जाए ।

जीवित रहने के अलावा मानव मन की दो तरह की भूख है एक सम्पत्ति की दूसरी ख्याति की । जव तक प्रसिद्धि की कामना हे (जिससे कि मुनि भी नही वच पाए हे) तव तक सम्पत्ति की आवश्यकता रहती हे (जैसे कि मुनियो के पीछे लाखो का व्यय होता है) अत साधक को महापथ से नही गोपथ से चलना चाहिए ।

महापथ वह है जहा अधिक से अधिक अर्जन किया जाता है और अधिक से अधिक खर्च । गोपथ वह जहा सीमित है आवश्यकताए, सीमित है साधन । जैन सस्कृति प्रथम सिद्धान्त मे विश्वास नही करती । कारण जितनी आवश्यकताए बढाएगे उतना ही सघर्ष बढेगा, कारण इच्छाए असीमित है साधन सीमित । अत यदि एक वस्त्र की आवश्यकता है तो दूसरे वस्त्र के लिए प्रयत्न मत करो । यह केवल साधुओ के लिए ही नही, गृहस्थो के लिए भी है ।

यदि एक मकान से काम चल सकता है तो गृहस्थ दूसरे मकान के लिए प्रयत्न न करे । एक वस्त्र से काम चल सके तो दूसरे के लिए लोभ न करे । इस प्रकार वह शाति को प्राप्त कर सकता है ।

दर्शन, ज्ञान और चारित्र में संघ का योग

□ माणकचन्द रामपुरिया

'संघे शक्तिः कलौयुगे' दर्शन, ज्ञान और चारित्र के संवर्द्धन में, संघ-शक्ति, विशेष सहायक है। भारत जैसे धर्म सापेक्ष-देश में साधुमार्गी संतों एवं सावकों के लिए वही मार्ग श्रेयस्कर है, जिसमें धर्म, ज्ञान, सदाचार, उपकार और सेवा का लक्ष्य हो। 'धाराधरो वर्षति नात्म हेतो, परोपकाराय सतां विभुतयः' अतः समवेत भाव से सेवा, दया, उपकार की मर्यादा को बढ़ाना ही श्री साधुमार्गी जैन संघ का उद्देश्य है। यह संघ सम्प्रति भारत में ही नही, अपितु विश्व में धर्म और आचार का "विजय-केतु" फहराने में अग्रसर है।

भगवान् महावीर की महती कृपा से 'संघ' का इतिहास स्वर्णाक्षरों में अंकित है, क्योकि सम्यक् ज्ञान, दर्शन और चारित्र का जितना बडा विश्लेषण, प्रचार और प्रसार संघ द्वारा सहज सम्भव हुआ है, वह अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है। सामाजिक, धार्मिक, सास्कृतिक एवं चारित्रिक-विकास के लिए 'सघ' का लक्ष्य और उद्देश्य अत्यन्त व्यापक है। इसकी शक्तियां और साधन अनन्त हैं इसके कार्य और कार्य-क्षेत्र भी विस्तृत एवं व्यापक है।

धर्म, विद्या, संस्कृति और सदाचार के क्षेत्र मे सघ की दूरदर्शिता पूर्ण सेवा सर्वथा प्रेरणाप्रद है। मैं श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ की अनन्त-अशेष उत्तरोत्तर सफलता की मंगल कामनाएं करता हू।

"सत्यमेव जयते"

'श्रमणोपासक', भारतीय जैन-धर्म का निष्काम. धार्मिक-सिद्धान्त एवं दिव्य संदेश का वाहक-हंस-दूत है। यह धर्म का प्रेरणाप्रद संवाद-दाता और समाज का उत्प्रेरक प्रकाश-स्तम्भ है। यह तत्व-सत्य-धर्म वाहक, अपनी साधना-सेवा के पच्चीसवें शुभ वर्ष में प्रवेश कर गया है, इससे समय, इसे 'रजत-जयन्ती' महानुष्ठान का उपहार दे रहा है और समाज, अपने भाव–सुमनों की वृष्टि से इसकी आत्मा को परिपुष्ट कर रहा है।

संत् संकल्प की पूर्णता में मंगल भविष्य के समुज्ज्वल-शाश्वत-कल्याण-कल्पवृक्ष की सी शीतल-सुखद छाया अनिवार्य है। किं कुर्वन्तु ग्रहा. सर्वेयस्य केन्द्रे बृहस्पतिः। मै साधर्मी-समाज सहृदय सुहृदवर्ग के साथ इसके 'रजत-जयन्ती" के उपलक्ष्य में इसकी स्वर्ण एव हीरक जयन्ती की महती शुभ कामनाएं प्रेषित करता हूं। "श्रमणोपासक", चिर अमर रहकर धर्म और समाज-सेवा-व्रत मे संलग्न रहे।

१२-३-८७ ४, मेरेडिथ स्ट्रीट, कलकत्ता

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ : अभ्युदय और विका

☐ धनराज बे

मंत्री—श्री अ. भा. साधुमार्गी जै

आज से २४ वर्ष पूर्व स. २०१६ की आश्विन शुक्ला द्वितीया के दिन निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति की सुरक्षा एवं सवर्धन के सहयोगियो के अपूर्व जोश एव उत्साह के साथ श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के रूप मे सगठन बना था। साधुमार्गियो का यह सगठन श्रमण सस्कृति की सुरक्षा एवं पवित्रता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए स्थापित हुआ था। इधर तो सघ का इस रूप मे प्रारम्भिक चरण था अत वह बहुत ही लघु रूप में परिलक्षित होता था किन्तु लक्ष्य बहुत विराट था। ऐसी स्थिति मे यह सगठन लक्ष्य की परिणति तक कैसे पहुंच पाएगा, यह लोगो की दृष्टि मे सदेहास्पद था। सघ भले ही लघु रूप मे रहा हो, पर उसने अपने लक्ष्य के प्रति पूर्ण समर्पित होकर अविराम रूप से गति प्रारम्भ कर दी।

शात क्राति के जन्मदाता स्वर्गीय आचार्य प्रवर श्री गणेशीलाल जी म. सा. को विशाल श्रमण सघ का सर्वसत्ता सम्पन्न उपाचार्य चुना गया था। उन्होने प्रभु महावीर के सिद्धान्तो के धरातल पर सघ का व्यवस्थित रूप से सचालन करना प्रारम्भ किया था। सघ के कतिपय सदस्यों में व्याप्त शिथिलाचार का उन्मूलन करने के लिए आपने अत्यन्त सुन्दर तरीके-जनतन्त्रीय पद्धति के अनुसार अनवरत प्रयास किये, जहा सिद्धान्त उपेक्षित एवं पक्ष का आग्रह बन गया, वहा शुद्धाचार की स्थिति सम्भव वन सकी। तव शुद्धाचार के परम हिम आचार्य प्रवर ने अपने इतने वडे महान् प त्याग पत्र देकर अपने आपको शिथिलाचा पूर्ण निर्लिप्त कर लिया। साथ ही शुद्धाचा पालको के सगठन का नायक पडित रत्न मु नानालाल जी म. सा. को वना दिया जो मान मे जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबो समता विभूति, महायोगी, आचार्य प्रवर १००८ श्री नानालाल जी म. सा के रू समग्र जैन समाज मे सुविख्यात है।

आप श्री के पावन उपदेशो एव सान्निध्य का संबल पाकर हमारा यह सं निरन्तर विकास की ओर बढने लगा। आ प्रवर ने जब से चतुर्विध संघ की बागडोर सभ तब से ही आप श्री ने जन-जन को जागृत क के लिए अनवरत विहार प्रारम्भ किया। प्रथम आप श्री ने व्यक्ति से लेकर विश्व व्याप्त विषमता का उन्मूलन करने के लिए अ नव चिन्तन समता-दर्शन का प्रवर्तन किया। सुनिश्चित है कि विश्व मे व्याप्त विषमता प विनिवारण और शान्ति का प्रसारण करने

के लिए समता दर्शन को अपनाना ही होगा। आचार्य प्रवर ने स्व-कल्याण के साथ ही जन जीवन को नया निर्देश देना प्रारम्भ किया। मध्यप्रदेश के मालवा आचल मे जो निम्नवर्गीय लोग गोरक्षक से गोभक्षक बनने जा रहे थे, उनके बीच जाकर उन्हे व्यसन मुक्त बनाकर आत्म सम्मान पाने के लिये आपने मार्मिक उपदेश दिये। इसके लिए आपने लगातार उन गावो मे अनेक परीषहों को सहते हुए विचरण किया। आपके इस अभियान से उन लोगो मे अभिनव जागृति आई और वे व्यसन मुक्त बनकर सुसस्कारित होने लगे। उनकी सख्या आज करीब एक लाख तक बताई जाती है।

जिस समय आचार्य प्रवर ने पद-भार सम्भाला था उस समय सघ मे श्रमण-श्रमणियो की संख्या बहुत कम थी किन्तु आचार्य प्रवर की असीम पुण्यवानी एव पवित्र उपदेशो से प्रभावित होकर अब तक करीब २३५ भाई व बहिनो ने सयम-जीवन स्वीकार कर लिया है। आज भी अनेक मुमुक्षु आत्माए इस ओर गतिशील है। आचार्य प्रवर के हाथो से ६, ७, ९, १२, १३, १५ और २५ दीक्षाएं एक साथ हुई है, जो जैन समाज के लिए महान् प्रभावना रूप है।

आचार्य प्रवर का जीवन साधना की जिन ऊंचाइयो तक पहुचा हुआ है उसकी थाह पाना हमारे वश की बात नही है। आज के इस तनाव युक्त जीवन मे तनाव मुक्ति के लिए सहज ध्यान के द्वारा सहज जीवन जीने की कला के रूप मे 'समीक्षण ध्यान' विधि का परिचय जब समाज के सामने प्रकट हुआ तो सभी तरफ से आश्चर्य मिश्रित प्रतिक्रियाएं होनी स्वाभाविक ही थी। समीक्षण ध्यान द्वारा यौगिक क्रियाओ का सहज विवरण बौद्धिक वर्ग के लिए उत्सुकता का कारण बना। 'समीक्षण ध्यान' विधाओं के प्रवर्त्तन के साथ जब 'क्रोध समीक्षण' 'मान समीक्षण' इत्यादि उपदेश पुस्तकाकार रूप मे समाज के सामने प्रस्तुत हुए तो समीक्षण-ध्यान विद्या के नये आयाम अभ्यासियो के लिए उद्घाटित होने लगे। जिसने भी इसका प्रयोग किया उसने अपने मन को तनाव मुक्त पाकर आत्म साधना के लिए तत्पर होते अनुभव किया।

आचार्य प्रवर के उपदेश अनुभूतिगम्य, विद्वत्तापूर्ण होते हुए भी इतने सरल होते है कि सामान्य से सामान्य व्यक्ति भी लाभान्वित हो उठता है। वर्तमान में आचार्य प्रवर निरन्तर चतुर्विध सघ के उत्थान की ओर गतिशील है। आज जैन समाज मे आप श्रमण सस्कृति को अक्षुण्ण रूप मे निर्वहन करने वाली विरल विभूति है।

हमे गौरव है कि हमे ऐसे महान् आचार्य गुरु के रूप में प्राप्त हुए हैं—हमारा सघ आपके पवित्र सान्निध्य को पाकर धन्य-धन्य हो उठा है। आप श्री के उपदेशो को जन-जन तक पहुंचाने के लिए सघ ने अनवरत प्रयास प्रारम्भ कर दिये। आप श्री ने जिस ऐतिहासिक कार्य, धर्मपाल प्रवृति का अभियान चलाया था हमारे संघ ने श्रावकोचित कर्तव्य को लक्ष्य मे रखते हुए इसके विकास हेतु धर्मपाल प्रवृति का सगठन कायम किया। इस सगठन को प्रभावी बनाने का महत् कार्य हमारे समाज के उदारमना सेठ श्री गणपतराज जी बोहरा दम्पति ने तन-मन-धन से किया। धर्मपाल वर्ग के बच्चो के उत्थान हेतु रतलाम के ही उपनगर दिलीपनगर मे एक छात्रावास कायम कर उन्हे उच्च शिक्षा दिलाने का महत्वपूर्ण कार्य चल रहा है। धर्मपाल जैनो के उत्थान व समाज में उचित स्थान दिलाने के प्रयत्न स्वरूप उन क्षेत्रो मे व्यसन मुक्ति हेतु पद-

यात्राएं, स्वास्थ्य परीक्षण शिविर समय-समय पर आयोजित किये गये व किये जा रहे है। धर्मपाल क्षेत्रो मे स्थान-स्थान पर धर्मसाधना, संस्कार निर्माण हेतु समता भवन स्थापित किये गये है। आज यह प्रवृत्ति स्वालम्बन की तरफ तेजी से अग्रसर है।

इस प्रवृति के प्रारम्भ मे स्व. श्री गेंदालालजी नाहर का योगदान अविस्मरणीय है। इस प्रवृत्ति को पुष्पित, पल्लवित, फलित करने मे अनेकानेक सघनिष्ठ, सघ के पूर्व पदाधिकारीगण व समाजसेवी व्यक्तियो का उल्लेखनीय योगदान रहा है। इसके अलावा सघ द्वारा अनेक जनकल्याणकारी प्रवृत्तिया भी धर्मपाल क्षेत्रो मे प्रारम्भ की गई है।

सघ द्वारा साहित्य प्रकाशन के क्षेत्र मे उल्लेखनीय कार्य प्रारम्भ किया गया। आज सघ द्वारा प्रकाशित साहित्य की साहित्य मनीषियो द्वारा प्रशसा की जा रही है। श्रमण भगवान महावीर के सिद्धान्तो की सरल व्याख्या आचार्य प्रवर द्वारा व्याख्यानों मे की जाती है उसे भी लिपिबद्ध करके पुस्तकाकार रूप मे प्रस्तुत किया जाता है। यह साहित्य भी प्रचुर मात्रा मे है। कथा साहित्य का अपना विशेष आकर्षण है। जैन दर्शन को सुगम रूप से साहित्य के द्वारा प्रस्तुत एवं प्रचारित करने का प्रयास भी प्रगति पर है।

सघ द्वारा धार्मिक शिक्षा के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से धार्मिक परीक्षा बोर्ड का गठन कर विद्यार्थियो में जैन दर्शन के निष्णात विद्वान् तैयार करने हेतु पाठ्यक्रम निर्धारित किया गया। आज धार्मिक परीक्षा बोर्ड समाज मे प्रामाणिक रूप से कार्य कर रहा है। परीक्षा बोर्ड के तहत ही धार्मिक शिक्षण शालाओ को भी सघ द्वारा अनुदान प्रदान कर सचालित किया जा रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र मे सघ अपने सीमित साधनो के होते हुए भी प्रतिभावान छात्रो को छात्रवृत्ति प्रदान करता आ रहा है। छात्रों मे धार्मिक संस्कारो के साथ वर्तमान शिक्षा की व्यवस्था हेतु व शान्त क्रान्ति के अग्रदूत स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म. सा. की पुण्य स्मृति मे श्री गणेश जैन छात्रावास, उदयपुर मे सचालित है।

जैन सिद्धान्तो के प्रचार-प्रसार हेतु किये अनुदान प्रदान कर उदयपुर युनिवर्सिटी मे जैन चेयर की स्थापना सघ की एक विशेष उपलब्धि है। जिससे प्रतिवर्ष अनेक प्रतिभावान छात्र छात्राए जैन दर्शन मे एम. ए होकर आ रहे है, इन्ही मे से विशेष प्रतिभावान छात्रो के जैन दर्शन पर शोध करने हेतु आगम अहिंसा समता शोध सस्थान की स्थापना श्री गणेश जैन छात्रावास प्रागण मे अलग प्रकोष्ठ के रूप मे की है। यहा जैन दर्शन मे पी-एच. डी करने के लिए विशेष सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। कई विद्यार्थी इस शोध संस्थान से पी-एच. डी प्राप्त कर चुके हैं व कर रहे हैं।

शिक्षा के क्षेत्र मे ही श्री सुरेन्द्र कुमार साड शिक्षा सोसाइटी के उल्लेखनीय कार्यों का अवदान विशेष महत्व रखता है।

श्री समता प्रचार सघ उदयपुर, स्वाध्याय के क्षेत्र मे विशेष कार्य कर रहा है। प्रति वर्ष जहा पर पर्युषण पर सत-सतियो के चातुर्मास नही होते है, आराधना हेतु वहां पर्व स्वाध्यायी बन्धुओ को भेजा जाता है। स्वाध्यायियो को सस्कारित और शिक्षित करने के विशेष कार्यक्रम समय-समय पर आयोजित किये जाते है। संघ की इस प्रवृत्ति की बहुत ही सुन्दर छवि समाज के हृदय पर अंकित हुई है।

जीवन साधना एव संस्कार निर्माण के उद्देश्यो से सघ ने कुछ वर्षो से विभिन्न क्षेत्रो मे

दयात्राएं आयोजित की जिसका अनूठा अनुभव
ो व्यक्ति सम्मिलित हुए, उन्हे हुआ। उनकी
ो प्रेरणा से प्रतिवर्ष पदयात्राओ का आयोजन
ोता है। पदयात्रा से जहा जन-जन से सम्पर्क
ाधा जाता है वहां धर्मजागरण व स्वाध्याय
ाधना का विशिष्ट कार्य भी सम्पन्न होता है।

सघ की सहयोगी संस्था के रूप मे नारी
ागरण हेतु विशेष रूप से श्री अ. भा साधु-
ार्गी जैन महिला समिति की स्थापना की गई।
हिला समिति के द्वारा समाज-सेवा के जो कार्य
म्पन्न किये जा रहे है वे अपने आप मे अत्यन्त
हत्वपूर्ण हैं। समिति महिला जैन उद्योग मदिर,
रतलाम के माध्यम से महिलाओ की आत्म निर्भ-
रता और आर्थिक स्वावलम्बन हेतु प्रयत्नशील
है। महिला समिति सघ की प्रत्येक गतिविधि
मे महत्वपूर्ण सहयोगी है। सघ के स्वधर्मी भाई-
बहिनो के सहयोग हेतु महिला समिति का
विशिष्ट योगदान चल रहा है।

जीवदया की प्रवृत्ति मे हमारी महिला
समिति ने सघ के साथ किये गये प्रयत्नो से 'पशु
पक्षी बलि वध निषेध विधेयक' कई राज्यो मे
पारित करवाये है। इस सम्बन्ध मे अहिंसा
प्रचार सघ रायपुर व मद्रास के प्रयत्न विशेष
रूप से हो रहे है।

श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ ने समाज
के युवा वर्ग को धार्मिक क्रियाओ की तरफ उन्मुख
करने हेतु समता युवा संघ की स्थापना की गई।
युवा वर्ग को धार्मिक क्रियाओ की तरफ मोडने
का महत्वपूर्ण कार्य तो हमारे समाज के श्रमण
एवं श्रमणी वर्ग के सदुपदेशों से हो ही रहा है।
समता युवा संघ द्वारा एक पाक्षिक पत्र का
प्रकाशन निरन्तर हो रहा है व युवा वर्ग द्वारा
कई समाजोपयोगी कार्यक्रम समय-समय पर
आयोजित किये जाते है।

श्रमणोपासक संघ का मुख–पत्र प्रति मास
मे दो बार सुज्ञ पाठकों के हाथो पहुंचाया जाता
है। श्रमणोपासक के प्रकाशन व सघ साहित्य के
प्रकाशन की व्यवस्था सघ के ही जैन आर्ट प्रेस,
बीकानेर के द्वारा की जाती है। जैन आर्ट प्रेस
मे प्रकाशन की गति एवं स्तर बीकानेर के सभी
प्रिंटिंग प्रेसों से बेहतर है।

प्रारम्भ मे तो अनेक विपदाए सामने आई
पर अनवरत पुरुषार्थ एव दृढ सकल्प के साथ वे
दूर होती चली गईं। आज सघ गत पच्चीस वर्ष
की यात्रा पूरी कर जवानी मे प्रवेश कर चुका
है। इन पच्चीस वर्षों मे संघ ने आश्चर्यजनक
प्रगति की है।

हम जिन लक्ष्यों को लेकर चले थे आज
भी हम उसी की ओर गतिशील है। श्रमण-
सस्कृति के प्रेमियो से यही निवेदन है कि संघ
की गतिविधियो मे उत्साह के साथ भाग ले और
उसके सरक्षण, सवर्धन मे अपने महत्वपूर्ण परा-
मर्श देते रहे। आपका यह सहयोग निश्चित ही
श्रमण सस्कृति के उन्नयन एव विकास मे सहा-
यक सिद्ध होगा। हमे इस सघ के रजत-जयन्ती
वर्ष के साथ यह सकल्प करना है कि हमारे
आगामी चरण दृढता के साथ बढते जाए।

□

जैन धर्म की सार्वभौमिकता

☐ दीपचन्द भू
भूतपूर्व अध्यक्ष, श्री अ. भा साधुमार्गी जैन सघ

जैन धर्म एक सार्वभौम धर्म है । इसके मूल तत्व सत्य, अहिसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह आज भी शाश्वत हैं । जैन धर्म के त्रिरत्नो—सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र मानव मात्र के कल्याण के लिए अपना महत्व रखते है । यह धर्म समस्त प्राणियो के उत्थान, कल्याण व सुखी बनाने वाले सिद्धातो पर आधारित है । भौतिकवादी भटकाव से त्रस्त मानव को सुगम, सही और सुखद मार्ग दर्शन के लिए जैन धर्म के उपदेश दीपक की तरह आलोकित है । जिसकी जैन धर्म के सिद्धान्तो मे आस्था है जो उनका अनुशीलन करता है, अनुकरण करता है, वही जैन है । जिसने राग, द्वेष, विषय-वासना आदि आतरिक विकारो पर विजय प्राप्त कर ली है, वही "जिन" है तथा ऐसे जिन भगवान की उपासना करने वाला जैन है । **जैन धर्म मे कोई देश, काल की सीमा नहीं है, जाति और वर्ण के आधार पर कोई भेदभाव नहीं है । इसमे अंध-श्रद्धा और व्यक्तिपूजा को कोई स्थान नही है । यह धर्म गुण पूजा मे विश्वास रखता है, गुरु पूजा ही गुण पूजा है । रत्नत्रय—अहिसा, अनेकान्त और अपरिग्रह मे आस्था रखने वाला ही सही अर्थों मे जैन है ।**

जैन धर्म के सिद्धान्तो का प्रमुख स्तम्भ अहिसा है । जैन धर्म और अहिसा तो एक दूसरे से अभिन्न है । सभी धर्मो मे अहिसा को मान्यता दी गई है परन्तु जैन धर्म के अहिसा सिद्धान्त सूक्ष्मतम प्राणियों तक व्यापक हैं । छोटे-छोटे कीडे, मकोडे, पतगे, पशुपक्षी तक मे सुख-दुख की सवेदना है । वे भी सुख से रहना चाहते है और दु:ख के कारणो से बचना चाहते हैं । भगवान् महावीर ने कहा है—

सव्वे जीवावि इच्छन्ति जीविउ न मरिज्जिउ ।

सभी प्राणियो को सुख पूर्वक जीने की कामना रहती है । दु ख और मृत्यु सभी को अप्रिय लगती है । प्राणियों को सुख से जीने के अधिकार को छीनना हिसा है । समस्त जीव धारियो और वनस्पति तक मे सुख पूर्वक जीने की इच्छा का हनन हिसा है ।

अहिसा के मूल मे जैन धर्म की यह भावना रही है कि ससार मे अशान्ति, दु ख का कारण हिसा है । मनुष्य अपने लिए सुख प्राप्ति के प्रयत्नो मे दूसरो से विरोध और सघर्ष के लिए तैयार हो जाता है, यही हिसा का आरम्भ है । अपनी सुख-सुविधा के लिए दूसरे को दु ख देना छोड़ने से स्वय के दु ख स्वत. ही समाप्त होने लगते है । जैन धर्म के सिद्धान्तो मे सुख प्राप्ति के लिए अहिसा की आराधना आवश्यक है । सभी आत्माओ को समान समझो, किसी को भी मन, वचन और कर्म से कष्ट मत पहुंचाओ । यदि सुख चाहते हो तो दूसरो को सुखी बनने मे मदद करो । अहिसा से समता की भावना को बल मिलता है । हिसा से तो असमानता, विद्वेष, सघर्ष की भावना भड़कती है जिसे अहिसा के शीतल छीटे ही शांत कर सकते है । विश्व मे आज अहिसा

सिद्धान्तों की अत्यन्त आवश्यकता है । इन्ही सिद्धान्तो के लिए जैन धर्म में क्षमा का बडा महत्व है तथा क्षमा पर्व मनाया जाता है । क्षमा से अह का त्याग होता है जो सभी झगडो की जड है । क्षमा से नम्रता का उदय होता है । क्षमा से अपनी भूलों को स्वीकारने और प्रायश्चित करने से बदले की भावना, आक्रोश, हिसा की भावना समाप्त होकर अहिसा का उदय होता है ।

खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मिति मे सव्वे भूएषु, बैर मज्झ न केणई ।।

जैन धर्म का दूसरा प्रमुख सिद्धान्त है अनेकात । अनेकान्त का सरल अर्थ है—विचारो मे किसी भी प्रकार का एकान्तिक आग्रह नही होना चाहिए । इसे हम वैचारिक अहिसा कह सकते हैं । जैन धर्म के अनुसार 'मै कहता हूं, वही सही है' का आग्रह छोड़ना होगा । हो सकता है आपके अतिरिक्त विचारकों के सिद्धान्त भी देशकाल, परिस्थिति के अनुसार सही हो । अत अपने-अपने धार्मिक सिद्धांतो पर आस्था रखो परन्तु दूसरो के धर्मो की आलोचना मत करो । उनकी अच्छी बातो का आदर करो, उन्हे भी ग्रहण करो । इस अनेकान्त सिद्धात के अनुसार 'मेरा है सो सत्य है' का आग्रह छोडना होगा तथा 'सत्य है सो मेरा है' स्वीकारना होगा । यदि सभी धर्मावलम्वी एव नेता इस सिद्धात पर चलना प्रारम्भ कर दे तो सारे धार्मिक मतभेद, विद्वेष, हठपूर्ण आग्रह स्वत ही समाप्त हो जायेगे और विश्व कल्याण एवं बन्धुत्व की भावना सुदृढ होगी ।

जैन धर्म का तीसरा रत्न है—अपरिग्रह । संसार के समस्त भौतिक पदार्थो के प्रति अनासक्ति, संग्रह करने की वृत्ति का त्याग । सासारिक दु.खो के मूल मे अर्थ भी एक कारण है । आर्थिक विषमता संघर्ष को जन्म देती है । मनुष्य के जीवन में जब तक अमर्यादित लोभ, लालच, तृष्णा का स्थान रहेगा, उसे शांति प्राप्त नही हो सकती । अपना निर्वाह करने लायक अर्थ प्राप्ति करने पर ही अतिरिक्त सम्पत्ति गरीबों, असहायो, अपगो और अनाथो की सेवा मे लगाई जा सकती है । अर्जित धन का उपयोग दीन-दुखियो की सेवा में करने से ही सादा जीवन उच्च विचार की भावना को बल मिलेगा, सर्वत्र सुख शाति का साम्राज्य स्थापित होगा । इस प्रकार जैन धर्म के रत्नत्रय—अहिंसा, अनेकांत और अपरिग्रह इस धर्म की मौलिकता को सिद्ध करते है । इनके समुचित पालन से विश्व की अनेक समस्याओ का समाधान खोजा जा सकता है ।

किसी जैनाचार्य का कथन है—

'जहा विभिन्न पहलुओ पर विचार कर सम्पूर्ण सत्य की खोज की गई है, खडित सत्याशों को अखण्ड स्वरूप प्रदान किया गया है, जहा किसी प्रकार के पक्षपात को स्थान नही है, केवल सत्य का ही अनुसरण है । जहा किसी भी प्राणी को पीडा पहुचाना पाप माना जाता है, वही जैन धर्म है ।'

इन तीन सिद्धातो के अतिरिक्त जैन धर्म आत्मा, परमात्मा, पुण्य-पाप, स्वर्ग-नरक मे भी विश्वास रख व्याख्या करता है । आत्मा ही परम उच्च अवस्था पाकर परमात्मा वन जाती है जो सर्वज्ञ, सर्वदृष्टा, ज्ञानानन्द स्वरूप परम वीतराग होती है । प्रत्येक आत्मा साधना द्वारा आंतरिक मोह, माया, क्रोधादि शत्रुओ पर विजयी होकर परमात्मा वन सकती है। जैन धर्म की मान्यता है कि प्रत्येक प्राणी स्वय सुख-दुःख का कर्ता एवं भोक्ता है । प्रत्येक युग मे नई चेतना (आत्मा) जन्म लेकर जन-मानस को सही मार्ग बता कर मुक्ति (मोक्ष) को प्राप्त होती है । मुक्ति के पश्चात् आत्मा पुनः लौटकर नहीं आती । मुक्ति अनादि है, अनन्त है

जैन धर्म के अनुसार मुक्ति मार्ग के लिए सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन और सम्यक् चारित्र आवश्यक है। साधना के मार्ग मे हित-अहित का विवेक, आत्मा के उत्थान-पतन का सही ज्ञान सम्यक् ज्ञान है। आत्मा-परमात्मा, पुण्य-पाप आदि तत्वो पर सच्चा विश्वास, शुद्ध निष्ठा, श्रद्धा ही सम्यक् दर्शन है। आत्म-साधना के मार्ग पर बढते रहने के लिए सही और शुद्ध आचरण ही सम्यक् चारित्र है। आज इन सिद्धातो की व्यापकता और प्रभाव नितान्त प्रासगिक है।

जैन धर्म के सिद्धातो की व्यापकता को समझने के लिए उसके वन्दना मत्र पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है। उसमे 'गुणिनो सर्वत्र पूज्यन्ते' का सिद्धात समाहित है।

णमो अरिहंताण—उन सभी महान् आत्माओ को नमस्कार जिन्होने राग, द्वेष, काम, क्रोधादि समस्त विकारो पर विजय प्राप्त कर वीतरागता प्राप्त कर ली है। णमो सिद्धाण—उन सभी महान् चेतनाओ को नमस्कार जो महाव्रतादि नियमो की आराधनापूर्वक विशिष्ट साधनारत रहते हुए साधक समुदाय के प्रति सजगता का मार्ग दर्शन देते है। णमो आयरियाण—उ
महान जागरूक आत्माओ को नमस्कार जो
पचाचार का पालन करते है तथा अ
साधको को भी मर्यादा मे रहने का सकेत क
णमो उवज्झायाण—उन महापुरुषो को न
जो शास्त्रानिहित मर्यादाओं का पालन क
वीतराग निर्देशित शास्त्रो के अध्ययन,
मे लीन रहकर गूढ तत्वो को सुगम बना
साधको को परिज्ञान कराते है। णमो ल
साहूण—सम्पूर्ण लोक मे विद्यमान उन सभी
को नमस्कार जो साधुत्व का निर्वाह कर
साधना मे सलग्न रहते है।

यह नमस्कार महामन्त्र जैन धर्म के व्याप
दृष्टिकोण को परिभाषित करता है। जै
धर्म के सिद्धातो का सही रूप से पालन क
व्यवहार मे निष्ठा के साथ काम मे लेने से वि
बन्धुत्व और कल्याण की भावना को जागृत क
शाति और सद्भाव को प्राप्त किया जा सक
है। इस प्रकार जैन धर्म एक सार्वभौमिक दर्श
की प्रतिष्ठा करता है।

देशनोक, जिला-बीकानेर (राज

कोई मनुष्य ऐसा हो नही सकता जिससे घृणा की जाय या जिसे छूने से छूत लगती हो। सभी प्राणियो की आत्मा परमात्मा के समान है और शरीर की बनावट के लिहाज से मनुष्य मनुष्य मे कोई अन्तर नही है।

जो गन्दगी फैलाता है वह दोपी नही और जो हरिजन गन्दगी साफ करता है वह दोषी कहलाये—नीच गिना जाय, यह कहा का अनोखा न्याय है ?

—श्रीमद् जवाहराचार्य

संघ : उत्साही रचनात्मक संस्था

● सौभाग्यमल जैन, एडवोकेट

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता है कि ो अ भा साधुमार्गी जैन संघ इस वर्ष अपनी जत-जयन्ती प्रेरक वर्ष के रूप मे मना रहा है। परोक्त सस्था जैन समाज (विशेपकर स्थानक ान समाज) मे कार्यरत एक उत्साही रचनात्मक स्था है। अपने २४ वर्षीय कार्यकाल मे उसनें पने समर्पित कार्यकर्ता तथा नेतागण के द्वारा हत्वपूर्ण कार्य किया है। रजत-जयन्ती वर्ष (प्रेरक वर्ष) मे वहुआयामी कार्यक्रम (२५ सूत्र) का लक्ष्य तय करके उसके क्रियान्वयन की योजना र्धारित की जा रही है। सस्था के कार्यकर्ता था नेतागण अपने निर्धारित कार्य को पूरा करने े उत्साही तथा लगनशील है।

मैने उपरोक्त बहुआयामी कार्य एव उसके सूत्रो को ध्यानपूर्वक देखा है। जो मुख्य रूप से चार विभागो मे विभाजित किये जा सकते है—

(१) सस्कार निर्माण, व्यसनमुक्ति, जीवन निर्माण तथा समाजोत्थान मूलक विपयो पर विभिन्न माध्यम से प्रयत्न (२) कुरुढि उन्मूलन (३) आर्थिक सहायता (४) पशु-हिसा की रोक का प्रयत्न।

मुझे विश्वास है कि उपरोक्त विन्दुओ पर उत्साह तथा लगन से लक्ष्य पूर्ति की ओर यथा-सम्भव प्रयत्न किया जावेगा।

इस दिशा में सक्रिय प्रयत्न करने के लिये सघ का मुख-पत्र श्रमणोपासक सशक्त रूप से वातावरण निर्माण करेगा। इस अवसर पर मै एक विशेप दृष्टिकोण पर ध्यान आकर्षित करना चाहता हू वह यह कि देश तथा समाज मे गत कुछ वर्षो मे अर्थ प्रभुत्व अथवा अर्थ प्राधान्यता की मानसिकता तेजी से बढी है। यह तथ्य विवाद से परे है कि इस मनोवृत्ति ने देश तथा समाज में कई विकृतियो को जन्म दिया है। सताभिमुखता तथा अर्थ प्राधान्यता की मानसिकता का उपचार यदि समय रहते नही किया गया तो परिणाम भयकर होगे जिसके लक्षण कुछ सीमा तक आज भी दृष्टिगोचार होते हैं।

यह एक सुखद सयोग है कि यह वर्प आचार्य श्री नानेश के आचार्य पद, संघ तथा मुख-पत्र श्रमणोपासक का भी रजत-जयन्ती वर्ष है। आचार्य प्रवर स्थानकवासी समाज के प्रभावशाली आचार्य है। श्रद्धेय आचार्य प्रवर से भी मैं नम्र निवेदन करना चाहता हू कि त्रिवेणी-संगम—सघ, श्रमणोपासक, (श्रावक तथा श्रमण) वर्ष मे इस दिशा मे प्रभावोत्पादक कार्यक्रम के लिये प्रेरणा प्रदान करें।

इस त्रिवेणी सगम वर्प मे संघ की लक्ष्य पूर्ति की शुभ-कामना कररा हूं।

५-६-८७

—शुजालपुर मण्डी, (म. प्र)

□

संघ और हम

☐ चम्पालाल [illegible]

सहमन्त्री—श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन [illegible]

आज श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन सघ के विगत २५ वर्षों के कार्यकाल पर दृष्टि करते है तो कई बातें उभर कर सामने प्रकट होती है। इनमे कम वर्षों मे इस सघ ने स्था[illegible] वासी समाज या यों कहे कि जैन समाज मे अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। सघ के [illegible] कलापो मे जैन समाज के सच्चे विशिष्ट स्वरूप का प्रतिनिधित्व निहित है। सघ द्वारा सामा[illegible] एवं राष्ट्रीय स्तर के तथा जन-कल्याण के जो कार्य सम्पन्न किये जा रहे है उनसे सघ ही [illegible] जैन समाज का गौरव दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इसके पीछे है सघ प्रमुखो व [illegible] कार्यकर्ताओ का आपसी स्नेह। आज सघ मे जितने भी प्रमुख व्यक्ति व कार्यकर्ता है, वे [illegible] अपने आपको जिम्मेवार समझकर अपना कार्य निभाते है। जब हम कही भी प्रसगवश [illegible] जाते है तो भाईचारे का वह स्नेह उमड़ता है जो कि प्राय: सगे भाइयो मे भी देखने को नही मिलता है। किसी भी गाव या शहर मे अपने व्यक्तिगत व्यापारवश भी जाना हो तो वहा [illegible] कार्यकर्ता से मिलकर आना ही पडता है, उनका आत्मीय स्नेह बरबस खीच लेता है।

जहां अन्य सघ व सस्थाओ मे व्यक्ति पद प्राप्त करने हेतु एडी-चोटी का [illegible] लगाकर व साधु सन्तो से सिफारिश कराने की अनधिकृत चेष्ठा करता है, वही इस सघ [illegible] सभी पदाधिकारियो को सघ प्रमुख जबरदस्ती पद ग्रहण कराते हं। आज तक कभी चुन[illegible] विवाद नही हुआ। आचार्य-प्रवर, सन्त मुनिराज व महासतियाजी म. सा. का हस्तक्षेप तो [illegible] रहा कभी पूछते तक नही कि कौन-कौन पदाधिकारी बने। उन्हे कोई श्रावक बता देता है [illegible] पता चल जाता है या श्रमणोपासक पत्रिका के माध्यम से मालूम पड जाता है, वह [illegible] बात है।

इस संघ मे स्नेह व प्रेम कितना है इसका पता इस बात से लग जाता है कि परिषद की मीटिंग-कार्यकारिणी का रूप ले लेती है तथा कार्यकारिणी की मीटिंग, साधारण [illegible] का रूप ले लेती है। सबके मन मे जिज्ञासा रहती है। अनुशासन इतना कि सब कार्य[illegible] सुनते रहते है, बीच मे कभी व्यवधान उपस्थित नही करते।

सघ समर्पित महानुभावो की यदि सूची बनाने बैठ जावे तो वह बनती ही जा[illegible] शायद ही अन्त आयेगा। श्रीमान् गणपतराजजी बोहरा का तन-मन-धन से मूक समर्पण, श्री गुमानमलजी चोरड़िया का त्याग व सादगी तथा स्मरण करते ही प्रत्येक विशेष उत्सव [illegible] उपस्थिति, श्रीमान् पी. सी. चौपड़ा हर क्षेत्र मे अग्रणी, कार्यकुशल, विवेक सम्पन्न व सबके

एक-सा व्यवहार, श्रीमान् सरदारमलजी काकरिया का अर्थ संग्रह का कौशल । निजी कार्यवश जाते हैं तो भी सघ को हर समय याद रखते है । पैसे निकलवाने की कला में निपुण व्यक्तित्व, श्रीमान् चुन्नीलालजी मेहता सा. की दान देने में उदारता व श्री धनराजजी बेताला जैसा सूझ-बूझ का धनी, श्री भंवरलालजी कोठारी का मिठास, सभी प्रवृत्तियों के संयोजन मे निपुणता, श्री पीरदानजी पारख, श्री जसकरणजी बोथरा का प्रेरक व्यक्तित्व । मैं यदि लिखता ही गया तो बहुत बड़ी सूची बन जायेगी ।

मै भी लगभग २० वर्षो से इस सघ से आत्मीयता के साथ जुडा हुआ हू तथा १५ वर्ष सहमन्त्री व कोषाध्यक्ष के पद पर कार्य करते हुए सभी सघ प्रमुखो व पदाधिकारियों का स्नेह भाजन रहा हूं । मुझे यह लिखते हुए अत्यन्त ही गौरव महसूस हो रहा है कि मुझे जो असीम स्नेह, प्यार व कार्य करने की प्रेरणा मिली है वह मेरे जीवन का एक स्वर्णिम इतिहास है । मै जो भी यत्किंचित कार्य कर रहा हू, वह परम पूज्य आचार्य प्रवर की महती कृपा एवं उनके अतिशय का परिणाम है व मेरी अटूट श्रद्धा का फल है । साथ ही इसी सम्प्रदाय के विद्वान् तपस्वी एवं सेवाभावी सन्तो महासतियाजी म सा के सत्सान्निध्य से भी मुझे मार्ग-दर्शन प्राप्त होता रहता है । सघ प्रमुखो के असीम स्नेह एव सहयोग से ही सम्पूर्ण कार्य सुलभता पूर्वक सम्पन्न करते हुए आत्मिक आनन्द की प्राप्ति होती है ।

श्रद्धा

'सड्ढिए मेहावी मार तरइ'—श्रद्धाशील मेधावी ससार के पार पहुच जाता है । पर प्रश्न यह हे कि श्रद्धा किसके प्रति हो ? सामान्यतः शास्त्रो के प्रति, धर्माचार्य के प्रति तथा अभिभावको के प्रति समर्पण को श्रद्धा कहा जाता है । किन्तु तीर्थंकर महावीर इसके आगे बढ़े थे । उनका कहना था शास्त्र जड़ वर्णों मे पिरोये हुए हैं । वे स्वतः कुछ भी प्रभावित नहीं होते । व्यक्ति उन वर्णों मे अपनी अनुभूतियो को योजित करता है । जैसी वे अनुभूतिया होती हैं, उन्ही के आधार पर शास्त्रो की परिणति हो जाती है । प्रयोक्ता यदि उनके साथ सम्यक् अनुयोजन करता है तो उनसे बढ़कर अन्य कोई भी प्रकार उतना प्रभावी नही हो सकता । यदि उस अनुयोजन मे सम्यक्ता का निर्वहन पूर्णतः नहीं हो पाता, तो वे शास्त्र भार के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नही हो सकते ।

धर्माचार्य चेतन हैं । वे शिष्यो को साधना मे अनुयोजित करने का प्रयत्न करते हैं । किंतु वहुधा वे न्याय तया निष्पक्षता से हट भी जाते हैं । शिष्यो के प्रति उनकी समवर्तिता खण्डित हो जाती हैं । अन्य भी अनेक प्रकार है, जिनसे उनकी अपूर्णता छलकती है ।

अभिभावक तो केवल रहन-सहन, खान-पान, शिक्षण-सस्थापन आदि व्यावहारिक क्रियाओ के व्यवस्थापक होते हैं । उनके साथ तो मात्र विनिमय की ही प्रधानता होती है ।

श्रद्धा स्व के प्रति होनी चाहिए । जो अपने अस्तित्व मे लीन हो गया, श्रद्धा वहां साकार हो गई । आत्मविस्मृत व्यक्ति किसी भी परिस्थिनि मे श्रद्धा का परिवेश पा नहीं सकता । इसलिए श्रद्धा का तात्पर्य हे, आत्मा के अस्तित्व मे अधिष्ठित होना ।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन महिला समिति

श्रीमती कमला बैद

मत्री—श्री अ. भा. सा जैन महिला समिति

श्री अ. भा साधुमार्गी जैन सघ की महिला समिति का गठन सन् १९६८ मे किया गया था। जिसका उद्देश्य था महिला वर्ग को सघ की गतिविधियो से जोडना। चूंकि महिला वर्ग न केवल समग्र समाज का आधा भाग है बल्कि उसकी एक विशिष्ट भूमिका भी है। जिस तरह बच्चे की प्रथम पाठशाला घर और उसकी प्रथम गुरु मा होती है, उसी तरह किसी भी समाज का भावी आधारभूत ढांचा खड़ा करने एव विकास मे महिलाओं का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

समाज की इसी आवश्यकता को देखते हुए महिला समिति का विधिवत् गठन किया गया। बच्चो को सुसस्कारित करने, उन… चरित्र निर्माण करने और धार्मिक वाता… निर्माण करने वाली विभिन्न गतिविधियो… सचालन करना समिति का मुख्य उद्देश्य था। यह भी कहा जाय तो अतिशयो… ही हो… कि भावी पीढी आदर्श रूप … दायित्व इस समिति मे निहि…

यो तो समिति का ध्या… गतिविधियो पर केन्द्रित रहा है… रूप से इसे चार हिस्सो मे बाटा…

१–धार्मिक शिक्षा और सस्कार नि…
२–सेवा और सहयोग।
३–स्वावलम्बन तथा
४– सगठन

१. धार्मिक शिक्षा और संस्कार निर्माण.-

इस दृष्टि से समिति ने अहिंसा प्रचार, महिला शिविर, पदयात्रा आदि कार्यक्रमो पर विशेष जोर दिया।

(अ) **अहिंसा-प्रचार :** सौन्दर्य प्रसाधनो मे जिस तरह पशुओं की चर्बी तथा अन्य अस्पृश्य वस्तुओ का मिश्रण होता है, उसकी प्राय महिला समाज को जानकारी नही रहती। निरीह पशुओ व पक्षियो (खरगोश, मेढक, साप, गाय, बछड़ा, सुअर आदि) को क्रूर हिसा का शिकार बनाकर उनके रक्त, मास, मज्जा, हड्डी, बाल और चर्म … हमा… को सजाने वाले सौन्दर्य प्रसाधन … है। यह जानकारी सही ढग … ये, तो वे इन प्रसाधनो का … है। इसके परित्याग … पूर्ण … की तरफ … और … अप्र…

समिति का विशेष जोर रहता है। शाकाहार के गुणो और मासाहार के दोषो के प्रति महिलाओ को अवगत कराना भी समिति का विशेष कार्य रहता है। पशु बलि निषेध और पशु-पक्षियो के पालन-पोषण का भी काम समिति करती है। रायपुर मे किया जा रहा जीवदया कार्य इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

(ब) महिला शिविर : शिक्षा प्राप्त कर रही बालिकाए जो कल विवाह कर नये गृहस्थ जीवन मे प्रविष्ट होने वाली है—को धार्मिक शिक्षा देने और उनमे अच्छे सस्कार निर्माण करने का कार्यक्रम समिति लम्बे समय से चलाती आ रही है। इसके लिए एक या दो सप्ताह का शिविर आयोजित किया जाता है। शिविर में आने वाली बालिकाए एक नये वातावरण मे रहकर कुछ सिखाती है। इस तरह के शिविर देश के विभिन्न भागो मे समय-समय पर लगाये जाते है।

(स) पदयात्रा धार्मिक, नैतिक वातावरण बनाने एव सुसस्कार निर्माण करने के उद्देश्य से आयोजित होने वाली पदयात्राओ मे महिला समिति सक्रिय रूप से भाग लेती है। प्रदेश मे या अन्य प्रदेशो मे होने वाले ऐसे आयोजनो मे महिलाओ की भागीदारी का अच्छा लाभ मिलता है, यह प्रत्यक्ष अनुभव किया गया है। इस दौरान दुर्व्यसन मुक्ति तथा सस्कार निर्माण के काम मे भी बहुत सहायता मिलती है। ऐसे आयोजन प्राय. हर साल होली के बाद होते है।

२–सेवा और सहयोग :

इसके अन्तर्गत महिला समिति मुख्य रूप से निराश्रित बहनो की मदद, असहाय छात्रो को छात्रवृत्ति, विकलागो को कृत्रिम पाव तथा नेत्र-दान जैसे कार्यक्रमो का सचालन करती है। स्वधर्मी बहनो की जरुरत को देखते हुए उन्हे मदद देना समिति अपना प्रमुख दायित्व मानती है। वर्तमान मे ऐसी ४२ बहनो को मदद दी जा रही है। अध्ययनशील छात्रों को छात्रवृत्ति दिलाने तथा विकलांग भाइयो को जयपुर फुट, लगाने मे भी मदद करती है। बुक बैंक स्थापित कर पुस्तको की मदद भी बच्चो को दी जा रही है। इसके अलावा ४६ पाठशालाओ एव कई पुस्तकालयो का सचालन भी महिला समिति करती है, राजस्थान मे ही ऐसे ७ पुस्तकालय समिति चला रही है। ये है—चिकारडा, मगलवाड, रून्डेडा, खाटोडा, बिरमावल, गजोडा और छामनार।

३–स्वालम्बन :

निराश्रित, बेसहारा अथवा आर्थिक दृष्टि से कमजोर महिलाओ को स्वावलम्बी बनाना महिला समिति का मुख्य उपक्रम है। इसके अन्तर्गत बहनो को विभिन्न उत्पादक कार्यो मे सलग्न कर उन्हे आत्म निर्भर बनाने की योजना है।

इस कार्यक्रम का यद्यपि अधिक विस्तार नही हो पाया है, लेकिन मध्यप्रदेश के रतलाम नगर मे चलाया जा रहा उद्योग मन्दिर एक आदर्श उदाहरण है। यह केन्द्र काफी समय से चल रहा है। यहा बहनो को सिलाई, बुनाई, चर्खा चलाने, पापड़, मगोडी तथा मसाला बनाने तथा ऐसी ही विभिन्न उत्पादक गतिविधियो से जोड़ा गया है। शुरु मे यह केन्द्र किराये के भवन मे चलता था, लेकिन बाद मे जमीन खरीदकर अपना स्वतन्त्र भवन बना लिया गया। १२ जनवरी ८६ को इस नये भवन "श्रीमती जीवनी देवी काकरिया महिला उद्योग मन्दिर" का विधिवत उद्घाटन किया गया। आज यह केन्द्र अनेक बहनो को स्वावलम्वी बनाने मे महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

राजस्थान में भी इसी तरह दो सिलाई

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन महिला समि

□ श्रीमती कमल

मंत्री—श्री अ. भा. सा. जैन महिला

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ की महिला समिति का गठन सन् १९६८ मे किया गया था। जिसका उद्देश्य था महिला वर्ग को संघ की गतिविधियो से जोडना। चूकि महिला वर्ग न केवल समग्र समाज का आधा भाग है बल्कि उसकी एक विशिष्ट भूमिका भी है। जिस तरह बच्चे की प्रथम पाठशाला घर और उसकी प्रथम गुरु मा होती है, उसी तरह किसी भी समाज का भावी आधारभूत ढाचा खडा करने एव विकास मे महिलाओ का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

समाज की इसी आवश्यकता को देखते हुए महिला समिति का विधिवत् गठन किया गया। बच्चो को सुसस्कारित करने, उनका चरित्र निर्माण करने और धार्मिक वातावरण निर्माण करने वाली विभिन्न गतिविधियो का सचालन करना समिति का मुख्य उद्देश्य था। यदि यह भी कहा जाय तो अतिशयोक्ति नही होगी कि भावी पीढी आदर्श रूप मे गढने का गुरुत्तर दायित्व इस समिति मे निहित किया गया।

यो तो समिति का ध्यान कई प्रकार की गतिविधियो पर केन्द्रित रहा है, लेकिन मुख्य रूप से इसे चार हिस्सो मे बाटा जा सकता है-

१—धार्मिक शिक्षा और सस्कार निर्माण।
२—सेवा और सहयोग।
३—स्वावलम्बन तथा
४—सगठन

१. धार्मिक शिक्षा और संस्कार निर्माण:-

इस दृष्टि मे समिति ने अहिंसा प्रचार, महिला शिविर, पदयात्रा आदि कार्यक्रमो पर विशेष जोर दिया।

(अ) **अहिंसा-प्रचार** . सौन्दर्य प्रसाधनो मे जिस तरह पशुओ की चर्वी तथा अन्य अस्पृश्य वस्तुओ का मिश्रण होता है, उसकी प्राय महिला समाज को जानकारी नही रहती। निरीह पशुओं व पक्षियो (खरगोश, मेंढ़क, साप, गाय, बछड़, सुअर आदि) को क्रूर हिसा का शिकार बनाकर उनके रक्त, मास, मज्जा, हड्डी, बाल और चर्म मे हमारे तन को सजाने वाले सौन्दर्य प्रसाधन तैयार किये जाते है। यह जानकारी सही ढग से बहनो को दी जाये, तो वे इन प्रसाधनो का परित्याग कर सकती है। इसके परित्याग से अधिक बचत और सादगीपूर्ण जीवन की तरफ तो हम बढेगे ही, निर्दोष और निरीह प्राणियों की हत्या को रोकने मे भी अप्रत्यक्ष रूप से मदद-गार होगे। महिला समिति इस विषय मे सभा सम्मेलन, विचारगोष्ठी, शिविर आदि अवसरों पर बहनो के बीच परिचर्चा आयोजित करती है। सम्बन्धित साहित्य का प्रचार-प्रसार करती है। इसी तरह शाकाहार के प्रचार पर भी

मिति का विशेष जोर रहता है । शाकाहार के गुणो और मासाहार के दोषो के प्रति महिलाओ को अवगत कराना भी समिति का विशेष कार्य रहता है । पशु बलि निषेध और पशु-पक्षियो के पालन-पोषण का भी काम समिति करती है । रायपुर मे किया जा रहा जीवदया कार्य इस दृष्टि से उल्लेखनीय है ।

(ब) महिला शिविर : शिक्षा प्राप्त कर रही बालिकाए जो कल विवाह कर नये गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट होने वाली है–को धार्मिक शिक्षा देने और उनमे अच्छे सस्कार निर्माण करने का कार्यक्रम समिति लम्बे समय से चलाती आ रही है । इसके लिए एक या दो सप्ताह का शिविर आयोजित किया जाता है । शिविर मे आने वाली बालिकाए एक नये वातावरण में रहकर कुछ सिखाती है । इस तरह के शिविर देश के विभिन्न भागो मे समय-समय पर लगाये जाते है ।

(स) पदयात्रा धार्मिक, नैतिक वातावरण बनाने एव सुसस्कार निर्माण करने के उद्देश्य से आयोजित होने वाली पदयात्राओ मे महिला समिति सक्रिय रूप से भाग लेती है । प्रदेश मे या अन्य प्रदेशो मे होने वाले ऐसे आयोजनो मे महिलाओ की भागीदारी का अच्छा लाभ मिलता है, यह प्रत्यक्ष अनुभव किया गया है । इस दौरान दुर्व्यसन मुक्ति तथा सस्कार निर्माण के काम मे भी बहुत सहायता मिलती है । ऐसे आयोजन प्राय हर साल होली के बाद होते है ।

२–सेवा और सहयोग :

इसके अन्तर्गत महिला समिति मुख्य रूप से निराश्रित बहनो की मदद, असहाय छात्रो को छात्रवृत्ति, विकलागो को कृत्रिम पाव तथा नेत्र-दान जैसे कार्यक्रमो का सचालन करती है । स्वधर्मी बहनो की जरुरत को देखते हुए उन्हे मदद देना समिति अपना प्रमुख दायित्व मानती है । वर्तमान मे ऐसी ४२ बहनो को मदद दी जा रही है । अध्ययनशील छात्रों को छात्रवृत्ति दिलाने तथा विकलांग भाइयो को जयपुर फुट, लगाने मे भी मदद करती है । बुक बैंक स्थापित कर पुस्तको की मदद भी बच्चो को दी जा रही है । इसके अलावा ४६ पाठशालाओ एव कई पुस्तकालयो का सचालन भी महिला समिति करती है, राजस्थान मे ही ऐसे ७ पुस्तकालय समिति चला रही है । ये है—चिकारडा, मगल-वाड, रून्डेडा, खाटोडा, बिरमावल, गजोडा और छामनार ।

३–स्वालम्बन :

निराश्रित, बेसहारा अथवा आर्थिक दृष्टि से कमजोर महिलाओ को स्वावलम्बी बनाना महिला समिति का मुख्य उपक्रम है । इसके अन्त-र्गत बहनो को विभिन्न उत्पादक कार्यो मे सलग्न कर उन्हे आत्म निर्भर बनाने की योजना है ।

इस कार्यक्रम का यद्यपि अधिक विस्तार नही हो पाया है, लेकिन मध्यप्रदेश के रतलाम नगर मे चलाया जा रहा उद्योग मन्दिर एक आदर्श उदाहरण है । यह केन्द्र काफी समय से चल रहा है । यहा बहनो को सिलाई, बुनाई, चर्खा चलाने, पापड, मगोडी तथा मसाला बनाने तथा ऐसी ही विभिन्न उत्पादक गतिविधियो से जोडा गया है । शुरु मे यह केन्द्र किराये के भवन मे चलता था, लेकिन बाद मे जमीन खरीदकर अपना स्वतन्त्र भवन बना लिया गया । १२ जनवरी ८६ को इस नये भवन "श्रीमती जीवनी देवी काकरिया महिला उद्योग मन्दिर" का विधिवत उद्घाटन किया गया । आज यह केन्द्र अनेक बहनो को स्वावलम्बी बनाने मे महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है ।

राजस्थान मे भी इसी तरह दो सिलाई

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन महिला समिति

▱ श्रीमती कमला बैद

मत्री—श्री अ. भा. सा जैन महिला समिति

श्री अ भा. साधुमार्गी जेन सघ की महिला समिति का गठन सन् १९६८ मे किया गया था। जिसका उद्देश्य था महिला वर्ग को सघ की गतिविधियो से जोडना। चूंकि महिला वर्ग न केवल समग्र समाज का आधा भाग है बल्कि उसकी एक विशिष्ट भूमिका भी है। जिस तरह बच्चे की प्रथम पाठशाला घर और उसकी प्रथम गुरु मा होती है, उसी तरह किसी भी समाज का भावी आधारभूत ढाचा खडा करने एव विकास मे महिलाओ का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

समाज की इसी आवश्यकता को देखते हुए महिला समिति का विधिवत् गठन किया गया। बच्चो को सुसस्कारित करने, उनका चरित्र निर्माण करने और धार्मिक वातावरण निर्माण करने वाली विभिन्न गतिविधियो का सचालन करना समिति का मुख्य उद्देश्य था। यदि यह भी कहा जाय तो अतिशयोक्ति नही होगी कि भावी पीढी आदर्श रूप मे गढने का गुरुत्तर दायित्व इस समिति मे निहित किया गया।

यो तो समिति का ध्यान कई प्रकार की गतिविधियो पर केन्द्रित रहा है, लेकिन मुख्य रूप से इसे चार हिस्सो मे बाटा जा सकता है-

१—धार्मिक शिक्षा और सस्कार निर्माण।
२—सेवा और सहयोग।
३—स्वावलम्बन तथा
४— सगठन

१. धार्मिक शिक्षा और संस्कार निर्माणः-

इस दृष्टि से समिति ने अहिंसा प्रचार, महिला शिविर, पदयात्रा आदि कार्यक्रमो पर विशेष जोर दिया।

(अ) अहिंसा-प्रचार : सौन्दर्य प्रसावनो मे जिस तरह पशुओ की चर्बी तथा अन्य अस्पृश्य वस्तुओ का मिश्रण होता हे, उसकी प्राय महिला समाज को जानकारी नही रहती। निरीह पशुओ व पक्षियो (खरगोश, मेंढक, साप, गाय, बछडा, सुअर आदि) को क्रूर हिंसा का शिकार बनाकर उनके रक्त, मास, मज्जा, हड्डी, बाल और चर्म से हमारे तन को सजाने वाले सौन्दर्य प्रसाधन तैयार किये जाते है। यह जानकारी सही ढग से बहनो को दी जाये, तो वे इन प्रसाधनो का परित्याग कर सकती है। इसके परित्याग मे अधिक बचत और सादगीपूर्ण जीवन की तरफ तो हम बढेगे ही, निर्दोष और निरीह प्राणियो की हत्या को रोकने मे भी अप्रत्यक्ष रूप से मददगार होगे। महिला समिति इस विषय मे सभा, सम्मेलन, विचारगोष्ठी, शिविर आदि अवसरो पर बहनो के बीच परिचर्चा आयोजित करती है। सम्बन्धित साहित्य का प्रचार-प्रसार करती है। इसी तरह शाकाहार के प्रचार पर भी

समिति का विशेष जोर रहता है। शाकाहार के गुणो और मासाहार के दोपो के प्रति महिलाओं को अवगत कराना भी समिति का विशेष कार्य रहता है। पशु बलि निषेध और पशु-पक्षियो के पालन-पोपण का भी काम समिति करती है। रायपुर मे किया जा रहा जीवदया कार्य इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

(ब) महिला शिविर : शिक्षा प्राप्त कर रही वालिकाएं जो कल विवाह कर नये गृहस्थ जीवन मे प्रविष्ट होने वाली है–को धार्मिक शिक्षा देने और उनमे अच्छे सस्कार निर्माण करने का कार्यक्रम समिति लम्बे समय से चलाती आ रही है। इसके लिए एक या दो सप्ताह का शिविर आयोजित किया जाता है। शिविर मे आने वाली वालिकाएं एक नये वातावरण मे रहकर कुछ सिखाती है। इस तरह के शिविर देश के विभिन्न भागो में समय-समय पर लगाये जाते है।

(स) पदयात्रा धार्मिक, नैतिक वातावरण वनाने एव सुसंस्कार निर्माण करने के उद्देश्य से आयोजित होने वाली पदयात्राओ मे महिला समिति सक्रिय रूप से भाग लेती है। प्रदेश मे या अन्य प्रदेशो मे होने वाले ऐसे आयोजनो में महिलाओं की भागीदारी का अच्छा लाभ मिलता है, यह प्रत्यक्ष अनुभव किया गया है। इस दौरान दुर्व्यसन मुक्ति तथा सस्कार निर्माण के काम मे भी वहुत सहायता मिलती है। ऐसे आयोजन प्राय हर साल होली के बाद होते हैं।

२–सेवा और सहयोग :

इसके अन्तर्गत महिला समिति मुख्य रूप से निराश्रित वहनों की मदद, असहाय छात्रो को छात्रवृत्ति, विकलागों को कृत्रिम पाव तथा नेत्र-दान जैसे कार्यक्रमों का सचालन करती है। स्वधर्मी वहनो की जरुरत को देखते हुए उन्हे मदद देना समिति अपना प्रमुख दायित्व मानती है। वर्तमान मे ऐसी ४२ बहनो को मदद दी जा रही है। अध्ययनशील छात्रो को छात्रवृत्ति दिलाने तथा विकलांग भाइयो को जयपुर फुट, लगाने मे भी मदद करती है। बुक बैंक स्थापित कर पुस्तको की मदद भी बच्चों को दी जा रही है। इसके अलावा ४६ पाठशालाओ एव कई पुस्तकालयो का सचालन भी महिला समिति करती है, राजस्थान में ही ऐसे ७ पुस्तकालय समिति चला रही है। ये है—चिकारड़ा, मगल-वाड, रून्डेडा, खाटोडा, बिरमावल, गजोडा और छामनार।

३–स्वालम्बन :

निराश्रित, बेसहारा अथवा आर्थिक दृष्टि से कमजोर महिलाओ को स्वावलम्बी बनाना महिला समिति का मुख्य उपक्रम है। इसके अन्तर्गत बहनो को विभिन्न उत्पादक कार्यो मे सलग्न कर उन्हे आत्म निर्भर बनाने की योजना है।

इस कार्यक्रम का यद्यपि अधिक विस्तार नही हो पाया है, लेकिन मध्यप्रदेश के रतलाम नगर मे चलाया जा रहा उद्योग मन्दिर एक आदर्श उदाहरण है। यह केन्द्र काफी समय से चल रहा है। यहा बहनो को सिलाई, वुनाई, चर्खा चलाने, पापड, मगोडी तथा मसाला बनाने तथा ऐसी ही विभिन्न उत्पादक गतिविधियो से जोड़ा गया है। शुरु मे यह केन्द्र किराये के भवन मे चलता था, लेकिन बाद मे जमीन खरीदकर अपना स्वतन्त्र भवन वना लिया गया। १२ जनवरी ८६ को इस नये भवन "श्रीमती जीवनी देवी काकरिया महिला उद्योग मन्दिर" का विधिवत उद्घाटन किया गया। आज यह केन्द्र अनेक बहनो को स्वावलम्वी वनाने मे महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

राजस्थान मे भी इसी तरह दो सिलाई

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन महिला समिति

□ श्रीमती कमला वैद

मत्री—श्री अ. भा सा जैन महिला समिति

श्री अ. भा साधुमार्गी जैन सघ की महिला समिति का गठन सन् १६६८ मे किया गया था। जिसका उद्देश्य था महिला वर्ग को सघ की गतिविधियो से जोडना। चूंकि महिला वर्ग न केवल समग्र समाज का आधा भाग है बल्कि उसकी एक विशिष्ट भूमिका भी है। जिस तरह बच्चे की प्रथम पाठशाला घर और उसकी प्रथम गुरु मा होती है, उसी तरह किसी भी समाज का भावी आधारभूत ढाचा खडा करने एव विकास मे महिलाओ का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

समाज की इसी आवश्यकता को देखते हुए महिला समिति का विधिवत् गठन किया गया। बच्चो को सुसस्कारित करने, उनका चरित्र निर्माण करने और धार्मिक वातावरण निर्माण करने वाली विभिन्न गतिविधियो का सचालन करना समिति का मुख्य उद्देश्य था। यदि यह भी कहा जाय तो अतिशयोक्ति नही होगी कि भावी पीढी आदर्श रूप मे गढने का गुरुत्तर दायित्व इस समिति मे निहित किया गया।

यो तो समिति का ध्यान कई प्रकार की गतिविधियो पर केन्द्रित रहा है, लेकिन मुख्य रूप से इसे चार हिस्सो मे बाटा जा सकता है -

१—धार्मिक शिक्षा और सस्कार निर्माण।
२—सेवा और सहयोग।
३—स्वावलम्बन तथा
४— सगठन

१. धार्मिक शिक्षा और संस्कार निर्माणः—

इस दृष्टि से समिति ने अहिंसा प्रचार, महिला शिविर, पदयात्रा आदि कार्यक्रमो पर विशेष जोर दिया।

(अ) **अहिंसा-प्रचार :** सौन्दर्य प्रसावनो मे जिस तरह पशुओ की चर्बी तथा अन्य अस्पृश्य वस्तुओ का मिश्रण होता है, उसकी प्राय महिला समाज को जानकारी नही रहती। निरीह पशुओ व पक्षियो (खरगोश, मेढक, साप, गाय, वछडा, सुअर आदि) को क्रूर हिसा का शिकार बनाकर उनके रक्त, मास, मज्जा, हड्डी, वाल और चर्म से हमारे तन को सजाने वाले सौन्दर्य प्रसाधन तैयार किये जाते है। यह जानकारी सही ढग से बहनो को दी जाये, तो वे इन प्रसाधनो का परित्याग कर सकती है। इसके परित्याग मे अधिक वचत और सादगीपूर्ण जीवन की तरफ तो हम बढेगे ही, निर्दोष और निरीह प्राणियो की हत्या को रोकने मे भी अप्रत्यक्ष रूप से मददगार होगे। महिला समिति इस विषय मे सभा, सम्मेलन, विचारगोष्ठी, शिविर आदि अवसरो पर बहनो के बीच परिचर्चा आयोजित करती है। सम्बन्धित साहित्य का प्रचार-प्रसार करती है। इसी तरह शाकाहार के प्रचार पर भी

समिति का विशेष जोर रहता है । शाकाहार के गुणो और मासाहार के दोषो के प्रति महिलाओ को अवगत कराना भी समिति का विशेष कार्य रहता है । पशु बलि निषेध और पशु-पक्षियो के पालन-पोषण का भी काम समिति करती है । रायपुर मे किया जा रहा जीवदया कार्य इस दृष्टि से उल्लेखनीय है ।

(ब) महिला शिविर : शिक्षा प्राप्त कर रही बालिकाए जो कल विवाह कर नये गृहस्थ जीवन मे प्रविष्ट होने वाली है–को धार्मिक शिक्षा देने और उनमे अच्छे सस्कार निर्माण करने का कार्यक्रम समिति लम्बे समय से चलाती आ रही है । इसके लिए एक या दो सप्ताह का शिविर आयोजित किया जाता है । शिविर मे आने वाली बालिकाए एक नये वातावरण मे रहकर कुछ सिखाती है । इस तरह के शिविर देश के विभिन्न भागो मे समय-समय पर लगाये जाते है ।

(स) पदयात्रा धार्मिक, नैतिक वातावरण बनाने एव सुसस्कार निर्माण करने के उद्देश्य से आयोजित होने वाली पदयात्राओ मे महिला समिति सक्रिय रूप से भाग लेती है । प्रदेश मे या अन्य प्रदेशो मे होने वाले ऐसे आयोजनो मे महिलाओ की भागीदारी का अच्छा लाभ मिलता है, यह प्रत्यक्ष अनुभव किया गया है । इस दौरान दुर्व्यसन मुक्ति तथा सस्कार निर्माण के काम मे भी बहुत सहायता मिलती है । ऐसे आयोजन प्राय हर साल होली के बाद होते है ।

२–सेवा और सहयोग :

इसके अन्तर्गत महिला समिति मुख्य रूप से निराश्रित बहनो की मदद, असहाय छात्रो को छात्रवृत्ति, विकलागो को कृत्रिम पांव तथा नेत्र-दान जैसे कार्यक्रमो का सचालन करती है । स्वधर्मी बहनो की जरुरत को देखते हुए उन्हे मदद देना समिति अपना प्रमुख दायित्व मानती है । वर्तमान मे ऐसी ४२ बहनो को मदद जा रही है । अध्ययनशील छात्रों को छात्रवृ दिलाने तथा विकलाग भाइयो को जयपुर फु लगाने मे भी मदद करती है । बुक बैंक स्थापि कर पुस्तको की मदद भी बच्चों को दी जा रही है । इसके अलावा ४६ पाठशालाओ एव कई पुस्तकालयो का सचालन भी महिला समिति करती है, राजस्थान मे ही ऐसे ७ पुस्तकालय समिति चला रही है । ये है—चिकारडा, मगलवाड, रून्डेडा, खाटोडा, बिरमावल, गजोडा और छामनार ।

३–स्वालम्बन :

निराश्रित, बेसहारा अथवा आर्थिक दृष्टि से कमजोर महिलाओ को स्वावलम्बी बनाना महिला समिति का मुख्य उपक्रम है । इसके अन्तर्गत बहनो को विभिन्न उत्पादक कार्यो मे सलग्न कर उन्हे आत्म निर्भर बनाने की योजना है ।

इस कार्यक्रम का यद्यपि अधिक विस्तार नही हो पाया है, लेकिन मध्यप्रदेश के रतलाम नगर मे चलाया जा रहा उद्योग मन्दिर एक आदर्श उदाहरण है । यह केन्द्र काफी समय से चल रहा है । यहा बहनो को सिलाई, बुनाई, चर्खा चलाने, पापड, मगोडी तथा मसाला बनाने तथा ऐसी ही विभिन्न उत्पादक गतिविधियो से जोडा गया है । शुरु मे यह केन्द्र किराये के भवन मे चलता था, लेकिन बाद मे जमीन खरीदकर अपना स्वतन्त्र भवन बना लिया गया । १२ जनवरी ८६ को इस नये भवन "श्रीमती जीवनी देवी काकरिया महिला उद्योग मन्दिर" का विधिवत उद्घाटन किया गया । आज यह केन्द्र अनेक बहनो को स्वावलम्बी बनाने मे महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है ।

राजस्थान मे भी इसी तरह दो सिलाई

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन महिला समिति

□ श्रीमती कमला वैद

मत्री—श्री अ. भा. सा जैन महिला समिति

श्री अ. भा. साधुमार्गी जेन सघ की महिला समिति का गठन सन् १६६८ मे किया गया था। जिसका उद्देश्य था महिला वर्ग को सघ की गतिविधियो से जोडना। चूंकि महिला वर्ग न केवल समग्र समाज का आधा भाग है बल्कि उसकी एक विशिष्ट भूमिका भी है। जिस तरह बच्चे की प्रथम पाठशाला घर और उसकी प्रथम गुरु मां होती है, उसी तरह किसी भी समाज का भावी आधारभूत ढाचा खडा करने एव विकास मे महिलाओ का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है।

समाज की इसी आवश्यकता को देखते हुए महिला समिति का विधिवत् गठन किया गया। बच्चों को सुसस्कारित करने, उनका चरित्र निर्माण करने और धार्मिक वातावरण निर्माण करने वाली विभिन्न गतिविधियो का सचालन करना समिति का मुख्य उद्देश्य था। यदि यह भी कहा जाय तो अतिशयोक्ति नही होगी कि भावी पीढी आदर्श रूप मे गढने का गुरुत्तर दायित्व इस समिति मे निहित किया गया।

यो तो समिति का ध्यान कई प्रकार की गतिविधियो पर केन्द्रित रहा है, लेकिन मुख्य रूप से इसे चार हिस्सो मे बाटा जा सकता है -

१—धार्मिक शिक्षा और सस्कार निर्माण।
२—सेवा और सहयोग।
३—स्वावलम्बन तथा
४— सगठन

१. धार्मिक शिक्षा और संस्कार निर्माणः-

इस दृष्टि से समिति ने अहिंसा प्रचार, महिला शिविर, पदयात्रा आदि कार्यक्रमो पर विशेप जोर दिया।

(अ) अहिंसा-प्रचार : सौन्दर्य प्रसावनो मे जिस तरह पशुओ की चर्वी तथा अन्य अस्पृश्य वस्तुओ का मिश्रण होता हे, उसकी प्राय महिला समाज को जानकारी नही रहती। निरीह पशुओ व पक्षियो (खरगोश, मेढ़क, साप, गाय, वछडा, सुअर आदि) को क्रूर हिसा का शिकार बनाकर उनके रक्त, मास, मज्जा, हड्डी, वाल और चर्म से हमारे तन को मजाने वाले सौन्दर्य प्रसाधन तैयार किये जाते है। यह जानकारी सही ढग से वहनो को दी जाये, तो वे इन प्रसावनो का परित्याग कर सकती है। इसके परित्याग मे अधिक वचत और सादगीपूर्ण जीवन की तरफ तो हम वढेगे ही, निर्दोष और निरीह प्राणियो की हत्या को रोकने मे भी अप्रत्यक्ष रूप से मदद-कार होगे। महिला समिति इस विषय मे सभा, सम्मेलन, विचारगोष्ठी, शिविर आदि अवसरो पर वहनो के वीच परिचर्चा आयोजित करती है। सम्बन्धित साहित्य का प्रचार-प्रसार करती है। इसी तरह शाकाहार के प्रचार पर भी

समिति का विशेष जोर रहता है । शाकाहार के गुणो और मासाहार के दोषो के प्रति महिलाओं को अवगत कराना भी समिति का विशेष कार्य रहता है । पशु बलि निषेध और पशु-पक्षियो के पालन-पोषण का भी काम समिति करती है । रायपुर मे किया जा रहा जीवदया कार्य इस दृष्टि से उल्लेखनीय है ।

(ब) महिला शिविर : शिक्षा प्राप्त कर रही बालिकाए जो कल विवाह कर नये गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट होने वाली है–को धार्मिक शिक्षा देने और उनमे अच्छे संस्कार निर्माण करने का कार्यक्रम समिति लम्बे समय से चलाती आ रही है । इसके लिए एक या दो सप्ताह का शिविर आयोजित किया जाता है । शिविर मे आने वाली बालिकाए एक नये वातावरण मे रहकर कुछ सिखाती है । इस तरह के शिविर देश के विभिन्न भागो में समय-समय पर लगाये जाते है ।

(स) पदयात्रा · धार्मिक, नैतिक वातावरण बनाने एवं सुसस्कार निर्माण करने के उद्देश्य से आयोजित होने वाली पदयात्राओ मे महिला समिति सक्रिय रूप से भाग लेती है । प्रदेश मे या अन्य प्रदेशो मे होने वाले ऐसे आयोजनो मे महिलाओ की भागीदारी का अच्छा लाभ मिलता है, यह प्रत्यक्ष अनुभव किया गया है । इस दौरान दुर्व्यसन मुक्ति तथा सस्कार निर्माण के काम में भी बहुत सहायता मिलती है । ऐसे आयोजन प्राय हर साल होली के बाद होते है ।

२–सेवा और सहयोग :

इसके अन्तर्गत महिला समिति मुख्य रूप से निराश्रित बहनो की मदद, असहाय छात्रो को छात्रवृत्ति, विकलागो को कृत्रिम पांव तथा नेत्र-दान जैसे कार्यक्रमो का सचालन करती है । स्वधर्मी बहनो की जरुरत को देखते हुए उन्हे मदद देना समिति अपना प्रमुख दायित्व मानती है । वर्तमान मे ऐसी ४२ बहनो को मदद दी जा रही है । अध्ययनशील छात्रों को छात्रवृत्ति दिलाने तथा विकलाग भाइयो को जयपुर फुट, लगाने मे भी मदद करती है । बुक बैंक स्थापित कर पुस्तको की मदद भी बच्चों को दी जा रही है । इसके अलावा ४६ पाठशालाओ एव कई पुस्तकालयों का सचालन भी महिला समिति करती है, राजस्थान मे ही ऐसे ७ पुस्तकालय समिति चला रही है । ये है—चिकारड़ा, मगलवाड, रून्डेडा, खाटोडा, बिरमावल, गजोडा और छामनार ।

३–स्वालम्बन :

निराश्रित, बेसहारा अथवा आर्थिक दृष्टि से कमजोर महिलाओ को स्वावलम्बी बनाना महिला समिति का मुख्य उपक्रम है । इसके अन्तर्गत बहनो को विभिन्न उत्पादक कार्यो मे सलग्न कर उन्हे आत्म निर्भर बनाने की योजना है ।

इस कार्यक्रम का यद्यपि अधिक विस्तार नही हो पाया है, लेकिन मध्यप्रदेश के रतलाम नगर मे चलाया जा रहा उद्योग मन्दिर एक आदर्श उदाहरण है । यह केन्द्र काफी समय से चल रहा है । यहा बहनो को सिलाई, बुनाई, चर्खा चलाने, पापड, मगोडी तथा मसाला बनाने तथा ऐसी ही विभिन्न उत्पादक गतिविधियो से जोड़ा गया है । शुरु मे यह केन्द्र किराये के भवन मे चलता था, लेकिन बाद मे जमीन खरीदकर अपना स्वतन्त्र भवन बना लिया गया । १२ जनवरी ८६ को इस नये भवन "श्रीमती जीवनी देवी काकरिया महिला उद्योग मन्दिर" का विधिवत उद्घाटन किया गया । आज यह केन्द्र अनेक बहनों को स्वावलम्बी बनाने मे महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है ।

राजस्थान मे भी इसी तरह दो सिलाई

स्कूल चलाये जा रहे है, जहा बहनो को सिलाई कार्य का प्रशिक्षण दिया जा रहा है ।

४-संगठन :

सगठन की दृष्टि से भी महिला समिति पूरी तरह सक्रिय है, सघ रजत-जयन्ती वर्ष, समता ',साधना वर्ष मे विशेष सदस्यता अभियान चलाया जाकर सदस्य बनाये गये। २५१/- रुपये मे बनने वाले आजीवन सदस्यो को "श्रमणोपासक" की प्रति नि.शुल्क उपलब्ध कराने का प्रावधान रखा गया, जिससे सदस्यता मे वृद्धि हुई । यह वर्ष "साधना वर्ष" के रूप मे मनाया जायेगा । इसे सभी जप, तप और त्याग पूर्वक मनावे, इसका प्रयत्न किया जायेगा ।

आभार :

जिन संघ प्रमुखो ने समिति-स्थापना और प्रोत्साहन हेतु अनथक काम किया, उन श्रद्धेय स्मरणीय सर्व श्री गणपतराज जी बोहरा, सरदारमल जो काकरिया, गुमानमल जी चोरडिया, भंवरलाल जी कोठारी, पीरदान जो पारख, मगनलाल जी मेहता व चम्पालालजी डागा के प्रति समिति हृदय से आभारी है ।

समिति के प्रारम्भिक कार्य के गुरुतर दायित्व को कार्यालय सचिव के रूप मे श्री सुजानमलजी तालेरा रतलाम ने कुशलता से निभाया। वे साधुवाद के पात्र है ।

हमे धर्मपाल वहिनो की धर्मनिष्ठा, श्रद्धा और स्नेह से कार्य की बहुत प्रेरणा मिली है।

समिति को शासन नायक आचार्य-प्रवर श्री नानालाल जी म. सा. के महिला जागृति परक जीवनान्नायक उपदेशो से महान् सबल प्राप्त हुआ है । उन परम आराध्य के आचार और उपदेशो के प्रति समिति और समिति की समस्त सदस्याए सदैव ऋणी रहेगी और उनके समता मत्र को सकल विश्व मे फैलाने हेतु समर्पित रहेगी । आचार्य-प्रवर के आज्ञानुवर्त्ती सन्त और सतीवृन्द के यशस्वी आचार से हम गौरवान्वित है ।

आपके आज्ञानुवर्त्ती सतीवृन्द ने महिला जागरण और उनमे धर्म-प्रभावना का विस्तार करने मे जो बेजोड भूमिका निभाई है, वह स्वर्णाक्षरों मे अ कित करने योग्य है ।

समिति पदाधिकारियो का सक्षिप्त उल्लेख भी उनके प्रति आदर की अभिव्यक्ति हेतु प्रस्तुत है-

संरक्षिका		कार्यकाल
श्रीमती सेठानी आनन्द कवर बाई पितलिया,	रतलाम	सन् १९७३ से १९७५ तक
श्रीमती सेठानी लक्ष्मी बाई धाडीवाल,	रायपुर	सन् १९७३ से १९७५ तक
श्रीमती केशर बहन जवेरी,	बम्बई	सन् १९७६ से १९८६ तक
श्रीमती यशोदा देवी बोहरा,	पिपलियाकलां	सन् १९७६ से निरन्तर
श्रीमती उमराव बहिन मूथा,	मद्रास	सन् १९७७ से निरन्तर

अध्यक्षा

श्रीमती सेठानी आनन्द कवर पितलिया,	रतलाम	सन् १९६७ से १९७२ तक
श्रीमती यशोदा देवी बोहरा,	पिपलिया कला	सन् १९७३ से १९७५ तक
श्रीमती फूलकवर बाई काकरिया,	कलकत्ता	सन् १९७६ से १९७८ तक

श्रीमती विजया देवी सुराना,	रायपुर	सन् १९७९ से १९८१ तक
श्रीमती सूरज देवी चोरडिया,	जयपुर	सन् १९८२ से १९८४ तक
श्रीमती अचला देवी के. तालेरा,	पूना	सन् १९८५ से निरन्तर

उपाध्यक्षा

श्रीमती सेठानी लक्ष्मी बाई धाडीवाल,	रायपुर	सन् १९६७ से १९७२ तक
श्रीमती सूरज बाई सेठिया,	बीकानेर	सन् १९७३ से १९७५ तक
" सम्पत बाई गेलड़ा,	मद्रास	सन् १९७३ से १९७५ तक
" विजया देवी सुराना,	रायपुर	सन् १९७३ से १९७५ तक
" स्नेहलता ताकडिया,	उदयपुर	सन् १९७३ से १९७५ तक
" धनकवर बाई काकरिया,	नाजीरपुर (कलकत्ता)	सन् १९७६ व १९८० से १९८१ तक
" भवरी बहन मूथा,	रायपुर	सन् १९७६ से १९७९ तक
" सोहन कवर मेहता,	इन्दौर	सन् १९७६ से १९७७ तक
" झमकु बहन बरडिया,	सरदारशहर	सन् १९७६ से १९७८ तक
" शाता देवी मेहता,	रतलाम	सन् १९७७ से १९७९ व ८२ से निरन्तर
" नीला बहिन बोहरा,	पिपलिया कलां	सन् १९७८ से ७९ व ८२ से ८३ तक
" रसकवर बाई सूर्या,	उज्जैन	सन् १९७९ से १९८० तक
" धूरी बहन पिरोदिया,	रतलाम	सन १९८०
" फूलकवर चोरड़िया,	नीमच	सन् १९८०
" सूरजदेवी चोरड़िया,	जयपुर	सन् १९८१
" चेतन देवी भंसाली,	कलकत्ता	सन् १९८१
" स्वर्णलता बोथरा,	बीकानेर	सन् १९८२ से १९८३ तक
" सौरभ देवी मेहता,	ब्यावर	सन् १९८२ से १९८३ तक
" मोहनी देवी मेहता,	बम्बई	सन् १९८४
" ताराबाई सेठिया,	मद्रास	सन् १९८४ से १९८५ तक
" विमला बाई बैद,	कलकत्ता	सन् १९८४ से १९८५ तक
" प्रेमलता जैन,	जलगांव	सन् १९८६ से निरन्तर
" प्रेमलता जैन,	अजमेर	सन् १९८७
" शान्ति देवी मिन्नी,	कलकत्ता	सन् १९८७

मंत्री

श्रीमती विजया देवी सुराना,	रायपुर	सन् १९७३
श्रीमती शान्ता देवी मेहता,	रतलाम	सन् १९७४ से १९७७ तक
श्रीमती सो धनकंवर बाई कांकरिया,	कलकत्ता	सन् १९७८ से १९८० तक
श्रीमती स्वर्णलता बोथरा,	बीकानेर	सन् १९८१ से १९८२ तक

श्रीमती प्रेमलता जैन,	अजमेर	सन् १९८३ से १९८६ तक
श्रीमती कमला देवी बैद,	जयपुर	सन् १९८७

सहमन्त्री

श्रीमती शान्ता बहन मेहता,	रतलाम	सन् १९६९ से १९७३ तक
श्रीमती धन कवर बाई काकरिया,	कलकत्ता	सन् १९७४ से १९७६ तक
" डॉ. शान्ता बहन भानावत,	जयपुर	सन् १९७४ से ७६ व ८३ से ८४ तक
" रभा देवी धाड़ीवाल,	रायपुर	सन् १९७४ से १९७६ तक
" शकुन्तला देवी काठेड़,	जावरा	सन् १९७४ से १९७६ तक
" स्वर्णलता बोथरा,	बीकानेर	सन् १९७७ से १९८० तक
" धूरी बाई पिरोदिया,	रतलाम	सन् १९७७ से १९७८ तक
" शान्ती देवी मिन्नी,	कलकत्ता	सन् १९७७ व १९७८ से १९८४ तक
" सुशीला देवी पालावत,	जयपुर	सन् १९७७ से १९७८ तक
" रोशन देवी खाबिया,	रतलाम	सन् १९७८ से ८० व ८१ से ८४ तक
" प्रेमलता बहिन जैन,	अजमेर	सन् १९७९ से १९८२ तक
" गायत्री देवी काकरिया,	कलकत्ता	सन् १९७९ से १९८० व १९८७
" मगन देवी सुकलेचा,	बीकानेर	सन् १९८१ से १९८२ व १९८७
" कान्ता बोहरा,	इन्दौर	सन् १९८१ व १९८५ से १९८६ तक
" नीला बहिन बोहरा,	पिपलिया कला	सन् १९८१
" तारा देवी सेठिया,	मद्रास	सन् १९८२
" धीसी बाई आच्छा,	रायपुर	सन् १९८३ से १९८४ तक
" रतना ओस्तवाल,	राजनादगाव	सन् १९८५ से १९८७ तक
" पारस बाई बन्ट,	ब्यावर	सन् १९८५ से १९८६
" कचन बाई काकरिया,	जोधपुर	सन् १९८५ से १९८६ तक
" नीलम बहिन जैन,	रतलाम	सन् १९८७

कोषाध्यक्ष

श्रीमती रोशन बहिन खाबिया,	रतलाम	सन् १९७४ से १९७७ तक
श्रीमती शान्ति देवी मिन्नी,	कलकत्ता	सन् १९७८ से १९८० तक
श्रीमती कचन देवी सेठिया,	बीकानेर	सन् १९८१ से १९८२ तक
श्रीमती प्रेमलता गोलेछा,	जयपुर	सन् १९८३ से १९८४ तक
श्रीमती कमला देवी बैद,	जयपुर	सन् १९८५ से १९८६ तक
श्रीमती गुलाब देवी मूथा,	जयपुर	सन् १९८७

卐

श्री सुरेन्द्रकुमार सांड शिक्षा सोसाइटी, नोखा : एक परिचय

—**धनराज बेताला**
मत्री—श्री सु शिक्षा सोसायटी, नोखा

मानव के लिए शिक्षा कितनी उपयोगी है यह सर्वविदित है, पर उसमे जीवन जीने के शिक्षण का तो कहना है ही क्या ? जैनागम मे यह वाक्य 'पढमं नाणं तवोदया' ने शिक्षा को सर्वोपरि स्थान प्रदान किया। आज जो लौकिक शिक्षण प्राप्त हो रहा है उसमे भी अधिक महत्व सम्यक् शिक्षण का है। जैन दर्शन उसी सम्यग् ज्ञान के शिक्षण के कारण सबसे महत्वपूर्ण स्थान पर है। सम्यक् शिक्षण के प्रसारण के लिए ही श्री सुरेन्द्रकुमार साड शिक्षा सोसाइटी की स्थापना का विचार प्रस्तुत हुआ।

परम पूज्य आचार्य श्री नानालालजी म सा का ब्यावर चातुर्मास सन् १९७१ मे चल रहा था। वहा पर दिनाक ११-१०-७१ को एक साथ ९ दीक्षाओ का भव्य प्रसग बना। विरक्तात्माओ को समुचित शिक्षा की योग्य व्यवस्था करने की योजना स्वरूप उसी दीक्षा कार्यक्रम मे दीक्षित होने वाले आदर्श त्यागी श्री सौभाग्यमलजी साड (वर्तमान मे आदर्श त्यागी तपस्वी मुनि श्री सौभाग्यमलजी म सा) एवम् उनकी धर्मपत्नी पुत्र व पुत्रिया थी। श्री सौभाग्यमलजी साड ने दीक्षा के पूर्व रु २१०००) की घोषणा करके समाज के सामने श्री सुरेन्द्र कुमार साड शिक्षा सोसायटी की नीव रखी व अपनी तरफ मे सस्थापक सदस्य मनोनीत किये। श्री साड जी के विचार का श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ के तत्कालीन पदाधिकारियो ने स्वागत करते हुए ब्यावर मे एक मीटिंग की। सम्यक् शिक्षण प्रदान करने के कार्य मे उस समय स्व श्री तोलारामजी भूरा देशनोक ने अत्यधिक उत्साह दिखलाया। इस पर सघ प्राण श्री गणपतराज जी बोहरा, श्री सरदारमल जी काकरिया ने उपस्थित महानुभावो मे सम्पर्क करके इस सस्था की नीव रखी। इस सस्था के प्रथम अध्यक्ष श्री हीरालालजी सा. नादेचा, खाचरोद, जो कि उस समय श्री अ भा. साधुमार्गी जैन सघ के अध्यक्ष थे, मनोनीत किये गये व मत्री पद पर मुझे, धनराज बेताला नोखा को लिया गया।

ब्यावर मे स्थापना होने के पश्चात् सस्था के विधायी कार्य सम्पन्न करने का जिम्मा श्री भवरलालजी कोठारी व मुझको सुपुर्द किया गया जिसे प्रयत्न करके सम्पन्न किया गया व इस सस्था को आयकर मे छूट की सुविधा भी ८०जी मे प्राप्त हो गई। विधायी कार्य के साथ इस सोसायटी ने सम्यक् शिक्षण का कार्य प्रारभ किया। सर्वप्रथम पं श्री रोशनलालजी चपलोत, प श्री पूर्णचन्दजी दक, प श्री काशीनाथजी (आचार्य चन्द्रमौलि) इत्यादि विद्वान सम्यक् शिक्षण के लिए नियोजित किये गये।

शिक्षा सोसायटी के इस पुनीत कार्य मे स्व सेठ श्री भीखमचन्दजी भूरा का अपूर्व योगदान रहा। स्वर्गीय सेठ श्री जेसराजजी वैद ने विशिष्ट योगदान प्रदान किया। साथ ही सेठिया पारमार्थिक सस्था बीकानेर के सुयोग्य विद्वानो

को संस्था से संलग्न कर समाज के त्यागी वर्ग के ज्ञान के प्रकाश के महत्वपूर्ण कार्य मे शिक्षा सोसाइटी प्रगति करती गई ।

शिक्षा सोसाइटी का कार्य क्षेत्र विशाल था। जहा-जहा सन्त-सतियो का विचरण होता उन सिघाड़ों के साथ के विद्यार्थी त्यागी समुदाय के सम्यग् शिक्षण हेतु अध्यापको को उन क्षेत्रो मे भेजकर शिक्षण का कार्य कराया जाना काफी श्रमसाध्य एवम् व्यय साध्य कार्य था । लेकिन अपने उद्देश्यो के अनुसार शिक्षा सोसाइटी इस कार्य को सम्पन्न करती रही । समाज से आर्थिक सहयोग प्राप्त कर ऐसी सस्था का निरन्तर गतिशीलता पूर्वक कार्य करते रहना अपने आप में एक विशिष्ट उपलब्धि है । इस सस्था के कार्य व उपलब्धियो को ध्यान मे रख कर अनेकानेक सहयोगी बन्धुओ ने सहयोग प्रदान करने की आवश्यकतानुसार तत्परता बताई । इस संस्था की कई सज्जनो ने बिना मागे ही मुक्तहस्त से आवश्यकता की पूर्ति की । संघ प्राण श्री सरदारमलजी काकरिया जो कि सघ सचालन मे दक्ष व्यक्ति हे, ने कई बार कहा कि हमे श्री सुरेन्द्रकुमार साड शिक्षा सोसाइटी के लिए मात्र अपील पर वाछित आर्थिक सहयोग प्राप्त होता रहा है। इसी से इसकी उपयोगिता स्वय सिद्ध हे ।

इस सस्था मे जो प्राध्यापक कार्य करते थे, उन्हे भी अपने कार्य पर गर्व रहा है। उनके द्वारा सम्पन्न कराये गये अध्यापन कार्य के फलस्वरूप आज जैन समाज मे कई मूर्धन्य मनीषी, जैन दर्शन के निष्णात, विद्वद्वर्य सन्त एवम् महासतियाजी म. सा है जो अपनी विद्वता के फलस्वरूप सर्वत्र विशेष छाप छोड़ रहे है, जिनकी यथेष्ठ सख्या सभी को प्रफुल्लित करने वाली है।

शिक्षा सोसायटी के मुख्य पदाधिकारियो का कार्यकल निम्नानुसार रहा है—

पद	नाम	कार्यकाल
अध्यक्ष	श्री हीरालालजी नादेचा, खाचरौद	२-११-७१ से २८-६-७३ तक
	श्री दीपचन्दजी भूरा, देशनोक	२६-६-७३ से २२-६-७६ तक
	श्री हिम्मतसिहजी सरूपरिया, उदयपुर	२३-६-७६ से २०-१०-८२ तक
	श्री भंवरलालजी कोठारी, बीकानेर	२१-१०-८२ से निरन्तर
उपाध्यक्ष	श्री पुखराजजी छल्लानी, मद्रास	२६-६-७३ से २७-६-७६ तक
	श्री हिम्मतसिहजी सरूपरिया, उदयपुर	२८-६-७६ से २३-६-७६ तक
	श्री भवरलालजी कोठारी, बीकानेर	२४-६-७६ से २०-१०-८२ तक
	श्री मोहनलालजी मूथा, जयपुर	२३-६-७६ से निरन्तर
	श्री करनीदानजी लूणिया, देशनोक	२०-१०-८२ से निरन्तर
मन्त्री	श्री धनराज बेताला, नोखा	प्रारंभ से अभी तक
सहमन्त्री	श्री जयचन्दलालजी सुखानी, बीकानेर	प्रारभ से अभी तक
कोषाध्यक्ष	श्री मोतीलालजी मालू, अहमदाबाद	प्रारभ से अभी तक

प्राध्यापकों के सहयोग का स्मरण भी स्फुरणा पैदा करता है । स्व. श्री हिम्मतसिहजी सरूपरिया उदयपुर निवासी जैनागमो के प्रकाण्ड विद्वान् थे एव सरकार के वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी थे । अपने सेवाकाल से निवृत होने के पश्चात् आपने अपने आपको शिक्षा सोसायटी को लगभग समर्पित कर दिया । शिक्षा सोसायटी की आवश्यकतानुसार शिक्षण के लिए आप कई स्थानो पर जाते रहे । आपने शिक्षा सोसायटी के अन्तर्गत नि स्वार्थ सेवा कार्य किया । यहा तक कि प्रवास आदि का व्यय भी स्वयं वहन करते थे । उनकी ऐसी विशिष्ट सेवा को ध्यान मे रख कर ही शिक्षा सोसायटी ने आपको अध्यक्ष मनोनीत किया था । आपकी स्मृति अक्षुण्ण है । शिक्षा के क्षेत्र मे आप द्वारा किये गये कार्य से शिक्षा सोसायटी ऋणी है ।

आज परम पूज्य आचार्य श्री नानेश शासन मे समर्पित अधिकांश मूर्धन्य विद्वान सन्त व महासतियाजी के अध्यापन कार्य मे शिक्षा सोसाइटी ने अपना योग प्रदान किया, जिसके फल स्वरूप अनेक विद्वान सन्त एवं अधिकाश सिघाडे विदुषी महासतियाजी, नव-दीक्षितों को ज्ञान प्रदान करने मे यथेष्ट सक्षम है । जो भी इन त्यागी आत्माओ के सान्निध्य मे उपस्थित हुआ है, वह इनके विशिष्ट ज्ञान एव साधनाशील जीवन से अभिभूत हुए बिना नही रह सका ।

वर्तमान मे शिक्षा सोसाइटी के अन्तर्गत जैन दर्शन के विद्वान प श्री कन्हैयालालजी दक, सस्कृत के प्रकाण्ड प श्री काशीनाथजी, पडित श्री हरिवल्लभजी उदयपुर आदि के सतत प्रयास से शिक्षा सोसाइटी अपने उद्देश्यो को प्राप्ति की तरफ गतिमान है ।

पूर्व मे जिन विशिष्ट विद्वानो की सेवाए शिक्षा सोसाइटी को प्राप्त हुई उनके पुण्य स्मरण के बिना यह परिचय पूरा नही हो सकता । स्व प श्री पूर्णचन्दजी दक कानोड, स्वर्गीय प. श्री श्यामलालजी ओझा बीकानेर (श्री सेठिया धार्मिक परमार्थिक सस्था बीकानेर), स्वर्गीय पडित श्री रोशनलालजी चपलोत उदयपुर, स्वर्गीय पडित श्री रतनलालजी सिघवी छोटी सादडी इत्यादि विद्वान् अपने जीवन के अन्तिम क्षणो तक ज्ञान-दान की दिशा मे कार्य करते रहे । इनके अलावा समय-समय पर अनेकानेक विद्वानों का सहयोग प्राप्त हुआ है एव हो रहा है ।

श्री अ भा. साधुमार्गी जैन सघ की ही शाखा लेकिन अपने आप मे स्वायत्तता प्राप्त इस सस्था की उपलब्धि को ध्यान मे रखते हुए सघ की एक और विशिष्ट प्रवृत्ति का कार्य इसके अधीन रखा गया । वह विशिष्ट प्रवृत्ति है समता प्रचार सघ, उदयपुर । जिसके सयोजक है समाज के अनुभवी व्यक्ति श्री गणेशीलाल जी बया, उदयपुर । श्री बयाजी समर्पण भाव से कार्य करने के कारण समता प्रचार सघ, उदयपुर स्वाध्यायियों को नियोजित कर समाज की विशिष्ट सेवा कर रहा है । चातुर्मास काल मे सुदूर प्रदेशो में पर्युषण पर्व के आठ दिनो मे स्वाध्यायियो को भेजा जाता है । समय पर शिविर आयोजित कर स्वाध्यायियो के प्रशिक्षण का कार्य किया जाता है । इस प्रवृत्ति से सघ एव समाज को बहुत आशाए है ।

शिक्षा सोसाइटी अपने उद्देश्यो की पूर्ति हेतु विद्वानो की उपलब्धि के लिए प्रयत्नशील रहती है । आगम-अहिसा समता एव प्राकृत शोध सस्थान, उदयपुर मे जैनागमो व प्राकृत साहित्य पर जो विद्यार्थी शोध कार्य कर रहे है उसको अग्रसर करने हेतु भी शिक्षा सोसाइटी प्रति वर्ष अनुदान प्रदान करती रही है ।

कार्य क्षेत्र विशाल है, शिक्षा के क्षेत्र मे जितना भी कार्य किया जाय, कम है । सभी से विनम्र निवेदन है कि ज्ञान प्रदान करने की दिशा मे आप सभी सहभागी बने । यह सबमे उत्तम कार्य है ।

समता युवा संघ : एक झलक

आज के इस भौतिक युग में जहा विषमताए बढ रही है। भौतिकता की चकाचौध मे व्यक्ति न्याय-अन्याय, सुख-दु ख, हित-अहित, अनुकूल-प्रतिकूल, धर्म-अधर्म आदि बातो की ओर ध्यान नही देकर सिर्फ स्वय की स्वार्थ लिप्सा मे ग्रसित रहता है वहा उसी युवा शक्ति को एकत्रित कर, सगठित कर समाज सेवा के विभिन्न कार्यों मे लगाने हेतु श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन समता युवा सघ की दि ४ नवम्बर १९७९ को अजमेर मे स्थापना हुई। स्थापना के बाद विगत कुछ वर्षों मे ही युवा सघ की शाखाए पूरे भारतवर्ष मे स्थापित हो गई। युवक साथी अपनी पारिवारिक जवाबदारी को सम्हालते हुए भी समाज की सेवा मे अग्रणी हुए है और हो रहे है, यह गौरव की बात है।

केन्द्रीय समता युवा सघ समाज की विभिन्न प्रवृत्तियो से भी जुडा हुआ है, जिसका उद्देश्य अलग-अलग क्षेत्रो मे युवा सघो को सक्रिय करना, मार्ग दर्शन देना एव धार्मिक-नैतिक शिक्षण देकर राष्ट्रीय, धार्मिक एव सामाजिक दायित्व के प्रति युवा शक्ति को सही दिशा प्रदान करना है। सघ की अभी वर्तमान मे जो प्रवृत्तिया चल रही है, उन्हे प्रस्तुत करते हुए हमे प्रसन्नता है—

समता युवा सन्देश —

यह युवा सघ का पाक्षिक समाचार-पत्र है जिसमे जन-जन की भावना के अनुरूप समता विभूति आचार्य श्री नानेश एव मुनिराजो एव महासतियाजी म सा के विचरण, स्वास्थ्य एव चातुर्मास आदि की जानकारी त्वरित ग[illegible] प्रकाशित होती है।

यह पत्र भारत भर मे नि शुल्क भेजा ज[illegible] है। इसके प्रकाशन मे प्रमुख सहयोगी सघ अ[illegible] श्री चुन्नीलालजी मेहता बम्बई है।

चिकित्सा शिविरो का आयोजन.—

इस परिप्रेक्ष्य मे युवा सघ मानवीय से[illegible] के कार्य मे भी सलग्न रहा है। कई स्थानो प[illegible] चिकित्सा शिविरो के आयोजन हुए तथा हो र[illegible] हैं। केन्द्रीय युवा सघ मे भी नेत्र तथा अन्[illegible] चिकित्सा शिविरो के लिये प्रावधान है। सघ के[illegible] मक्षी शिविर की स्मृति तो आज भी समाज मे[illegible] जीवन्त है।

समता समाज रचना —

रजत जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में युवा सघ ने समता समाज रचना हेतु २५०० युवको का एक सगठन तैयार करने का निश्चय किया है। अनेक युवा साथी इसके सदस्य बन चुके है। प्रति सदस्य रुपये १०-०० इसका शुल्क है। इसमे सभी युवा साथियो का सहयोग अपेक्षित है।

धार्मिक ज्ञान का प्रचार-प्रसार —

युवा संघ ने यह विशेष कार्य गत वर्ष [illegible] प्रारम्भ किया है। इसके अन्तर्गत जिन-जि[illegible] स्थानो पर सन्त एव सतियाजी म सा के चातु[illegible] र्मास है उन स्थानो पर सामायिक सूत्र, प्रतिक्रमण, भक्तामर पच्चीस बोल, श्रावक के बारह व्रत, चवदह नियम आदि पुस्तके ज्ञानार्जन हेतु नि शुल्क

भेजी जा रही है, इससे अत्यधिक ज्ञानार्जन की सम्भावना है। इसके साथ ही युवा सघ ने गत वर्ष 'सामायिक सूत्र, भक्तामर स्तोत्र', नामक पुस्तक का प्रकाशन किया था और इस वर्ष 'तत्व का ताला ज्ञान की कुन्जी', नामक पुस्तक का प्रकाशन किया गया है। इस पुस्तक मे छोटे-वडे वहुत से थोकडों एव बोलो का सग्रह है, जो सामान्य जनमानस के जीवनोपयोगी होने के साथ ही विशेष ज्ञान मे भी लाभदायक है।

युवा सघ की यह एक कल्याणकारी योजना है, इसका अधिक से अधिक लाभ उठाना सभी का कर्त्तव्य है। धार्मिक स्थलो मे तथा सघो मे जहा भी इन पुस्तको की आवश्यकता हो, वे कार्यालय से सम्पर्क कर सकते है।

छात्र-वृत्ति —

युवा सघ की छात्रवृत्ति योजना मे प्रति-भावान, जागरूक व जरूरतमन्द छात्र-छात्राओ को छात्रवृत्ति दी जाती है। जो युवक-युवती इसका लाभ उठाना चाहे, वे आवेदन कर सकते हैं।

रोजगार के अवसर: —

प्राय यह देखा गया है कि हमारे समाज के कई युवा साथी पढे-लिखे होने के बाद भी रोजगार के साधन प्राप्त नही कर पाते है, इसी उद्देश्य को लक्ष्य मे रखते हुए युवा संघ ने उद्योग-पतियो, व्यवसायियो, चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट एवं वैंकिग योजनाओ से सम्बन्धित जानकारी एकत्रित की हे, यदि कोई युवा साथी इस योजना का लाभ उठाना चाहे तो अपनी रुचि के अनुसार कार्य के लिये सपर्क स्थापित कर सकते है, जिससे उन्हे सहयोग एव मार्गदर्शन दिया जा सके।

सदस्यो की सूची. -

हमारे समाज मे कई ऐसे युवक हैं जो नि स्वार्थ भाव से वहुत अच्छी सेवा कर रहे है अथवा करने की इच्छा रखते है, परन्तु पर्याप्त जानकारी के अभाव मे उनके चहुमुखी व्यक्तित्व का लाभ समाज को नही मिल रहा है, अत युवा संघ ने पूरे भारत मे फैले हुए निष्ठावान एव उत्साही कार्यकर्ताओ को रजत-जयन्ती वर्ष मे सदस्य वनाने का निश्चय किया है।

युवा सघ का एक और लक्ष्य है . 'स्व-पर कल्याण' इसमे युवको के अपने स्वय के जीवन मे शाति का सचार करने, समता भाव को जगाने एव जीवन की मलिनता को धोने के लिये अपने सदस्यों को कम से कम सामायिक सूत्र, भक्तामर स्तोत्र के ज्ञान एव साधना मे सलग्न करने का भी निश्चय किया गया है। इसी परिप्रेक्ष्य मे युवा सघ ने 'सामायिक सूत्र, भक्तामर स्तोत्र' नामक पुस्तक का प्रकाशन दिनाक १५ अगस्त १९८६ को किया है जो अपने आप मे एक अच्छा सकलन है। हमारा यह प्रयास है कि युवा साथी कम से कम सामायिक. ज्ञान तथा साधना मे सलग्न होकर अपने आत्मिक लक्ष्य को प्राप्त करें।

यह वर्ष आचार्य श्री नानेश के आचार्य पद का २५ वा वर्ष है। आचार्य श्री नानेश ने व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र तथा राष्ट्र से विश्व शान्ति तक की बहु-आयामी विवेचना कर एक व्यावहारिक व्याख्या दी है, लेकिन महापुरुष तो उपदेश ही दे सकते है। इसे जन-जन तक पहुचाना यह हमारा परम कर्त्तव्य है। विश्वशाति समता मे ही सन्निहित है। अत हमने आचार्य श्री नानेश के सर्वतोमुखी एवं वहुआयामी व्यक्तित्व को जन-जन तक पहुचाने का सकल्प पूर्वक निर्णय लिया है।

समता विद्यालय —

आज समाज का अधिकाश युवावर्ग कुव्य-सनो की राह पर जा रहा है। लोग कहते हैं

कि जैन युव। गलत राह पर जा रहा है। यह वास्तव मे कुछ अंशो मे सही भी है, किन्तु इसका दायित्व किस पर है ? यह सोचना नितांत आवश्यक है। आज की शिक्षा पद्धति एव बचपन के स्कूली सस्कार ही उसके कारण माने जा सकते हैं। सामान्य रूप से व्यक्ति यह सोचता है कि हमारा बच्चा डाक्टर, इन्जीनियर या उद्योगपति बने, वह अपने जीवन मे चहुमुखी विकास करे और इस हेतु वह अपने बच्चो को कान्वेन्ट स्कूलों मे दाखिला दिलाता है। उन स्कूलो मे शाकाहारी एव मासाहारी परिवारो के बच्चे एक साथ पढते हे, एक जैन परिवार का बच्चा जो अभी समझ से परे हे, मासाहारी बच्चे के साथ बैठ कर अपने टिफिन का भोजन करता है एवं अपने साथी बच्चे को अण्डा या अन्य वस्तु खाते देखता है तो स्वाभाविक रूप से उसके मन से उस वस्तु के प्रति घृणा निकल जाती है और वह भी उस प्राथमिक स्तर पर उसे अभक्ष्य नही मानता और वही बच्चा आगे जाकर उन वस्तुओं का सेवन करता है जो लोग उस पर अंगुली उठाते है, किन्तु इसका दायित्व समाज के पालको, प्रबुद्धजीवियो तथा कर्णधारो पर है।

युवा संघ ने आने वाली पीढी को संस्कारित एवं सुशिक्षित करने हेतु कान्वेन्ट पद्धति के माध्यम से विभिन्न स्थानो पर समता विद्यालयो को खोलने की महती योजना समाज के समक्ष रखी है जो कि अपने आप मे एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक कदम है।

शिक्षा संस्थान का कार्य एक सामान्य काम नही है। उसका प्रारम्भिक व्यय बहुत अधिक होता है। शिक्षा का दान महान है, साथ ही संस्कारित जीवन सहित शिक्षा का दान समाज मे एक अपूर्व देन होगी।

मेरा सभी युवा साथियो एवं दानवीर महानुभावो तथा बुद्धिजीवियो से विनम्र आग्रह है कि वे तन मन-धन से जुट जायें एवं आपके अपने ही बच्चो को सस्कारित करने के लिये ठोस कदम उठाये।

यदि हमने इस ओर ध्यान नही दिय आगामी समय मे यह स्तर इतना गिर जा कि हमारी जैन सस्कृति ही सकट मे पड जाये

सगठनः—

वर्तमान मे भारत के विभिन्न स्थानो युवा सघ सक्रिय होकर कार्य कर रहा है [illegible] प्रमुख निम्न हैं—

समता युवा सघ, इन्दौर, छत्तीसगढ क्षे युवा संघ, दक्षिण भारतीय समता युवा [illegible] समता युवा सघ बम्बई, समता युवा सघ नन्दुरब समता युवा सघ राजगुरु नगर, समता युवा पीपलिया मंडी, समता युवा सघ बीकानेर, [illegible] युवा सघ रतलाम, नोखा आदि।

इसके अलावा भी जावरा, मन्दसौर, जा[illegible] उदयपुर, भीलवाडा, राजनांदगांव, रायपुर, मद्रास, हुबली आदि कई स्थानो पर युवा [illegible] कार्य कर रहे हैं तथा कई स्थानो पर युवा [illegible] स्थापित नही हैं, वहा के युवा साथी स्था[illegible] करने मे जुटे हुए है। यह उनकी, आचार्य [illegible] के प्रति निष्ठा एव धार्मिक भावनाओ का [illegible] चायक है।

युवा संघ के विकास का श्रेय समाज [illegible] उन सघ-निष्ठ महानुभावो को जाता है जिन्[illegible] हमे तन, मन, धन से सहयोग दिया है।

यह वर्ष आचार्य श्री नानेश के आचार्य[illegible] का २५ वां वर्ष है। विगत वर्षो मे आपने मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ, राजस्थान, गुजरात, महा[illegible] उडीसा आदि कई क्षेत्रों में विचरण कर धर्म शंखनाद किया है। आपने अन्तर्ज्ञान मे ऐसे सिद्धातों को निरुपित किया है जिससे आ[illegible]

तनावग्रस्त मानव शांति की राह पर चल सके। उन सिद्धातों मे समता दर्शन, समीक्षण ध्यान प्रमुख हैं।

युवा सघ के प्रत्येक सदस्य की यह हार्दिक भावना है कि आपश्री का सान्निध्य एव मार्ग दर्शन हमें युगो-युगो तक मिलता रहे।

इसके साथ ही यह वर्ष श्री अ भा. सा. जैन सघ का २५ वा वर्ष है। विगत वर्षो मे इस संघ ने समाज की विभिन्न लोकोपकारी प्रवृत्तियो के माध्यम से पूरे भारतवर्ष मे महत्व-पूर्ण स्थान प्राप्त किया है। सघ के निष्ठावान महानुभाव सदैव संघ सेवा के कार्यो मे तत्पर रहते है। यह संघ दिन-दुनी रात-चौगुनी प्रगति करे एव अपने उद्देश्यो को पूर्ण करने मे सफल हो, ऐसी हमारी शुभ कामनाएं हैं।

इन्ही शुभ भावनाओं के साथ—

गजेन्द्र सूर्या
अध्यक्ष

मणीलाल घोटा
मन्त्री

श्री अ. भा सा. जैन समता युवा संघ, रतलाम

तृण, ठूठ, कटीली लता, छायादार वृक्ष और लता - वितान की भाति ही विभिन्न तरह का होता है मानव हृदय। तृण क्षुद्र है वह किसी को छाया नही दे सकता पर उस पर चलने वाले को वह ताप भी नही देता। इसी प्रकार जो क्षुद्र हृदयी है वह किसी को न छाया दे पाता है न ताप। कारण उसमे ताप देने की शक्ति ही नही है। ऐसे मनुष्य न किसी का भला कर सकते है न बुरा।

ठूठ मे पत्र ही नही होते अत वृक्ष होने पर भी किसी को छाया नही दे पाता कारण उसके पत्र झर चुके हैं। इसी भाति के व्यक्ति जो छाया दे तो सकते हैं किन्तु हृदय मे स्नेह के अभाव मे वे किसी का भला नहीं कर पाते।

कटीली लताओ ने पत्रो की सम्पदा तो पायी है किन्तु पत्रो के विरल होने के कारण आश्रय चाहने वालो को छाया नही दे सकती वल्कि चुभन ही देती है। इस प्रकार के व्यक्ति दूसरो का भला करना तो दूर दूसरो को कष्ट ही देते है।

छायादार वृक्ष पत्रो से भरे होने के कारण दूसरो को छाया तो देते है पर फूलो की महक नही दे पाते। इस भाति के मनुष्य दूसरे का भला तो करते हैं किन्तु उनके जीवन को मधुर नहीं वना पाते।

लता-वितान छाया के साथ-साथ पुष्पो की महक भी देती हे। इस प्रकार के मनुष्य दूसरो का भला तो करते ही हैं उनके जीवन को माधुर्य-मडित भी कर देते है।

अखिल भारतीय समता बालक मण्डली

बच्चों मे धार्मिक एवं नैतिक सस्कार उत्पन्न करने और सामाजिक नव चेतना जागृत करने हेतु अहमदाबाद मे दिनाक २० अक्टूबर मंगलवार आपाढ सुदी दूज को श्री दीपचन्द जी भूरा, अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के पूर्व अध्यक्ष एव भवरलालजी कोठारी के मुख्य आतिथ्य एव अध्यक्षता मे अखिल भारतीय स्तर पर समाज बालको के इस सगठन की स्थापना हुई। साथ ही रतलाम बालक मण्डली की प्रार्थना एव साधना पुस्तक का विमोचन भी हुआ। श्री कपूर जी कोठारी को उसी समय अखिल भा. स बा मण्डली का सर्वानुमति से अध्यक्ष चुना गया एव अन्य पदाधिकारियो की भी घोषणाए हुईं। संस्था ने उसी समय निम्न प्रस्ताव पास किये—

(१) सस्था के आगामी वर्ष को सगठनात्मक वर्ष घोषित करना।

(२) दिल्ली के पास देवनार मे खुलने वाले बूचड़खाने का तीव्र विरोध।

(३) चित्तौड के पास सादूलखेडा मे तीन जैन साध्वियो के साथ हुए अभद्र व्यवहार पर निन्दा प्रस्ताव पास किया एवं विरोध पत्र भेजा।

प्रथम वार्षिक रिपोर्ट :

सस्था अध्यक्ष द्वारा अहमदाबाद मे अध्यक्ष बनने के बाद रतलाम से बीकानेर तक पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. के जन्म दिवस एव ज्ञान पंचमी के शुभ अवसर पर संगठनात्मक सप्ताह के अन्तर्गत कई क्षेत्रो मे सगठन की रेखा बनाने का प्रयास किया एव जगह-जगह पर धार्मिक पाठशालाए खुलवाई गई। इस बालको एव बालिकाओ मे धार्मिक एव सामाजिक जागृति का आभास हुआ तथा सगठन द्वारा दिल्ली के पास देवनार मे खुलने वाले बूचड़खाने का तीव्र विरोध कर राष्ट्रपति, प्रधानमत्री, राज्यपाल, मुख्यमंत्री, गृहमंत्री आदि को ज्ञापन जगह जगह से भिजवाये गये। इसी तरह चित्तौड़ के पास सादुलखेडा मे जैन साध्वियो के साथ हुए अभद्र व्यवहार का विरोध ज्ञापन, जुलूस एवं हडताल के माध्यम से किया गया।

सस्था का वार्षिक अधिवेशन भावनगर मे श्री भंवरलाल जी कोठारी एव श्री जसकरण जी बोथरा के मुख्य आतिथ्य मे सम्पन्न हुआ जिसमे निम्न प्रस्ताव पास किये गये—

(१) श्री प्रेमराज बोहरा शिविर समिति के माध्यम से बालकों का धार्मिक शिक्षण शिविर लगाना।

(२) संस्था को तीव्र गति प्रदान करने हेतु चार क्षेत्रीय सम्मेलन कर बालको मे धार्मिक जागृति पैदा करना।

(३) धार्मिक स्कूलो को खुलवाना एवं धार्मिक परीक्षा देनें हेतु प्रेरित करना।

(४) क्षेत्रीय प्रवास कर सगठन की इकाइयो को सुदृढ़ एव व्यवस्थित करना एवं नई इकाइयो की स्थापना करना।

द्वितीय एवं तृतीय वार्षिक रिपोर्ट :

प्रथम अधिवेशन के प्रस्तावों को मूर्त्त रूप देने के उद्देश्य से चित्तौड़ मे तीन जून ८४ से १६ जून ८४ तक बालकों का धार्मिक शिक्षण शिविर सस्था द्वारा प्रेमराज बोहरा शिविर समिति के सहयोग से श्री दीपचन्द जी भूरा एवं श्री गणपतराज जी बोहरा और श्रीमती यशोदा-देवी जी बोहरा के मुख्य आतिथ्य मे आयोजित किया गया। जिसका समापन श्री पी. सी चौपडा एव सुजानमल जी मारू के मुख्य आतिथ्य मे सम्पन्न हुआ।

चित्तौड़ मे ही दस जून ८४ को मेवाड़ क्षेत्रीय बालको का सम्मेलन भी सम्पन्न हुआ। जिसमे सगठन की अनेक योजनाओं को मूर्त्त रूप दिया गया। इसी तरह बीकानेर मे भी सस्था का द्वितीय क्षेत्रीय सम्मेलन २ दिसम्बर ८४ रविवार को कोठारी पंचायती भवन मे श्री चुन्नी-लालजी मेहता एव श्री भंवरलाल जी कोठारी के मुख्य आतिथ्य एव श्री माणकचन्दजी रामपुरिया की अध्यक्षता मे सम्पन्न हुआ, जिसमे निम्न प्रस्ताव पास किये गये—

(१) श्री सघ मे एकरूपता लाने की दृष्टि से सस्था का नाम अखिल भारतीय नाना वालक मण्डली की जगह, अखिल भारतीय समता वालक मण्डली रखा गया।

(२) बालको मे धार्मिक ज्ञान की अभि-वृद्धि हेतु ५ धार्मिक शिक्षण शिविर लगाने का निर्णय किया।

(३) बालको मे बौद्धिक ज्ञान वृद्धि हेतु एक निबन्ध प्रतियोगिता आयोजित करने का निर्णय किया गया।

सस्था द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर एक निबन्ध प्रतियोगिता "बालको मे चरित्र निर्माण की समस्या, कारण एवं समाधन" विषय पर आयोजित की गई। ३५ निबन्ध सस्था को प्राप्त हुए जिनमे १० निबन्धो को श्रेष्ठ घोषित कर पुरस्कृत किया गया। सस्था द्वारा मालवा मेवाड, मारवाड़ एवं छत्तीसगढ़ क्षेत्र हेतु क्षेत्रीय सयोजको की नियुक्ति भी की गई।

संस्था का यह वर्ष शिविरो की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जावेगा। सस्था द्वारा मलकान-गिरी (उड़ीसा), गीदम (बस्तर) क्षेत्र में भाई श्री दिनेश-महेश नाहटा सह-सचिव एव क्षेत्रीय सयोजक के सहयोग से ग्रीष्मावकाश मे दो शिविर उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुए। मलकानगिरी एवं गीदम के शिविरो के पश्चात् नगरी जिला मन्द-सौर मे भी मालवा क्षेत्र के बालको का धार्मिक शिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ।

दीपावली अवकाश में भी संस्था द्वारा कालियास एव गंगाशहर-भीनासर मे दो धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित किये गये जिनमे पूर्ण सफलता मिली।

संस्था के विकास के रथ को आगे बढ़ाते हुए सस्था अध्यक्ष श्री कपूर जी कोठारी ने अपने सहयोगियों के साथ २५ सितम्बर से ३ अक्टूबर तक मालवा, मेवाड, मारवाड क्षेत्र का ९ दिवसीय सघन तूफानी दौरा कर सगठन की इकाइयो को मजबूत करते हुए धार्मिक स्कूलों की स्थापना का कार्य किया। फलत: करीव ४५ स्थानो पर बालक-वालिका मण्डलियो की स्थापना हुई।

चतुर्थ वार्षिक रिपोर्ट :

बम्बई अधिवेशन में संस्था की गतिविधि को पेश करते हुए भावी रूप-रेखाओं का निश्चय श्री चम्पालाल जी जैन ब्यावर एवं श्री दीपचन्द जी भूरा के सान्निध्य में किया गया, जिसमे

संस्था अध्यक्ष श्री कपूर जी कोठारी ने संस्था की तीन वर्षो की गतिविधियो को सक्षिप्त में पेश कर संस्था की बागडोर ब्यावर के उत्साही कार्य-कर्त्ता भाई श्री प्रकाश जी श्रीश्रीमाल को सौंपी। उसी समय सस्था के तीन वर्ष के कार्यकाल की झलक के रूप मे "स्मृति" स्मारिका का विमोचन श्री चम्पालाल जी जैन के द्वारा किया गया। सस्था से विदाई लेते हुए श्री कपूर कोठारी ने सस्था के नवीन पदाधिकारियो का स्वागत कर नव उत्साह एव उमग के साथ सस्था को गति-शील करने का आह्वान किया। साथ ही सघ प्रमुखों ने सस्था को जो सहयोग दिया उसके लिये आभार माना एव सघ प्रमुखों से सस्था को हमेशा मार्गदर्शन सहयोग एव आशीर्वाद मिलता रहे, ऐसी कामना की। इस अवसर पर नये पदाधिकारियो का चयन एव प्रकाशजी श्रीश्रीमाल का स्वागत भी किया गया।

पंचम वार्षिक रिपार्ट :

बम्बई अधिवेशन मे नियुक्त नवीन पदा-धिकारियों ने अनुभव की दृष्टि से नए होते हुए भी अपने अध्यक्ष श्री प्रकाशजी श्रीश्रीमाल के नेतृत्व में चिकारडा क्षेत्र मे बालको का एक धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित किया जिसका उद्घा-टन श्री समीरमल जी काठेड के मुख्य आतिथ्य मे हुआ। शिविर में अनेक गणमान्य महानुभावो के साथ सघ अध्यक्ष श्री चुन्नीलाल जी मेहता भी बालको के उत्साह को बढाने एव आशीर्वाद देने हेतु पधारे और शिविर से बहुत प्रभावित हुए। शिविर वस्तुत बहुत लाभदायक रहा। शिविर का समापन सस्था के पूर्व अध्यक्ष एव परामर्श दाता श्री कपूर जी कोठारी के मुख्य आतिथ्य मे सम्पन्न हुआ।

सस्था सगठन की दृष्टि से इस वर्ष नन्दुर-बार, मनमाड, ब्यावर एवं अजमेर मे बालक एवं बालिका मण्डली की स्थापना कर पाई है। संस्था द्वारा इसी वर्ष सुव्यवस्थित हिसाब-किताब की दृष्टि से बैंक मे अकाउन्ट भी खोला गया। सस्था का वार्षिक अधिवेशन जलगाव (महाराष्ट्र) मे श्री चम्पालाल जी जैन एव समाजसेवी मानव मुनिजी के मुख्य आतिथ्य मे सम्पन्न हुआ। जिसमे सस्था अध्यक्ष श्री प्रकाशजी श्री श्रीमाल एव विनोद जी लुणिया द्वारा सस्था की गति-विधियो को पेश किया गया एवं भाई श्री राजेश जी बोहरा द्वारा सस्था का वार्षिक बजट पेश किया गया।

जलगाव अधिवेशन के प्रस्तावो को मद्दे-नजर रखते हुए सस्था के कार्यकर्त्ता सस्था को गतिशील बनाये रखने के लिये निरन्तर प्रयास-रत हे। समाज के वर्तमान स्वरूप को बदलने हेतु सस्था समय-समय पर धार्मिक स्कूलो की स्थापना, बौद्धिक प्रतियोगिताओ एव धार्मिक शिविरों का आयोजन कर बालको मे धार्मिक एव नैतिक ज्ञान की अभिवृद्धि करने का प्रयास कर रही है।

आवश्यकता है समाज के प्रमुखो द्वारा इस फुलवाड़ी को सम्हालने, सवारने एव सजाने की। आशा ही नही पूर्ण विश्वास है कि यह सस्था सघ प्रमुखो के मार्गदर्शन एव आशीर्वादो से निरन्तर गतिशील होती रहेगी।

प्रकाश श्रीश्रीमाल
अध्यक्ष

विनोद लूणिया
मंत्री

श्री समता प्रचार संघ, उदयपुर

श्री समता प्रचार सघ, उदयपुर की स्थापना समता दर्शन प्रणेता धर्मपाल प्रतिबोधक, बाल ब्रह्मचारी, समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य-प्रवर १००८ श्री नानालाल जी म. सा. की सद्‌प्रेरणा से निम्न उद्देश्यो के लिये सन् १९७८ के १७ अक्टूबर को उदयपुर में प्रसिद्ध उद्योगपति श्रीमान् गणपतराज जी बोहरा के कर कमलों से हुई ।

संघ के उद्देश्य :

(१) शिविरो के माध्यम से स्वाध्यायी तैयार करना, उन्हे धार्मिक अध्ययन कराना। यह शिविर वर्ष मे ३ बार लगाए जाते है पर कभी-कभी अधिक भी लगाए जाते है ।

(२) पत्राचार पाठ्यक्रम द्वारा स्वाध्यायियों मे ज्ञान वृद्धि कराना ।

(३) समता का प्रचार-प्रसार करना ।

(४) पर्युषण पर्वाधिराज मे जहा सतसतियों के चातुर्मास का सुयोग नही बैठा हो वहां स्वाध्यायियो को धर्माराधन कराने हेतु नि·शुल्क भेजना ।

(५) बालक-बालिकाओ व युवा-युवतियो मे धर्म के प्रति जागृति हेतु विभिन्न प्रतियोगिताओ का आयोजन करना ।

(६) सत्-साहित्य प्रदान कराना ।

जब से इस सघ की स्थापना हुई तब से ही निरन्तर वृद्धि होकर सघ आगे बढ़ रहा है। हर वर्ष स्वाध्यायियो के प्रशिक्षण हेतु तीन शिविर लगाए जाते है, उनमे स्वाध्यायियों को पर्युषण सम्बन्धी साहित्य भी नि शुल्क वितरित किया जाता है । अब तक ३० शिविर लग चुके है ।

संघ के अब तक ९२४ सदस्य बन चुके है जिनमे ५० के लगभग महिला सदस्य भी है। इन सदस्यों में लॉ कॉलेज के प्रिन्सीपल, प्रोफेसर, प्रधान अध्यापक, अध्यापक, अध्यापिकाए सी ए, एडवोकेट, इन्जीनियर, उद्योगपति, अच्छे व्यवसायी, छात्र, छात्राएं विद्वान, त्यागी, तपस्वी भी हैं ।

सघ के सदस्यो मे से अनेक ने अपने त्याग-तप और स्वाध्याय से संघ का गौरव बढाया है, जिनमे से कुछ का प्रतीकात्मक उल्लेख करना उचित होगा । श्री उदयलाल जी जारोली लॉ कॉलेज नीमच, म प्र के प्राचार्य पद पर रहते हुए सघ सेवा देते रहे । उनकी धर्मपत्नी श्रीमती स्मृति रेखा भी संघ सदस्या हैं । अजमेर के श्री रतनलाल जी मांडोत स्वदेशी के उपासक, सरल व अनुशासन प्रिय तथा विद्वान स्वाध्यायी शिक्षक है ।

बड़ी सादडी निवासी श्री अशोक कुमारजी मुणोत ने मात्र २० वर्ष की वय मे स्वाध्याय के इस दुरूह पथ का वरण किया है, इस वर्ष सिलचर मे आपकी पर्युषण सेवा बहुत प्रभावशाली रही । मेणार निवासी श्री दिनेश कुमार जी जैन मात्र २३ वर्ष की उम्र मे १५ तक तपस्या कर चुके है और चाय तक नही पीते । श्री धनपत कुमार जी बम्ब, दुर्ग निवासी भी युवा-उत्साही

है । श्री शकरलालजी डूंगरवाल चपलाना (म.प्र.) निवासी अच्छे त्यागी व तपस्वी हैं, साधुता ग्रहण करने के भाव है । हमारे १६ स्त्री-पुरुष स्वाध्यायी दीक्षा ग्रहण कर चुके है तथा अनेक अभी भी इस पथ के पथिक बनने को उत्सुक है जिनमे श्री अशोक कुमार जी पामेचा सजीत (म. प्र.), मदनलाल जी सरुपरिया भदेसर, गुलाबचन्द जी भणावत कानोड, श्रीमती विजयादेवी जी सुराणा रायपुर के नाम उल्लेखनीय है ।

श्री अ भा. सा. जैन सघ के पूर्व अध्यक्ष श्री गणपतराज जी बोहरा, श्री पी. सी चौपडा और पूर्व मंत्री श्री भवरलाल जी कोठारी ने पर्युषण सेवा प्रदान करके संघ और समाज के समक्ष श्रेष्ठ आदर्श स्थापित किया है । श्री बोहरा जी का उदार अर्थ सहयोग और उनकी दृढधर्मिता अनुकरणीय है, इस वर्ष वे जावद पर्वाराधना हेतु गए थे । इसी बीच उनके दोहिते का निधन हो गया, पर वे सवत्सरी से पूर्व हिले भी नही । वे धन्य है । हमे ऐसे सदस्यो पर गर्व है ।

सघ के संयोजक और इसके कुशल शिल्पी श्री गणेशलाल जी बया ने सघ सेवा के साथ ही राजस्थान गो सेवा सघ के माध्यम से गो सेवा मे जबरदस्त सहयोग दिया । उज्जैन की श्रीमती सुगन देवी जी कोठारी ने भी वृद्ध होते हुए सघ और गो सेवा मे अपना सहयोग दिया है । युवा बन्धु श्री दिनेश-महेश नाहटा ने छत्तीसगढ क्षेत्र मे सामाजिक-धार्मिक जागृति लाने में अपूर्व सहयोग दिया है ।

श्री सज्जन सिहजी मेहता कानोड़, श्री सुजानमल जी मारू बडी सादडी, श्री मोतीलाल जी चण्डालिया इस सघ के स्तम्भ है । इनकी सेवा, कार्य क्षमता और समर्पण इस सघ के इतिहास मे गौरवपूर्वक सदा याद किया जायगा ।

संघ की रतलाम छत्तीसगढ, सवाईमाधोपुर और व्यावर मे चार सक्रिय शाखाए है, जिनमे छत्तीसगढ का कार्य सर्वाधिक सराहनीय है । सघ ने पूर्व मे धर्मपाल जैन छात्रावास मे धर्मपाल शिविर आयोजन और स्वाध्यायी प्रेषित कर सेवा दी है ।

सघ ने रजत-जयन्ती वर्ष के उपलक्ष मे २५० नए स्वाध्यायी बनाने व १०० स्थानो पर पर्युपणो में धर्म-ध्यान हेतु स्वाध्यायी भेजने के प्रतियोगिता पूर्वक प्रयास किए । सघ ने अब तक राजस्थान, मध्यप्रदेश, उडीसा, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल व आसाम में पर्युपण-पर्वाराधन हेतु नि:शुल्क स्वाध्यायी भेजे है । आगे नेपाल मे भी माग प्राप्त होने की सभावना है ।

घोर तपस्वी श्री पंकज मुनि जी, धीरज मुनि जी व राजेश मुनि जी भी सघ के सदस्य रह चुके है ।

सन् १९७९ से सघ द्वारा पर्युषणो मे निम्नानुसार सेवा दी जा रही है ।

वर्ष	स्थान	स्वाध्यायी सख्या
१९७९	१३	३०
१९८०	३८	७७
१९८१	३६	७७
१९८२	४७	९०
१९८३	५५	१०९
१९८४	६४	११२
१९८५	६५	१३०
१९८६	६७	१३९
	३८५	७६४

रजत - जयन्ती वर्प के कार्यक्रम से प्रभावित होकर श्री माणकचन्द जी साड, इन्दौर ने अपनी ओर से इन्दौर शिविर लगाने का

श्रीमद् जवाहराचार्य स्मृति व्याख्यानमाला

□ डॉ. नरेन्द्र भानावत, संयोजक

श्रीमद् जवाहराचार्य भारत की आध्यात्मिक क्राति और सामाजिक संचेतना के सगम रूप महान् अनुशास्ता थे। आपका जन्म आज से ११२ वर्ष पूर्व वि स १९३२ मे कार्तिक शुक्ला चतुर्थी को थादला मध्यप्रदेश मे हुआ था। १६ वर्ष की अवस्था मे आपने जैन भागवती दीक्षा अंगीकृत की और संवत् १९७७ मे आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। स २००० मे आषाढ शुक्ला अष्टमी को भीनासर (बीकानेर) मे आपका स्वर्गवास हुआ।

आचार्य श्री का व्यक्तित्व बडा आकर्षक और प्रभावशाली था। आपकी दृष्टि बडी उदार तथा विचार विश्व मैत्री भाव व स्वातन्त्र्य चेतना से ओत-प्रोत थे। आपने भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के सत्याग्रह, अहिसक प्रतिरोध, खादी धारण, गोपालन, अछूतोद्धार, व्यसनमुक्ति जैसे रचनात्मक कार्यक्रमो मे सहयोग पूर्ण भूमिका निभाने की जनमानस को प्रेरणा दी और दहेज तथा बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, मृत्युभोज, सूद-खोरी जैसी कुप्रथाओ के खिलाफ लोकमानस को जागृत किया। लोकमान्य तिलक राष्ट्रपिता महात्मा गाधी, पडित नेहरू, सरदार पटेल जैसे राष्ट्रीय नेता आपको श्रद्धा व सम्मान की दृष्टि से देखते थे तथा आपसे विचार-विमर्श करने मे प्रसन्नता अनुभव करते थे।

आप प्रखर वक्ता और असाधारण वाग्मी महापुरुष थे। जवाहर किरणावली नाम से ३५ भागो मे प्रकाशित आपका प्रेरणादायी विशाल प्रवचन साहित्य विश्व की अमूल्य निधि है। वह आज शक्ति और सस्कार निर्माण का जीवन्त साहित्य है। इस साहित्य से प्रेरणा पाकर हजारो लोगो ने जीवन का उत्थान किया है।

ऐसे महान् ज्योतिर्धर आचार्य का जन्म शताब्दी महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित किया गया। इस महोत्सव के अन्तर्गत कई रचनात्मक एव ऐतिहासिक कार्यक्रमो का शुभारम्भ किया गया। इन कार्यक्रमो मे एक प्रमुख कार्यक्रम है—श्रीमद् जवाहराचार्य स्मृनि व्याख्यान माला।' इस व्याख्यान माला का प्रमुख उद्देश्य भारतीय धर्म, दर्शन, इतिहास, सस्कृति के परिप्रेक्ष्य मे जैन दर्शन और जैन विद्या के विचार तत्त्व को जैन-जैनेतर बौद्धिक वर्ग तक पहुचाना। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये जहा तक सम्भव हो, इस व्याख्यान माला का आयोजन इस ढग से किया जाता है कि इसमे अधिकाधिक ऐसे लोग सम्मिलित हो सके जो ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओ और सार्वजनिक जीवन के सामाजिक, धार्मिक एव नैतिक कार्य क्षेत्र से जुडे हुए हो।

अब तक इस व्याख्यान माला के अन्तर्गत देश के विभिन्न स्थानों पर जो व्याख्यान आयोजित किये जा चुके हैं, उनका सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

१. प्रथम व्याख्यान—श्रीमद् जवाहराचार्य जन्म शताब्दी वर्ष मे सघ द्वारा उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर मे जैन विद्या एव प्राकृत विभाग स्थापित करने का निर्णय लिया गया। इस निर्णय को मूर्त रूप देने के लिये २७ फरवरी, १९७७ को उदयपुर विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डॉ लाम्बा को श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ की ओर से एक विशेष समारोह मे २ लाख रुपयो की राशि का ड्राफ्ट प्रदान किया गया। इसी अवसर पर क्रात द्रष्टा पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा की स्मृति व्याख्यान माला का शुभारम्भ हुआ। इसका प्रथम व्याख्यान 'आत्मधर्मी जवाहराचार्य की राष्ट्रधर्मी भूमिका' विषय पर राजस्थान विश्व विद्यालय, जयपुर के हिन्दी विभाग के प्राध्यापक एवं 'जिनवाणी' के सपादक डॉ नरेन्द्र भानावत ने दिया और इस समारोह की अध्यक्षता राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष प्रसिद्ध शिक्षाविद् श्री केशरीलालजी वोरदिया ने की।

२. द्वितीय व्याख्यान—इस व्याख्यान माला का द्वितीय व्याख्यान २१ जनवरी, १९७८ को जयपुर के रवीन्द्र मच पर आयोजित किया गया। व्याख्यानदाता थे—उदयपुर विश्वविद्यालय के सस्कृत विभाग के आचार्य एव अध्यक्ष डॉक्टर रामचन्द्र द्विवेद्वी। व्याख्यान का विषय था—'भारतीय दर्शन मे मोक्ष का स्वरूप : जैन दर्शन के विशेष सन्दर्भ मे' इस समारोह की अध्यक्षता राज विश्व विद्यालय के कुलपति एव राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधिपति श्री वेदपाल त्यागी ने की।

३. तृतीय व्याख्यान—इस शृंखला का तृतीय व्याख्यान २४ दिसम्बर, १९७८ को कलकत्ता मे जैन विद्यालय के सभागार मे आयोजित किया गया। व्याख्यानदाता थे—जबलपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी के प्रो. डॉ. महावीर सरण जैन। व्याख्यान का विषय था—'भारतीय धर्म-दर्शन मे अहिंसा का स्वरूप : जैन दर्शन के सन्दर्भ मे' इसकी अध्यक्षता कलकत्ता विश्व विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो. कल्याणमल लोढा ने की।

४. चतुर्थ व्याख्यान—यह व्याख्यान १० सितम्बर, १९८१ को मद्रास मे आयोजित किया गया। व्याख्यानदाता थे, भारत के ख्याति प्राप्त प्रतिनिधि कवि एव 'गाधी मार्ग' के सम्पादक श्री भवानी प्रसाद मिश्र। व्याख्यान का विषय था—'समग्र आदमी' इस समारोह की अध्यक्षता मद्रास के पुलिस महानिरीक्षक श्री एस. श्रीपाल ने की।

५. पचम व्याख्यान—इस व्याख्यान का आयोजन आचार्य श्री नानेश के अहमदाबाद चातुर्मास मे संघ के अधिवेशन मे १० अक्टूबर, १९८२ को किया गया। व्याख्यान दाता थे—प्रसिद्ध साहित्यकार एवं आकाशवाणी मद्रास के हिन्दी कार्यक्रम अधिकारी डॉ. इन्दरराज बैद। व्याख्यान का विषय था—'धर्म और हम' इस समारोह की अध्यक्षता गुजरात के प्रमुख विचारक श्री यशोधर भाई मेहता ने की। श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् जयपुर द्वारा 'श्री चुन्नीलाल मेहता चेरिटेबल ट्रस्ट' बम्बई के अर्थ सौजन्य से परिषद् की ट्रैक्ट योजना के अन्तर्गत पुस्तक स ७ के रूप मे 'धर्म और हम' नाम से यह व्याख्यान प्रकाशित किया गया है।

६. षष्ठम व्याख्यान - इस व्याख्यान का आयोजन जैन विद्यालय के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव पर कलकत्ता मे दिनाक १४ जनवरी, १९८४ को किया गया। व्याख्यान दाता थे पूर्व सांसद एव भागलपुर विश्वविद्यालय के गाधी दर्शन विभाग के अध्यक्ष डॉक्टर रामजी सिंह। व्याख्यान का विषय था—'जैन धर्म की प्रासगिकता'। इस समारोह की अध्यक्षता मध्यप्रदेश के भूतपूर्व मत्री एव प्रबुद्ध

विचारक श्री सौभाग्यमल जैन, शुजालपुर ने की। मुख्य अतिथि थे, कलकत्ता विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो कल्याणमल लोढ़ा। इस अवसर पर सघ की ओर से श्री प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार योजना का द्वितीय साहित्य पुरस्कार भी प्रदान किया गया।

७. सप्तम व्याख्यान—यह व्याख्यान १२ जनवरी, १९८६ को रतलाम मे आयोजित किया गया। व्याख्यानदाता थे 'तीर्थंकर' के सम्पादक एव प्रबुद्ध विचारक-लेखक डॉ. नेमीचन्द जैन, इन्दौर। व्याख्यान का विषय था—'जैन धर्म : २१ वी सदी'। इस समारोह की अध्यक्षता अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के अध्यक्ष श्री चुन्नीलाल मेहता, बम्बई ने की। मुख्य अतिथि थे उज्जैन के सेशन एव जिला सत्र न्यायाधीश श्री मुरारीलाल तिवारी।

८. अष्टम व्याख्यान—यह व्याख्यान आचार्य श्री नानेश के जलगांव चातुर्मास के समापन पर १५ नवम्बर, १९८६ को आयोजित किया गया। व्याख्यानदाता थे राजस्थान विश्वविद्यालय के कला सकाय के अधिष्ठाता डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद शर्मा। व्याख्यान का विषय था—'जीवन, साहित्य और संस्कृति'। इस समारोह की अध्यक्षता की अशोक नगर दिल्ली जैन सघ के अध्यक्ष एवं प्रमुख विचारक श्री रिखबचन्द जैन ने।

९. नवम व्याख्यान—इस व्याख्यान का आयोजन टाउन हाल नगर परिषद् उदयपुर मे १० जनवरी, १९८७ को किया गया। व्याख्यानदाता थे पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध सस्थान वाराणसी के निदेशक डॉ. सागरमल जैन। व्याख्यान का विषय था—'जैन धर्म के परिप्रेक्ष्य मे धार्मिक सहिष्णुता और राष्ट्रीय एकता'। समारोह की अध्यक्षता सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर के कुलपति डॉ के एन. नाग ने की। मुख्य अतिथि थे राजस्थान के ऊर्जा एव परिवहन मत्री श्री हीरालाल देवपुरा। इस अवसर पर सघ की ओर से श्री प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार योजना का तृतीय साहित्य पुरस्कार भी प्रदान किया गया।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस व्याख्यान माला का फलक काफी व्यापक रहा है। व्याख्यान के विषय शाश्वत जीवन मूल्यो के साथ-साथ सामाजिक सन्दर्भों से भी जुडे हुए रहे है। व्याख्यानदाता अपने-अपने क्षेत्रो के अधिकारी विद्वान् और प्रबुद्ध विचारक है। इस व्याख्यान माला मे सामान्य रूप से मानवीय मूल्यो और विशेष रूप से जैन धर्म, दर्शन के विचार तत्व को सार्वजनिक रूप से प्रसारित करने मे सहायता मिली है और सैद्धान्तिक स्तर पर चिन्तन, मनन और मुक्त वातावरण बना है।

उक्त सभी व्याख्यानो का सयोजन व्याख्यानमाला के सयोजक डॉ. नरेन्द्र भानावत ने किया।

स्व. श्री प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार

बीकानेर के कला-संस्कृति और शिक्षा प्रेमी रामपुरिया परिवार मे जन्मे श्री और सरस्वती के वरद पुत्र श्रीमाणकचन्दजी रामपुरिया कलकत्ता निवासी सुप्रसिद्ध साहित्यकार और हिंदी के जाने-माने विद्वान् हैं। आपके इकलौते होनहार २२ वर्षीय युवा पुत्र श्री प्रदीप कुमारजी रामपुरिया का दात की एक साधारण शल्य क्रिया की अवधि मे देहावसान हो गया। अभी श्री प्रदीप कुमार के विवाह को दो वर्ष ही बीते थे। उनके असमय काल कवलित हो जाने से रामपुरिया परिवार पर तो अनभ्र वज्रपात ही हो गया। अ गडाईया लेते यौवन का वसन्तोत्सव सहसा ही अवसान को प्राप्त हो गया, छोड गया अपने पीछे एक नीरव करुण क्रन्दन। प्रतिभावान, होनहार और परिवार तथा समाज की आशा—आकाक्षाओ का सूर्य अरुणोदय काल मे ही अस्तगत हो गया।

कलामर्मज्ञ, साहित्य को समर्पित पिता श्री माणकचन्दजी रामपुरिया ने पुत्र की स्मृति मे अपने रक्त में डुबो-डुबोकर, 'स्मृति रेखा' काव्य ग्रन्थ के द्वारा, अन्तर के अथाह स्नेह सागर को, मर्मान्तिक वेदना को, समाज—जीवन हेतु समर्पित किया।

'स्मृति रेखा' लिखकर भी व्याकुल प्राणत्राण न पा सके थे। इन्ही दिनो कलकत्ता मे श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ की कार्यसमिति बैठक आयोजित थी। श्री माणकचन्दजी ने इस बैठक मे अपने प्राणप्रिय पुत्र की स्मृति मे साहित्य पुरस्कार स्थापित करने का मानस अभिव्यक्त किया। श्री अ भा. साधुमार्गी जैन सघ की आगामी अहमदाबाद बैठक में १८-१-८० को श्री रामपुरियाजी के संकल्प ने मूर्त्त रूप लिया। सघ योजनाओ के निपुण शिल्पी श्री सरदारमलजी कांकरिया के प्रोत्साहन और परामर्श से श्री रामपुरियाजी ने अपने स्वर्गीय पुत्र की स्मृति मे २१०००) की स्थायी निधि से प्रतिवर्ष जैन साहित्य के सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ पर **स्व. श्री प्रदीपकुमार** रामपुरिया स्मृति पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा की। सघ ने समता भवन, दांता जिला चित्तौडगढ मे आयोजित अपनी कार्यसमिति बैठक मे इस घोषणा को मूर्त्त रूप प्रदान करने की योजना बनाई और प्रतिवर्ष २१००) रु का पुरस्कार देने का निश्चय किया।

अहमदाबाद मे समता विभूति आचार्य श्री नानेश के सन् १९८२ के चातुर्मास में स्व प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार का प्रथम आयोजन स्वय मे ऐसा भव्य और गरिमामय था कि वह भारत के साहित्य जगत मे एक चिरस्मरणीय स्वर्णिम अध्याय बन गया। जयपुर के शिक्षक श्री कन्हैयालालजी लोढा को उनकी कृति 'विज्ञान और मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य मे जैन धर्म और दर्शन' पर प्रदान किया गया। रवीन्द्र नाट्य गृह के भव्य सभा कक्ष मे गुजरात विश्व विद्यालय के उपकुलपति के कर—कमलो द्वारा श्री लोढा को यह प्रशस्त सम्मान राशि भेट की गई। समारोह की अध्यक्षता देश के

जाने-माने जैन विद्वान् एवं प्रोफेसर श्री दलसुख भाई मालवणिया ने की। इस अवसर पर देश के जाने-माने विद्वानो का वहां मेला-सा लगा था। सर्वश्री अम्बालाल नागर, रतुभाई देसाई,कुमारपाल जैसे विशिष्ट विद्वान और श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ के प्रमुख व सदस्य प्रभृति उपस्थित थे। राशि प्रदान से ठीक पूर्व विद्वज्जनो के सकेत को मान देते हुए तत्कालीन संघ अध्यक्ष श्री जुगराज जी सेठिया ने पुरस्कार राशि को द्विगुणित करते हुए २१००) के स्थान पर ४२००) रुपये का पुरस्कार भेंट किया। इस गरिमामय समारोह का सफल सयोजन श्री भूपराजजी जैन ने किया।

राशि वृद्धि—संघ कार्य समिति की पूना बैठक मे डॉ. श्री नरेन्द्रजी भानावत ने मौलिक स्रष्टा श्री माणकचन्दजी रामपुरिया की साहित्य सेवाओ का उल्लेख करते हुए कहा कि उनकी रचनाओ पर डेजर्टेसन लिखा जा चुका है और पुरस्कार स्थापित करते समय उनकी आकाक्षा थी कि इसके माध्यम मे साहित्यिक परिवेश का विस्तार किया जाय। अत इस बार हम रचनात्मक साहित्य पर पुरस्कार दे। श्री भानावत का यह भी मत था कि पुरस्कृत रचना ६० प्रतिशत न्यूनतम अंक प्राप्त करे। सदन ने दोनो सुझावों को स्वीकार किया। इसी अवसर पर श्रीसरदारमलजी कांकरिया ने सदन की हर्षध्वनि के बीच श्री माणकचन्दजी रामपुरिया की यह घोषणा सदन मे दुहराई कि भविष्य मे पुरस्कार ५१००) रुपये का दिया जावेगा और इसके लिए २१००० की स्थायी जमा को बढाकर ५१०००) रु. की राशि कर दिया गया है। सदन ने श्री रामपुरियाजी की उदारता के प्रति कृतज्ञता और साधुवाद ज्ञापित किया।

कलकत्ता मे सन् १९८४ की १४ जनवरी को स्वय श्री माणकचन्दजी रामपुरिया के सान्निध्य में कलकत्ता विश्व विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष प्रो. कल्याणमलजी लोढा की अध्यक्षता मे श्री जैन विद्यालय के सभागार मे आयोजित भव्य समारोह मे श्री मिश्रीलाल जी जैन गुना (म. प्र.) को उनकी काव्यकृति गोम्मटेश्वर तथा कहानी जल की खोज : अमृत की प्राप्ति पर द्वितीय स्व प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति पुरस्कार प्रदान किया गया। इस समारोह मे कलकत्ता के विद्वज्जन, प्रतिष्ठित व्यक्ति और श्री अ भा. साधुमार्गी जैन सघ के प्रमुख व सदस्य उपस्थित थे। पुन कुशल सयोजन श्री भूपराजजी जैन ने किया।

उदारता बढ़ती गई—उदारमना साहित्य मर्मज्ञ श्री माणकचन्दजी रामपुरिया की उदारता बढती ही गई और श्री प्रतापचन्दजी ढढा की कोटडी बीकानेर मे आयोजित सघ के विशेष अधिवेशन मे सघ मंत्री श्री पीरदानजी पारख ने सदन को फिर से हर्षित करने वाला यह शुभ समाचार सुनाया कि उदारमना, यशस्वी श्री रामपुरियाजी ने प्रदीप स्मृति पुरस्कार की राशि ५१०० से बढ़ाकर ७१०० कर दी है। अब ७१०० रुपये की पुरस्कार राशि दी जा सकेगी। श्री पारख ने इस स्वत.स्फूर्त उदारता के लिए श्री रामपुरिया जी का अभिनन्दन करते हुए यह भी आग्रह किया कि राशि बढाकर ७५००० कर दी जावे तो ७५०० रुपये का पुरस्कार दिया जा सकेगा। क्षणार्ध मे श्री रामपुरियाजी ने श्री पारख के सुझाव को स्वीकार करते हुए निधि ७५००० करने की स्वीकृति दे दी।

उदयपुर मे तीसरा प्र. रा. स्मृति पुरस्कार समारोह आयोजित किया गया। संघ कार्यसमिति की बैठक के अवसर पर नगर परिषद के टाउन हॉल मे श्री मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर के कुलपति श्री के.एन. नाग की अध्यक्षता

और प्रमुख अतिथि राजस्थान के ऊर्जा मत्री श्री हीरालालजी देवपुरा के सान्निध्य मे प्राकृत विद्या और पर्यावरण गोष्ठी मे एकत्र देशभर से आए विद्वानो की उपस्थिति मे तृतीय पुरस्कार श्री सुरेश सरल जबलपुर की कृति 'श्रावकाचार की सहज कथाए' तथा श्री मिश्रीलालजी जैन एडवोकेट गुना को उनकी कृति प्रीतकर पर प्रदान किया गया।

संघ रजत-जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में इस वर्ष यह पुरस्कार १००००/– रुपये की राशि का दिया जावेगा। इस पुरस्कार की गुणवत्ता और गरिमा से सघगौरव सतत अभिवर्धित है। प्रसन्नता की बात है कि श्री माणकचन्दजी रामपुरिया ने साहित्य पुरस्कार की ध्रुव निधि को ७५०००) रु से बढाकर एक लाख रु. करने की स्वीकृति प्रदान कर दी है। हार्दिक साधुवाद।

धार्मिक बनने की नहीं, ख्यापित करने की व्यग्रता

"सोही उज्जुयभूयस्स धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई"—सरल तथा पवित्र मे धर्म वास करता है। प्राय मनुष्य शरीर व वस्त्रो की शुद्धि को अत्यधिक महत्त्व देता है, पर मानसिक मलिनता से भरा रहता है। उपासना करते समय वह मलिनता जब-तब बाधा उपस्थित करती रहती है। पारस्परिक व्यवहार मे भी वह छद्म विश्वासघात तथा स्वैराचार के रूप मे व्यक्त होती रहती है। इसलिए व्यक्ति स्वय को धर्मात्मा बतलाने का उपक्रम करता है किन्तु यथार्थता में वह धर्मात्मा होता नही। धार्मिक स्वय को किसी भी परिस्थिति मे धार्मिक ख्यापित करने का प्रयत्न नही करता। उसका तो व्यवहार ही उसकी सूचना दे देता है। जब से धार्मिको मे धार्मिक बनने का नही, ख्यापित करने की व्यग्रता हो गई, तभी से उनका जीवन व्यवहार धर्म से कट गया।

मानसिक मलिनता जितनी अधिक बढती है, परिणामो की वह सदोषता सम्मुखीन को भी अवश्य प्रभावित करती है। मैत्री मे घुले रहने वाले दो हृदयो के बीच तब स्वत दुराव तथा खीचाव आरम्भ हो जाता है। मधुर सम्बन्ध टूट जाते है और विरोध का आविर्भाव हो जाता है। धर्म को प्रधानता देकर चलने वाले दो सम्प्रदायो के बीच की दूरी कम होनी चाहिए थी, पर वह खाई प्रतिदिन बढती हुई दृष्टिगत हो रही है। कारण स्पष्ट है सम्प्रदायवादियो ने धर्म की जितनी अवहेलना की है, अन्य किसी व्यक्ति ने नही की। दो विरोधी विचारधारा के राजनयिक, जो कूटनीति मे ही प्रतिक्षण घुले रहते है। परस्पर एक स्थान पर मिलकर चर्चाए कर सकते है पर साम्प्रदायिक नही। तात्पर्य है धर्म का मुखौटा लगाने वालो ने ही धर्म की सबसे बडी अवहेलना की है। वे एक दूसरे के निकट नही बैठ सकते। उन्होने आत्मा की सरलता तथा पवित्रता को कोई महत्त्व नही दिया।

जैन विद्या एवं प्राकृत विभाग

सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर

△ डा० प्रेमसुमन जैन, विभागाध्यक्ष

स्थापना :

श्री अ० भा० साधुमार्गी जैन सघ, बीकानेर एवं राजस्थान सरकार के सहयोग से ज्योतिर्धर श्रीमद् जवाहराचार्य शताब्दी वर्ष १९७७ मे जैनविद्या एवं प्राकृत विभाग की स्थापना सुखाडिया विश्वविद्यालय मे की गई थी। उदारमना श्रीगणपतराजजी बोहरा पीपलियाकलां और सुश्री शिक्षा सोसाइटी नोखा के अर्थ सहयोग से फरवरी, १९७८ मे इस विभाग का शुभारम्भ हुआ। विभाग मे डॉ. प्रेमसुमन जैन की सहआचार्य एव अध्यक्ष के पद पर नियुक्ति हुई। विश्वविद्यालय प्रशासन, राज्य सरकार एव समाज की विभिन्न सस्थाओ और व्यक्तियो का सहयोग इस विभाग को प्राप्त है। प्रारभ के ५ वर्ष तक एक प्राकृत प्राध्यापक का व्यय सघ द्वारा वहन किया गया।

उद्देश्य और प्रवृत्तियां :

सस्थापक अनुदाता एव विश्वविद्यालय के साथ हुए अनुबध मे विभाग के विभिन्न उद्देश्यो को स्पष्ट किया गया है। उनमे प्राकृत एव जैन विद्या के विभिन्न स्तरो पर शिक्षण, अध्ययन, सम्पादन, शोध, सगोष्ठो, व्याख्यान, प्रकाशन आदि कार्यो को आयोजित करने की प्रमुखता है। इसकी प्रमुख प्रवृत्तिया इस प्रकार है

(क) **शिक्षण**:–जैन विद्या एव प्राकृत के शिक्षण के क्षेत्र मे बी. ए, एम ए, एम फिल, डिप्लोमा एव सर्टिफिकेट स्तर के पाठ्यक्रमो को सचालित किया गया है। इन पाठ्यक्रमो मे अब तक लगभग १०० विद्यार्थियो ने सफलता पूर्वक शिक्षण प्राप्त किया है। पाण्डुलिपि-सम्पादन का प्रशिक्षण भी छात्रो को प्रदान किया जाता है।

(ख) **शोधकार्यः**–जैनविद्या एव प्राकृत मे तीन शोध छात्रो ने विभागाध्यक्ष के निर्देशन मे कार्य कर पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त कर ली है। ये तीनो शोध-कार्य प्राकृत ग्रथो एव जैनधर्म पर हुए है। पी एच डी के लिये चार शोध-छात्र विभागीय शोधकार्य मे सलग्न है। एम० फिल० पाठ्यक्रमो मे भी लघु शोध-प्रवन्ध प्रस्तुत किये गये है।

विभाग की शोध-योजनाओ को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, दिल्ली, एव समाज की अन्य अनुदाता सस्थाओ का सहयोग भी उपलब्ध है।

(ग) **संगोष्ठो, सम्मेलनो मे प्रतिनिधित्व :**

१–विभाग के स्टॉफ द्वारा अ भा. प्राच्य विद्या सम्मेलन, यू जी सी, जैन-विद्या सेमिनार, आई सी एच. आर सेमिनार, अन्तर्राष्ट्रीय जैन सम्मेलन, अन्तर्राष्ट्रीय बौद्ध एव राष्ट्रीय सस्कृति सम्मेलन दिल्ली, विश्व अहिसा सम्मेलन दिल्ली, विश्व-धर्म सम्मेलन, अमेरिका आदि लगभग २५ सम्मेलनो मे शोधपत्रो को प्रस्तुत कर प्रतिनिधित्व किया गया है।

२–विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के आर्थिक सहयोग से "राष्ट्रीय सस्कृति एव पर्यावरण सरक्षण मे जैन धर्म को भूमिका" विषय पर अ भा

संगोष्ठी का ८-११जनवरी, १९८७ को विभाग द्वारा आयोजन किया गया है। इस अवसर पर "जैन विद्या-स्मारिका" भी प्रकाशित हुई है।

(घ) विस्तार व्याख्यानमाला :

१-विभाग मे जैनविद्या के ख्यातिलब्ध विद्वानो के विस्तार-व्याख्यान आयोजित हुए है, जिनमे डा पी एस. जैनी अमेरिका), डा. सी. बी. त्रिपाठी (जर्मनी), डॉ. आर के. चन्द्रा (अहमदा-बाद), डा जी सी जैन (वाराणसी), डा. जी एन शर्मा (जयपुर), डा के सी. जैन (उज्जैन) आदि सम्मिलित है। विभाग के विभिन्न आयोजनो मे डा मोहनसिंह मेहता, डा. के एन नाग, दादा भाई वोर्दिया, श्री गणपतराज जी बोहरा, डा. के. सी सोगानी, डा. बी के लवाणिया, डा आर जी शर्मा "दिनेश" आदि प्रतिष्ठित महानुभावों ने भी अपने विचार व्यक्त किये है।

२-विभाग के स्टाफ द्वारा दिल्ली विश्व-विद्यालय, जैन विश्वभारती लाडनूं, मैसूर विश्व-द्यालय, कर्नाटक विश्वविद्यालय आदि स्थानो पर जनविद्या एवं प्राकृत विषय पर विशेष व्याख्यान दिये गये है। विभागाध्यक्ष द्वारा अमेरिका के ग्यारह जैन केन्द्रो पर जैनविद्या-पर व्याख्यान देकर जैनदर्शन का प्रचार-प्रसार किया गया है।

(ङ) शोध-पत्र एवं पुस्तको का प्रकाशन :

विभाग के स्टाफ द्वारा अब तक लगभग ५० शोध-पत्र प्रकाशित करवाये गये है तथा ५-६ पुस्तके विभिन्न सस्थानो से प्रकाशित कराई गई है।

(च) सन्दर्भ-कक्ष एवं पुस्तकालय :

विभाग मे जैनसाहित्य का एक समृद्ध पुस्तकालय स्थापित किया गया है, जिसमे विभिन्न संस्थाओ एव व्यक्तियो के अनुदान से प्राप्त अब तक लगभग ५००० ग्रथ उपलब्ध है। श्रीमती रमारानी जैन सन्दर्भ-कक्ष एव श्रीप्रेमराज गणपत-राज बोहरा सन्दर्भ-कक्ष के अतिरिक्त भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रदत्त जैनकला के ५० चित्र भी विभाग मे प्रदर्शित किये गये है।

(छ) छात्रवृत्ति एव आर्थिक सहयोग :

विभिन्न सस्थाओ एव व्यक्तियो के अनु-दान से प्राप्त व्याज द्वारा विश्वविद्यालय विभाग के विद्यार्थियो को यह सुविधा प्रदान करता है।

भावी योजनाए :

यह विभाग शिक्षण एव शोध-कार्य के अति-रिक्त जैनविद्या एव प्राकृत की विभिन्न शोध-योजनाओ को साधन प्राप्त होने पर सम्पन्न करना चाहता है।

जय गुरु नाना   जय गुरु नाना

नाना गुरु का है सदेश, समतामय हो सारा देश।
सादा जीवन उच्च विचार, नाना गुरु की जय जयकार।।
फूल खिलते है बहुत पर, सुगन्ध देता है कोई कोई।
पूजा करते है बहुत पर, पूजनीय होता है कोई कोई।।

आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान, उदयपुर : एक झलक

△ **फतहलाल हिंगर**, मन्त्री

आगम-अहिसा समता एव प्राकृत सस्थान की स्थापना, श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ द्वारा सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर मे जैन विद्या एव प्राकृत विभाग की स्थापना के बाद सस्कृति एवं साहित्य विकास की दृष्टि से उठाया गया एक दीर्घ दृष्टि सयुक्त वैचारिक एव महत्त्वपूर्ण कदम है । यह सस्था राणाप्रतापनगर स्टेशन के सामने सप्रति श्री गणेश जैन छात्रावास, उदयपुर के परिसर मे स्थित है ।

समता विभूति परमपूज्य आचार्य श्री नानालालजी म. सा. ने अपने सन् १९८१ के उदयपुर वर्षावास मे सम्यक् ज्ञान, दर्शन एव चारित्र की अभिवृद्धि हेतु मार्मिक उद्बोधन दिया, जिसका जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा जिसके फलस्वरूप विश्वविद्यालय के विद्वानो तथा उदयपुर श्री सघ के प्रयत्नो से एक योजना तैयार की गई । इस कार्य मे डा. कमलचन्द सौगानी अध्यक्ष दर्शन विभाग, सुखाडिया विश्वविद्यालय, श्री सरदारमलजी काकरिया कलकत्ता, स्व. श्री हिम्मतसिंह जी सरूपरिया-अध्यक्ष उदयपुर श्री सघ एव पूर्वाध्यक्ष एव मंत्री श्री फतहलालजी हिंगर ने सस्था की स्थापना एव योजना को मूर्त्त रूप देने मे अपनी मुख्य भूमिका निभायी । श्रीमान् गणपतराजजी बोहरा एव उदयपुर श्री सघ ने प्राथमिक रूप से एक-एक लाख रु की राशि ध्रुव फण्ड हेतु प्रदान कर आर्थिक सहयोग दिया । (इस राशि पर अर्जित मात्र व्याज का ही उपयोग सस्था की गतिविधियो के सचालन मे खर्च किया जा रहा है) इसी प्रकार श्री सु. शिक्षा सोसायटी, बीकानेर द्वारा भी प्रतिवर्ष संस्था सचालन हेतु रुपया पन्द्रह हजार (वार्षिक) की राशि प्रदान की जा रही है । इसके अतिरिक्त ५० से भी ज्यादा महानुभावो ने सस्था की सदस्यता स्वीकार की है । कतिपय महानुभावो ने संस्था के पुस्तकालय के लिये भी अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया है। सस्था का पुस्तकालय सप्रति प्रारभिक स्तर पर है । तथापि इसमे सभी विषयों पर साहित्य उपलब्ध है । जिसमे पाडुलिपिया, प्राचीनग्रन्थ-जैन साहित्य, इतिहास, प्राकृत कोष एवं आगम साहित्य की प्रमुखता है । पुस्तकालय का उपयोग शोधकार्य मे किया जा रहा है । इसे अनूठा रूप देने की योजना है । जैन दर्शन एव धर्म की प्रमुख पत्र पत्रिकाए सस्थान मे मगाई जा रही है जिनका उपयोग भी शोधकर्ता अपने कार्य हेतु करते है ।

उद्देश्य—संस्था के मुख्य उद्देश्यो का सक्षिप्त विवरण यहां देना सामयिक होगा ।

(१) आगम, अहिंसा-समता दर्शन एव प्राकृत, सस्कृत, हिन्दी आदि भाषाओ के साहित्य का अध्ययन, शिक्षण एवं अनुसंधान करना और इन विषयों के विद्वान तैयार करना ।

(२) आगम विशेषज्ञ तैयार करना एव जैन साहित्य को आधुनिक शैली मे सम्पादित कर प्रकाशित करवाना ।

(३) सस्थान के पुस्तकालय को विभिन्न प्रकार के साहित्य एवं आधुनिक उपकरणो से समृद्ध करना ।

(४) प्राकृत परीक्षाओं मे स्वय पाठी रूप से बैठने वाले विद्यार्थियो को अध्ययन मे सुविधाए प्रदान करना, कराना ।

(५) जैन पुराण, दर्शन, न्याय, आचार और इतिहास पर मौलिक सस्करण तैयार करना ।

(६) दुर्लभ पुस्तको एवं महत्त्वपूर्ण ग्रन्थो की पाण्डुलिपियो की माइक्रो फिल्म वनवाकर सस्थान मे उपलब्ध करवाना ।

(७) जैन विषयो से सम्बन्धित शोध प्रबन्धो को प्रकाशित करना, जैन विषयो पर शोध करने वाले छात्रो को सुविधाएं प्रदान करना एव सस्थान की पत्रिका का प्रकाशन करना ।

(८) समय-समय पर जैन विद्या पर सगोष्ठिया, भाषण, समारोह आदि आयोजित करना ।

संस्थान की कार्य प्रणाली : एक संचालक मण्डल संस्थान के कार्य को दिशा प्रदान करता है एव सस्थान को विश्व विद्यालय अनुदान आयोग से मान्यता प्राप्त कराने हेतु प्रयत्नशील है । सस्था-राजस्थान सोसायटीज रजि. एक्ट १९५८ के अन्तर्गत पंजीकृत है एवं संस्था को अनुदान रूप मे दी गई धनराशि पर आयकर अधिनियम की धारा ८० जी १२ ए के अन्तर्गत छूट प्राप्त है ।

प्रगति : संस्था का कार्य विधिवत् १ जनवरी, १९८३ से प्रारंभ किया गया । चार वर्ष की अल्पावधि मे निम्न कार्य सपादित किया गया है ।

(१) जैन धर्म, दर्शन, साहित्य, कला भाषा सस्कृति एवं इनके अन्य धर्मों के साथ तुलनात्मक अध्ययन पर ५० लेक्चर तैयार किये गये जो पत्राचार के माध्यम से जन सामान्य को जैन धर्म-दर्शन की सक्षिप्त जानकारी प्रदान करते हैं ।

(२) प. पू आचार्य श्री नानालालजी महाराज साहब के निर्देशन मे विद्वद्वर्य प ज्ञानमुनिजी द्वारा सपादित अन्तकृद्दशाग सूत्र की पाण्डुलिपि प्राप्त कर इस ग्रन्थ को जावपूर्ति, टिप्पण एव पारिभाषिक शब्दो द्वारा सयोजित किया जाकर पुस्तकाकार एव पत्राकार रूप मे उदयपुर मे ही छपवाकर श्री अ भा. साधुमार्गी जैन संघ द्वारा प्रकाशित किया गया है ।

(३) इसी प्रकार भगवती सूत्र प्रथम भाग को (शतक एक-दो) पाठान्तर, जावपूर्ति एव पू आचार्य प्रवर के सारगर्भित विवेचन-सहित सयोजित कर रतलाम मे सघ द्वारा छपवाया गया है ।

(४) भगवती सूत्र द्वितीय भाग (शतक तीन, चार, पांच छ.) एव तृतीय भाग (शतक सात, आठ, एव नौ) मूल अनुवाद पाठान्तर जावपूर्ति एव पू. आचार्य प्रवर के विवेचन सहित तैयार किये जा चुके हैं ।

उक्त सभी ग्रन्थो का सम्पादन कार्य विद्वद्वर्य प. श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. ने किया है एव पाण्डुलिपियां श्री गणेश जैन ज्ञान भडार रतलाम से प्राप्त हुई ।

(५) आचाराग सूत्र पर (प्रथम श्रुत स्कन्ध) मूल, पाठान्तर, जावपूर्ति युक्त कार्य पूर्ण किया जा चुका है ।

(६) उपासक दशांग एव ज्ञाताधर्म कथा पर मूल भावार्थ, टिप्पण, जावपूर्ति एव पारिभाषिक शब्दो द्वारा सयोजन का कार्य प्रगति पर हे ।

डा. सागरमलजी जैन, पी. वी. रिसर्च इन्स्टीट्यूट वाराणसी सस्था के मानद निदेशक (१ जनवरी १९८७ से) डा. सुभाप कोठारी शोध अधिकारी एवं श्री सुरेश शिशोदिया, एम. ए. (प्राकृत) शोध सहायक के पद पर कार्यरत है ।

शैक्षिक योगदान :

(१) सस्थान के विद्वान् समय-समय पर आयोजित विद्वत् सगोष्ठियों मे क्षेत्रीय, राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भाग लेते रहे है ।

(२) सस्थान द्वारा रजत जयन्ती वर्ष कार्यक्रम के अन्तर्गत जनवरी, १९८७ के दिन अहिंसा–समता सगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमे जैन विद्या के विभिन्न प्रान्तो से प्रख्यात ४० विद्वानो ने भाग लिया । इस अवसर पर अहिंसा-समता सम्बन्धित कई शोध लेख पढे गये । इनका शीघ्र प्रकाशन कराने की योजना है ।

(३) सस्थान के विद्वानो के देश-विदेश की पत्र-पत्रिकाओं मे अनेक शोधात्मक लेख प्रकाशित हुए हैं । एव होते रहते है ।

(४) अहिंसा-समता सगोष्ठी मे हमारे कार्यकर्त्ता क्रमशः डा. सुभाप कोठारी ने मध्य-युगोन श्रावकाचार व राष्ट्रीय कर्त्तव्य एवं श्री सुरेश शिशोदिया ने हरिभद्र के ग्रन्थो मे वर्णित दार्शनिक तत्व पर शोध लेख पढे, जिनकी प्रशंसा की गई ।

(५) प्राकृत व्याकरण के सूत्र अपने आप मे क्लिष्ट होते है इसी कारण सूत्रो को रटने की पद्धति बनी हुई है । इन सूत्रो को आधुनिक वैज्ञानिक शैली से सस्था न दोनो कार्यकर्त्ताओ को पढ़ाने का कार्य सचालक मडल के सदस्य डा कमलचन्द सोगानी बहुत ही रुचिपूर्वक कर रहे है ।

प्राकृत व्याकरण का इस शैली से अध्ययन करने का लाभ सस्था मे चल रहे शोध कार्य संपादन एव अनुवाद कार्य मे अधिक मिलेगा ।

निरीक्षण :

सस्थान के कार्यकाल में कई विशिष्ट व्यक्तियो ने सस्थान का निरीक्षण कर कार्य के प्रति सतोष व्यक्त किया है जिनमे डा दरबारीलाल कोठिया, प्रोफेसर विलास सागवे कोल्हापुर, डा. दामोदर शास्त्री दिल्ली, डा. दयानन्द भार्गव जोधपुर, डा गोकुलचन्द जैन वाराणसी, डा. के. आर. चन्द्रा अहमदाबाद, डा. एल सी जैन जबलपुर, डा. नरेन्द्र भानावत जयपुर, श्री चुन्नी-

लाल मेहता बम्बई, श्री सरदारमल काकरिया कलकत्ता, म विनयसागर जयपुर, श्री भंवरलाल कोठारी बीकानेर, पीरदान पारख अहमदाबाद, पण्डित कन्हैयालाल दक,डा. देव कोठारी, डा आर. पी भटनागर उदयपुर मुख्य हैं ।

संस्था का निजी भवन :

विकास-रत सस्था के अपने निजी भवन की आवश्यकता को ध्यान मे लेते हुए ११ जनवरी, १९८७ को श्रीमान् चन्दनमलजी सुखानी कल्कत्ता के कर कमलो द्वारा शिलान्यास कराया जा कर योजना को मूर्त्त रूप प्रदान किया जा चुका है । श्री अ. भा सा. जैन संघ के अध्यक्ष श्रीमान् चुन्नीलालजी मेहता, पू. अध्यक्ष श्री गणपतराजजी बोहरा, श्री कन्हैयालालजी तालेरा पूना, एव श्री चन्दनमलजी सुखानी कलकत्ता ने भवन निर्माण योजना मे आर्थिक सहयोग प्रदान करने की घोषणा की उसके लिये हार्दिक आभार ।

संस्था मे कार्य प्रतिदिन बढता जा रहा है । इसको शीघ्र पूरा करने हेतु प्राकृत भाषा के विद्वानों की नियुक्ति की आवश्यकता अनुभव की जा रही है । अर्थाभाव मुख्यरूप से इसमें बाधक है । सस्था की (आठ लाख रुपयो की राशि)प्रारम्भिक योजना मे ध्रुव फण्ड की स्थापनार्थ किये गये प्रावधान को पूरा करने हेतु धन की नितान्त आवश्यकता है ।

संस्थान की सहायता किस रूप में करें :

(१) एक लाख रुपया या इससे अधिक अनुदान देकर परम संरक्षक सदस्य बनें । ऐसे सदस्यो का नाम अनुदान तिथि क्रम से संस्थान के लेटर पेड पर दर्शाया जाता है ।

(२) ५१,०००) रुपया देकर सरक्षक सदस्य बने ।

(३) २५,०००) रुपया देकर हितैषी सदस्य बने ।

(४) ११,०००) रुपया देकर सहायक सदस्य बने ।

(५) १,०००) रुपया देकर साधारण सदस्य बने ।

(६) संघ, ट्रस्ट, बोर्ड, सोसायटी आदि जो सस्था एक साथ २०,०००) रुपये का अनुदान प्रदान करती है, वह सस्थान परिषद् की संस्था सदस्य होगी ।

(७) अपने बुजुर्गो की याद मे भवन निर्माण के रूप में व अन्य आवश्यक यंत्रादि के रूप मे अनुदान देकर आप इसकी सहायता कर सकते है ।

(८) अपने घर पर पड़ी प्राचीन पाण्डुलिपियां, आगम साहित्य व अन्य उपयोगी साहित्य को प्रदान कर सहायता कर सकते है । ज्ञान साधना का यह रथ प्रगति पथ पर निरन्तर अग्रसर है ।

श्री गणेश जैन छात्रावास, उदयपुर (राज०)

● ललित मट्ठा

स्थापना एवं उद्देश्य :

शिक्षा जगत मे छात्र के सर्वांगीण विकास की समग्र महत्त्वपूर्ण कडियो मे छात्रावास भी एक अत्युत्तम, उपयोगी अनिवार्य कड़ी है। इसी सन्दर्भ मे स्वर्गीय आचार्य प्रवर १००८ श्री गणेशीलालजी म. सा. ने अपने अमृतोपदेश मे फरमाया कि "समाज को धार्मिक, आध्यात्मिक एव व्यावहारिक दृष्टि से समुन्नत करने हेतु बालको का समुचित चरित्र निर्माण ही अत्यन्त उपयोगी एव आवश्यक है। समाज को इस ओर सजग एव निरन्तर प्रयत्नशील रहना होगा कि इन भावी स्रष्टाओ का जीवन किस भाति सुसस्कृत, अनुशासित, सस्कारित, सुचारित्रिक, धर्मानुरागी एव विनय-गुण युक्त बन सके।" इन्ही उक्त उद्देश्यो को दृष्टिगत कर स्वर्गीय आचार्य प्रवर की पावन स्मृति मे श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर द्वारा स्थापित एव सचालित यह छात्रावास दि. १ अगस्त, १९६४ ई० से निरन्तर जैन समाज की सेवा मे रत है।

छात्रावासीय पावन-स्थान चयन :

यह इस स्थान 'उदयपुर' का अहोभाग्य है कि स्वर्गीय आचार्य श्री गणेशीलालजी म० सा० की यह पावन जन्म भूमि ही नही अपितु दीक्षा स्थली एव स्वर्गारोहण स्थली भी है। आचार्य श्री की जीवन-लीला के अन्तिम चार रुग्णावस्था-वर्ष यहा व्यतीत होने से स्थानकवासी जैन श्रावक-श्राविकाओ के लिये यह एक तीर्थ स्थल बन गया। अत सर्वप्रथम १ अगस्त, १९६४ को श्री वर्द्धमान साधुमार्गी जैन श्रावक संघ, उदयपुर के तत्कालीन अध्यक्ष, स्व श्री कुन्दनसिह जी, खिमेसरा के कर कमलो द्वारा किराये के भवन मे अपूर्व उत्साह, उमग एव हर्षोल्लास के वातावरण मे छात्रावास का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ।

शिलान्यास :

वर्तमान मे चल रहे छात्रावास का शिलान्यास समारोह १ दिसम्बर १९६७ को कलकत्ता निवासी समाज-सेवी एव शिक्षाप्रेमी पारसमल जी काकरिया द्वारा अत्यन्त ही आनन्द एव उमग भरे वातावरण मे सम्पन्न हुआ। इस मागलिक वेला पर श्रीमान् काकरिया जी द्वारा भवन निर्माण हेतु रु० ११,१११/०० की राशि प्रदान की गई। इस भव्य समारोह की अध्यक्षता पीपलियाकला निवासी प्रसिद्ध उद्योगपति, उदारमना श्री गणपतराज जी बोहरा ने की जो श्री अ० भा० सा० जैन सघ के तत्कालीन अध्यक्ष थे।

नूतन भवन उद्घाटन :

इस छात्रावास के भव्य भवन का उद्घाटन समाज-सेवी, उदारमना एव शिक्षा-प्रेमी श्री गणपत राज जी बोहरा, मद्रास के कर-कमलो द्वारा शुभ मिति ज्येष्ठ शुक्ला १३ शनिवार सवत् २०२९ तदनुसार दि २४ जून १९७२ को पूर्ण आनन्द एव हर्ष के साथ सम्पन्न हुआ। इस शुभावसर पर सुदूर प्रान्तो से पधारे समाज के गणमान्य एव कर्मठ कार्यकर्त्ता, श्री अ भा सा जैन सघ

की कार्यकारिणी के सदस्य महानुभाव एवं पदाधिकारी उपस्थित थे ।

इस छात्रावास भवन मे २० एकल एवं १० त्रिछात्र व्यवस्था-कक्ष उपलब्ध है । साथ ही एक डाइनिंग हाल, सभा-कक्ष, कार्यालय, मेस-भण्डार एवं रसोई घर भी है । इस समय छात्रावास मे ३७ छात्रो की ही आवासीय व्यवस्था है और ३७ अध्ययन रत है । कारण कि तीन त्रिछात्र-व्यवस्था कक्षो मे आगम अहिंसा सस्थान का शोध कार्य चल रहा है--एक मे गृह पति आवास है तथा एक एकल कक्ष मे भण्डार है ।

चर्यानुशासन समिति :

छात्रावास के आवासीयछात्र अनुशासन बद्ध होकर अपने जीवन के नैतिक मूल्यो को बनाये रखकर उत्तम चारित्रिक गुणो से ओत-प्रोत हो सके, इसहेतु विज्ञ महानुभावो की निम्नाकित चर्यानुशासन समिति है जो छात्रावास की समूची व्यवस्था एक सयोजन आदि कार्य मे समय समय पर छात्रावास का निरीक्षण कर निरन्तर मार्गदर्शन प्रदान करती रहती है—

श्रीसरदारमलजी कांकरिया, कलकत्ता—संयोजक
श्री ललितकुमार मट्ठा (उदयपुर) - सह-सयोजक
श्री फतहलाल जी हीगड सदस्य "
श्री सग्रामसिह जी हिरण " " "
श्री अमृतलाल जी साखला "
श्री चैनसिंह जी खिमेसरा " "
श्री नरेन्द्रकुमारजी नलवाया " "

इस समिति की मासिक बैठक छात्रावास सुधार, विकास, व्यवस्था एव मार्गदर्शनार्थ होती रहती है ।

गृहपति :

सत्र १९८५-८६ से श्री नाथूलाल चोरडिया एम ए, बी. एड, सेवा-निवृत्त राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के प्रधानाध्यापक गृहपति पद पर रुचि, निष्ठा एवं सेवाभावना से पूर्ण सन्तोषप्रद सेवा-कार्य कर रहे है ।

प्रवेश :

छात्रावास मे सैकण्डरी, हायरसैकण्डरी, त्रि-वर्षीय स्नातक पाठ्यक्रम कला-वाणिज्य एव विज्ञान, तीनो विषयो के छात्रों को योग्यता साक्षात्कार एव वरीयता के आधार पर प्रवेश दिया जाता है ।

शुल्क :

छात्रावास मे पूर्व मे रु० ५६०)/-प्रवेश समय प्राप्त किये जाते है, जो निम्न शुल्क सारिणी के अनुसार है -

(१)	आवेदन एवं नियमावली शुल्क	५-००
(२)	प्रवेश शुल्क	१०-००
(३)	खेल एव सास्कृतिक शुल्क	५०-००
(४)	विकास-शुल्क	१०-००
(५)	वाचनालय शुल्क	२५-००
(६)	सुरक्षित राशि	१५०-००
(७)	भोजन अग्रिम राशि	२५० ००
(८)	विद्युत चार्ज (त्रैमासिक)	६०-००
		५६०-००

धर्म शिक्षा :

छात्रों के चारित्रिक विकास एवं सुसस्कारित बनने हेतु यहा प्रात.कालीन दैनिक प्रार्थना, स्तवन, प्रवचन, सामयिक कथा, अमृतोपदेश, अमृत एव अनमोल वचन आदि कार्य सम्पादित होते है । इसके अतिरिक्त प्रमुख अवसरो पर कई प्रकार की जैन धर्म सम्बन्धी साहित्यिक एव सास्कृतिक प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया जाता है जिसमे छात्र पूर्ण उत्साह एव रुचि-पूर्वक भाग लेते है । पर्यूषणपर्व-पर एव अन्य महत्त्व-

पूर्ण महापुरुषों के जन्म दिवस आदि महान् पर्वो पर सन्त-दर्शन, सन्त वचन एवं व्याख्यान आदि का लाभ भी छात्र प्राप्त करते है। छात्र यदा-कदा उपवास, आयम्बिल, प्रतिक्रमण, पौषध एव दया आदि मे भाग लेते रहते है।

मेस-व्यवस्था :

छात्रो से प्राप्त अग्रिम भोजन शुल्क के आधार पर भोजन की पूर्ण सात्विक व्यवस्था बिना लाभ हानि के सिद्धान्त पर की जाती है।

क्रीड़ा-कार्यक्रम :

छात्रो के स्वास्थ्य-लाभ, मनोरंजनार्थ, मानसिक थकान-निवारण तथा भ्रातृ-भावना को विकसित करने हेतु दैनिक खेल-व्यवस्था भी चलती है जिसमे वालीबाल, केरम, बेडमिन्टन एव क्रिकेट खेल की व्यवस्था है।
इसके अतिरिक्त कबड्डी एव खो-खो के खेल भी चलते है। छात्र उत्साहवर्द्धन हेतु इन खेलो की समय-समय पर प्रतियोगिताए भी आयोजित की जाती है तथा वर्ष मे दो बार शैक्षणिक तथा वन भ्रमण कार्यक्रम भी रखा जाता है।

सांस्कृतिक एवं साहित्यिक प्रवृत्तियां :

बालकों की भाषा शुद्धि, अभिव्यक्ति, अभिनय-प्रवृत्ति एव साहित्यिक रुचि की अभि--वृद्धि हेतु प्रार्थना मे दैनिक अभिव्यक्ति के अतिरिक्त समय-समय पर वाद-विवाद, नाटक, कविता-पाठ, अनमोल-वचन, स्तवन, निबन्ध एव सगीत आदि प्रवृत्तियो की प्रतियोगिताए भी आयोजित की जाती है।

वाचनालय पुस्तकालय :

देश-विदेश की घटना आदि की जानकारी एव सामान्यज्ञान वृद्धि हेतु छात्रावास मे प्रमुख दैनिक समाचार-पत्रो, प्रतियोगिता-दर्पण, सर्वोत्तम डाइ-जेस्ट साप्ताहिक हिन्दुस्तान, आदि पत्रो की व्यवस्था के साथ ही छात्र के ज्ञान-प्राप्ति हेतु पुस्तकालय व्यवस्था भी है।

वृक्षारोपण :

छात्रावास की निजी भूमि पर सुनियोजित ढग से विभिन्न प्रकार के १५० फलदार पौधे इस सत्र मे लगाये गये है। पानी की समस्या के समाधान हेतु पूर्व निर्मित पक्के कुए की मरमम्त करा ३ हार्स पावर की मोटर लगाई गयी है। वर्तमान मे कुए मे पानी सूख जाने से मिट्टी निकलवा कर गहरा करवाया जा रहा है।

भवन व्यवस्था :

छात्रावास मे १२ एकड भूमि है जिसमे ३-४ एकड़ भूमि पर छात्रावास भवन अवस्थित हैं, शेष भूमि वृक्षारोपण एवं खेल मैदान के उपयोग मे आ रही है।

छात्रावास के पश्चिमी-दक्षिणी किनारे पर आगम अहिसा--समता एव प्राकृत संस्थान के कार्यालय-भवन का शिलान्यास अभी हाल ही मे श्री चन्दनमल जी सुखानी, कलकत्ता के कर कमलों द्वारा दिनाक १० जनवरी, १६८७ को सानन्द सम्पन्न हुआ, जिसका निर्माण शीघ्र होने की सम्भावना है। इसी भाति छात्रावास के अधूरे गृहपति-भवन के निर्माणार्थ श्री अ० भा० सा० मा० जैन संघ बीकानेर से साठ हजार रुपये की स्वीकृति प्रदान की गयी है। इसके लिये स्थानीय स्थानकवासी जैन श्रावक सघ आभारी है। यह निर्माण कार्य भी सह-सयोजक श्री ललितकुमार जी की देख--रेख मे शीघ्र पूर्ण होने की संभावना है।

विद्युत व्यवस्था :

पूर्व मे सभी कमरो मे पूर्ण विद्युत--व्यवस्था कराई गई थी, परन्तु केसिग सड जाने एव कनेक्शन छिन्न-भिन्न हो जाने से इस सत्र मे समूची विद्युत व्यवस्था कन्ड्यूट पाईप मे श्री अ० भा० सा० जैन सघ बीकानेर से प्राप्त अनुदान से सम्पूर्ण कराई गई।

निवेदन : यहा छात्रो का जीवन अनुशासित है। विश्वास है यह छात्रावास जैन जगत मे अपनी कीर्ति अक्षुण्ण रखेगा।

श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ का द्वितीय वार्षिक अधिवेशन दिनाक ६ व ७ अक्टूबर १९६४ मे इन्दौर मे सानन्द सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन मे प्रस्ताव सख्या ४ के अन्तर्गत यह निश्चय किया गया कि नवयुवक समाज मे धर्म के प्रति जागृति पैदा करने के लिए धार्मिक परीक्षा बोर्ड की स्थापना की जावे। इसके क्रियान्वयन के लिए पाच सदस्यो की एक समिति बनाई गई। समिति के सहयोग से एक वर्ष मे धार्मिक परीक्षा हेतु पाठ्यक्रम निर्धारित करके नियम उपनियम बनाने, कार्यालय स्थापन आदि के बारे मे निर्णय करके कार्य प्रारम्भ करने की व्यवस्था करने का निश्चय किया गया। इस समिति के सदस्य निम्नलिखित थे —

(१) श्री नाथूलालजी सेठिया, रतलाम (२) श्री धीगड़मलजी, जोधपुर (३) श्री जुगराजजी सेठिया, बीकानेर (४) श्री रतनलालजी डोसी, सैलाना एव (५) श्री मगनमलजी मेहता रतलाम।

इसके पश्चात् कार्यालय द्वारा कुछ कार्यवाही भी की गई। तत्पश्चात् श्री अ भा सा. जैन सघ का तृतीय वार्षिकोत्सव दि. २६ व २७ सितम्बर १९६५ मे रायपुर मे सम्पन्न हुआ, जिसमे प्रस्ताव सख्या ११ के अन्तर्गत निम्न-लिखित सज्जनो की समिति पुनर्गठित की गई—

(१) श्री जुगराजजी सेठिया, बीकानेर (२) श्री रतनलालजी डोसी सैलाना (३) श्री भवरलालजी कोठारी, बीकानेर (४) श्री जेठमल जी सेठिया, बीकानेर।

इसके बाद श्री अ भा. साधुमार्गी जैन सघ का चतुर्थ अधिवेशन राजनादगाव मे दिनाक १५ व १६ अक्टूबर १९६६ मे सम्पन्न हुआ — जिसमे फिर धार्मिक परीक्षा बोर्ड के लिए निम्न-लिखित महानुभावो को चार वर्ष की अवधि के लिए चयन किया गया—

(१) प श्री पूर्णचन्दजी दक (२) पं. श्री रतनलालजी सिघवी (३) श्री देवकुमारजी जैन (४) श्री रोशनलालजी चपलोत। इस बोड के सयोजक प श्री पूर्णचन्दजी दक को बनाया गया और धार्मिक परीक्षाए सन् १९६८ से लेना प्रारम्भ करने का निर्देश दिया गया।

बच्चो मे धार्मिक सस्कारो को डालने के लिए यह आवश्यक हो गया कि उन के अभि-भावको को भी धार्मिक आचार-विचार का ज्ञान हो ताकि उनके बच्चे भी धार्मिक आचार-विचारो को ग्रहण करने की ओर अग्रसर हो। इसके लिए धार्मिक शिक्षण लेने व देने का प्रयास किया जावे। इस प्रकार धार्मिक परीक्षा बोर्ड ने नियम व उपनियम आदि बनाकर तैयार किए किन्तु परीक्षा १९६९ तक चालू नही हो सकी।

सन् १९७० मे दिनाक ११ व १२ नवम्बर को श्री अ. भा साधुमार्गी जैन सघ का अष्टम वार्षिकोत्सव बडीसादडी मे सम्पन्न हुआ जिसमे फिर से सघ द्वारा सचालित परीक्षा बोर्ड समिति के लिए आगामी चार वर्षो के लिए निम्नलिखित सदस्यो का निर्वाचन किया गया—

(१) श्री जेठमलजी सेठिया (२) पडित श्री श्यामलालजी ओझा (३) श्री सुन्दरलालजी तातेड़ (४) श्री रोशनलालजी चपलोत (५) श्री देव कुमारजी जैन।

उक्त सदस्यो के मडल के सयोजक श्री सुन्दरलालजी तातेड बीकानेर बनाये गये।

१५ जनवरी १९७० से जैन सिद्धात परि-चय से लेकर शास्त्री परीक्षा तक निर्धारित

पाठ्यक्रमानुसार परीक्षाएं ली जा रही हैं—जिनका विवरण तालिका द्वारा स्पष्ट है।

सन् १९७० से ही समाज की आशा आकाक्षाओं के प्रतीक देश के भावी कर्णधारो को आध्यात्मिक सास्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर सुशिक्षित करने के पावन उद्देश्य से प्रेरित हमारा श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड सुचारु रीति से कार्य कर रहा है। बोर्ड वैरागी व वैरागिनो तथा साधु-साध्वियों हेतु भी शिक्षा और परीक्षा के उत्तम अवसर सुलभ कराता है। लगभग १२५ सन्त-सतियाजी ने भूषण से लेकर सर्वोच्च रत्नाकर (एम.ए के समकक्ष) तक की परीक्षाए अब तक उत्तीर्ण की है। उच्च परीक्षाओ मे प्राकृत एव संस्कृत का भी समावेश किया गया है जिससे जैन आगमो का अध्ययन-अध्यापन सरलता पूर्वक सम्भव हो सका है।

सन् १९८६ का परीक्षा फल ७९.९१ प्रतिशत रहा है। इससे प्रतीत होता है कि धार्मिक परीक्षा का महत्त्व धीरे-धीरे बढ रहा है और समाज मे धर्म के प्रति जागृति उत्पन्न हो रही है। आशा है दिनोदिन परीक्षार्थियो की संख्या मे पर्याप्त वृद्धि होगी और धर्म के प्रति श्रद्धा भाव अधिक से अधिक बढ़ेगा।

—पूर्णमल रांका
पजीयक, श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक
परीक्षा बोर्ड, बीकानेर

जिन परीक्षार्थियों ने सन् १९७० से १९८६ तक परीक्षाए उत्तीर्ण की है उनकी सूची इस प्रकार है

वर्ष	परिचय	प्रवेशिका	भूषण	कोविद	विशारद	शास्त्री	रत्नाकर	योग
१९७०	८००	३००	५०	३०	१७	×	×	११९७
१९७१	९००	३००	१००	२०	१०	५	×	१३३५
१९७२	८००	३६६	१२०	६५	२२	८	×	१३८१
१९७३	६९९	३०७	६०	३३	३१	१२	×	११४२
१९७४	६५४	३०१	४४	२८	३२	१६	१७	१०९२
१९७५	९९०	३५०	६५	१८	३५	३०	१२	१५००
१९७६	१०७०	३४९	७७	२१	३९	३५	१४	१६०५
१९७७	१०९१	३७१	७७	२५	२५	२४	२१	१६३४
१९७८	१०३८	३७०	५८	३५	३५	२१	१८	१५७५
१९७९	११५०	२६१	३३	१५	३६	१९	२५	१५३९
१९८०	७८९	४२०	१२२	१९	२५	३४	१८	१४२७
१९८१	१०२०	४४२	२१	२२	११	१८	९	१५४३
१९८२	१३७९	५०९	५१	४२	३१	२९	२६	२०६७
१९८३	७८७	४५०	२७	१२	३०	११	१४	१३३१
१९८४	८८०	४४७	६५	२९	४७	२५	३५	१५२८
१९८५	१०४७	६७२	५३	२८	४८	४२	१७	१९०७
१९८६	१२४६	४३७	६४	१२	४८	४५	१४	१८७६
								२५५९९

श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार समता भवन रतलाम

श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार परम श्रद्धेय आचार्य पूज्य श्री गणेशीलाल जी म.सा. की दिव्य स्मृति मे श्री अ भा साधुमार्गी जैन संघ के अन्तर्गत दिनाक ६-६-७३ से संस्थापित है जिसमे कई हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थ, धार्मिक परीक्षोपयोगी पुस्तके,आगम ग्रन्थ,सस्कृत प्राकृत साहित्य एव प्रवचन व कथानक साहित्य सग्रहीत किया गया है। गत १४ वर्ष से ज्ञानकोष को भरने और वितरित करने का कार्य अबाध गति से चल रहा है।

इस ज्ञान भण्डार की स्थापना के समय सर्वप्रथम श्रीमान् श्रीचन्दजी कोठारी ने संयोजक के रूप मे अक्टूबर ७६ तक इसका कार्यभार काफी उत्साह पूर्वक सभाला और इसकी काफी प्रगति की। इसकी व्यवस्था मे श्री मगनलालजी मेहता का भी सक्रिय योगदान रहा। साथ ही साथ श्री मेहताजी ने ३२ आगम (श्री घासीलाल जी म सा एवं श्री अमोलकऋषिजी म सा. कृत) इस भण्डार को भेट कर शुभारम्भ किया। अत मेरी ओर से उन्हे हार्दिक धन्यवाद।

विगत साढे तीन वर्षो से इस भण्डार का कार्यभार मुझे सौंपा गया अत मेरा प्रमुख प्रयास भी अधिक से अधिक धार्मिक-साहित्य, हस्तलिखित शास्त्र ग्रन्थ एव धार्मिक परीक्षोपयोगी पुस्तके सगहीत करने का रहा। कई स्थानो से धार्मिक साहित्य एवं हस्तलिखित शास्त्रो की भेट स्वरूप प्राप्ति निरन्तर प्रयास का ही परिणाम है।

प्रति वर्ष जहां सन्त-मुनिराजों का चातुर्मास होता है वहा आस-पास के अलावा दूर के क्षेत्रो मे भी मुनिराजो, महासतियांजी म.सा. वैरागी भाई-बहिनो एव परीक्षार्थियो के लिए धार्मिक पुस्तके, शास्त्र तथा ग्रन्थ आदि भेजने की व्यवस्था सुचारु रूप से है। स्थानीय सदस्यों की सख्या भी पूर्व की अपेक्षा काफी बढी है जो कि प्रतिदिन पुस्तके लेते-देते रहते है।

ज्ञान भण्डार की स्थापना के आरम्भ के वर्षो मे काफी अच्छी सख्या में शास्त्र, आगम-ग्रन्थ एवं धार्मिक साहित्य भेट करने वाले महानुभावो के प्रति हम आभारी है। इन भेटकर्त्ताओं में सर्व श्री सेठ हीरालालजी नादेचा खाचरौद, श्री चम्पालालजी सचेती जावरा, श्री गणेश जैन मित्र मण्डल रतलाम, प्रभावक पू. श्री श्रीलालजी म.सा वाचनालय जावरा, श्री नाथूलालजी सेठिया रतलाम, स्व श्री सौभाग्यमलजी कस्तूरचन्दजी सिसोदिया रतलाम, श्री हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम, स्वर्गीय सेठ श्री वर्धमानजी पीतलिया और श्रीमती सेठानी आनन्दकु वरबाई पीतलिया की स्मृति मे श्री मगनलालजी मेहता एव इनकी पत्नी श्रीमतो शान्ता वहिन मेहता रतलाम, प. श्री लालचन्दजी मुणोत के नाम विशेष उल्लेखनीय है।

विगत २ वर्षो मे जिन महानुभावो ने धार्मिक साहित्य, ग्रन्य एव हस्तलिखित शास्त्र भेट स्वरूप प्रदान किये वे इस प्रकार हैं—

श्री चिमनलालजी झूमरलालजी सिरोहिया उदयपुर, ५२ अनमोल नये मुद्रित ग्रन्थ ।

विगत दो वर्षो मे विभिन्न महानुभावो ने धार्मिक साहित्य ग्रन्थ एवं टीकावाले दुर्लभशास्त्रो की फोटू कापिया करवाकर भेंट स्वरूप प्रदान की वे इस प्रकार है—

(१) श्री साधुमार्गी जेन सघ बम्वई से नन्दी सूत्र मलयागिरी वाली पत्राकार की २२ प्रतिया प्रत्येक की कीमत १२५)रु.(फोटो कापी)

(२) रतनलालजी भवरलालजी साखला जेठानावाला की तरफ से रत्नाकर अवतारिका भाग १ की १० प्रतिया, स्थानांग सूत्र टीकावाला की १० प्रतिया(फोटो कापी) प्रत्येक की कीमत २०० रुपये होती है ।

(३)श्री हर्षद भाई भायाणी बम्बई वाले की तरफ से भगवती सूत्र भाग १, २, ३ (फोटो कापी) प्रत्येक भाग की दस प्रतियां । प्रत्येक की कीमत लगभग २००) रुपये ।

(४) श्री गम्भीरमल जी लक्ष्मणदास जी श्रीश्रीमाल जलगांव से अभिधान राजेन्द्र कोप भाग १ से ७ एव अन्य ६७ प्राचीन पुस्तके भेट स्वरूप प्राप्त हुई । आज ऐसे ग्रन्थ मिलना अत्यन्त दुर्लभ है ।

इस ज्ञान भण्डार का विशेष लक्ष्य यह रहता है कि धार्मिक साहित्य एव धार्मिक परीक्षोपयोगी साहित्य के लिये परीक्षार्थियों को पुस्तके उपलब्ध करवाना । इस हेतु धार्मिक परीक्षाबोर्ड द्वारा परीक्षा मे रखे गए अनुपलब्ध टीका वाले शास्त्रो की फोटोकापियां विभिन्न सेठ साहुकार एव श्रीमतो से भेट स्वरूप प्राप्त करने का सफल प्रयत्न किया गया ।

उदयपुर से ही श्री फूलचन्दजी, श्री सोहन लालजी बाफना, श्री कालूरामजी सिगटवाड़िया, पडित श्री शोभालालजी मेहता मास्टर सा. द्वारा हस्तलिखित शास्त्र भेट किये गये ।

श्री भंवरलालजी भटेवरा, नगरी द्वारा ३० शास्त्र, श्री अमरचन्दजी लोढा ब्यावर द्वारा ३४० धार्मिक पुस्तकें । श्री अनूपबाई चोरडिया धर्मपत्नी श्री सुखलालजी चोरडिया फलौदी (राज.) द्वारा ६६८ पुस्तके । श्री जैन स्थानक सघ जावद के ३००हस्तलिखित अमूल्य शास्त्र श्रीभवरलालजी चोपडा जावद द्वारा भेट किये गये ।

श्री श्वे. स्था. जैन नाथूलालजी गोदावत ट्रस्ट, छोटीसादडी से ७५७ की सख्या मे सस्कृत प्राकृत साहित्य ज्ञानार्जन हेतु प्राप्त किया गया।

इस ज्ञान भण्डार के पास अभी लगभग ४० हजार धार्मिक ग्रन्थ, धार्मिक साहित्य एव परीक्षोपयोगी साहित्य, सस्कृत-प्राकृत व प्रवचन साहित्य मौजूद है, जो गोदरेज की ५२ आलमारियो मे सुरक्षित हे और जिसका सूची पत्र तैयार किया जा चुका हे । यह सूची पत्र शीघ्र ही सन्त-मुनिराजो की सेवा मे भेज रहे हैं। ग्रन्थ सग्रह हेतु अनेकानेक दानी-मानी महानुभावो और विदुषी माताओ ने गोदरेज आलमारियो की प्रभूत भेट प्रदान की है ।

श्री गणेश जैन ज्ञान भण्डार की प्रगति समाज के स्वाध्याय और शिक्षा क्षेत्र के विकास की कहानी हे । हर्ष हे कि समाज के सभी वर्गों ने इस कार्य मे हमे सर्वतोभावेन सहयोग प्रदान किया है, जिससे सेवा के हमारे सकल्प को वल मिला है । हम सघ व समाज के प्रति आभारी हैं ।

पुन जिन महानुभावो एव सस्थाओ ने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस ज्ञान भण्डार को अमूल्य शास्त्र, ग्रन्थ एव धार्मिक साहित्य भेंट स्वरूप प्रदान किया, जिन्होने आलमारिया भेंट की तथा पुस्तके व ग्रन्थ क्रय करने हेतु नगद धनराशि भेंट कर ज्ञान भण्डार की प्रगति मे तन मन धन से सहयोग देकर उदारता का परिचय दिया है उन सभी के लिए हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हुए भविष्य मे भी सहयोग की अपेक्षा करता हूं ।

रखबचन्द कटारिया
सयोजक
समता-भवन, ८४, नौलाईपुरा, रतलाम (म प्र)

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ की साहित्य समिति का प्रतिवेदन

□ गुमानमल चोरड़िया

संयोजक

श्री अ. भा साधुमार्गी जैन सघ का मुख्य उद्देश्य सम्यक् दर्शन सम्यग् ज्ञान और सम्यक् चारित्र रूप रत्नत्रय की साधना करते हुए आत्म-कल्याण एव लोक-कल्याण का पथ प्रशस्त करना है। इस साधना को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक स्तर पर परिपुष्ट करने के लिए संघ द्वारा नियमित रूप से साहित्य का निर्माण एव प्रकाशन होता रहता है। यह कार्य साहित्य समिति के निर्देशन मे होता है। वर्तमान मे इस समिति के सयोजक श्री गुमानमल चोरडिया, जयपुर है। समिति के अन्य सदस्य है—श्री चुन्नीलाल मेहता, वम्वई, श्री गणपतराज बोहरा पीपलियाकला, श्री सरदारमल कांकरिया कलकत्ता, श्री पी. सी. चौपडा रतलाम, श्री केशरीचन्द जी सेठिया, मद्रास, श्री उमरावमल ढड्ढा जयपुर, श्री भंवरलाल कोठारी बीकानेर, डॉ नरेन्द्र भानावत जयपुर, श्री मोहनलाल मूथा जयपुर, श्री धनराज वेताला जयपुर।

सघ की स्थापना से ही धार्मिक एवं आध्यात्मिक साहित्य प्रकाशित करने का सघ का लक्ष्य रहा है। प्रारम्भ मे साहित्य प्रकाशन की गति काफी धीमी रही पर विगत १० वर्षो मे साहित्य के क्षेत्र मे यह प्रगति सतोपजनक रही है। सघ द्वारा अब तक १०० से अधिक पुस्तके प्रकाशित की जा चुकी है।

संघ द्वारा प्रकाशित साहित्य बहु-आयामी और विविध विधामूलक है। सघ की ओर से एक धार्मिक परीक्षा बोर्ड भी सचालित होता है, जिसमे सैकड़ो की सख्या मे समाज के भाई-बहिन और साधु-साध्वी परीक्षा देते हैं। परीक्षा मे निर्धारित पाठ्य पुस्तको का लेखन एवं प्रकाशन संघ नियमित रूप से करता रहा है। उसमे विशेष रूप से आगमिक, तात्विक एवं जैन सिद्धान्त से सम्बन्धित पुस्तकें प्रकाशित होती है।

सघ द्वारा प्रकाशित साहित्य मे प्रवचन साहित्य का विशेष महत्त्व है। प्रवचन सामान्य कथन से विशिष्ट होते है। उनमे अनुभूति की गहराई और साधना का बल होता है। आचार्य श्री नानेश के प्रवचनो की पांडुलिपिया श्री गणेश ज्ञान भण्डार, रतलाम से प्राप्त कर सघ ने उन्हे प्रकाशित किया है। जिसमे उल्लेखनीय प्रवचन-सग्रह है—"पावस–प्रवचन भाग १ से ५, "ताप और तप", 'प्रवचन पीयूप, ऐसे जीये' आदि। कथा साहित्य अत्यन्त लोकप्रिय विधा है। सघ ने तत्व दर्शन का सरल, सुवोध शैली मे जन–साधारण तक पहुचाने की दृष्टि से आचार्य श्री नानेश एवं श्री विद्वद् मुनिवरो का कथा साहित्य प्रकाशित किया है, जिनमे प्रमुख औपन्यासिक कृतियां हैं—"कुमकुम के पगलिये", 'लक्ष्य वेध', 'अखण्ड सौभाग्य' 'ईर्ष्या की आग', 'साहसी सरला',

'दो सौ रुपयों का चमत्कार' आदि ।

आचार्य श्री नानेश ने अपने आचार्य-काल में समता दर्शन एवं समीक्षण ध्यान के रूप मे समाज और राष्ट्र को बहुत बडी देन दी है । इस विषय पर आचार्य श्री अपने प्रवचनो मे बड़ा वैज्ञानिक/मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करते रहे है । उस के आधार पर सघ द्वारा समता दर्शन और समीक्षण ध्यान सम्बन्धी जो पुस्तके प्रकाशित की गयी है, उनमे मुख्य है—'समता दर्शन और व्यवहार', 'समीक्षण-धारा', 'समीक्षण ध्यान एक मनोविज्ञान', 'समीक्षण ध्यानः विधि विज्ञान', 'कषाय-समीक्षण' आदि ।

महापुरुषो की जीवनिया जीवन-उत्थान में बड़ी प्रेरक और मार्गदर्शक होती है । इस दृष्टि से सघ की ओर से आचार्य श्री जवाहर लालजी म. सा., आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा एव आचार्य श्री नानेश की जीवनिया प्रकाशित की गयी है । इसके साथ ही 'अष्टाचार्य गौरवगंगा' का प्रकाशन सघ का एक महत्त्वपूर्ण प्रकाशन है । जिसमे ८ आचार्यो की जीवन-साधना एव साधुमार्गी-परम्परा का ऐतिहासिक विवरण दिया गया है ।

''श्रमणोपासक'' संघ का मुख पत्र है । इसकी सपादकीय टिप्पणिया विचारोत्प्रेरक रही है । चयनित सपादकीय टिप्पणियो का प्रकाशन ''जीवन की पगडडिया'' नाम से किया गया है ।

आचार्य श्री के साथ ज्ञान-चर्चा के कई प्रश्नोत्तर होते है चयनित प्रश्नोत्तर का एक सग्रह 'उभरते प्रश्न समाधान के आयाम' से प्रकाशित किया गया है ।

काव्य के क्षेत्र मे भी सघ ने जहां एक ओर सस्कृत मे 'श्री जवाहराचार्य यशोविजय महाकाव्य' प्रकाशित किया है, वहां हिन्दी में ''आदर्श भ्राता'' जैसा खण्ड काव्य एव 'धर्म का धन्ड़िदा', 'समता सगीत सरिता', 'मुक्त दीप' जैसे काव्य सग्रह भी प्रकाशित किये है ।

क्रान्त द्रष्टा श्रीमद् जवाहराचार्य जन्म शताब्दी के अवसर पर सघ ने श्रीमद् जवाहराचार्य सुगम पुस्तक माला' के अन्तर्गत श्रीमद् जवाहराचार्य के समाज, राष्ट्र, धर्म और शिक्षा सम्बन्धी विचारो पर आधारित पुस्तके प्रकाशित की है । इसी प्रकार भगवान् महावीर के २५ सौ वे परिनिर्वाण महोत्सव के अवसर पर हिन्दी मे 'भगवान् महावीर आधुनिक सन्दर्भ' में जैसा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित किया और अग्रेजी मे ६ लार्ड महावीर एण्ड हिज टाइम्स' तथा 'भगवान् महावीर एन्ड हिज रिलीवेन्स इन मोडर्न टाइम्स' नामक दो ग्रन्थ प्रकाशित किये ।

आचार्य श्री नानेश के आचार्य पद के २१ वे वर्ष मे समता, साधना सम्बन्धी विशेष ग्रन्थ प्रकाशित किये गये है ।

जो महानुभाव १००१/- रु प्रदान कर सघ की साहित्य सदस्यता स्वीकार कर लेते हैं, उन्हे सघ द्वारा प्रकाशित साहित्य निःशुल्क प्रदान किया जाता है । रियायती मूल्य पर साहित्य पाठको तक पहुच सके, इस दृष्टि से साहित्य प्रकाशन मे उदारमना सज्जनो से सहयोग लिया जाता है । सघ द्वारा प्रकाशित साहित्य मे जिन सज्जनो ने उदार हृदय से अर्थ सहयोग प्रदान किया है, उनमे मुख्य है—श्रीमद् जवाहराचार्य स्मृति साहित्य निधि के संस्थापक स्व श्री जुगराजजी धोका मद्रास, श्री दीपचन्द जी भूरा देशनोक, श्री प्यारेलाल जी भडारी अली बाग, श्री लूणकरण जी व हीरावत बन्धु देशनोक, श्री पूर्णमलजी काकरिया कलकत्ता, श्री चुन्नीलाल

हता वम्वई, श्री कमल सिहजी शान्तिलाल कोठारी कलकत्ता, श्री भवरलाल जी सेठिया कत्ता, श्री साधुमार्गी जैनसघ वम्बई आदि ।

सघ द्वारा प्रकाशित साहित्य के लेखन, सम्पादन एव प्रकाशन मे जिन सज्जनों का एवं साहित्य समिति के सदस्यो का सहयोग मिला है, उन सबके प्रति हम सघ की ओर से आभार प्रकट करते है ।

सघ द्वारा अब तक प्रकाशित साहित्य की सूची वर्षानुक्रम से

क का नाम	प्रकाशन वर्ष
१ जैन सस्कृति और राजमार्ग	१९६४
२. द्वात्रिशिका	१९६५
३ आत्मदर्शन	१९६५
४. गुण पूजा	१९६५
५. प्राकृत पाठमाला	१९६५
६ पाच समिति तीन गुप्ति	१९६६
७ चपक माला चरित्र	१९६७
८ दशवैकालिक सूत्र (द्वितीय सस्करण)	१९६७
९. लघु दण्डक	१९७०
१० चिन्तन, मनन, अनुशीलन भाग-१	१९७०
११. चिन्तन, मनन, अनुशीलन भाग-२	१९७०
१२. श्री गणेशाचार्य जीवनी	१९७०
१३ पावस प्रवचन भाग-१	१९७०
१४ पावस प्रवचन भाग-२	१९७१
१५. रत्नाकर पच्चीसी	१९७१
१६ जवाहर ज्योति	१९७१
१७. भगवान महावीर आधुनिक सदर्भ में	१९७४
१८. पावस प्रवचन भाग-३	१९७२
१९ समता जीवन प्रश्नोत्तर	१९७२
२० लार्ड महावीर एण्ड हिज टाइम्स	१९७४
२१ भगवान महावीर एण्ड हिज रिलिवेन्स इन मोडर्न टाइम्स	१९७५
२२. आचार्य श्री नानेश	१९७३
२३ समता दर्शन और व्यवहार	१९७३
२४. सामायिक सूत्र	१९७३
२५ ताप और तप	१९७३

२६. प्राकृत पाठमाला
२७. जैन सिद्धान्त परिचय
२८. प्रवेशिका प्रथम खण्ड
२९. प्रवेशिका द्वितीय खण्ड भाग–१
३०. जैन तत्व निर्णय
३१. प्रार्थना
३२. पावस प्रवचन भाग–४
३३. पावस प्रवचन भाग–५
३४. समता दर्शन एक दिग्दर्शन (द्वितीय)
३५. जैन तत्व निर्णय भाग-२
३६. प्रतिक्रमण सूत्र
३७. सकल्प, समता, स्वास्थ्य
३८. सौन्दर्य दर्शन
३९ क्रात द्रष्टा श्रीमद् जवाहराचार्य
४०. श्रीमद् जवाहराचार्य–समाज
४१ समराइच्चकहा (प्रथम एव द्वितीय भव]
४२. धर्मपाल वोधमाला
४३. श्रीमद् जवाहराचार्य–सूक्तिया
४४. श्रीमद् जवाहराचार्य–शिक्षा
४५. श्रीमद् जवाहराचार्यः जीवन और व्यक्तित्व
४६. श्रीमद् जवाहराचार्य–राष्ट्र धर्म
४७. समता
४८. प्रवचन पीयूष
४९. सत दर्शन
५० अनुकम्पा विचार भाग–१
५१. श्री जवाहराचार्य जीवनी
५२. लगते प्यारे दिव्य सितारे
५३ कर्म प्रकृति
५४. अन्तर्पथ के यात्री. आचार्य श्री नानेश
५५ आचार्य श्री नानेश विचार दर्शन
५६ जैन सिद्धांत प्रवेशिका द्वितीय खण्ड भाग–२
५७. हरिश्चन्द्र तारा
५८. समता स्वाध्याय स्तवन सग्रह
५९ गुरु वन्दना

एक प्रेरक सस्मरण—

प द या त्रा

□ सूरजमल बच्छावत

कुछ वर्ष पहिले की बात है कि श्री गणपत राज जी बोहरा, श्री गुमानमल जी चोरडिया, श्री भवरलाल जी कोठारी कलकत्ता आये हुए थे। बातचीत के सिलसिले मे उन्होने मुझसे कहा कि चैत्र महीने मे पदयात्रा होने जा रही है–धर्मपाल क्षेत्र मे। यदि आप श्री विजयसिह जी नाहर भू पू उपमुख्य मन्त्री पश्चिम बंगाल को पदयात्रा में ला सके तो बहुत अच्छा रहे। मैने उन्हे आश्वासन दिया कि मै पूरी चेष्टा करके उनको पद यात्रा मे लाऊंगा। मैं श्री विजयसिहजी नाहर के पास गया। उन्हे धर्मपाल प्रवृत्ति की सारी बात समझाई और उन्हे चलने के लिए राजी कर लिया लेकिन २ दिन बाद हो उनका फोन आया कि मै दिल्ली जा रहा हू, श्रीमती इन्दिरा गाधी ने मुझे बुलवाया है। दिल्ली से मै आपको चित्तौडगढ मे मिल जाऊगा।

अत मैं तथा भवरलाल जी वैद कलकत्ता से रवाना होकर चित्तौड़गढ गये। वहा श्री नाहरजो हमारी प्रतीक्षा कर ही रहे थे। वहा से हम लोग भीलवाडा गये। रातभर भीलवाडा रहे और स्थानीय लोगो ने विचारगोष्ठी रखी। दूसरे दिन सुबह हम लोग जावरा गये, वही से पदयात्रा शुरू होने वाली थी। बड़ी धूमधाम थी, लोगो मे बडा उत्साह था। श्री विजय बाबू ने मेरे से कहा कि प्रचार तो बहुत जोर का है—लेकिन वास्तविक स्थिति क्या है यह जानने के लिये अपन पदयात्रा के साथ न जाकर उसी गाव मे पहिले ही चलते है ताकि गाव वालों से सारी बात अलग से कर सकें। उनके मुताबिक मै तथा श्री विजय बाबू गाडी मे उस गाव की ओर चल दिये। जैसे ही हम उस गाव मे पहुंचे गाव वालो ने हमारा जयजिनेन्द्र कह कर स्वागत किया। बच्चे, महिलाएं और सब लोगो ने हमे घेर लिया और अपने घर पर चलने के लिए आग्रह करने लगे। उन लोगो के घर मिट्टी के थे और गोबर से पोते हुए साफ और स्वच्छ थे। हम लोग एक घर के बाहर चौकी पर बैठे और प्रश्नोत्तर होने लगे। विजय बाबू ने उन लोगो से प्रश्न करने शुरू किये कि आपको धर्मपाल प्रवृत्ति मे आने के लिये कोई प्रलोभन मिला या स्वेच्छा से आप इस प्रवृति मे आये। एक वृद्ध व्यक्ति ने बडे उत्साह के साथ सारी बात समझाई। वे कहने लगे कि हम लोग बलाई जाति के कसाई है और हमसे कोई सीधे मुह बात भी नही करता था। पूज्य श्री नानालाल जी म सा का चौमासा था। कुछ लोग कहने लगे कि अपने को उनके प्रवचन सुनना चाहिए लेकिन हमारी हिम्मत वहा तक जाने की हुई नही। सयोगवश कुछ कार्यकर्त्ताओ ने हमे प्रवचन मे जाने के लिए प्रोत्साहन दिया और जैसे-२ उनके प्रवचन सुनते हमारे अन्दर धर्म के प्रति रुचि जागृत होने लगी और हमने गुरुदेव मे बातचीत

की। कहा कि हमारी जाति नीच है, शरावी है। हम कसाई का धन्धा करते हे और सवके सिर पर कर्ज का बोझ है। यदि हम कसाई का धन्धा छोड़ दे तो हमारी रोजी कैसे चलेगी। और सबसे ज्यादा तकलीफ हमें यह है कि हमारे यहा कोई मौत हो जाती है तो हमे मोसर (जीमन) करना पड़ता हे और घर वार खेती की जमीन वेचनी पड जाती है।

गुरुदेव ने हमे समझाया कि ससार मे कोई आदमी जो मेहनत करता है, वह भूखा नही मर सकता है। आपके सारे गाव के लोग यहा इकट्ठे है और आप मिलकर प्रतिज्ञा करले कि हम कसाई का धन्धा नही करेगे और मरने के वाद काई भी मौसर(जीमन) नही करेगे और खेती करेगे तो आप वहुत खुशहाल हो सकते है। हमने उनकी बात मानली और पूरे गाव ने एक-जुट होकर प्रतिज्ञा की कि आज से हम कसाई का धन्धा नही करेगे तथा कोई शराव नही पीयेगा और मोसर वगैरे नही करेगे। साहव क्या बतावे आपको थोडे ही समय मे हमारे घरो मे अमन-चैन हो गया और जिसके पास २ वीघा जमीन थी उसके पास अव ६ वीघा जमीन है। घर मे सुख-शांति है, वच्चे रोज सामायिक प्रति-क्रमण तथा उपवास करते है। और गाव वालो ने कई छोटे-छोटे बच्चो को हमारे सामने खडा कर दिया। मै आपसे क्या कहू इतने शुद्ध उच्चारण से सामायिक की पाटिया उन बच्चो ने हमे सुनाई कि हम दग रह गये। उसके वाद वे कहने लगे कि साहव अब हमारे घर वडे २ लोग आते है और हमारे यहा का साधारण भोजन भी करते है। खासकर उन्होने कहा माताजी(श्री गणपत राजजी बोहरा की धर्मपत्नी श्रीमती यशोदादेवी) वरावर हमारे घर आती रहती है। पूरा गाव धार्मिक हो गया है और दूसरे गाव वाले जो हमारे रिश्तेदार है वे भी हमारी लाइन आ गये है उन सवकी वात सुनकर श्री विजयसिहजी नाहर वहुत ही आनन्दित हुए और कहने लगे कि इतना वडा काम वहुत वर्षों वाद हुआ है।

अव गाव वाले श्री विजयवावू का स्वागत करने के लिए वहुत उत्सुक थे लेकिन विजयवावू ने कहा कि ऐसा नही होगा। स्वागत तो मैं आप सव लोगो का करुंगा।

पदयात्रा करते हुए लोग भी सैकडो की सख्या मे वहा पहुच गये थे। जुलूस ने वहुत वडी सभा का रूप ले लिया था। उस गाव के समस्त वच्चो, महिलाओ तथा पुरुषो का श्री विजय वावू ने तिलक लगाकर स्वागत किया। इस काम मे सेवा करने वाले समाजसेवी मानव मुनि का वड़ा हाथ रहा। वहा श्री चौपडाजी, श्री वोहराजी, श्री चोरडियाजी, टी. वी. स्पेश लिस्ट डॉ. वोरदिया भी उपस्थित थे।

इसके वाद गाव वालो की तरफ से सादगी पूर्ण भोजन की व्यवस्था थी। हम सब ने गाव वालो के साथ बैठकर एक ही पक्ति मे भोजन किया। उस आनन्द की कल्पना नही की जा सकती। वहा राजनीति का दिखावा जैसी कोई वात ही नही थी। आज यह वडी खुशी की वात है कि सैकडो गाव धर्मपाल हो गये हैं और उनकी सख्या सुनने में आयी हैं कि पचास हजार तक पहुच गई है।

मै धर्मपाल प्रवृत्ति मे कार्य करने वालो को वहुत-वहुत साधुवाद देता हू जो वडी लगन से कार्य कर रहे हैं और आशा ही नही पूरा विश्वास है कि यह प्रवृत्ति आगे वढेगी। श्री विजयसिहजी नाहर ने कलकत्ता मे वहुत लोगो के समक्ष इस प्रवृत्ति की चर्चा की और भूरि-२ सराहना की।

अध्यक्ष—श्री श्वे स्था जैन सभा
२०, वाल मुकुन्द मक्कर रोड, कलकत्ता

धर्मपाल प्रवृत्ति : एक युगान्तकारी क्रांति

संयोजक—गणपतराज बोहरा

धम्मे हरए बम्भे शान्ति तित्थे
अणाविले अत्तपसन्न लेसे ।
जंहि सिणाओ विमलो-विसुद्धो
सुसीइभूओ पण हामि दोष ।
—उत्तराध्ययन १२/६

धर्म मेरा जलाशय है, ब्रह्मचर्य शांति तीर्थ है और कलुष भाव रहित आत्मा प्रसन्नलेश्या है, जो मेरा निर्मल घाट है, जहां पर आत्मा स्नान कर कर्म रज से मुक्त होती है ।

आज से २४ वर्ष पूर्व समता-दर्शन प्रणेता, धर्मपाल प्रतिबोधक परमपूज्य आचार्य श्री नानालालजी म. सा सवत् २०२० का रतलाम चातुर्मास पूर्ण कर मालवा के वन-बीहडो में, दुर्गम पहाडी और सपाट मैदानो मे अपनी पीयूषवर्षिणी वाणी से जिन धर्म के उदात्त और शाश्वत मानवीय मूल्यो को प्रसारित करते हुए विचरण कर रहे थे, तभी चैत्र शुक्ला अष्टमी सवत् २०२१ दि २३ मार्च १९६४ को प्रात काल नागदा के पास ग्राम गुराडिया मे आपने बलाई बन्धुओ को धर्म जलाशय मे स्नान कर धर्म की उपासना और पालना का उपदेश दिया । उन्हे धर्मपाल-जैन कहकर सबोधित किया और उनसे तदनुसार उच्च उज्ज्वल आचरण धारण करने का अनुरोध किया । इसी स्वर्णिम दिवस को धर्मपाल प्रवृत्ति की नीव पडी । स्थान-स्थान पर धर्मपाल बन्धु पावन जीवन जीने को मचल उठे तथा संकल्पित होने लगे । श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ ने आचार्य-प्रवर के इन्दौर वर्षावास स. २०२१ मे धर्मपाल प्रवृत्ति के कार्य को व्यवस्थित करने का चिन्तन किया और यही पर प्रथम धर्मपाल सम्मेलन सम्पन्न हुआ ।

संघ की साधारण सभा ने श्री धर्मपाल प्रचार-प्रसार समिति की स्थापना की और इसके गौरवशाली प्रथम संयोजक पद पर श्री गोकुलचन्दजी सूर्या उज्जैन को नियुक्त किया गया । कालान्तर मे श्री गेदामलजी नाहर को प्रमुख संयोजक बनाया गया और बाद मे श्री समीरमलजी काठेड प्रमुख संयोजक बने । आचार्य श्रीजी के आशीर्वाद और सघ के असीम स्नेह के बीच प्रवृत्ति का कार्य निरन्तर आगे बढता चला गया । धर्मपाल गावो मे धार्मिक शिक्षण पाठशालाए खोलने का जो क्रम ८ अगस्त १९६४ को नागदा से प्रारम्भ हुआ, वह एक के बाद एक पाठशाला खुलने के साथ बढता गया और वृहत धर्मपाल सम्मेलनो के जलजले ने सम्पूर्ण क्षेत्र मे एक विचार-आचार क्राति को ला खडा किया। जयपुर मे आयोजित सघ के तीसरे वार्षिक अधिवेशन मे श्री गणपतराजजी बोहरा एव श्रीमती यशोदा बोहरा द्वारा प्रवृत्ति कार्य में विशेष रुचि लेने से प्रवृत्ति मे नया मोड आया ।

सर्वेक्षण-शिक्षण-प्रशिक्षण-निरीक्षण और पर्यवेक्षण की एक प्रभावी रूपरेखा बनाकर सैकड़ो कार्यकर्ता प्रवृत्ति के कार्य विस्तार हेतु जुट गए । धर्मपाल युवको का नानेश नवयुवक मडल गठित हुआ । सर्व श्री गणपतराजजी बोहरा, गुमानमलजी चोरडिया, सरदारमलजी काकरिया, श्री भवरलालजी कोठारी के प्रवासो ने क्षेत्र मे समुद्र मथन का सा दृश्य उपस्थित कर दिया । दौड-दौड़ कर नए-नए कार्यकर्त्ता कार्य मे आकर जुटने लगे । समाज-सेवी श्री मानवमुनिजी, स्वर्गीय श्री हीरालालजी नादेचा, श्री पी सी. चोपडा, श्री मगनलालजी मेहता, स्व. बाबू श्री कन्हैया-

लालजी मेहता, श्री वीरेन्द्र कोठारी, उज्जैन का सूर्या परिवार, मामाजी श्री चम्पालालजी पिरोदिया, मामीजी श्रीमती धूरी बाई गिरोदिया, श्री हस्तीमलजी मूणत, श्री मियाचन्दजी काठेड, श्री सूरजमलजी बरखेड़ा वाले, धर्मपाल श्री सीताराम जी राठौड़, धुल्लाजी जैन, रघुनाथजी के साथ युवा श्री हीरालालजी मकवाना, रामलालजी सहित सैकड़ो-सैकड़ो कार्यकर्ता दल-वादल की तरह उमड़-घुमड कर आ मिले तथा धर्मपाल क्षेत्र एक महासागर की भाति लहरा उठा। कार्य इतना बढ गया कि सकल क्षेत्र को ५ भागो उज्जैन, रतलाम, नागदा-खाचरौद मन्दसौर तथा जावरा विभागो मे बाट कर सयोजक मनोनीत किए गए। धर्म जागरण पदयात्राओ के दौर प्रारम्भ हुए और सन्त-मुनिराजो तथा महासती वृन्द का विचरण भी क्षेत्र मे हुआ। धर्मपाल क्षेत्र धर्ममय हो उठा। सकल सहयोगियो को नमन।

संघ ने धर्मपाल क्षेत्रो मे यथावश्यकता कुए और समता-भवनो आदि के माध्यम से निर्माण कार्य प्रारम्भ किया। देशभर के राजनेताओ और सामाजिक कार्यकर्ताओ के अन्वेषण दल इस व्यसन-विकार मुक्ति के महाअभियान को देखने-परखने आने लगे।

धर्मपाल समाज की समाज-रचना के नियमों का निर्धारण व प्रमुखो का चुनाव प्रवृत्ति के कार्य मे फिर एक क्रातिकारी मोड के रूप मे उपस्थित हुआ। धर्मपाल पंचायतों का गठन किया गया। धर्मपाल छात्रो के विकास हेतु श्री प्रेमराज गरापतराज बोहरा धर्मपाल जैन छात्रावास दिलीप नगर, रतलाम का शुभारम्भ हुआ। धर्मपाल छात्रो के कानोड़ छात्रावास में शिक्षण की भी व्यवस्था की गई। क्षेत्र मे श्री बोहराजी द्वारा भेट किए गए श्रीमद् जवाहराचार्य चल चिकित्सालय द्वारा पद्मश्री डॉ नन्दलाल जी बोरदिया के नेतृत्व मे चिकि सेवा और चिकित्सा शिविरो के आयोजन हुए इन चिकित्सा सेवा कार्यों मे क्षेत्रीय शासकी चिकित्सको का भी पूर्ण सहयोग मिला। धर्मपा प्रतिवर्ष आचार्य श्री के सान्निध्य मे दर्शनार्थ उपस्थित होकर प्रेरणा प्राप्त करते रहे। इसी बीच आराध्य आचार्य प्रवर सन् ८४ मे रतलाम चातुर्मास हेतु पधारे, धर्मपालो मे अपार उत्साह छा गया। प्रवृत्ति देश-विदेश मे चर्चित हो चुकी है।

आचार्य-प्रवर के पुनः इन्दौर चातुर्मास से धर्मपाल सगठन मे आशा की नई किरण जागी है। धर्मपाल क्षेत्र के कार्य मे महिलाओ का योगदान विस्मय और आह्लादकारी है। श्रीमती यशोदादेवी जी बोहरा, श्रीमती शान्ता मेहता, श्रीमती रोशन खाबिया, स्वर्गीय श्रीमती कम चौपडा, श्रीमती फूल कुमारी काकरिया, श्रीम कचन बाई मेहता, श्रीमती शकुन्तला काठे श्रीमती रसकु वर सूर्या महिला समिति की समस्त पदाधिकारियो और शत-शत बहिनो ने अपने आत्मीय व्यवहार से धर्मपालो का कायाकल्प करने मे जो महती भूमिका निभाई है, वह आने वाले युग-शोधको का स्वर्णिम इतिहास होगा। इस सनाम-अनाम मातृशक्ति को शत-शत वन्दन।

आज स्वयं धर्मपाल जाग उठे है। उनका धर्म पालन और गृहीत सकल्पो के प्रति प्राण से किया गया समर्पण भारतीय समाज के गौर मय इतिहास की रचना कर रहा है। माना मान के विष घूंट पीकर एक विशाल समाज क कायापलट करने को सकल्पित धर्मपाल कार्य कर्त्ताओ को श्रद्धासहित प्रणाम।

□

धर्म जागरण, जीवन साधना और संस्कार निर्माण पदयात्रा

☐ भंवरलाल कोठारी

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन सघ द्वारा भगवान् महावीर के २५०० वे निर्वाण वर्ष को समता-साधना वर्ष के रूप मे साधने का सकल्प लिया गया था और पदयात्रा के रूप मे उस दिशा मे एक सार्थक पहल भी उसी वर्ष कर दी गई। यह पदयात्रा जीवन साधना का एक पूर्वाभ्यास थी। पदयात्रा जिनशासन प्रद्योतक धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य श्री नानेश की भावधारा के अनुरूप ममत्व से समत्व, असमानता से समानता और विषमता से समता की ओर प्रयाण कर समता समाज रचना के शाश्वत उद्देश्य को साकार करने की दिशा मे भी यह एक प्रारभिक कदम थी। सघ की प्रथम पदयात्रा कितनी सफल थी इसका अनुमान पश्चिम बंगाल के पूर्व उप मुख्यमत्री बाबू श्री विजयसिंहजी नाहर के इन शब्दो से लगाया जा सकता है कि "यह पदयात्रा एक महान् धार्मिक क्राति की पूर्व सूचना है।"

जीवन को साधते हुए धर्म जाग्रति की ज्योति जलाने के महत् उद्देश्य से आयोजित धर्मपाल धारिणी मालवा की धर्म-प्रवण धरती पर सघ के क्रियाशील कार्यकर्त्ताओ की पदयात्रा मानो समुद्र मथन कर रत्न प्राप्ति का एक अनूठा उपक्रम थी। इस प्रथम पदयात्रा के सक्षिप्त दिग्दर्शन से हमे पदयात्रा की भावभूमि, महत्व और सार्थकता का वोध मिल सकेगा।

उद्देश्य-सघ ने पदयात्रा के ४ पावन उद्देश्यो का निर्धारण करते हुए इसे (१) सयम, नियम, मर्यादा पूर्वक अनुशासन पालन करते हुए जीवन साधना का अभ्यास करना, (२) नियमित स्वाध्याय के माध्यम से अपने अन्तर मे झांक कर अपने आपको समझने, स्वयं का अध्ययन करने का प्रयत्न करना (३) सादगीयुक्त, श्रमनिष्ठ, स्वावलबी शिविर जीवन की अनुभूति करते हुए निःस्वार्थ सेवाभाव को जीवन का सहज स्वभाव बनाना और (४) व्यसन विकारो से मुक्त होने का सकल्प कर धर्मपालना के लिए उन्मुख धर्मपाल भाई-बहिनो, युवक-युवतियो एवं वालक-बालिकाओ से सम्पर्क साधते हुए उनके परिवर्तित जीवन से प्रेरणा प्राप्त करना और उन प्रेरक प्रसगो को सही स्वरूप मे प्रस्तुत कर सर्वत्र धर्मजागरण का वातावरण सृजित करना सुनिश्चित किए गए।

दिनचर्या-कार्यक्रम संरचना–

पदयात्रा के लिए दिनचर्या एव कार्यक्रमो की संरचना लक्ष्य साधक रखी गई। प्रात.काल साढे-चार वजे जागरण, सामायिक, समभाव की साधनापूर्वक सामूहिक प्रार्थना, ६॥ वजे से ५–६ मील की प्रातकालीन पदयात्रा जनसम्पर्क एव धर्मसभा, मध्याह्न २॥ वजे मे ५ वजे तक सामायिक पूर्वक सामूहिक स्वाध्याय जिसमे विद्वानो के विचार प्रेरक व्याख्यान तथा आगम ग्रन्थो का वाचन, सायकाल ५॥ वजे मे पुन ३-४ मील की पदयात्रा, सामायिकपूर्वक सामूहिक प्रतिक्रमण अन्तरावलोकन करके आत्मशुद्धि का प्रयास, रात्रि ८॥ से ११-१२ वजे नक धर्म सभा

एवं सबको भावविभोर तन्मय करने वाले भाव-पूर्ण भजन एवं सगीत के कार्यक्रम मध्याह्न एक समय का सात्विक भोजन एवं प्रातः नवकारसी, के पश्चात् तथा सायकाल सूर्यास्त से पूर्व अल्पाहार, साधना परक दिनचर्या शरीर व मन को रोग मुक्त रखने में सहायक सिद्ध हुए ।

दिनचर्या व कार्यक्रमों को सचालित करने वाले महानुभावो का जीवन अनकहे ही सारी बात कह देता था और साधना की छाप छोडता था ।

उपलब्धियां :

इस प्रथम पदयात्रा की उपलब्धियां अविस्मरणीय एवं अनूठी हैं । प्रवृत्ति मे फसे जनो ने निवृत्ति का आनन्द चखा । सभी श्रम-निष्ठ, कर्मनिष्ठ बने । दूसरो के प्रति गुण दृष्टि जगी, दोष दृष्टि मिटी । सभी को एक अपूर्व सात्विक आनन्द की अनुभूति हुई । कर्मजात धर्मपाल जैनो के सरल सात्विक श्रद्धा से जन्म जात जैन श्रावको को नई प्रेरणा प्राप्त हुई । यात्राकाल मे स्व पद्मश्री डॉ नदलालजी बोरदिया की चिकित्सा सेवा ने भविष्य मे धर्मपाल क्षेत्रों मे चल चिकित्सालय वाहन तथा चिकित्सा शिविरो के माध्यम से सेवा के नए आयाम का सृजन किया ।

गांव-गाव को स्पर्श कर बहने वाली इस धर्म गगा ने धर्मपालो एवं सभी ग्रामवासियो के जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया । धर्म के नाम पर पल रहे ढोंग के कारण धर्म विमुख बने युवको में भी इस विशुद्ध धर्मसाधना परक जीवन का सात्विक प्रभाव पड़ा । विकार मुक्ति के वातावरण को गति मिली ।

पदयात्राओं के दौर :

इस प्रकार संघ द्वारा सं २०३१ मे आयोजित प्रथम पदयात्रा ने देश भर मे एक धार्मिक-नैतिक वातावरण का सृजन किया और फिर तो प्रतिवर्ष पदयात्राओं के दौर होने लगे । इन चल समारोहो मे भाग लेने के लिए देश के कोने-कोने से धर्मानुरागी उमड़ पड़ते थे । धर्मपाल क्षेत्रो मे पदयात्राओ की अपूर्व सफलता ने सघ-क्षेत्रो मे पदयात्राओ के आयोजन का मार्ग प्रशस्त किया और मेवाड़ क्षेत्रीय पदयात्रा के साथ सघ में अप्रतिम उत्साह का सृजन हुआ ।

पदयात्राएं जीवन की अनुभूति, सहजता, सरलता की साधिकाएं हैं । विश्वास है इनके आयोजन समाज और राष्ट्र जीवन को अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह और ब्रह्मचर्य के उदात्त आदर्शो की ओर उन्मुख करेगे ।

वीर संघ

गुमानमल चोरड़िया, वीरसंघ प्रधान

धर्म प्रधान भारत के आध्यात्मिक आकाश के प्रकाश स्तम्भ, युगद्रष्टा, युगस्रष्टा, युग-प्रवर्तक, ज्योतिर्धर जैनाचार्य स्व. श्री जवाहरलालजी म. सा ने अपनी उद्बोधक प्रवचन शृंखलाओ मे सद्गुणो के प्रचार-प्रसार तथा सयम साधना के निखार हेतु एक महान् योजना प्रस्तुत की थी। भगवान महावीर के साधना मार्ग को प्रशस्त बनाने वाली इस जीवनोन्नायक मध्यम मार्गीय साधनायुक्त प्रचार योजना को श्रीमद् जवाहराचार्य जी की जन्म शताब्दी के पुनीत दिवस कार्तिक शुक्ला चतुर्थी सवत् २०३२ तदनुसार दि. ७. ११ १९७५ शुक्रवार को, उन्ही के पट्टधर जिन-शासन प्रद्योतक आचार्य श्री नानालाल जी म. सा के सान्निध्य मे मूर्त्तरूप प्रदान किया गया। आचार्य श्री की अभिनय वाणी की निरन्तर वर्षा ने साधको को साधना पूर्वक धर्म प्रभावना हेतु सकल्पित होने की अपूर्व प्रेरणा दी।

स्वर्गीय आचार्य श्री साधुत्व को उसके वास्तविक स्वरूप मे ही साधना के उच्चस्थ शिखर पर आसीन देखना चाहते थे एव प्रवृत्ति परक प्रचार कार्यो मे गृहस्थ वर्ग का सलग्न रहना ही उपयुक्त मानते थे एव प्राचार्य श्री जी के लिए किसी भी साधक को साधना मे अ शत कमी भी असह्य थी। अतः उन्होने साधुत्व को अक्षुण्ण रखने के उद्देश्य से प्रचार-प्रसार कार्य करने को साधु और गृहस्थ के मध्य एक ऐसे वर्ग की जो सुविचारित व्यावहारिक योजना प्रस्तुत की थी, उसे सघ ने साकार करने और आगे बढाने को प्रयत्नशील है। वह वीरसघ योजना (१) निवृत्ति (२) स्वाध्याय (३) साधना और (४) सेवा के चार स्तम्भो पर आधारित है और साधना के स्तर पर इसके (१) उपासक (२) साधक और (३) मुमुक्षु तीन श्रेणियो के सदस्य हैं। ये श्रेणिया निवृत्ति, साधना और सेवा की भावनाओ के आधार पर सृजित है। मुमुक्षु सदस्य श्रावक वर्ग की उच्चस्थ स्थिति के आदर्श स्वरूप है और हमे गर्व हे कि हमारा वीरसंघ मुमुक्षु श्रेणी सदस्य भी अपने कलेवर मे समेटे है।

वीरसंघ सचालन हेतु दो उप प्रधान, एक-एक व्यवस्था-प्रमुख, साधना प्रमुख, स्वाध्याय प्रमुख और सेवा-प्रमुख होते हैं, इनकी नियुक्ति यथा-सभव साधक और मुमुक्षु सदस्यो की श्रेणी मे से ही करने का यत्न किया जाता है। जिस नगर या ग्राम मे वीरसंघ को किसी भी श्रेणी के न्यूनतम ५ सदस्य होगे, वहा वीरसघ की शाखा स्थापित की जा सकेगी। स्पष्ट है कि वीरसघ सख्या मूलक नही अपितु गुणवत्ता मूलक एक विरल सगठन है, जिसकी प्रकृति को सदस्य बनकर ही आत्मसात् किया जा सकता है, इसलिये वीरसघ की किसी भी श्रेणी का सदस्य बनने से पूर्व साधक साधिका को प्रस्तावित सदस्य के रूप मे परिवीक्षा काल बिताना हे।

नोखा-सम्मेलन . देशनोक मे वीरसघ स्थापना के लिये किये गये युगीन सकल्प के बाद इसका प्रथम सम्मेलन परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य मे दि० २६ सितम्बर ७६ को सम्पन्न

हुआ। इस सम्मेलन मे वीर सघ के दर्शन और विवेचन पर सार्थक सवाद प्रस्तुत किया और इसके आधार पर बाद मे 'वीर संघ : दर्शन एवं विवेचन' पुस्तिका तत्कालीन सघ मत्री श्री भवरलाल जी कोठारी के प्रयासो से प्रकाशित हुई। श्री कोठारी वीरसघ योजना के निपुण शिल्पी रहे, उनका योगदान वीरसघ के लिये सदैव स्मरण रहेगा। इसी क्रम में ज्ञानमत्री श्री मोहनलाल जी मूथा, श्रीमती उमराव बाई मूथा व बादमे श्री गणेशलाल जी बया श्री सज्जनसिह जी मेहता, श्री मोतीलाल जी चडालिया, श्री सुजानमल जी मारु व समता प्रचार सघ के सहयोगियो का उल्लेखनीय सहकार मिला। डॉ० नरेन्द्र भानावत ने वीरसघ की सचालन समिति के सदस्य के रूप मे इसके वैचारिक अधिष्ठान को स्पष्ट करने मे प्रशस्त योगदान किया।

वीरसघ शिविर और समीक्षण ध्यान वीरसघ ने प्रतिवर्ष परम श्रद्धेय आचार्यश्री जी के सान्निध्य मे श्रावण बदी अष्टमी से चतुर्दशी तक स्वाध्याय और साधना शिविर आयोजित करने का सकल्प किया और हमे हर्ष है कि सदस्यो के सहयोग से हमारा यह सकल्प प्राय नियमित रूप से पूर्ण हो रहा है। वीर सघ का सौभाग्य है कि शासन नायक आचार्य श्रीजी इन शिविरो मे सभागियो को प्रभूत मार्गदर्शन प्रदान करते है और सदस्यो को जिज्ञासा समाधान का अधिकाधिक अवसर प्रदान करते है। वीरसघ शिविरो मे आचार्य-प्रवर ने महती अनुकम्पा करके वीरसघ सदस्यो को ध्यान-साधना का अभ्यास कराया। इसी अभ्यास क्रम में से समीक्षण ध्यान के साधकों की एक टोली उभर आई। साधको के अभ्यास क्रम के साथ-साथ समीक्षण ध्यान के प्रभाव क्षेत्र का विस्तार हुआ। हम परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर की इस महान् अनुकम्पा के लिये हृदय से आभारी है।

वीरसंघ की प्रगति : मुझे यह कहने मे सकोच नही है कि वीरसघ की प्रगति धीमी है। इसका एक प्रबल कारण तो वीरसघ सदस्यता की कठिन शर्तें और इसके कार्यो की प्रकृति है ही, पर हम कार्यकर्त्ताओ के प्रयासो मे अपेक्षित गति का अभाव भी एक अन्य कारण हो सकता है। हमे अपने उप प्रधान, शास्त्र-मर्मज्ञ, विद्या-दानी श्रीयुत् हिम्मतसिह जी सरूपरिया के निधन से उत्पन्न रिक्तता की पूर्ति करनी है। मै रजत जयन्ती वर्ष की इस पावन वेला मे श्री सरूपरिया जी को आदरपूर्वक स्मरण करना अपना पुनीत कर्त्तव्य समझता हू।

अनुरोध : अन्त मे समाज की चित्तवृत्ति को सशोधित करने वाली इस महान् योजना की प्रगति हेतु सभी श्रावक-श्राविका से सत् सकल्प पूर्वक दृढ और निरन्तर प्रयास करने का अनुरोध करता हू।

–जवाहर वाणी–

मनुष्य बनना सरल है, किन्तु मनुष्यत्व प्राप्त करना कठिन है। अतः मनुष्यत्व प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये।

–श्री जवाहराचार्य
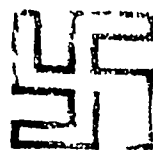
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

विश्वस्त मंडल (BOARD OF TRUSTEES)

BOARD OF TRUSTEES

१९६६-६७ से १९७५-७६ तक

१९७६-७७ से १९८३-१९८४ तक

१९८४-८५ से निरन्तर.-

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के अध्यक्षों के कार्यकाल की विवरणिका :-

क्र स.	नाम अध्यक्ष	कार्यकाल कब से	कब तक	कुल वर्ष
१.	श्रीमान् छगनलालजी सा वैद, भीनासर	१८-९-६३ से	५-११-६५	२ वर्ष
२.	" गणपतराजजी सा. बोहरा, मद्रास	६-११-६५ से	१९-११-६८	३ वर्ष
३.	" पारसमलजी सा. काकरिया, कलकत्ता	२०-११-६८ से	२०-९-७१	३ वर्ष
४.	" हीरालालजी सा. नादेचा, खाचरोद	२१-९-७१ से	२७-९-७३	२ वर्ष
५.	" गुमानमलजी सा चोरडिया, जयपुर	२८-९-७३ से	१३-१०-७७	४ वर्ष
६.	" पूनमचदजी सा चौपड़ा, रतलाम	१४-१०-७७ से	१०-१०-८०	३ वर्ष
७.	" जुगराजजी सा. सेठिया, बीकानेर	११-१०-८० से	१७-१०-८२	२ वर्ष
८.	" दीपचन्दजी सा. भूरा, देशनोक	१८-१०-८२ से	१५-११-८५	३ वर्ष
९.	" चुन्नीलालजी सा. मेहता, बम्बई	१६-११-८५ से	निरन्तर	

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के उपाध्यक्षों का विवरण :-

क्र. स.	नाम	कार्यकाल कब से	कब तक	कुल वर्ष
१.	श्रीमान् हीरालालजी नादेचा, खाचरोद	१८-९-६३ से	१४-१०-६६	३ वर्ष
२.	" भागचन्दजी गेलड़ा, मद्रास	१८-९-६३ से	४-१०-६७	४ वर्ष
३	" स्वरूपचंदजी चोरड़िया, जयपुर	६-११-६५ से	१९-११-६८	३ वर्ष
४.	" जयचन्दलालजी रामपुरिया, कलकत्ता	६-११-६५ से	१९-११-६८	३ वर्ष
५.	" नाथूलालजी सेठिया, रतलाम	१५-१०-६६ से	१९-११-६८	२ वर्ष
६.	" तोलारामजी भूरा, देशनोक	५-१०-६७ से	१०-११-७०	३ वर्ष
७.	" जुगराजजी बोथरा, दुर्ग	२०-११-६८ से	१३-१०-६९	१ वर्ष
८.	" उमरावमलजी चोरडिया, जयपुर	२०-११-६८ से	१०-११-७०	२ वर्ष
९.	" कुन्दनसिहजी खेमसरा, उदयपुर	२०-११-६८ से	१०-११-७०	२ वर्ष
१०.	" पुखराजजी छल्लाणी, मद्रास	१४-१०-६९ से	८-१०-७२	३ वर्ष
११.	" जैसराजजी बैद, बीकानेर	११-११-७० से	५-१०-७५	५ वर्ष
१२.	" गेदालालजी नाहर, जावरा	११-११-७० से	८-१०-७२	२ वर्ष
१३.	" कन्हैयालालजी मालू, कलकत्ता	११-११-७० से	८-१०-७२	२ वर्ष
१४.	" सुन्दरलालजी तातेड़, बीकानेर	९-१०-७२ से	५-१०-७५	३ वर्ष
१५.	" सरदारमलजी ढढ्ढा, जयपुर	९-१०-७२ से	५-१०-७५	३
		४-१०-७८ से	१०-१०-८०	२ वर्ष

१६.	श्रीमान् चुन्नीलालजी मेहता, बम्बई	९-१०-७२ से ५-१०-७५	३ वर्ष
१७	" मूलचन्दजी पारख, नोखामंडी	६-१०-७५ से ३-१०-७८	३ वर्ष
१८.	" केशरीचन्दजी सेठिया, मद्रास	६-१०-७५ से ३-१०-७८	३ वर्ष
१९.	" सुन्दरलालजी कोठारी, बम्बई	६-१०-७५ से ३-१०-७८ १६-१०-८५ से निरन्तर	३ वर्ष
२०.	" हिम्मतसिंहजी सरूपरिया, उदयपुर	६-१०-७५ से २४-९-७६	१ वर्ष
२१.	" पूनमचन्दजी चौपड़ा, रतलाम	२५-९-७६ से १३-१०-७७	१ वर्ष
२२.	" खुशालचन्दजी गेलड़ा, मद्रास	१४-१०-७७ से २२-९-७९	२ वर्ष
२३.	" सोहनलालजी सिपानी, बैंगलोर	४-१०-७८ से १७-१०-८२ ५-१०-८६ से निरन्तर	४ वर्ष
२४.	" तोलारामजी डोसी, कलकत्ता	४-१०-७८ मे १७-१०-८२	४ वर्ष
२५.	" प्रेमराजजी कांकरिया, अहमदाबाद	२३-९-७९ से ७-१०-८३	४ वर्ष
२६.	" मानमलजी बाबेल, ब्यावर	११-१०-८० से १७-१०-८२	२ वर्ष
२७	" उत्तमचन्दजी गेलड़ा, मद्रास	१८-१०-८२ से २८-१२-८४	२ वर्ष
२८.	" मोहनराजजी बोहरा, बैंगलोर	१८-१०-८२ से २८-१२-८४	२ वर्ष
२९.	" लूणकरणजी हीरावत, दिल्ली	१८-१०-८२ से २८-१२-८४	२ वर्ष
३०.	" भवरलालजी वैद, कलकत्ता	८-१०-८३ से १५-११-८५	२ वर्ष
३१.	" माणकचन्दजी रामपुरिया, बीकानेर	२९-१२-८४ से ४-१०-८६	२ वर्ष
३२.	" चम्पालालजी जैन, ब्यावर	२९-१२-८४ से निरन्तर	
३३.	" एस. डी. उगमचन्दजी लोढ़ा, मद्रास	२९-१२-८४ से ४-१०-८६	२ वर्ष
३४.	" भंवरलालजी कोठारी, बीकानेर	५-१०-८६ से निरन्तर	

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के मंत्रियों के कार्यकाल का विवरण:—

क्र. स.	नाम मंत्री	कार्यकाल कब से कब तक	कुल वर्ष
१.	श्रीमान् जुगराजजी सेठिया, बीकानेर	१८-९-६३ से ५-१०-७५	१२ वर्ष
२.	" भंवरलालजी कोठारी, बीकानेर	६-१०-७५ से ३-१०-७८	३ वर्ष
३.	" सरदारमलजी सा. कांकरिया कलकत्ता	४-१०-७८ से १७-१०-८२	४ वर्ष
४.	" पीरदानजी पारख अहमदाबाद	१८-१०-८२ से २८-१२-८४	२ वर्ष
५.	" धनराजजी सा. वेताला, नोखामण्डी	२९-१२-८४ से निरन्तर	

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के सहमन्त्रियों का विवरण :—

क्र स.	नाम	कार्यकाल कब से कब तक	कुल वर्ष
१.	श्रीमान् सुन्दरलालजी तातेड़, बीकानेर	१८-९-६३ से ८-१०-७२ = ९ ४-१०-७८ से १०-१०-८० = २	११ वर्ष

क्र.	नाम	कार्यकाल	कुल
२.	श्रीमान् महावीरचन्दजी धाडीवाल, रायपुर	१८-९-६३ से १४-१०-६६=३	
		४-१०-७८ से १०-१०-८०=२	५ वर्ष
३.	” भंवरलालजी कोठारी, बीकानेर	६-११ ६५ से ४-१०-६७=२	
		९-१०-७२ से ५-१०-७५=३	५ वर्ष
४.	” शुभकरणजी काकरिया, मद्रास	६-११-६५ से ४-१०-६७	२ वर्ष
५.	” उत्तमचन्दजी मूथा, रायपुर	१५-१०-६६ से १९-११-६८	२ वर्ष
६.	” उगमराजजी मूथा, मद्रास	५-१०-६७ से ८-१०-७२=५	
		१८-१०-८२ से २८-१२-८४=२	७ वर्ष
७.	” पीरदानजी पारख, अहमदाबाद	५-१०-६७ से १०-११-७०=३	
		११-१०-८२ से १७-१०-८२=२	५ वर्ष
८.	” मोतीलालजी मालू, कलकत्ता	२०-११-६८ से १०-११-७०	२ वर्ष
९.	” जसकरणजी बोथरा, गंगाशहर	११-११-७० से ८-१०-७२	२ वर्ष
१०.	” पृथ्वीराजजी पारख, दुर्ग	११-११-७० से ५-१०-७५	५ वर्ष
११.	” कालूरामजी छाजेड़, उदयपुर	१७-१०-७४ से २४-९-७६	२ वर्ष
१२.	” चम्पालालजी डागा, गंगाशहर	९-१०-७२ से ५-१०-७५=३	
		४-१०-७८ से १७-१०-८२=४	७ वर्ष
		५-१०-८६ से निरन्तर	
१३.	” उमरावमलजी ढढ्ढा, जयपुर	६-१०-७५ से ३-१०-७८=३	
		२९-१२-८४ से ४-१०-८६=२	५
१४.	” हंसराजजी सुखलेचा, बीकानेर	६-१०-७५ से ३-१०-७८	३
१५.	” धनराजजी बेताला, नोखामण्डी	६-१०-७५ से ३-१०-७८	३
१६.	” मोहनलालजी श्री श्रीमाल, ब्यावर	२५-९-७६ से ३-१०-७८	२
१७.	” पारसमलजी बोहरा, पीपलियाकला	४-१०-७८ से १०-१०-८०	२
१८.	” समीरमलजी काठेड़, जावरा	११-१०-८० से १७-१०-८२	२
१९.	” हस्तीमलजी नाहटा, अजमेर	१०-१०-८० से २८-१२-८४	४
२०.	” विनयचन्दजी कांकरिया, अहमदाबाद	१८-१०-८२ से २८-१२-८४	२
२१.	” मगनलालजी मेहता, रतलाम	१८-१०-८२ से २८-१०-८४	२
२२.	” फतहमलजी चोरड़िया, जोधपुर	२९-१२-८४ से निरन्तर	
२३.	” प्रेमचन्दजी बोथरा, मद्रास	२९-१२-८४ से ४-१०-८६	२
२४.	” मदनलालजी कटारिया, रतलाम	२९-१२-८४ से निरन्तर	
२५.	” केशरीचन्दजी सेठिया मद्रास	५-१०-८६ से निरन्तर	

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के कोषाध्यक्षों के कार्यकाल का विवरण

क्र. सं.	नाम कोषाध्यक्ष	कार्यकाल कब से	कब तक	कुल
१.	श्रीमान् सरदारमलजी काकरिया, कलकत्ता	१८-९-६३ से	१४-१०-६६	३

१५-१०-६६ से १६-११-६८ २ वर्ष

२. " गोतमचंदजी गेलड़ा, मद्रास — २०-१०-६८ से २०-११-७० २ वर्ष

३. " भागचन्दजी गेलड़ा, मद्रास — ११-११-७० से १५-१०-७५ ५ वर्ष

४ " खुशालचन्दजी गेलडा, मद्रास — ६-१०-७५ से ३-१०-७८ = ३

५. " चम्पालालजी डागा, गंगाशहर — १८-१०-८२ से ४-१०-८६ = ४ ७ वर्ष

६. " जसकरणजी बोथरा, गंगाशहर — ४-१०-७८ से १७-१०-८२ ४ वर्ष

७. " भवरलालजी वडेर, बीकानेर — ५-१०-८६ से निरन्तर

अभिनन्दन सूची

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ द्वारा सम्मानित महानुभावों की सूची -

क्र. सं.	दिनाक	स्थान	सम्मानित-नाम
१.	२८-६-७३	बीकानेर	पद्म विभूषरण डा. दौलतसिहजी कोठारी को अभिनन्दन पत्र
२.	३०-६-७३	बीकानेर	श्रीमती सेठानीजी आनन्दकंवर बाई पीतलिया
३.	३०-६-७३	बीकानेर	श्रीमती लक्ष्मीदेवी धाड़ीवाल
४.	६-१०-७५	देशनोक	पण्डितरत्न विद्यादानी श्रीमान् रोशनलालजी सा चपलोत उदयपुर
५.	२५-६-७६	नोखामंडी	पंडितरत्न विद्यादानी श्री शोभाचन्द्रजी भारिल्ल, व्यावर
६.	१४-१०-७७	गगाशहर-भीनासर	त्यागमूर्ति, समाजरत्न, सेवाभावी आदर्श सुश्रावक श्रीमान् गुमानमलजी सा चोरडिया, जयपुर ।
७	१४-१०-७७	गंगाशहर-भीनासर	समाजरत्न, सेवापरायण, कर्तव्यनिष्ठ प्रशासक श्रीमान् देवेन्द्रराजजी सा मेहता, जयपुर
८	१४-१०-७७	गंगाशहर-भीनासर	करुणा-मूर्ति, सेवाव्रती सुश्रावक श्रीमान् चम्पालालजी सा पिरोदिया, रतलाम
६.	१४-१०-७७	गगाशहर-भीनासर	आदर्श सुश्राविका महिलारत्न श्रीमती धुलीबाई पिरोदिया,
६-अ	५-१०-७८	जोधपुर (राज)	समाजरत्न, सेवापरायण, कर्त्तव्यनिष्ठ प्रशासक श्री रणजीतसिंहजी कूमट, जयपुर ।
६-ब	५-१०-७८	जोधपुर (राज.)	समाजरत्न, विद्यादानी, साहित्य सम्पादक डा नरेन्द्र भानावत, जयपुर
१०	२३-६-७६	अजमेर	आदर्श सुश्राविका महिलारत्न श्रीमती विजयादेवी सुराना जयपुर
११.	२३-६-७६	अजमेर	धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्रावक श्रीमान् तोलारामजी डोसी देशनोक (राज)

१२. २३-६-७६	अजमेर	श्रीमान् रखबचन्दजी कटारिया, रतलाम (म. प्र)
१३. २३-६-७६	अजमेर	धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्रावक श्रीमान् हंसराजजी सुखलेचा, बीकानेर
१३-अ २३-६-७६	अजमेर	धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्रावक श्री प्रतापचन्दजी भूरा गंगाशहर (राज.)
१४. २३-६-७६	अजमेर	धर्मनिष्ठ सेवाभावी सुश्रावक श्रीमान् जयचन्दलालजी सुखानी, बीकानेर
१५. १०-१०-८०	राणावास	श्रीमती फूलकंवर चोरड़िया नीमच का अ. भा. जैन महिला समिति द्वारा अभिनन्दन
१६. ३०-६-८१	उदयपुर	श्रीमान् केशरीचंदजी सा. सेठिया, मद्रास
१७. ३०-६-८१	उदयपुर	श्रीमान् केशरीचंदजी सा. गोलछा, बंगाईगाव
१८. ३०-६-८१	उदयपुर	श्रीमान् अमृतलालजी सा. मेहता, रायपुर
१९ ३०-६-८१	उदयपुर	श्रीमान् जुगराजजी सा. सेठिया, बीकानेर
२०-१०-८२	अहमदाबाद	डा इन्दरराज बैद, मद्रास
२०-१०-८२	अहमदाबाद	श्री कालुरामजी छाजेड, उदयपुर
२०. ३-३-८४	रतलाम	धर्मपाल पितामह सघ के पूर्व अध्यक्ष उदारमना श्रीमान् गणपतराजजी सा. बोहरा, पीपलियाकला
२१ ३-३-८४	रतलाम	धर्मपाल माता महिला रत्न आदर्श समाज सेविका श्रीमती यशोदादेवीजी बोहरा, पीपलियाकला

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के कार्यकारिणी सदस्यों के कार्यकाल का विवरण पत्र सन् १९६३ से १९८६-८७ तक

क्र सं.	नाम सदस्य	स्थान	(वर्ष) कार्यकाल
१.	श्री छगनलालजी बैद	भीनासर	सन् १९६३ से ८६-८७ तक निरन्तर
२.	श्री हीरालालजी नादेचा	खाचरौद	सन् १९६३ मे ८१ तक
३.	श्री भागचन्दजी गेलडा	मद्रास	सन् १९६३ से ७० तक
४.	श्री जुगराजजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९६३ से सन् ८६-८७ निरन्तर
५.	श्री सुन्दरलालजी तातेड़	बीकानेर	सन् १९६३ से ७५ तक ७७ से ८१ तथा १९८३ से निरन्तर
६	श्री महावीरचन्दजी धाडीवाल	रायपुर (म प्र.)	सन् १९६३ से ८३ तक
७.	श्री सरदारमलजी काकरिया	कलकत्ता	सन् १९६३ से निरन्तर
८.	श्री छगनलालजी मूथा	बैंगलोर	सन् १९६३ से ८० तक
९.	श्री जेठमलजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९६३ से ६८ तक

१०. श्री नाथूलालजी सेठिया	रतलाम	सन् १९६३ से ७२ तक
११ श्री पुखराजजी छल्लाणी	मैसूर	सन् १९६३ से ६६ तक ६९ से निरन्तर
१२. श्री कन्हैयालालजी मेहता	मन्दसौर	सन् १९६३ से ६६ व ७१ से ८४ तक
१३. श्री कन्हैयालालजी मालू	कलकत्ता	सन् १९६३ से ६८ व ७० से ७६ तक
१४. श्री कानमलजी नाहटा	जोधपुर	सन् १९६३
१५ श्री मदनराजजी मूथा	मद्रास	सन् १९६३ से ६६ व ७० से निरंतर
१६. श्रीमती आनन्दकंवरजी पीतलिया	रतलाम	सन् १९६३ से ६५ व ७१ से ७३ तक
१७. श्री पं. पूर्णचन्दजी दक	उदयपुर	सन् १९६३ से ७३ तक
१८ श्री खेलशकर भाई जौहरी	जयपुर	सन् १९६३
१९. श्री भवरलालजी कोठारी	बीकानेर	सन् १९६३ से निरन्तर
२० श्री भवरलालजी श्री श्रीमाल	बीकानेर	सन् १९६३ से ६४ तक
२१. श्री किशनलालजी लूणिया	बेंगलोर	सन् १९६३ से ६५ तक
२२. श्री कालूरामजी छाजेड	उदयपुर	सन् १९६३ से ६४ व ६६ से निरतर
२३. श्री चादमलजी नाहर	छोटी सादड़ी	सन् १९६३ से ६४ तक
२४ श्री गिरधारीलालजी के. जवेरी	बम्बई	सन् १९६३ से ६४ तक
२५. श्री कन्हैयालालजी मूलावत	भीलवाड़ा	सन् १९६३ से ६४ व ७७ से ७८ तक
२६ श्री लक्ष्मीलालजी सिरोहिया	उदयपुर	सन् १९६३ से ६७ तक
२७. श्री सम्पतलालजी बोहरा	दिल्ली	सन् १९६३ से ६७ व ७० से ७३ तक
२८. श्री गुणवंतलालजी गोदावत	बधाना मडी (नीमच)	सन् १९६३ से ६५ तक ७८ तथा १९८० से ८४ तक
२९. श्रीमती नगीना बहिन चोरड़िया	दिल्ली	सन् १९६३ से ६५ तक
३० श्री राजमलजी चोरड़िया	अमरावती	सन् १९६३ से ६६ व ७४ से ७७ तक
३१. श्री गोकुलचन्दजी सूर्या	उज्जैन	सन् १९६३ से ६४ तथा १९७६
३२ श्री सुगनराजजी साड	जोधपुर	सन् १९६४ से ६५ तक
३३ श्री ज्ञानचन्दजी चोरड़िया	जयपुर	सन् १९६४ तथा ७१ से ७६ तक
३४ श्री तोलारामजी भूरा	देशनोक	सन् १९६४ तथा ६६ से ७२ तक
३५ श्री धनराजजी बेताला	नोखामण्डी	सन् १९६४ से निरन्तर
३६. श्री मेघराजजी सुखाणी	बीकानेर	सन् १९६४ से ७३ व ७७ से ७८ तक
३७ श्री कन्हैयालालजी मूथा	ब्यावर	सन् १९६४ से ६६ तक
३८. श्री माणकचन्दजी साड	इन्दौर	सन् १९६४
३९ श्री वक्षलालजी कोठारी	छोटी सादड़ी	सन् १९६४ से ६५ तक
४०. श्री रोशनलालजी खाव्या	इन्दौर	सन् १९६४ से ६५ तक
४१. श्री सतीदानजी तातेड़	बीकानेर	सन् १९६४
४२ श्री पूनमचन्दजी कांकरिया	ब्यावर	सन् १९६४ से ६५ व ७१ से ७२ तक
४३. श्री महेशदासजी पीचा	गंगाशहर	सन् १९६४ से ७२ व ७५ से ८१ तक

४४. श्री गणपतराजजी बोहरा	पीपल्याकला	सन् १९६५ से निरन्तर
४५. श्री स्वरूपचन्दजी चोरडिया	जयपुर	सन् १९६५ से ६७ तक
४६. श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया	कलकत्ता	सन् १९६५ से ६८ तक
४७. श्री शुभकरणजी काकरिया	मद्रास	सन् १९६५ से ६६ व ७० से ८४ तक
४८. श्री गौतमचन्दजी गेलड़ा	मद्रास	सन् १९६५ से ६८ तथा ८६ से निरन्तर
४९. श्री अमरचन्दजी लोढ़ा	ब्यावर	सन् १९६५ से ६९ तथा ७१ तक
५०. श्री पीरदानजी पारख	अहमदाबाद	सन् १९६५ व ६७ से ६९ तक तथा १९७१ से निरन्तर
५१. श्री तोलारामजी हीरावत	देशनोक	सन् १९६५ से ६६ व ७४ से ८३ तक
५२. श्री गेदालालजी नाहर	जावरा	सन् १९६५ से ६७ व ७० से ७१ तक
५३. श्री उत्तमचन्दजी मूथा	रायपुर	सन् १९६५ से ७३ तक
५४. श्री फूलचन्दजी लूणिया	बैंगलोर	सन् १९६६ से ६८ तक
५५. श्री मोतीलालजी बरड़िया	सरदारशहर	सन् १९६६ से ६७ व ७५ से ८०
५६ श्री हुलासमलजी मोदी	रायनांदगाव	सन् १९६६ से ६७ तक
५७. श्री लाभचन्दजी काठेड़	इन्दौर	सन् १९६६ से ६८ तक
५८. श्री देशराजजी जैन	केसिंगा	सन् १९६६ से ६७ तक
५९. श्री गोतमचन्दजी भण्डारी	जोधपुर	सन् १९६६ से ७७ व ८१ से निरन्तर
६०. श्री शंकरलालजी श्री श्रीमाल	मद्रास	सन् १९६६ से ६८ तक
६१. श्री उगमराजजी मूथा	मद्रास	सन् १९६७ से ७१ तक तथा ७६ से व ८२ से निरन्तर
६२. श्री मोतीलालजी मालू	कलकत्ता	सन् १९६७ से ६९ तक व ७१ व १९८० से निरन्तर
६३. श्री लूणकरणजी हीरावत	देशनोक	सन् १९६७ से ७२ व ८१ से निरन्तर
६४. श्री पृथ्वीराजजी पारख	दुर्ग	सन् १९६७ से निरन्तर
६५. श्री हुकमीचन्दजी छल्लाणी	मद्रास	सन् १९६७
६६. श्री जसकरणजी बोथरा	गगाशहर	सन् १९६७ से निरन्तर
६७. श्री पारसमलजी काकरिया	कलकत्ता	सन् १९६८ से निरन्तर
६८. श्री जुगराजजी बोथरा	दुर्ग	सन् १९६८
६९. श्री उमरावमलजी चोरड़िया	जयपुर	सन् १९६८ से ६९ व ८१ से निरन्तर
७०. श्री कुन्दनसिंहजी खिमेसरा	उदयपुर	सन् १९६८ से ६९ तथा १९८०
७१. श्री ताराचन्दजी मुणोत	अमरावती	सन् १९६८ से ७१ तक
७२. श्री गुलाबचन्दजी सुराणा	बोलारम्	सन् १९६८
७३. श्री चम्पालालजी सुराणा	रायपुर	सन् १९६८ से ८२ तक
७४. श्री प्रकाशचन्दजी कोठारी	अमरावती	सन् १९६८

७५. श्री भूमरमलजी सेठिया	भीनासर	सन् १९६९ से १९८४ तक
७६. श्री चम्पालालजी डागा	गगाशहर	सन् १९६९ से निरन्तर
७७. श्री भीखमचदजी भंसाली	कलकत्ता	सन् १९६९ से ८३ तक तथा १९८५ से निरतर
७८ श्री लक्ष्मीलालजी पामेचा	बडीसादड़ी	सन् १९६९ से निरन्तर
७९. श्री मागीलालजी धोका	मद्रास	सन् १९६९ से निन्तर
८०. श्री सुन्दरलालजी कोठारी	बम्बई	सन् १९६९ से निरतर
८१. श्री सौभाग्यमलजी पामेचा	मन्दसौर	सन् १९६९ तथा १९८५
८२ श्री हरिसिंहजी रांका	भीलवाडा	सन् १९६९ तथा १९८६ से निरतर
८३. श्री माणकचन्दजी लोढा	मदुरांतकम	सन् १९६९ से १९७३ तक
८४ श्री जैसराजजी बैद	बीकानेर	सन् १९७० से १९७६ तक
८५. श्री खुशालचन्दजी गेलड़ा	मद्रास	सन् १९७० से १९७४ तक तथा १९७६ से १९८० तक
८६ श्री हीराचन्दजी खीमेसरा	व्यावर	सन् १९७० से १९७५ तक तथा १९७८ से १९८३ तक
८७. श्री फतहसिंहजी चोरड़िया	नीमच	सन् १९७० से ७१ तक
८८. श्री श्री चम्पालालजी सांड	देशनोक	सन् १९७०
८९. श्री श्री गम्भीरमलजी श्रीश्रीमाल	जलगाव	सन् १९७० से १९७७ तक व १९८६ निरन्तर
९०. श्री परमेश्वरलालजी ताकड़िया	उदयपुर	सन् १९७० से १९७८ तक
९१ श्री केशरीचन्दजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९७० से १९७४ तक व १९७७ से सन् ७८ तक
९२. श्री उत्तमचन्दजी लोढा	बीकानेर	सन् १९७० से १९७२ तक
९३ श्री फतहचन्दजी मुकीम	बीकानेर	सन् १९७० से १९७१ तक
९४ श्री जसवन्तसिंहजी वावेल	जयपुर	सन् १९७१ से १९७७ तक तथा १९८१ से १९८३ व ८६ से निरन्तर
९५. श्री शातिलालजी साड	देशनोक	सन् १९७१ से १९७६ तक तथा १९८४ से निरन्तर
९६. श्री चुन्नीलालजी मेहता	वम्बई	सन् १९७१ निरन्तर
९७. श्री सरदारमलजी ढढ्ढा	जयपुर	सन् १९७१ से ७३ व ७८ से निरन्तर
९८ श्री चन्दनमलजी देसरला	देवगढ	सन् १९७१ से १९८० तक तथा १९८२, ८३ व ८६ से निरन्तर
९९. श्री मगनमलजी मेहता	रतलाम	सन् १९७१ से निरन्तर
१०० श्री समीरमलजी काठेड़	जावरा	सन् १९७१ से निरंतर
१०१. श्री रखवचन्दजी मालवी	रतलाम	सन् १९७१

१०२.	श्री पारसमलजी मेहता	जयपुर	सन् १९७१
१०३.	श्री हिम्मतसिंहजी सरूपरिया	उदयपुर	सन् १९७१ से १९८४ तक
१०४.	श्री अम्बालालजी मट्ठा	उदयपुर	सन् १९७१ से १९७२ तक
१०५.	श्रीमती यशोदादेवी वोहरा	पीपल्याकला	सन् १९७१ से १९७६ तक तथा १९८० से निरन्तर
१०६.	श्रीमती विजयादेवी सुराणा	रायपुर	सन् १९७१ से १९७६ तक तथा १९८० से निरन्तर
१०७.	श्रीमती फूलकवरबाई काकरिया	कलकत्ता	सन् १९७१ से १९७६ तक तथा १९८० से निरन्तर
१०८.	श्रीमती भंवरीबाई बैद	रायपुर	सन् १९७१ से १९७४ तक
१०९.	श्रीमती उमरावबाई मूथा	मद्रास	सन् १९७१ से १९७३ तक व १९७५ से १९७६ तक
११०.	श्री चेनसिंहजी बरला	जयपुर	सन् १९७२
१११.	श्री उदयचन्दजी कोठारी	जयपुर	सन् १९७२ से १९७३
११२.	श्री गुमानमलजी चोरड़िया	जयपुर	सन् १९७२ से निरन्तर
११३.	श्री शान्तिचन्द्रजी मेहता	चित्तौड़गढ	सन् १९७२ से १९८१ तक
११४.	डॉ. नरेन्द्रकुमारजी भानावत	जयपुर	सन् १९७२ से निरन्तर
११५.	श्री नेमीचन्दजी बैद	नोखामण्डी	सन् १९७२
११६.	श्री पारसराजजी मेहता	जोधपुर	सन् १९७२ से १९७८ तक
११७.	श्री वीरेन्द्रसिंहजी बांठिया	जबलपुर	सन् १९७२ से १९७५ तक
११८.	श्री **नौर**तनमलजी छल्लाणी	ब्यावर	सन् १९७२ से १९८१ तक व १९८६ से निरन्तर
११९.	श्री चादमलजी पामेचा	ब्यावर	सन् १९७२ से १९७५ तक
१२०.	श्री धूड़चन्दजी बोथरा	गंगाशहर	सन् १९७३ से १९७५ तक
१२१.	श्री मोहनलालजी मूथा	जयपुर	सन् १९७३ से निरन्तर
१२२.	श्री जयचन्दलालजी सुखाणी	बीकानेर	१९७३ से निरन्तर
१२३.	डॉ. मनोहरलालजी दलाल	उज्जैन	सन् १९७३ तथा १९८५ से निरन्तर
१२४.	श्री लाभचन्दजी पालावत	जयपुर	सन् १९७३ से १९७७ तक
१२५.	श्री ईश्वरचन्दजी बैद	नोखामण्डी	सन् १९७३ तथा १९८६ से निरन्तर
१२६.	श्री दीपचन्दजी भूरा	देशनोक	सन् १९७३ से निरन्तर
१२७.	श्री कंवरीलालजी कोठारी	नागौर	सन् १९७३ से १९७६ तक
१२८.	श्री केशरीचन्दजी सेठिया	मद्रास	सन् १९७३ से निरन्तर
१२९.	श्री मूलचन्दजी पारख	नोखा	सन् १९७४ से १९७८ तक
१३०.	श्री हसराजजी सुखलेचा	बीकानेर	सन् १९७४ से १९८५ तक

१३१. श्री मोहनलालजी श्रीश्रीमाल	ब्यावर	सन् १९७४ से १९८१ तक तथा १९८३ से निरन्तर
१३२. श्री उमरावमलजी ढढ्ढा	जयपुर	सन् १९७४ से १९८४ तक तथा १९८६ से निरन्तर
१३३. श्री पारसमलजी नाहर	अजमेर	सन् १९७४ से १९७७ तक
१३४. श्री फतहलालजी हिंगर	उदयपुर	सन् १९७४ से निरन्तर
१३५. श्री प्रेमचन्दजी कोठारी	बम्बई	सन् १९७४
१३६. श्री पूनमचन्दजी चौपडा	रतलाम	सन् १९७४ से निरन्तर
१३७ श्रीमती शाता बहिन मेहता	रतलाम	सन् १९७४ से १९७६ तक तथा १९८० से निरन्तर
१३८. श्री टी. सुशीलचन्दजी गेलडा	मद्रास	सन् १९७५
१३९ श्री दीपचन्दजी कांकरिया	कलकत्ता	सन् १९७५
१४० श्री मोहनलालजी नाहटा	बीकानेर	सन् १९७५
१४१. श्री शंकरलालजी जैन	भीम	सन् १९७५ से १९८२ तक तथा १९८५ से निरन्तर
१४२. श्री फतेहमलजी चोरड़िया	जोधपुर	सन् १९७५ से निरन्तर
१४३. श्री उम्मेदमलजी गांधी	जोधपुर	सन् १९७५ से १९७६ तक
१४४. श्री रामलालजी रांका	बीकानेर	सन् १९७५ से १९८० तक
१४५. श्री देवराजजी बच्छावत	बीकानेर	सन् १९७५
१४६ श्री पूनमचन्दजी बाबेल	ब्यावर	सन् १९७५
१४७ श्री वस्तीमलजी तालेरा	पाली	सन् १९७५ से १९७६
१४८. श्री राजेन्द्रकुमारजी मांडोत	इन्दौर	सन् १९७५
१४९. श्री प्रकाशचन्दजी सचेती	जयपुर	सन् १९७५ से १९७६
१५०. डॉ. दौलतसिंहजी कोठारी	दिल्ली	सन् १९७६ से १९७७ तक
१५१. श्री केसरीलालजी बोर्दिया	उदयपुर	सन् १९७६ से १९७८ तक
१५२. डॉ. नन्दलालजी बोर्दिया	इन्दौर	सन् १९७६ से १९८० तक
१५३. श्री रणजीतसिंहजी कुम्भट	जयपुर	सन् १९७६
१५४. समाजसेवी श्री मानवमुनिजी	इन्दौर	सन् १९७६ से निरन्तर
१५५. श्री केवलचन्दजी मूथा	रायपुर	सन् १९७६ से निरन्तर
१५६. श्री जोधराजजी सुराणा	बेंगलोर	सन् १९७६
५७ श्री भूपराज जी जैन	कलकत्ता	सन् १९७६ से १९८२ तक
५८. श्री दीपचन्दजी कांकरिया	कलकत्ता	सन् १९७६ से १९७७ तक व १९८५
५९. श्री भवरलालजी वैद	कलकत्ता	सन् १९७६ से निरन्तर
६०. श्री जतनलालजी लूणिया	भीनासर	सन् १९७६ से १९७७ तक व १९८६ से निरन्तर

१६१. श्री मानमलजी नावेल	व्यावर	सन् १९७६ तथा १९८० से १९८४ तक
१६२. श्री हस्तीमलजी नाहटा	अजमेर	सन् १९७६ से निरन्तर
१६३. श्री नथमलजी सिपानी	सिलचर	सन् १९७६ से १९८० तक
१६४. श्री मेघराजजी बोथरा	गंगाशहर	सन् १९७६ से १९७७ तक
१६५. श्री गोकुलचन्दजी सिपानी	कटूर	सन् १९७६ निरन्तर
१६६. श्री नेमीचन्दजी चौपडा	अजमेर	सन् १९७६ से १९७८ तक
१६७. श्री नथमलजी सिंघी	बीकानेर	सन् १९७६ से १९७७ तक
१६८. श्री मिट्ठालालजी लोढ़ा	ब्यावर	सन् १९७६ से १९८० तक तथा १९८३ से निरन्तर
१६९. श्री नवरतनमलजी डेड़िया	ब्यावर	सन् १९७६ से १९८० तक तथा १९८६ से निरन्तर
१७०. श्री रामलालजी जैन	दिल्ली	सन् १९७६ से १९७७ तक
१७१. श्री प्रकाशचन्दजी सूर्या	इन्दौर	सन् १९७६ तथा १९७८ से निरन्तर
१७२. श्री माणकचन्दजी नाहर	मद्रास	सन् १९७६
१७३. श्री अशोककुमारजी नलवाया	मन्दसौर	सन् १९७६ से १९७७
१७४. श्री वीरेन्द्रकुमारजी कोठारी	उज्जैन	सन् १९७६ से निरन्तर
१७५. श्री गौतमबाबू गेवा	निम्बाहेड़ा	सन् १९७६
१७६. श्री विजयचन्दजी पारख	बीकानेर	सन् १९७६ से १९७७ तक
१७७ श्रीमती रोशन बहिन खाव्या	रतलाम	सन् १९७६
१७८. श्री जबरचन्दजी मेहता	सोजतरोड	सन् १९७७ तथा १९८२ से १९८४ तक
१७९. श्री बालचन्दजी सुखलेचा	भोपाल	सन् १९७७
१८०. श्री समरथमलजी डागरिया	रामपुरा	सन् १९७७ से निरन्तर
१८१. श्री तोलारामजी डोसी	देशनोक	सन् १९७७ से निरन्तर
१८२. श्री कन्हैयालालजी तालेरा	पूना	सन् १९७७ से निरन्तर
१८३. श्री सम्पतराजजी बुर्ड	भीलवाडा	सन् १९७७ तथा १९७९ से निरन्तर
१८४. श्री प्रेमराजजी काकरिया	अहमदाबाद	सन् १९७७ से १९८४ तक
१८५. श्री हुक्मीचन्दजी बोथरा	कवर्धा	सन् १९७७ से १९८३ तक
१८६. श्री इन्द्रचन्दजी जैन बैद	राजनान्दगाव	सन् १९७७ से निरन्तर
१८७. श्री भूपराजजी नलवाया	इन्दौर	सन् १९७७ से १९८१ तक
१८८. श्री पारसराजजी बोहरा	पीपलियाकला	सन् १९७७ से १९८१ तक
१८९. श्री मोहनराजजी बोहरा	बेंगलोर	सन् १९७७ से १९८० तक तथा १९८२ से निरन्तर
१९० श्री भवरलालजी चौपडा	जावद	सन् १९७७ से १९८४ तक तथा १९८६ से निरन्तर

१९१ श्री गेदालालजी खाबिया	रतलाम	सन् १९७७ से १९८२ तक
१९२. श्री हस्तीमलजी मुरणोत	रतलाम	सन् १९७७ से १९७८ तक
१९३ श्री मोहनलालजी तलेसरा	पाली	सन् १९७७ से १९८० तक
१९४ श्री मदनलालजी भडारी	ब्यावर	सन् १९७४ तथा १९७७ से १९७८ तथा १९८०
१९५. श्री कालूरामजी नाहर	ब्यावर	सन् १९७७ से १९७९ तक
१९६ श्री रतनलालजी खीचा	ब्यावर	सन् १९७७
१९७ श्री तखतसिंहजी पानगड़िया	उदयपुर	सन् १९७७ से १९७९ तक तथा १९८१ से १९८२ तक
१९८ श्री सरदारमलजी धाड़ीवाल	जावरा	सन् १९७७ से १९८०
१९९ श्री जीवराजजी कटारिया	हुवली	सन् १९७७ व १९८० से १९८१
२०० श्री राजेन्द्रकुमारजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९७७
२०१ श्री टी आर. सेठिया	दिल्ली	सन् १९७७
२०२ श्री भैरूंलालजी भानावत	कानोड़	सन् १९७७ से १९७९ तक
२०३. श्री मोहनलालजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९७७ से १९७९ तथा १९८५
२०४ श्री सोहनलालजी सिपानी	बैंगलोर	सन् १९७८ से निरन्तर
२०५. श्री कुवेरसिंहजी सखलेचा	भोपाल	सन् १९७८ से १९८१ तक
२०६ श्री उगमराजजी खिंवेसरा	जोधपुर	सन् १९७८ से १९८१ तक
२०७ श्री सागरमलजी चपलोत	निम्बाहेडा	सन् १९७८ से निरन्तर
२०८. श्री सागरमलजी धोग	बडीसादडी	सन् १९७८
२०९. श्री सुरेन्द्रमोहनजी जैन	दिल्ली	सन् १९७८ से १९८० तक
२१०. श्री धर्मचन्दजी गेलड़ा	हैदराबाद	सन् १९७८ से १९८० तक तथा १९८५
२११. श्री सौभागमलजी कोटड़िया	मुगेली	सन् १९७८ से निरन्तर
२१२ श्री डा प्रेमसुमनजी जैन	उदयपुर	सन् १९७८ से १९८२ तक तथा १९८६ से निरन्तर
२१३. श्री भवरलालजी सेठिया	कलकत्ता	सन् १९७९ से निरन्तर
२१४ श्री माणकचदजी रामपुरिया	कलकत्ता	सन् १९७९ से निरन्तर
२१५ श्री शिखरचन्दजी मिन्नी	कलकत्ता	सन् १९७९ से निरन्तर
२१६. श्री मदनलालजी कटारिया	रतलाम	सन् १९७९ तथा १९८३ से निरन्तर
२१७. श्री धर्मीचन्दजी कोठारी	अजमेर	सन् १९७९ से १९८० तक तथा १९८६ से निरन्तर
२१८. श्री हसराजजी नाहर	अजमेर	सन् १९७९ से १९८१ तक
२१९. श्री सम्पतलालजी लोढ़ा	अजमेर	सन् १९७९ से १९८० तक
२२० श्री भौरीलालजी धींग	बडीसादडी	सन् १९७९ से निरन्तर
२२१. श्री हीरालालजी टोडरवाल	ब्यावर	सन् १९७९ से १९८१ तक

१६१. श्री मानमलजी नावेग	ब्यावर	सन् १९७६ तथा १९८० से १९८४ तक
१६२ श्री हस्तीमलजी नाहटा	अजमेर	सन् १९७६ से निरन्तर
१६३. श्री नथमलजी सिपानी	सिलचर	सन् १९७६ से १९८० तक
१६४. श्री मेघराजजी बोथरा	गंगाशहर	सन् १९७६ से १९७७ तक
१६५. श्री गोकुलचन्दजी सिपानी	कन्नूर	सन् १९७६ निरन्तर
१६६. श्री नेमीचन्दजी चौपड़ा	अजमेर	सन् १९७६ से १९७८ तक
१६७. श्री नथमलजी सिंघी	बीकानेर	सन् १९७६ से १९७७ तक
१६८. श्री मिट्ठालालजी लोढा	ब्यावर	सन् १९७६ से १९८० तक तथा १९८३ से निरन्तर
१६९. श्री नवरतनमलजी डेड़िया	ब्यावर	सन् १९७६ से १९८० तक तथा १९८६ से निरन्तर
१७०. श्री रामलालजी जैन	दिल्ली	सन् १९७६ से १९७७ तक
१७१. श्री प्रकाशचन्दजी सूर्या	इन्दौर	सन् १९७६ तथा १९७८ से निरन्तर
१७२. श्री माणकचन्दजी नाहर	मद्रास	सन् १९७६
१७३. श्री अशोककुमारजी नलवाया	मन्दसौर	सन् १९७६ से १९७७
१७४. श्री वीरेन्द्रकुमारजी कोठारी	उज्जैन	सन् १९७६ से निरन्तर
१७५. श्री गौतमबाबू गेवा	निम्बाहेड़ा	सन् १९७६
१७६ श्री विजयचन्दजी पारख	बीकानेर	सन् १९७६ से १९७७ तक
१७७ श्रीमती रोशन बहिन खाव्या	रतलाम	सन् १९७६
१७८. श्री जबरचन्दजी मेहता	सोजतरोड़	सन् १९७७ तथा १९८२ से १९८४
१७९. श्री बालचन्दजी सुखलेचा	भोपाल	सन् १९७७
१८०. श्री समरथमलजी डागरिया	रामपुरा	सन् १९७७ से निरन्तर
१८१. श्री तोलारामजी डोसी	देशनोक	सन् १९७७ से निरन्तर
१८२. श्री कन्हैयालालजी तालेरा	पूना	सन् १९७७ से निरन्तर
१८३. श्री सम्पतराजजी बुर्ड	भीलवाडा	सन् १९७७ तथा १९७९ से निर
१८४. श्री प्रेमराजजी काकरिया	अहमदाबाद	सन् १९७७ से १९८४ तक
१८५. श्री हुक्मीचन्दजी बोथरा	कवर्धा	सन् १९७७ से १९८३ तक
१८६. श्री इन्द्रचन्दजी जैन वैद	राजनान्दगाव	सन् १९७७ से निरन्तर
१८७. श्री भूपराजजी नलवाया	इन्दौर	सन् १९७७ से १९८१ तक
१८८. श्री पारसराजजी बोहरा	पीपलियाकलां	सन् १९७७ से १९८१ तक
१८९ श्री मोहनराजजी बोहरा	बेंगलोर	सन् १९७७ से १९८० तक तथा १९८२ से निरन्तर
१९०. श्री भंवरलालजी चौपडा	जावद	सन् १९७७ से १९८४ तक तथा १९८६ से निरन्तर

१९१ श्री गेंदालालजी खाविगा	रतलाम	सन् १९७७ से १९८२ तक
१९२. श्री हस्तीमलजी मुणोत	रतलाम	सन् १९७७ से १९७८ तक
१९३. श्री मोहनलालजी तनेसरा	पाली	सन् १९७७ से १९८० तक
१९४. श्री मदनलालजी भंडारी	ब्यावर	सन् १९७४ तथा १९७७ से १९७८ तथा १९८०
१९५. श्री कालूरामजी नाहर	ब्यावर	सन् १९७७ से १९७९ तक
१९६ श्री रतनलालजी खींचा	ब्यावर	सन् १९७७
१९७. श्री तखतसिंहजी पानगडिया	उदयपुर	सन् १९७७ से १९७९ तक तथा १९८१ से १९८२ तक
१९८ श्री सरदारमलजी घाडीवाल	जावरा	सन् १९७७ से १९८०
१९९ श्री जीवराजजी कटारिया	हुबली	सन् १९७७ व १९८० से १९८१
२००. श्री राजेन्द्रकुमारजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९७७
२०१. श्री टी. आर. सेठिया	दिल्ली	सन् १९७७
२०२ श्री भैरूलालजी भानावत	कानोड़	सन् १९७७ से १९७९ तक
२०३. श्री मोहनलालजी सेठिया	बीकानेर	सन् १९७७ से १९७९ तथा १९८५
२०४. श्री सोहनलालजी सिपानी	बैंगलोर	सन् १९७८ से निरन्तर
२०५. श्री कुबेरसिंहजी सखलेचा	भोपाल	सन् १९७८ से १९८१ तक
२०६ श्री उगमराजजी खिंवसरा	जोधपुर	सन् १९७८ से १९८१ तक
२०७. श्री सागरमलजी चपलोत	निम्बाहेड़ा	सन् १९७८ से निरन्तर
२०८ श्री सागरमलजी धोग	बडीसादडी	सन् १९७८
२०९ श्री सुरेन्द्रमोहनजी जैन	दिल्ली	सन् १९७८ से १९८० तक
२१० श्री धर्मचन्दजी गेलड़ा	हैदराबाद	सन् १९७८ से १९८० तक तथा १९८५
२११ श्री सौभागमलजी कोटड़िया	मुंगेली	सन् १९७८ से निरन्तर
२१२. श्री डा. प्रेमसुमनजी जैन	उदयपुर	सन् १९७८ से १९८२ तक तथा १९८६ से निरन्तर
२१३. श्री भंवरलालजी सेठिया	कलकत्ता	सन् १९७९ से निरन्तर
२१४ श्री माणकचंदजी रामपुरिया	कलकत्ता	सन् १९७९ से निरन्तर
२१५. श्री शिखरचन्दजी मिन्नी	कलकत्ता	सन् १९७९ से निरन्तर
२१६. श्री मदनलालजी कटारिया	रतलाम	सन् १९७९ तथा १९८३ से निरन्तर
२१७ श्री धर्मीचन्दजी कोठारी	अजमेर	सन् १९७९ से १९८० तक तथा १९८६ से निरन्तर
२१८. श्री हंसराजजी नाहर	अजमेर	सन् १९७९ से १९८१ तक
२१९. श्री सम्पतलालजी लोढा	अजमेर	सन् १९७९ से १९८० तक
२२०. श्री भौरीलालजी धींग	बडीसादडी	सन् १९७९ से निरन्तर
२२१. श्री हीरालालजी टोडरवाल	ब्यावर	सन् १९७९ से १९८१ तक

२२२. श्री विजयकुमारजी गोलछा — जयपुर — सन् १९७९ से १९८२ तक
२२३. श्री राजेन्द्रसिंहजी मेहता — कोटा — सन् १९७९ से १९८२ तक
२२४. श्री धर्मचन्दजी पारख — नोखामण्डी — सन् १९७९ से निरन्तर
२२५. श्री विनयकुमारजी काकरिया — अहमदावाद — सन् १९८० से १९८३ तक तथा १९८५ से निरन्तर
२२६. श्री चुन्नीलालजी ललवाणी — जयपुर — सन् १९८० से १९८४ तक
२२७. श्री माणकचन्दजी सेठिया — मद्रास — सन् १९८० से १९८१ तक
२२८. श्री रिखवदासजी भंसाली — कलकत्ता — सन् १९८०
२२९. श्री शातिलालजी ललवाणी — इन्दौर — सन् १९८० से १९८१ तक
२३०. श्री प्यारेलालजी भंडारी — अलीवाग — सन् १९८० से निरन्तर
२३१. श्री हंसराजजी काकरिया — सेवराई — सन् १९८० से १९८३ तक
२३२. श्री लालचन्दजी मेहता — अहमदावाद — सन् १९८०
२३३. श्री मंगलचन्दजी गाधी — सोजतरोड़ — सन् १७८० से १९८१ तक
२३४. श्रीमती स्वर्णलता बोथरा — बीकानेर — सन् १९८० से १९८२ तक
२३५. श्री वृद्धिचन्दजी गोठी — वेतुल — सन् १९८० से १९८२ तक
२३६. श्री रिखबचन्दजी कटारिया — रतलाम — सन् १९८१ से निरन्तर
२३७ श्री मांगीलालजी पारख — वालेसर दुर्गावता — सन् १९८१ से १९८३ तक
२३८. श्री महावीरचन्दजी गेलडा — हैदरावाद — सन् १९८१ से निरन्तर
२३९. श्री चुन्नीलालजी सांखला — वालेसर सत्ता — सन् १९८१ से निरन्तर
२४०. श्री जम्बूकुमारजी मूथा — वैंगलोर — सन् १९८१ से निरन्तर
२४१. श्री बाबूलालजी गादिया — उज्जैन — सन् १९८१
२४२. श्रीमती डा. हीरा बहिन बोर्दिया — इन्दौर — सन् १९८१ से १९८४ तक
२४३. श्री भीखमचन्दजी खीमेसरा — वैंगलोर — सन् १९८१
२४४. श्री रेखचन्दजी साखला — खैरागढ — सन् १९८१ से १९८३ तक
२४५. श्री प्रेमराजजी सोमावत — अहमदावाद — सन् १९८१ से १९८२ तक तथा १९८५ से निरन्तर
२४६. श्री चन्दनमलजी जैन — देवगढ मदारिया — सन् १९८१ तथा ८६ से निरन्तर
२४७. श्री रतनलालजी बरडिया — सरदारशहर — सन् १९८१ से निरन्तर
२४८. श्री भंवरलालजी बोरूंदिया — ब्यावर — सन् १९८१ से १९८२ तक १९८६ से निरन्तर
२४९. श्री उत्तमचन्दजी गेलडा — मद्रास — सन् १९८१ से निरन्तर
२५०. श्री हरखचन्दजी खीवेसरा — मद्रास — सन् १९८१
२५१. श्री माणकचन्दजी कोठारी — बगलोर — सन् १९८१ से १९८२ तक
२५२. श्री खेमचन्दजी सेठिया — बीकानेर — १९८१ से निरन्तर
२५३. श्री कान्तिलालजी काकरिया — अहमदाबाद — सन् १९८२ से १९८४ तक

२५४. श्री रोशनलालजी मेहता — अहमदाबाद — सन् १९८२
२५५. श्री शान्तिलालजी मेहता — अहमदाबाद — सन् १९८२
२५६. श्री प्रकाशचन्दजी कांकरिया — इन्दौर — सन् १९८२ से १९८५ तक
२५७. श्री शीतलचन्दजी नलवाया — इन्दौर — सन् १९८२ से निरन्तर
२५८. श्री कानसिंहजी मालू — अजमेर — सन् १९८२ से १९८४ तक
२५९. श्रीमती प्रेमलता जैन — अजमेर — सन् १९८२ से निरन्तर
२६०. श्री चम्पालजी बुर्ड — ब्यावर — सन् १९८२ से निरन्तर
२६१. श्री भवरलालजी वडेर — बीकानेर — सन् १९८२ तथा १९८४ से निरन्तर
२६२. श्री लादूरामजी बिराणी — भीलवाड़ा — सन् १९८२
२६३. श्री हरखलालजी सरूपरिया — चित्तौड़गढ़ — सन् १९८२
२६४. श्री भंवरलालजी भूरा — देशनोक — सन् १९८२
२६५. श्री चम्पालालजी भूरा — देशनोक — सन् १९८२ से १९८३ तक
२६६ श्रीमती सूरजदेवी चोरड़िया — जयपुर — सन् १९८२ से निरन्तर
२६७. श्री जतनलालजी साड — कोटा — सन् १९८२ से निरन्तर
२६८. श्री अमृतलालजी सांखला — उदयपुर — सन् १९८२ से सन् ८३ तक
२६९ श्री प्रेमराजजी चोपड़ा — इन्दौर — सन् १९८३ से ८४ तक
२७०. श्री रिखबचन्दजी जैन वैद — दिल्ली — सन् १९८३ से निरन्तर
२७१. श्री गजेन्द्रकुमारजी सूर्या — इन्दौर — सन् १९८३ से निरन्तर
२७२. श्री सुगनचन्दजी धोका — मद्रास — सन् १९८३
२७३. श्री विजेन्द्रकुमारजी पितलिया — रतलाम — सन् १९८३ से १९८४ तक तथा १९८६ से निरन्तर
२७४ श्री हनुमानमलजी सुराणा — गंगाशहर — सन् १९८३
२७५. श्री भंवरलालजी दस्साणी — कलकत्ता — सन् १९८३ से १९८४ तक व १९८६ से निरन्तर
२७६. श्री बालचन्दजी सेठिया — भीनासर — सन् १९८३ से १९८५ तक
२७७. श्री हरखचन्दजी कांकरिया — अहमदाबाद — सन् १९८३
२७८. श्री भंवरलालजी अभाणी — चित्तौड़गढ़ — सन् १९८३ से निरन्तर
२७९. श्री मोतीलालजी दुग्गड़ — देशनोक — सन् १९८३
२८०. श्री घीसूलालजी ढढ्ढा — जयपुर — सन् १९८३ से ८४ तक
२८१. श्री बालचन्दजी राका — मद्रास — सन् १९८३
२८२. श्री किशनसिंहजी सरूपरिया — उदयपुर — सन् १९८३ से निरन्तर
२८३. श्री भंवरलालजी जैन — भीलवाड़ा — सन् १९८३ से १९८४ तक
२८४ श्री गेहरीलालजी बया — बम्बई — सन् १९८४
२८५. श्री उमरावसिंहजी ओस्तवाल — बम्बई — सन् १९८४
२८६. श्री उत्तमचन्दजी खिवेसरा — बम्बई — सन् १९८४

२८७.	श्री उगमराजजी लोढा	मद्रास	सन् १९८४ से निरन्तर
२८८.	श्री प्रेमचन्दजी बोथरा	मद्रास	सन् १९८४ से निरन्तर
२८९.	श्री रतनलालजी हीरावत	दिल्ली	सन् १९८४ से निरन्तर
२९०.	श्री भूपेन्द्रकुमारजी नांदेचा	खाचरोद	सन् १९८४-८५
२९१.	श्री अशोककुमारजी खाबिया	रतलाम	सन् १९८४ तथा १९८६ से निरन्त
२९२.	श्री राजेन्द्रकुमारजी मुणोत	बीकानेर	सन् १९८४ से निरन्तर
२९३.	श्री सुन्दरलालजी बाठिया	बीकानेर	सन् १९८४ से निरन्तर
२९४.	श्री ललितकुमारजी मट्ठा	उदयपुर	सन् १९८४ से निरन्तर
२९५.	श्री सज्जनसिंहजी कर्णावट	जयपुर	सन् १९८४
२९६.	श्री चुन्नीलालजी सोनावत	गंगाशहर	सन् १९८४
२९७.	श्री नाथूलालजी जारोली	कानोड	सन् १९८४ से निरन्तर
२९८.	श्री नवलचन्दजी सेठिया	बाडमेर	सन् १९८४ से निरन्तर
२९९.	श्री भंवरलालजी सिपानी	मद्रास	सन् १९८४ से निरन्तर
३००.	श्री कन्हैयालालजी भूरा	कूचबिहार	सन् १९८५ से निरन्तर
३०१	श्री मणिलालजी घोटा	रतलाम	सन् १९८५ से निरन्तर
३०२.	श्री विजयराज नेमीचन्दजी पटवा	पूना	सन् १९८५ से निरन्तर
३०३.	श्री धनराजजी कटारिया	राजगुरुनगर	सन् १९८५ से निरन्तर
३०४.	श्री रतनलालजी मेहता	बम्बई	सन् १९८५ से निरन्तर
३०५.	श्री हुक्मीचन्दजी खिंवेसरा	बम्बई	सन् १९८५ से निरन्तर
३०६.	श्री झमकलालजी चोरडिया	बम्बई	सन् १९८५
३०७.	श्री जयसिंहजी लोढा	ब्यावर	सन् १९८५
३०८.	श्री प्रेमराजजी लोढा	ब्यावर	सन् १९८५
३०९.	श्री गणेशीलालजी बया	उदयपुर	सन् १९८५ से निरन्तर
३१०.	श्री शायरचन्दजी कवाड	पाली	सन् १९८५ से निरन्तर
३११.	श्री चैनराजजी बलाई	सोजत	सन् १९८५ से निरन्तर
३१२	श्री रूपचन्दजी जैन	पाटोदी	सन् १९८५ से निरन्तर
३१३.	श्री चम्पालजी काकरिया	गोहाटी	सन् १९८५
३१४.	श्री जवरीमलजी सुराणा	धूबड़ी	सन् १९८५ से निरन्तर
३१५	श्री केशरीचन्दजी गोलछा	बंगाईगाव	सन् १९८६ से निरन्तर
३१६.	श्री थानमलजी पीतलिया	हैदराबाद	सन् १९८६ से निरन्तर
३१७	श्री ईश्वरलालजी ललवाणी	जलगाव	सन् १९८६ "
३१८.	श्री दलीचन्दजी चोरड़िया	जलगांव	सन् १९८६ "
३१९.	श्री कुन्दनमलजी वैद	कलकत्ता	सन् १९८६ "
३२०.	समाजरत्न श्री सुरेशकुमारजी श्रीश्रीमाल	जलगांव	सन् १९८६ "
३२१.	श्री चांदमलजी मल्हारा	जलगांव	सन् १९८६ "

३२२. श्री नैनसुख प्रेमराजजी लूकड़	जलगांव	सन् १९८६
३२३. श्री किरणचन्दजी लसोड	बम्बई	सन् १९८६
३२४. श्री मानसिंहजी रिखबचन्दजी डागरिया	जलगाव	सन् १९८६
३२५. श्री बलवन्तसिंहजी पोखरना	उदयपुर	सन् १९८६
३२६. श्री अशोककुमारजी सुराना	रायपुर	सन् १९८६
३२७. श्री पारसमलजी दुगड़	विल्लुपुरम	सन् १९८६
३२८ श्री सुरेन्द्रकुमारजी मेहता	मन्दसौर	सन् १९८६
३२९. श्री मदनलालजी सरूपरिया	चित्तौड़गढ़	सन् १९८६
३३०. श्री वनराजजी कोठारी	ब्यावर	सन् १९८६
३३१. श्री ताराचन्दजी सोनावत	गंगाशहर	सन् १९८६
३३२. श्री पुखराजजी बोथरा	गोहाटी	सन् १९८६
३३३. श्री रिखबचन्दजी छल्लाणी	मैसूर	सन् १९८६
३३४. श्री सम्पतलालजी कोटड़िया	उटी (ऊटकमण्ड)	सन् १९८६
३३५. श्री गुलाबचन्दजी बोहरा	मद्रास	सन् १९८६
३३६. श्री नरेन्द्र भाई गुलाबचन्दजी जोन्सा	बम्बई	सन् १९८६
३३७. श्री मोहनलालजी भटेवरा	कोटा	सन् १९८६
३३८ श्री प्रकाशचन्दजी सिसोदिया	मन्दसौर	सन् १९८६
३३९. श्री चन्दनमलजी कटारिया	हुबली	सन् १९८६

शाखा संयोजक—

क्र.स. नाम	स्थान	वर्ष (कार्यकाल)
१ श्री कन्हैयालालजी मेहता	मन्दसौर	सन् १९६३ तथा १९६६ से ६७ तथा ६९ से १९७१ तक
२. श्री सम्पतराजजी धाडीवाल	रायपुर	सन् १९६३
३ श्री जीवनसिंहजी कोठारी	उदयपुर	सन् १९६३ व १९६९ से १९७७ तक
४ श्री अमरचन्दजी लोढा	ब्यावर	सन् १९६३
५ श्री रतनललालजी सचेती	अलवर	सन् १९६३ व १९६६
६. श्री कन्हैयालालजी मालू	कलकत्ता	सन् १९६३
७ श्रीमती नगीना देवीजी चोरड़िया	दिल्ली	सन् १९६३
८ श्री सागरमलजी मुणत	रतलाम	सन् १९६३
९. श्री रिखबदासजी भन्साली	कलकत्ता	सन् १९६६ से १९६७ तक तथा १९६९ व १९७६

१०. श्री परमेश्वरलालजी ताकड़िया	उदयपुर	सन् १९६६ से १९६७ तक
११. श्री भूरचन्दजी देशलहरा	रायपुर	सन् १९६६ से १९६७ तक त १९६९ से ७३ तक व १९७७
१२. श्री मणिलालजी जैन	रतलाम	सन् १९६६ से ६७ तक तथा १९६९ से ७३ तक
१३. श्री उमरावमलजी चोरडिया	जयपुर	सन् १९६६
१४. श्री उमरावमलजी जैन (बम्ब) (वकील)	टोंक	सन् १९६६ से ६७ व १९६९ से नि
१५. श्री देसराजजी जैन	केसिंगा	सन् १९६७ व १९६९ से १९७
१६. श्री चुन्नीलालजी ललवाणी	जयपुर	सन् १९६७ व १९६९ से ७१ त १९७५
१७. श्री शुभकरणजी काकरिया	मद्रास	सन् १९६७
१८. श्री राजमलजी चोरडिया	अमरावती	सन् १९६७
१९. श्री कन्हैयालालजी मूथा	ब्यावर	सन् १९६७ व १९६९
२०. श्री हरकलालजी सरूपरिया	चित्तौड़गढ	सन् १९६७ व १९६९ १९८१
२१. श्री गौतमलजी भण्डारी	जोधपुर	सन् १९६७ व १९७८ से १९८
२२. श्री मूलचन्दजी पारख	नोखा मण्डी	सन् १९६७ तथा १९६९ से १९७
२३. श्री दीपचन्दजी भूरा	करीमगंज	सन् १९६७ व १९६९ से १९७ व १९७६
२४. श्री पीरदानजी पारख	अहमदाबाद	सन् १९६७
२५. श्री खूबचन्दजी चण्डालिया	सरदारशहर	सन् १९६७
२६. श्री रिखबदासजी छल्लाणी	मैसूर	सन् १९६७ तथा १९६९ से १९८
२७. श्री अन्नराजजी जैन	बेंगलोर	सन् १९६७ व १९६९ से १९७ तथा १९८० से ८१ तक
२८. श्री देवीलालजी बम्ब	मद्रास	१९६९ से १९८४ तक
२९. श्री प्रकाशचन्दजी कोठारी	अमरावती	सन् १९६९ से १९७३ व १९७८ से निरन्तर
३०. श्री बिशनराजजी खिवेसरा	जोधपुर	सन् १९६९ से १९७७ तक
३१. श्री करनीदानजी पारख	अहमदाबाद	सन् १९६९ से १९७४ तक
३२. श्री मोतीलालजी बरड़िया	सरदारशहर	सन् १९६९ से १९७४ तक
३३. श्री प्रकाशचन्दजी मांडोत	इन्दौर	सन् १९६९ से १९७१ तक
३४. श्री जीवराजी कोचरमूथा	बेलगांव	सन् १९६९ से निरन्तर
३५. श्री नाहरसिहजी राठोड़	नीमच	सन् १९६९ से १९७४ तक
३६. श्री भंवरलालजी बैद	कलकत्ता	सन् १९७० से १९७५ तक
३७. श्री नोरतनमलजी छल्लाणी	ब्यावर	सन् १९७० से १९७१ तक
३८. श्री राणीदानजी भन्साली	डोडी लोहारा	सन् १९७० से १९७६ तक

३९. श्री कन्हैयालालजी नन्दावत — भीलवाडा — सन् १९७० से १९७१ तक
४०. श्री सुजानमलजी मारू — बडी सादड़ी — सन् १९७० से निरन्तर
४१. श्री नाथूलालजी मास्टर साहब — जावद — सन् १९७० से १९७१ तक
४२ श्री वक्षलालजी कोठारी — छोटीसादडी — सन् १९७० से ७७ व ७९ मे ८३ तक
४३. श्री राजमलजी कठालिया — बम्बोरा — सन् १९७० से १९८१ तक
४४. श्री मिलापचन्दजी कोठारी — जेठाणा — सन् १९७१ से १९७३ तक व १९७९
४५. श्री भैरूंलालजी छाजेड़ — अजमेर — सन् १९७१
४६. श्री सुखलालजी दुगड — विल्लुपुरम — सन् १९७१ से १९७३ तक
४७. श्री सुरेन्द्रकुमारजी मेहता — मन्दसौर — सन् १९७२ से १९७४ तक
४८. श्री भवरलालजी मूथा — जयपुर — सन् १९७२ से ७४ तक
४९ श्री कालूरामजी नाहर — ब्यावर — सन् १९७२ से १९७६ तक
५०. श्री लाभचन्दजी काठेड़ — इन्दौर — सन् १९७२ से ७४
५१ श्री कन्हैयालालजी मूलावत — भीलवाडा — सन् १९७२ से ७६ तथा ७९ से निरन्तर
५२ श्री मोतीलालजी धीग — कानोड — सन् १९७२ से ७४ तक तथा १९८१ से ८३ तक
५३. श्री नेमीचन्दजी चौपडा — अजमेर — सन् १९७२
५४ श्री रिखवदासजी वैद — दिल्ली — सन् १९७२
५५. श्री भवरलालजी पारख — अजमेर — सन् १९७३ से १९७४ तक
५६ श्री तोलारामजी हीरावत — दिल्ली — सन् १९७३
५७ श्री मूलचन्दजी देशलहरा — रायपुर — सन् १९७४
५८ श्री विजयेन्द्रकुमारजी पीतलिया — रतलाम — सन् १९७४
५९. श्री उत्तमचन्दजी कोठारी — अमरावती — सन् १९७४
६० श्री ईश्वरचन्दजी बैद — नोखा — सन् १९७४ से १९८५ तक
६१ श्री मनोहरलालजी मालिया — जेठाना — सन् १९७४
६२ श्री पारसमलजी दुगड़ — विल्लुपुरम — सन् १९७४ से १९८५ तक
६३ श्री सम्पतराजजी बोहरा — दिल्ली — सन् १९७४ से १९७५ तक
६४. श्री प्रकाशचन्दजी सूर्या — उज्जैन — सन् १९७४ से १९७७ तक
६५ श्री राजेन्द्रकुमारजी लूणावत — अमरावती — सन् १९७५ से १९७७ तक
६६. श्री उदयलालजी जारोली — नीमच — सन् १९७५ से १९७७ तक
६७ श्री ताराचन्दजी सिंघी — पाली — सन् १९७५ से १९८० तक
६८ श्री मागीलालजी श्रीश्रीमाल — देवगढ — सन् १९७५ से १९७६ व १९७८ से ८३ तक
६९. श्री चुन्नीलालजी देशलहरा — भीम — सन् १९७५ से १९७६ तक
७० श्री रामपालजी पालावत — खरवा — सन् १९७५ से १९७६ तक
७१ श्री भीखमचन्दजी खेतपालिया — बाबरा — सन् १९७५ से १९७६ तक

७२. श्री माणकचन्दजी डेडिया — रास — सन् १९७५ से १९७६ तक
७३. श्री छगनलालजी राका — सारोठ — सन् १९७५ से सन् ७६ तक
७४. श्री कन्हैयालालजी कोठारी — नागेलाव — सन् १९७५ से १९७७ तक व १९८६ से निरन्तर
७५. श्री सम्पतराजजी भूरा — भीलवाड़ा — सन् १९७५ से ७६ तक
७६. श्री शान्तिलालजी ललवाणी — इन्दौर — सन् १९७५ से ७९ तक
७७. श्री प्रेमराजजी सोमावत — बड़ाखेड़ा — सन् १९७५ से ७८ व ८३ से ८४
७८. श्री नन्दलालजी नाहर — जेठाणा — सन् १९७५ से ७६ तथा १९८०
७९. श्रीमती भवरी बाई मूथा — रायपुर — सन् १९७५ से १९७६ तक
८०. श्री सम्पतलालजी बरडिया — सरदारशहर — सन् १९७५ से १९८३ तक
८१. श्री मोतीलालजी मालू — अहमदाबाद — सन् १९७५ से १९७९ तक
८२. श्री भैरूलालजी भानावत — कानोड़ — सन् १९७५ से १९७६ तक
८३. श्री मदनलालजी पीपाड़ा — अजमेर — सन् १९७५ से ७७ व ८३–८४
८४. श्री उमरावमलजी लोढा — रतलाम — सन् १९७५ से १९७७ तक
८५. श्री फूसराजजी चोरडिया — गोगोलाव — सन् १९७५ से १९७६ तक
८६. श्री बच्छराजजी धाडीवाल — देशनोक — सन् १९७५ से निरन्तर
८७. श्री प्रकाशचन्दजी सिसोदिया — मन्दसौर — सन् १९७६ से १९७७ व १९८१ से सन् ८३ तक
८८. श्री भंवरलालजी कातरेला — बेंगलोर — सन् १९७६
८९. श्री प्रतापचन्दजी पालावत — जयपुर — सन् १९७६ से १९७८ तक
९०. श्री कमलचन्दजी लूणिया — बीकानेर — सन् १९७६ से १९७७ तक
९१. श्री शान्तिलालजी कांठेड — फतेहनगर — सन् १९७६ से ७७ तथा ७९ से ८३ त
९२. श्री जीवराजजी सेठिया — सिलचर — सन् १९७६ से १९८३ तक
९३. श्री नवरतनमलजी बोथरा — चांगाटोला — सन् १९७६
९४. श्री चुन्नीलालजी रामपुरिया — भीनासर — सन् १९७६
९५. श्री सोहनलालजी डागा — कडूर — सन् १९७६ से १९८२ तक
९६. श्री कवरीलालजी कोठारी — नागौर — सन् १९७७ से निरन्तर
९७. श्री गेदालालजी बैद — चागाटोला — सन् १९७७ तथा ७८ व ८६ से निरन्त
९८. श्री रोशनलालजी कोठारी — आमेट — सन् १९७७
९९. श्री धनराजजी भसाली — डोडीलोहारा — सन् १९७७ से १९८५ तक
१००. श्री मनोहरलालजी जैन — पीपलिया मण्डी — सन् १९७७ से निरन्तर
१०१. श्री कस्तूरचन्दजी — कलकत्ता — सन् १९७७
१०२. श्री किशनलालजी भूरा — करीमगंज — सन् १९७७ व १९८१ से निरन्तर
१०३. श्री मोहनलालजी कांकरिया — गोगोलाव — सन् १९७७ व १९८२
१०४. श्री मूलचन्दजी सहलोत — निकुंभ — सन् १९७७ से निरन्तर

१०५. श्री सागरमलजी चपलोत	निम्बाहेडा	सन् १९७७
१०६. श्री जीवनकुमारजी नाहर	वेंगू	सन् १९७७ से निरन्तर
१०७. श्री उमरावमलजी चडालिया	कपासन	सन् १९७७
१०८ श्री हुलासचन्दजी मोदी	राजनान्दगांव	सन् १९७७ से १९८१ तक
१०९. श्री पाबूदानजी काकरिया	दुर्ग	सन् १९७७
११०. श्री मानमलजी वावेल	ब्यावर	सन् १९७७
१११. श्री भवरलालजी विनायकिया	भीलवाड़ा	सन् १९७७
११२. श्री प्यारेलालजी पोकरणा	देवगढ	सन् १९७७
११३. श्री सज्जनसिंहजी डागा	भोपाल	सन् १९७७
११४. श्री सोहनलालजी गु देचा	सोजत रोड़	सन् १९७७
११५. श्री सुरेशचन्दजी तालेरा	पूना	सन् १९७७ से निरन्तर
११६ श्री धनराजजी डागा	वैंगलोर	सन् १९७७
११७ श्री धर्मीचन्दजी कोठारी	अजमेर	सन् १९७८ व १९८१
११८ श्री नथमलजी सिंघी	वीकानेर	सन् १९७८ से १९८५ तक
११९. श्री नारायणलालजी मोगरा	भीलवाड़ा	सन् १९७८
१२०. श्री चम्पालालजी साखला	वालेसर	सन् १९७८ से निरन्तर
१२१. श्री हुलासचन्दजी वैद	गगाशहर	सन् १९७८ से ७९
१२२. श्री पारसरामजी	वालोतरा	सन् १९७८ से ८४ तक
१२३. श्री मीट्ठूलालजी सरूपरिया	भदेसर	सन् १९७८
१२४. श्री पन्नालालजी लोढ़ा	चिकारडा	सन् १९७८ से निरन्तर
१२५. श्री रिखबचन्दजी वागरेचा	गढसिवाणा	सन् १९७८ से १९८१ तक
१२६. श्री भीखमचन्दजी चोरड़िया	फलोदी	सन् १९७८ से निरन्तर
१२७. श्री दुलीचन्दजी कांकरिया	गोगोलाव	सन् १९७८ से १९८१ तक
१२८. श्री मोतीलालजी चण्डालिया	कपासन	सन् १९७८ से निरन्तर
१२९. श्री शान्तिलालजी नागोरी	बम्बोरा	सन् १९७८ से १९८३ तक
१३० श्री मदनलालजी नन्दावत	भीण्डर	सन् १९७८ से निरन्तर
१३१. श्री राणुलालजी कोटड़िया	लोहावट	सन् १९७८ से १९७९ तक
१३२ श्री धूलचन्दजी नाहर	जेठाणा	सन् १९७८ से १९७९ व १९८१ से ८३ तक
१३३. श्री दूलहराजजी रांका	जयनगर	सन् १९७८ से १९८३ तक
१३४ श्री जतनराजजी मेहता	मेड़ता	सन् १९७८
१३५ श्री जबरचन्दजी मेहता	सोजतरोड़	सन् १९७८ से १९८१ तक
१३६. श्री वीरेन्द्रसिंहजी लोढा	उदयपुर	सन् १९७८ से निरतर
१३७. श्रीमती कमलादेवी खाब्या	भोपाल	सन् १९७८ से निरन्तर
१३८ श्री मोहनलालजी तातेड	बैतूल	सन् १९७८ से १९७९ तक

१३९. श्री नन्दनमलजी बोथरा	दुर्ग	सन् १९७८
१४०. श्री सुरेन्द्रकुमारजी रीयावाले	दमोह	सन् १९७८
१४१. श्री शौकीनलालजी चेलावत	जावद	सन् १९७८ से १९८५ तक
१४२. श्री अशोककुमारजी बाफना	खिड़किया	सन् १९७८ से १९८४ तक
१४३ श्री निर्मलकुमारजी देशलहरा	कवर्धा	सन् १९७८ से निरन्तर
१४४. श्री फकीरचन्दजी पावेचा	जावरा	सन् १९७८ से निरंतर
१४५. श्री सौभागमलजी जैन	मनावर	सन् १९७८ से निरन्तर
१४६. श्री आनन्दीलालजी काठेड	नागदा जक.	सन् १९७८ से १९८१ तक
१४७. श्री अनराजजी नाहटा	नगरी (रायपुर)	सन् १९७८ से १९८२ तक
१४८. श्री अशोककुमारजी नलवाया	मन्दसौर	सन् १९७८
१४९. श्री शान्तिलालजी चौधरी	नीमच	सन् १९६९ से १९७९ तक तथा १९८६ से निरन्तर
१५०. श्री सोहनलालजी कोटड़िया	शाहदा	सन् १९७८ से निरन्तर
१५१. श्री कन्हैयालालजी बोथरा	रतलाम	सन् १९७८ से निरन्तर
१५२. श्री ज्ञानचन्दजी गोलछा	रायपुर	सन् १९७८ से १९८३ तक
१५३. श्री गजेन्द्र कुमारजी सूर्या	उज्जैन	सन् १९७८ से १९७९ तक
१५४. श्री शान्तिलालजी साड	बैंगलोर	सन् १९७८
१५५. श्री हीरालालजी कटारिया	हिंगनघाट	सन् १७७८ से १९८३ तक
१५६. श्री नवलमलजी पूगलिया	नागपुर	सन् १९७८
१५७. श्री हेमकरणजी सुराणा	यवतमाल	सन् १९७८ से निरन्तर
१५८. श्री भंवरलालजी सेठिया	कलकत्ता	सन् १९७८
१५९. श्री लूणकरणजी हीरावत	दिल्ली	सन् १९७८ से १९७९ तक
१६०. श्री रामचन्द्रजी जैन	केसिंगा	सन् १९७८ से निरन्तर
१६१. श्री बालचन्दजी सेठिया	करीमगज	सन् १९७८
१६२. श्री अमरचन्दजी लूंकड	जगदलपुर	सन् १९७८ से १९८१ तक
१६३ श्री उमरावसिंहजी ओस्तवाल	बम्बई	सन् १९७८ से १९८१ तक
१६४. श्री धूलचन्दजी कुदाल	कानोड़	सन् १९७८ से १९७९ तक
१६५. श्री देवीलालजी बोहरा	रूण्डेड़ा	सन् १९७८ से निरन्तर
१६६ श्री केशरीचन्दजी गोलछा	बंगईगांव	सन् १९७८ से १९८४ तक
१६७. श्री शान्तिलालजी धींग	खैरोदा व कानोड	१९७८ से निरन्तर
१६८. श्री शान्तिलालजी मिन्नी	कलकत्ता	सन् १९७९
१६९. श्री मणिलालजी जैन	बैंगलोर	सन् १९७९
१७०. श्री केवलचन्दजी श्रीश्रीमाल	दुर्ग	सन् १९७९ से १९८३ तक
१७१. श्री चांदमलजी पोरवाल	मन्दसौर	सन् १९७९
१७२ श्री तेजमलजी भडारी	कजारडा	सन् १९७९ से निरन्तर

१७३. श्री चादमलजी बड़ोला	ब्यावर	सन् १९७९ से १९८
१७४. श्री मदनलालजी सरूपरिया	भदेसर	सन् १९७९ से निरन्त
१७५. श्री पारसचन्दजी धाड़ीवाल	कोटा	सन् १९७९ से १९८२
१७६. श्री घीसूलालजी ढढ्ढा	जयपुर	सन् १९७९ से १९८२
१७७. श्री मूलचन्दजी पगारिया	मावली	सन् १९७९ से निरन्तर
१७८. श्री नेमचन्दजी जैन	चण्डीगढ	सन् १९७९ से निरन्तर
१७९. श्री जयचन्दलालजी बाफना	कुनूर	सन् १९७९
८० श्री भवरलालजी दस्साणी	कलकत्ता	सन् १९८० से १९८२ तक
१ श्री इन्द्रचन्जी नाहटा	अहमदाबाद	सन् १९८० से १९८३ तक
२. श्री प्रकाशचन्दजी सुराणा	बेतुल	सन् १९८० से निरन्तर
श्री प्रेमराचजी चौपडा	इन्दौर	सन् १९८० से ८२ तथा ८५ से
श्री शान्तिलालजी सूर्या	उज्जैन	सन् १९८० से निरन्तर
१८५ श्री भीखमचन्दजी पीपाड़ा	अजमेर	सन् १९८०
१८६ श्री झवरलालजी छाजेड	गंगाशहर	सन् १९८०
१८७ श्री राणुलालजी बुरड	लोहावट	सन् १९८० से १९८४ तक
१८८. श्री जम्बूकुमारजी बाफना	कुनूर	सन् १९८० से निरन्तर
१८९. श्री मनसुखलालजी कटारिया	राणावास	सन् १९८० से १९८४ तक
१९०. श्री मानमलजी गन्ना	भीम	सन् १९८० से १९८४ तक
१९१ श्री चादमलजी पोखरना	मन्दसौर	सन् १९८०
१९२ श्री करनीदानजी सुराणा	गंगाशहर	सन् १९८१
१९३. श्री फतहमलजी पटवा	जोधपुर	सन् १९८१ से १९८२ तक
१९४. श्री मोहनलालजी तालेडा	पाली	सन् १९८१ से निरन्तर
१९५ श्री रतनलालजी जैन	सवाईमाधोपुर	सन् १९८१ से निरन्तर
१९६. श्री भवरलालजी जैन	श्यामपुरा	सन् १९८१ मे निरन्तर
१९७. श्री सुरेशजी मूथा	दिल्ली	सन् १९८१ से १९८२ तक
१९८ श्री सूरजमलजी काकरिया	रायगंज	सन् १९८१ से १९८३ तक
१९९ श्री बाबूलालजी भटेवरा	नगरी (मन्दसौर)	सन् १९८१ से निरन्तर
२००. श्री फूलचन्दजी गोलछा	धमतरी	सन् १९८१
२०१ श्री डॉ. अमृतलालजी चौपडा	खैरागढ	सन् १९८१ से १९८३ तक
२०२ श्री भंवरलालजी लूणावत	विलासीपाडा	सन् १९८२ से निरन्तर
२०३ श्री अमानमलजी पारख	धर्मनगर	सन् १९८२ से १९८५ तक
२०४. श्री मोहनलालजी बोथरा	गोहाटी	सन् १९८२ से निरन्तर
२०५ श्री हनुमानमलजी सेठिया	खगडा	सन् १९८२
२०६. श्री हनुमानमलजी बोथरा	रामपुरहाट	सन् १९८२ से निरन्तर
२०७ श्री भीखमचन्दजी चौपडा	बैंगलोर	सन् १९८२

२०८.	श्री तेजमलजी नाहर	बालोद	सन् १९८२ से १९८३ तक
२०९.	श्री अनराजजी बाठिया	दल्लीराजहरा	सन् १९८२ से निरन्तर
२१०.	श्री घनराजजी बागमार	डोंडी	सन् १९८२ से निरन्तर
२११.	श्री अचलचन्दजी कोटडिया	धमतरी	सन् १९८२ से १९८३ तक
२१२.	श्री सूरजमलजी चोरडिया	खाचरौद	सन् १९८२ से १९८३ तक
२१३.	श्री सिरेमलजी भंसाली	लोहारा	सन् १९८२ से १९८३ तक
२१४.	श्री सीतारामजी धर्मपाल	नागदा	सन् १९८२ से १९८३ तक
२१५.	श्री कन्हैयालालजी छीगावत	नारायणगढ	सन् १९८२ से निरन्तर
२१६.	श्री सिरेमलजी देशलहरा	नेवारी कला	सन् १९८२ से निरन्तर
२१७.	श्री गौतमचन्दजी पारख	राजनादगाव	सन् १९८२ से निरन्तर
२१८.	श्री मदनलालजी कटारिया	रतलाम	सन् १९८२
२१९.	श्री विजयकुमारजी काठेड	अहमदनगर	सन् १९८२ से निरन्तर
२२०.	श्री पन्नालालजी चोरड़िया	बम्बई	सन् १९८२ से निरन्तर
२२१.	श्री रसिक भाई धोलकिया	खरियार रोड	सन् १९८२ से १९८३ तक
२२२.	श्री भागचन्दजी सिंघी	अजमेर	सन् १९८२ तथा १९८५
२२३.	श्री पन्नालालजी सरूपरिया	अरनेड़	सन् १९८२ से १९८३ तक
२२४.	श्री मोहनलालजी श्रीश्रीमाल	ब्यावर	सन् १९८२
२२५.	श्री उदयलालजी मांगीलालजी भडारी	बिलोदा	सन् १९८२ से निरन्तर
२२६.	श्री जुगराजजी नथमलजी गांधी	बुसी	सन् १९८२ से निरन्तर
२२७.	श्री बशीलालजी पोखरना	चित्तौड़गढ	सन् १९८२ ,,
२२८.	श्री महावीरचन्दजी गोखरू	दूनी	सन् १९८२ ,,
२२९.	श्री सुन्दरलालजी सिघवी	गगापुर	सन् १९८२ ,,
२३०.	श्री महेन्द्रकुमारजी मिन्नी	गंगाशहर	सन् १९८२ ,,
२३१.	श्री नानालालजी पोखरना	मगलवाड	सन् १९८२ ,,
२३२.	श्री हीरालालजी जारोली	मोरवण	सन् १९८२ से निरन्तर
२३३.	श्री लालचन्दजी कपूरचन्दजी गुगलिया	रड़ावास	सन् १९८२ से निरन्तर
२३४.	श्री फूसालालजी डागा	सारण	सन् १९८२ से निरन्तर
२३५.	श्री मंगलचन्दजी गांधी	सोजत रोड	सन् १९८२ से निरन्तर
२३६.	श्री सम्पतकुमारजी कोटडिया	उटकमण्ड	सन् १९८२ से १९८५ तक
२३७.	श्री भूपराजजी जैन	कलकत्ता	सन् १९८३ से निरन्तर
२३८	श्री उदयचन्दजी बोथरा	खगडा	सन् १९८३ से १९८५ तक
२३९.	श्री कमलचन्दजी डागा	दिल्ली	सन् १९८३ से निरन्तर
२४०.	श्री मोहनलालजी चौपडा	बैंगलोर	सन् १९८३ से निरन्तर
२४१.	श्री लालचन्दजी डागा	कडूर	सन् १९८३ से निरन्तर

२४२. श्री कन्हैयालालजी ललवाणी	इन्दौर	सन् १९८३ से १९८४ तक
२४३. श्री दिनेश महेश नाहटा	नगरी	सन् १९८३ से निरन्तर
२४४. श्री फूसराजजी कांकरिया	गोगोलाव	सन् १९८३ से ८५ तक
२४५. श्री विजयकुमारजी गोलछा	जयपुर	सन् १९८३ से निरन्तर
२४६. श्री पारसराजजी मेहता	जोधपुर	सन् १९८३ से १९८५ तक
२४७. श्री राजमलजी पोरवाल	कोटा	सन् १९८३ से निरन्तर
२४८. श्री सम्पतलालजी सिपानी	सिलचर	सन् १९८४ से निरन्तर
२४९. श्री प्रकाशचन्दजी सोनी	खरियार रोड	सन् १९८४ से निरन्तर
२५० श्री रोशनलालजी मेहता	अहमदाबाद	सन् १९८४ से निरन्तर
२५१. श्री अशोककुमारजी जैन	वगुमुन्डा	सन् १९८४ से निरन्तर
२५२. श्री प्रेमचन्दजी काकरिया	दुर्ग	सन् १९८४ से निरन्तर
२५३. श्री शकरलालजी श्रीश्रीमाल	बालोद	सन् १९८४ से निरन्तर
२५४. श्री हजारीमलजी भंसाली	लोहारा	सन् १९८४ से निरन्तर
२५५. श्री मीयाचन्दजी काठेड़	नागदा	सन् १९८४ से निरन्तर
२५६. श्री सागरमलजी जैन	मन्दसौर	सन् १९८४ से निरन्तर
२५७. श्री अशोककुमारजी दलाल, वकील	खाचरौद	सन् १९८४ से निरन्तर
२५८. श्री रेखचन्दजी साखला	खेरागढ	सन् १९८४ से निरन्तर
२५९. श्री केशरीमलजी धारीवाल	रायपुर	सन् १९८४ से निरन्तर
२६०. श्री राणीदानजी गोलछा	धमतरी	सन् १९८४ से निरन्तर
२६१. श्री सौभागमलजी डागा	हिंगणघाट	सन् १९८४ से निरन्तर
२६२. श्री मूलचन्दजी कोठारी	जेठाना	सन् १९८४ से निरन्तर
२६३. श्री मोहनलालजी जैन	खेतिया	सन् १९८४ से निरन्तर
२६४. श्री चन्दनमलजी जैन	देवगढ़ मदारिया	सन् १९८४ से १९८५ तक
२६५. श्री जवरचन्दजी छाजेड़	धमधा	सन् १९८४ से निरंतर
२६६. श्री लक्ष्मीलालजी जारोली	बम्बोरा	सन् १९८४ से निरन्तर
२६७. श्री लूणकरनजी सोनी	भिलाई	सन् १९८४ से निरन्तर
२६८. श्री चांदमलजी नाहर	छोटीसादड़ी	सन् १९८४ से निरन्तर
२६९. श्री सोहनलालजी सेठिया	सरदारशहर	सन् १९८४ से निरन्तर
२७०. श्री शान्तिलालजी रांका	जयनगर	सन् १९८४ से निरन्तर
२७१. श्री जसराजजी बोथरा	सम्बलपुर	सन् १९८४ से निरन्तर
२७२. श्री गौतमचन्दजी बैद	जगदलपुर	सन् १९८४ से निरन्तर
२७३. श्री सन्तोषचन्दजी चोरड़िया	चांगाटोला	सन् १९८४ से निरन्तर
२७४. श्री उत्तमचन्दजी कोटड़िया	महासमुन्द	सन् १९८४ से निरन्तर
२७५. श्री विजयलालजी कोटड़िया	कोंडागांव	सन् १९८४ से निरन्तर

२७६. श्री नेमीचन्दजी बोहरा	धुलिया	सन् १९८४ से निरन्तर
२७७. श्री राजमलजी खटोड़	कुर्ला (बम्बई)	सन् १९८४ "
२७८. श्री भवरलालजी बोहरा	बोरीवली (बम्बई)	सन् १९८४ से निरन्तर
२७९. श्री हुक्मीचन्दजी खीवेसरा	बम्बई	सन् १९८४
२८०. श्री भंवरलालजी खीवेसरा	वालेश्वर (बम्बई)	सन् १९८४ से निरन्तर
२८१. श्री नेमीचन्दजी नवलखा (पीथरासरवाले)	जलपाईगुड़ी	सन् १९८४ व ८६ से निरन्तर
२८२. श्री जवरीलालजी देशलहरा	गोरेगाव (बम्बई)	सन् १९८४
२८३. श्रीमती स्मृतिरेखा जारोली	नीमचकेंट	सन् १९८४ से १९८५
२८४. श्री अभयकुमारजी देशलहरा	प्रतापगढ़	सन् १९८४ से निरन्तर
२८५. श्री भंवरलालजी चौपड़ा	बाड़मेर	सन् १९८४ से निरन्तर
२८६. श्री प्रकाशचन्दजो बेताला	बगाईगाव	सन् १९८५ से निरन्तर
२८७. श्री मोहनलालजी गोलछा	हावली	सन् १९८५ "
२८८. श्री फूसराजजी ललवाणी	बरपेटारोड़	सन् १९८५ "
२८९. श्री शान्तिलालजी डोशी	डिब्रूगढ़	सन् १९८५
२९०. श्री ताराचन्दजी भूरा	बिजनी	सन् १९८५
२९१. श्री किशनलालजी काकरिया	टंगला	सन् १९८५ से निरन्तर
२९२. श्री नेमीचन्दजी पीचा	कोकड़ाझाड़	सन् १९८५
२९३. श्री नवरतनमलजी भूरा	कूच बिहार	सन् १९८५ से निरन्तर
२९४. श्री चम्पालालजी लल्लाणी	धुबड़ी	सन् १९८५ से निरंतर
२९५. श्री पूरनमलजी बोथरा	गोलकगंज	सन् १९८५
२९६. श्री रेवन्तमलजी डागा	तूफानगंज	सन् १९८५ से निरन्तर
२९७. श्री मुलतानमलजी गोलछा	फालाकाटा	सन् १९८५ से निरन्तर
२९८. श्री करनीदानजी लूनावत	दीनहटा	सन् १९८५
२९९. श्री कमलचन्दजी भूरा	बासूगांव	सन् १९८५ से निरन्तर
३००. श्री उदयचन्दजी डागा	अलीपुरद्वार	सन् १९८५ से निरन्तर
३०१. श्री करनीदानजी सेठिया	तिनसुखिया	सन् १९८५ से निरन्तर
३०२. श्री चुन्नीलालजी कटारिया	हुबली	सन् १९८५
३०३. श्री हर्षद भाई गेला भाई शाह	अहमदाबाद	सन् १९८५ से निरन्तर
३०४. श्री घीसूलालजी डागा	ताम्बरम (मद्रास)	सन् १९८५ से निरन्तर
३०५. श्री तोलारामजी मिन्नी	मद्रास	सन् १९८५ से निरन्तर
३०६. श्री मोहनलालजी चोरडिया	मैलापुर (मद्रास)	सन् १९८५ से निरन्तर
३०७. श्री सुगनचन्दजी धोका	तैयनंपेट (मद्रास)	सन् १९८५ से निरन्तर
३०८. श्री शुभकरणजी कांकरिया	हैदराबाद	सन् १९८५ से निरन्तर
३०९. श्री नेमीचन्दजी जैन	जलपाईगुड़ी	सन् १९८५

३१०. श्री शान्तिलालजी ललवानी धार सन् १९८५ से निरन्तर
३११. श्री रेगुमलजी बैद चागोटोला सन् १९८५
३१२. श्री ज्ञानचन्दजी चिपड़ अंजड़ सन् १९८५ से निरन्तर
३१३. श्री भंवरलालजी चोपड़ा लोनसरा सन् १९८५ से निरन्तर
३१४. श्री अशोककुमारजी भंडारी खिड़किया सन् १९८५ से निरन्तर
३१५. श्री लक्ष्मणसिंहजी गलुडिया भुलेश्वर (बम्बई) सन् १९८५ से निरन्तर
३१६. श्री प्रकाशचन्दजी मूथा राजगुरुनगर सन् १९८५ "
३१७. श्री सुरेशचन्दजी धीग घाटकोपर (बम्बई) सन् १९८५ "
३१८. श्री शान्तिभाई भवानजी बावीसी " " सन् १९८५
३१९. श्री नरेन्द्र भाई गुलाब भाई जोन्सा " " सन् १९८५
३२० श्री उत्तमचन्दजी लोढा ब्यावर सन् १९८५ से निरन्तर
३२१. श्री छगनलालजी गन्ना भीम सन् १९८५ से निरन्तर
३२२. श्री मागीलालजी बुरड़ लोहावट मारवाड़ सन् १९८५ से निरन्तर
३२३. श्री पुखराजजी चौपड़ा बालोतरा सन् १९८५ से निरन्तर
३२४. श्री जेठमलजी चोरड़िया बायतु सन् १९८५ से निरन्तर
३२५. श्री दौलतराजजी बाघमार पाटोदी सन् १९८५ "
३२६. श्री सोहनलालजी सोनावत फारबीसगज सन् १९८५ "
३२७. श्री भंवरलालजी कोठारी किशनगज सन् १९८५ "
३२८. श्री रामलालजी बोथरा गोलकगंज सन् १९८६ "
३२९. श्री हनुमानमलजी डोसी डिबरूगढ सन् १९८६ "
३३०. श्री धूड़चन्दजी बूच्चा सूरतगढ़ सन् १९८६ "
३३१. श्री भूमरमलजी चोरड़िया मल्कानगिरी सन् १९८६ "
३३२. श्री रामलालजी बोथरा दीनहटा सन् १९८६ "
३३३. श्री पुखराजजी डागा खगड़ा सन् १९८६ "
३३४. श्री हनुमानमलजी पारख धरमनगर सन् १९८६ "
३३५. श्री सी. पारसमलजी मूथा उटी (उटकमंड) सन् १९८६ "
३३६. श्री अमरचन्दजी गोलेछा विल्लुपुरम सन् १९८६ "
३३७. श्री गौतमचन्दजी कटारिया हुबली सन् १९८६ "
३३८. श्री पुखराजजी डागलिया मैसूर सन् १९८६ "
३३९. श्री मोहनलालजी बुर्ड गीदम सन् १९८६ "
३४०. श्री गुलाबचन्दजी नारायणपुर सन् १९८६ "
३४१. श्री नेमीचन्दजी छाजेड़ साजा सन् १९८६ "
३४२. श्री अमृतलालजी जावद सन् १९८६ "
३४३. श्री अशोककुमारजी सियाल अजमेर सन् १९८६ "
३४४. श्री भवरलालजी श्रीश्रीमाल देवगढ मदारिया सन् १९८६ "

३४५ श्री सायरचन्दजी कोटडिया	जोधपुर	सन् १९८६ से निरन्तर	
३४६. श्री नेमीचन्दजी काकरिया	गोगोलाव	सन् १९८५	"
३४७ श्री हंसराजजी सुखलेचा	बीकानेर	सन् १९८६	"
३४८. श्री किशनलालजी सचेती	नोखा	सन् १९८६	"
३४९. श्री श्रेणिकराजजी श्रीश्रीमाल	विरमावल	सन् १९८५	"
३५०. श्री रामलालजी खटोड	विजयवाड़ा	सन् १९८६	"
३५१. श्री मोहनलालजी बोगावत	आदिलाबाद	सन् १९८६	"
३५२. श्री अमृतलालजी दुगड़	सोमेसर	सन् १९८६	"
३५३. श्री महावीरचन्दजी अलीजार	सिकन्दराबाद	सन् १९८६	"
३५४. श्री के गूदरमलजी छाजेड	विल्लूर	सन् १९८६	"
३५५. श्री डी. मोतीलालजी देवडा	त्रिवलूर	सन् १९८६	"
३५६. श्री पारसमलजी मरलेचा	तिरूतनी	सन् १९८६	"
३५७. श्री एस. डी. प्रेमचन्दजी लोढा	मदुरान्तकम्	सन् १९८६	"
३५८. श्री धर्मीचन्दजी सुखलेचा	सिंगापरीमल कोइल	सन् १९८६	"
३५९. श्री माणकचन्दजी बोहरा	चगलपेट	सन् १९८६	"
३६०. श्री अन्नराजजी कोठारी	तिरूकाली किमडरम	सन् १९८६	"
३६१. श्री अशोककुमारजी मूथा	टिंडीवमम	सन् १९८६	"
३६२. श्री हुक्मीचन्दजी मूथा	कोयम्वटूर	सन् १९८६	"
३६३. श्री भंवरलालजी सुराना	कालकुरूची	सन् १९८६	"
३६४. श्री फूलचन्दजी बाठिया	मूलबागल	सन् १९८६	"
३६५. श्री लक्ष्मीचन्दजी छल्लानी	कोलार	सन् १९८६	"
३६६. श्री दीपचन्दजी नाहटा	बागरपेठ	सन् १९८६	"
३६७. श्री बिरधीचन्दजी गन्ना	टिपटुर	सन् १९८६	"
३६८. श्री सुखलालजी दक	नजनगुड़ी	सन् १९८६	"
३६९. श्री निर्मलकुमारजी सेठिया	चिकमंगलूर	सन् १९८६	"
३७०. श्री मनोहरलालजी गांधी	मांडिया	सन् १९८६	"
३७१. श्री रोशनलालजी नन्दावत	श्रीरंगपट्टनम	सन् १९८६	"
३७२. श्री शान्तिलालजी मेहता	पांडवपुर	सन् १९८६	"
३७३. श्री सम्पतराजजी डागा	रानीबेनूर	सन् १९८६	"
३७४. श्री नेमीचन्दजी डागा	धारवाड	सन् १९८६	"
३७५. श्री शांतिलालजी मूथा	लक्ष्मेश्वर	सन् १९८६	"
३७६. श्री मदनलालजी लूंकड़	गगावती	सन् १९८६	"
३७७. श्री कवरलालजी सुखलेचा	सिद्धनूर	सन् १९८६	"
३७८. श्री मोहनलालजी सहलोत	अस्सीकेरा	सन् १९८६	"

३७९. श्री मोहनलालजी मूणोत	जलगाव	सन् १९८६
३८०. श्री कुनणमलजी खीवेसरा	वावरा	सन् १९८६
३८१. श्री पारसमलजी डेडिया	खरवा	सन् १९८६
३८२. श्री अमरचन्दजी खीचा	लीडो	सन् १९८६
३८३. श्री भीखमचन्दजी मूथा	पीसागन	सन् १९८६
३८४. श्री उत्तमचन्दजी साखला	छुईखदान	सन् १९८६
३८५. श्री सुभापजी चौपड़ा	भिलाईनगर	सन् १९८६
३८६. श्री छगनलालजी वोहरा	देवकर	सन् १९८६
३८७. श्री सम्पतराजजी वरला	नागपुर	सन् १९८६
३८८. श्री भवरलालजी चोरडिया	अलाय	सन् १९८६
३८९. श्री नैनसुखजी लूंकड	जलगाव	सन् १९८६

ससार छोडकर जव श्रीकृष्ण चैतन्य नीलाचल आए तो उन्हे देखकर राजा प्रतापरूद्र के सभा पण्डित वासुदेव सार्वभौम वड़े प्रभावित हुए। उन्होने कहा—तुम सन्यासी हो, तरुण हो, तुम्हे वेदान्त पढना चाहिए। श्री चैतन्य ने कहा कि यदि आप पढाने की कृपा करें तो मैं अवश्य पढूंगा।

वासुदेव सार्वभौम उस समय के जाने माने वेदान्ती थे। वेदान्त पढने के लिए उनके पास दूर-दूर से छात्र आते थे। उन्होने श्री चैतन्य की वात मान ली और वे उन्हे वेदान्त पढाने लगे। कुछ दिनो तक पढने के पश्चात् उन्होने श्री चैतन्य से पूछा मै जो कुछ तुम्हे पढा रहा हू क्या वह तुम्हे समझ मे आ रहा है? कारण तुमने कभी कोई शका व्यक्त नही की। श्री चैतन्य ने प्रत्युत्तर दिया आप जव व्यास रचित सूत्र बताते है तो मैं समझ जाता हू किन्तु जव आप उसकी व्याख्या शकर भाष्य के अनुरूप करते है तो वह धूमिल हो जाता है।

ऐसा ही कुछ अर्हतपि वागलचिरि ने कहा था—

सुत्तमेत्त गति चेव गतुकामेऽवि सेजहा।
एव लद्धा विसम्मग्ग सभावाओ अकोविते॥

अर्थात् सूत से वधा पक्षी उडना चाहता है पर वह वही तक उड पाता है जहा तक सूत उसे ले जाता है।

इसी भाति जो सूत्रो मे वधा रहता है अर्थात् परम्परागत अर्थ से जुडा रहता है वह कभी सूत्र के अन्तर्निहित अर्थ को समझ नही पाता। फलत अपने लक्ष्य से भटक जाता है। कहने का तात्पर्य यह है जब तक हम गण, गच्छ, सम्प्रदाय आदि के धागे से वधे रहेगे तब तक साधना का सच्चा मार्ग हमे प्राप्त नही हो सकता।

दीप से दीप..........

साधु–मार्ग की परपरा अनादि-अविच्छिन्न है ।आचार ही साधुत्व की प्रायः स
एव कसौटी है अतः वही साधु–मार्ग की धुरी है । धुरी ध्वस्त हो जाय तो
पर झण्डी–पताके सजा कर तथा उसके चक्कों पर पालिश करके कुछ समय
लिए चकाचौंध भले ही उपस्थित कर दी जाय, उसे गतिमान नही बनाया
सकता ।

वन्द्य विभूति आचार्य श्री हुक्मीचदजी म. सा. ने सम्यक्ज्ञान सम्मत क्रिया
उद्घोष करके आचार की सर्वोपरिता का सदेश दिया । इस आचार क्रा
ने जिन शासन–परपरा मे प्राण–ऊर्जा का सचार किया । अगले चरण
ज्योतिर्धर जवाहराचार्य ने आगमिक विवेचन की तैजस् छैनी से कल्पित सिद्ध
की अवान्तर पर्तो को छील–छाटकर "सम्यक् ज्ञान सम्मत क्रिया" को विशु
शिल्प मे तराश दिया । आगे चलकर गणेशाचार्य ने इस विशुद्ध-शिल्प के स
मे "शात क्राति" का अभियान चलाया ।

समता विभूति आचार्य श्री नानेश के सम्यक् निदेशन मे शांत-क्राति का
उत्तरोत्तर आगे बढ रहा है । युग पर आश्वासन की सात्विक आभा फैलती
रही है । विश्वास हिलकोरे लेने लगा है कि सात्विक साध्वाचार का लोप
होगा । अधकार छंटता और छूटता जा रहा है । दीप से दीप जलते जा रहे
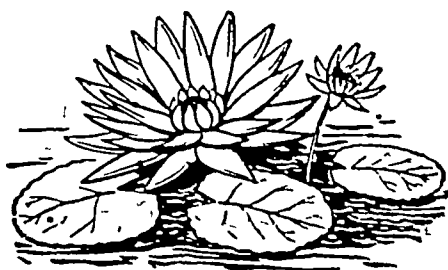
ी प्रे. ग. बोहरा धर्मपाल जैन छात्रावास, दिलीपनगर, रतलाम

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन सघ की लितोद्धारक श्री धर्मपाल प्रचार प्रसार समिति अध्यक्ष श्री गणपतराज जी वोहरा के समक्ष से ही धर्मपाल वालको को संस्कारित करने तु धर्मपाल छात्रावास स्थापन की योजना स्तुत की गई, उन्होने सहज उदारतापूर्वक दलीपनगर, रतलाम स्थित वर्त्तमान छात्रावास वन एव भूमि क्रय कर वहां छात्रावास सस्था- न का मार्ग प्रशस्त कर दिया। सघ ने प्राकृतिक रिवेश से शोभित इस रम्य स्थल पर श्री प्रेम- ाज गरणपतराज वोहरा धर्मपाल जैन छात्रावास ा शुभारम्भ दिनाक ७ जुलाई १९७९ मिती ापाढ शुक्ला १२ स. २०३६ शनिवार को य उदारमना श्री गणपतराज जी वोहरा के र कमलो से करवाया।

गत ८ वर्षो मे यहा ७८ छात्र प्रवेश पा चुके है, जिनमे से अनेक छात्रो ने अनेक सेवाओ सम्मानित स्थान पाकर अपनी प्रतिभा को सिद्ध किया है। वर्त्तमान मे १३ गावो के कक्षा से एम. कॉम तक के २० विद्यार्थी छात्रावास रहकर अध्ययन कर रहे है। छात्रो के परीक्षा- ल ८० से १००% के बीच रहता है। उनकी दिनचर्या नियमित है।

छात्रावास मे व्यावहारिक शिक्षण के साथ- ाथ धार्मिक-नैतिक-शिक्षण की भी समुचित यवस्था है। प्रतिदिन सामायिक व प्रार्थना ोती है तथा अवकाश के दिन छात्र रतलाम मे स्थित सन्त-मुनिराजो व महासती वृन्द के दर्शन प्रवचन का लाभ लेते है। विद्यार्थी प्रतिवर्ष श्री साधुमार्गी जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड, बीकानेर द्वारा आयोजित परिचय से लेकर भूपरण तक की परीक्षाओ मे प्रवेश लेते हैं।

यहा की जलवायु स्वास्थ्य वर्धक है और छात्रो को अन्त कक्ष तथा मैदानी खेल खेलने के भी पूर्ण अवसर दिए जाते हैं। विद्युत जल तथा ३५ छात्रो के आवास की सभी सुविधाओ से युक्त छात्रावास भवन का परिवेश आकर्षक है।

धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य श्री नानेश— के पावन चरण दि. २०-३-८४ को छात्रावास परिसर मे पडे। आचार्य-प्रवर के अपने यशस्वी शिष्य समुदाय सहित पधारने पर छात्र सात्विक आनन्द से झूम उठे। आपश्री के उपदेशामृत का पान कर सभी कृतकृत्य हो उठे। आप श्री की महती अनुकम्पा से महान् त्यागी मुनिराज एव सतो-वृन्द का आवागमन सतत बना रहता है।

संघ अध्यक्ष श्री चुन्नीलाल जी मेहता ने अपने दि. १०-८-८५ के छात्रावास प्रवास मे पूर्व अध्यक्ष श्री पी. सी. चौपड़ा तथा छात्रावास सचालन समिति के तत्कालीन कर्मठ सदस्य श्री कोमल सिंहजी कूमट के अनुरोध पर छात्रावास के एकमात्र कष्ट-जल के अभाव का निवारण करने हेतु बोअरिंग करवाकर हैंड पम्प लगाने की स्वीकृति दी। तत्काल ही श्री मेहता के कर

कमलो से कार्य का शुभारम्भ भी करवा दिया गया । हैड पम्प निर्माण कार्य पूर्ण हो गया है और अब जल की पूरी सुविधा हो गई है । श्री मेहता जी ने छात्रो के अनुशासन से प्रभावित होकर छात्रो हेतु कम्बलो व वस्त्रो के वितरण की भी घोषणा की ।

छात्रावास सचालन समिति के सह सयोजक श्री मगनलाल जी मेहता, महिला समिति की रतलाम स्थित सक्रिय बहिनो तथा रतलाम सघ-प्रमुखो का भी छात्रावास को भरपूर सहयोग सदैव उपलब्ध रहता है । छात्रो की अनुशासन पूर्वक सर्वांगीण उन्नति हेतु वयोवृद्ध गृहपति श्री नानालाल जी मठ्ठा अपनी सेवाए प्रदान कर रहे है । छात्रावास का भविष्य उज्ज्वल है ।

आवश्यकताए—छात्रावास के पास पर्याप्त भूमि है पर कमरे कम हैं । अतःचार कक्ष, स्वाध्याय-भवन और अतिथि गृह का निर्माण करवाना एक सामयिक आवश्यकता है । विस्तृत भूखड मे सब्जी-फल आदि उगाने हेतु अनुभवी माली की जरूरत है । व्यायाम के कुछ साधन, खेती के औजार तथा कुछ फर्नीचर की शीघ्र व्यवस्था होना भी आवश्यक है । यद्यपि छात्रावास भवन सुरक्षा हेतु चारो ओर कटीले तारो की फेन्सिग से सुन्दरता बढी है, पर कमरो की मरम्मत का कार्य भी शीघ्र होना अपेक्षित है ।

विश्वास है कि सघ के दानी-मानी महानुभावो के उदात्त सहयोग से छात्रावास सभी प्रकार से उन्नति करते हुए विकास के पथ पर बढता चला जाएगा ।

सयोजक—विजेन्द्र कुमार पीतलिया
—चादनी चौक, रतलाम

शुभकामना

समारोह की आमन्त्रिका के लिये आभारी हू । म इससे पहिले भी मेरी आदराजलि अर्पित कर चुका हू । मुझे यह दुख अवश्य है कि प्रयत्न कर के भी मैं स्वास्थ्य के कारण स्वय इस महोत्सव पर हाजिर रह न पाऊगा ।

इन्दौर नगर मे विराजित प. पू. आचार्य श्री नानालाल जी म. सा. एव समस्त श्रमणवृन्द तथा महासतियो की सेवा मे, मेरी पत्नी परिवार व मेरी ओर से सश्रद्ध वन्दन नमन अर्पित करने का कष्ट करे ।

आपकी सस्था के २५ वर्ष, जैन जगत के इतिहास के स्वर्ण पृष्ठ हैं । मुझे विश्वास है—यह उत्सव, सिहावलोकन द्वारा अपने गत इतिहास पर दृष्टिक्षेप कर अपनी शक्तियो को रचनात्मक रूप से सहेज कर अपनी खामियो और त्रुटियो की ओर भी ध्यान देगा और आने वाले बरसो के लिये अधिक कुशल, प्रभावोत्पादक और समग्र आयोजन का अभियान आरम्भ करेगा जो श्रावक-श्राविकाओ के सगठनो को तेजस्वी, चरित्रवान और विकासोन्मुख कर पायेगा ।

उत्सव की समग्र सफलता की शुभ कामनाओ के साथ—

—जवाहरलाल मुणोत
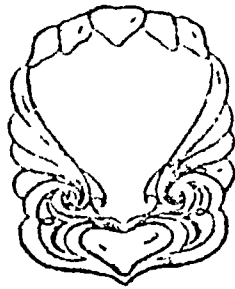
इतिहास चित्रों के माध्यम से

❋ वर्तमान पदाधिकारीगण ❋

संघ अध्यक्ष

श्री चुन्नीलाल जी मेहता
वम्बई

※ वर्तमान पदाधिकारीगण ※

उपाध्यक्ष

श्री सुन्दरलाल जी कोठारी
बम्बई

उपाध्यक्ष

श्री सोहनलाल जी सिपा
बैंगलोर

कोषाध्यक्ष

श्री भंवरलाल जी वडेर
बीकानेर

उपाध्यक्ष

श्री भवरलाल जी कोठारी
बीकानेर

उपाध्यक्ष

श्री चम्पालाल जी
ब्यावर

* वर्तमान पदाधिकारीगण *

सहमन्त्री

श्री चम्पालाल जी डागा
गगाशहर

सहमन्त्री

श्री फतहमल जी चोरड़िया
जोधपुर

मन्त्री

श्री धनराज जी वेताला
नोखा

सहमन्त्री

श्री केशरीचन्द जी सेठिया
मद्रास

सहमन्त्री

श्री मदनलाल जी कटारिया
रतलाम

* भूतपूर्व अध्यक्ष एवं सहमन्त्री *

श्री छगनलाल जी वैद
भीनासर

१८–६–६३ से ५–११–६५

श्री पार

उपाध्यक्ष एव सहमन्त्री
श्री सुन्दरलाल जी तातेड़
बीकानेर

२०–११–६८ से २०–

स्व० श्री हीरालाल जी
खाचरोद

श्री गणपतराज जी बोहरा
पीपलियाकला
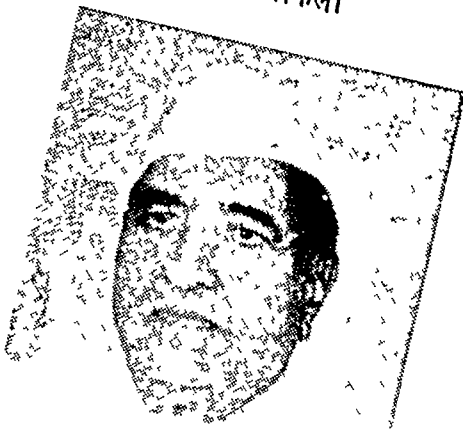
उपाध्यक्ष
९–१०–७२ से ५–१०–७५
सहमन्त्री
१८–९–६३ से ८–१०–७२
४–१०–७८ से १०–१०–८०
सम्प्रति कार्यसमिति सदस्य
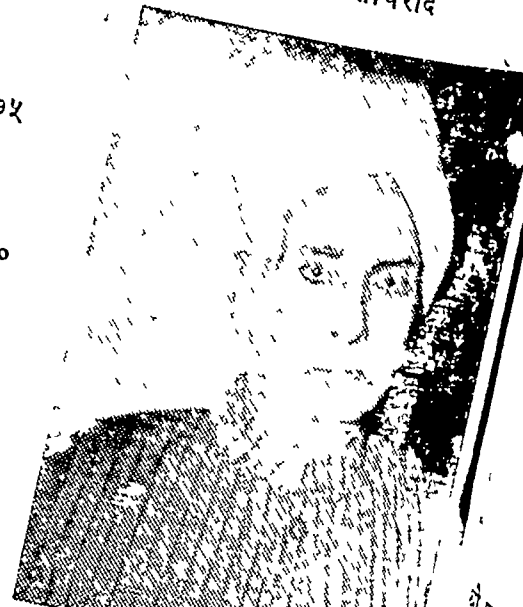
६–११–६५ से १९–११–६८

* भूतपूर्व संघ अध्यक्ष एवं मन्त्री *

श्री गुमानमल जी चोरड़िया
जयपुर
२८-६-७३ से १३-१०-७७

श्री जुगराज जी सेठिया
बीकानेर
११-१०-८० से १७-१०-८२

पूर्व मन्त्री
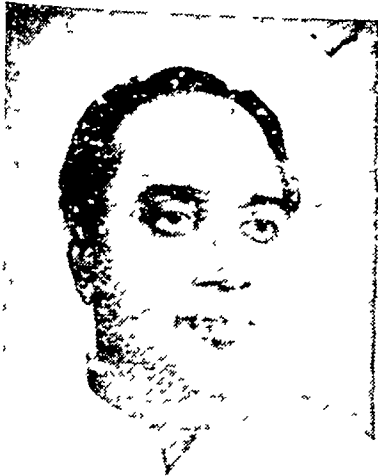
श्री सरदारमल जी कांकरिया
कलकत्ता
४-१०-७८ से १७-१०-८२

श्री पूनमचन्द जी चौपड़ा
रतलाम
१४-१०-७७ से १०-१०-८०

श्री दीपचन्द जी भूरा
देशनोक
१८-१०-८२ मे १५-११-८५

१ स्व श्री चम्पालालजी साड, देशनोक–प्रसिद्ध जूट निर्यातक, धर्मपाल प्रवृत्ति सहयोगी, जन्म १९१६ स्वर्गवास १९८२
२ स्व भैरोदानजी सेठिया बीकानेर–धर्म, समाज एव साहित्य सेवा मे समर्पित, शिक्षा सस्थानो तथा पारमार्थिक सस्था के सस्थापक, रग व ऊन के सुप्रसिद्ध व्यवसायीजन्म विजयादशमी स १९२३ स्वर्गवास श्रावण शुक्ला ९ संवत् २०१८
३ स्व श्री चम्पालालजी सुराणा रायपुर–संघ के सक्रिय सदस्य, धार्मिक शिविर के प्रेरणा स्रोत, वस्त्र व्यवसायी,
४ स्व श्री हिम्मतसिहजी सरूपरिया उदयपुर-उदयपुर सघ एव सु सा शिक्षा सोसायटी के अध्यक्ष, जैन शास्त्रो के ज्ञाता,
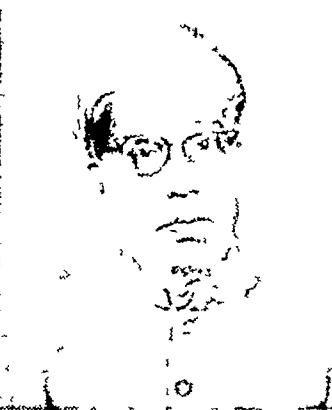
१ स्व श्री विजयराजजी मूथा मद्रास–प्रसिद्ध व्यवसायी, शिक्षा प्रेमी, धर्मनिष्ठ, जन्म १८९०स्वर्गवास२४जुलाई,१९७२
२ स्व श्री कुन्दनसिहजी खिमेसरा, उदयपुर–उदयपुर सघ के अध्यक्ष, चादी के प्रामाणिक व्यवसायी।
३. स्व सेठ श्री सरूपचन्दजी चोरडिया, जयपुर–सुप्रसिद्ध रत्नव्यवसायी, धर्मनिष्ठ सुश्रावक एव समाज प्रेमी।
४. स्व श्री चान्दमलजी पामेचा, ब्यावर–धर्मनिष्ठ समाजसेवी, उत्साही कार्यकर्त्ता, २१जून ७९ को स्वर्गवास।

१ स्व सेठ श्री जेसराजजी बैद, गगाशहर–सुप्रसिद्ध समाजसेवी, सुश्रावक, सु सा शिक्षा सोसायटी के सहयोगी।
२ स्व श्री गेंदालालजी नाहर, जावरा–धर्मपाल प्रवृत्ति के प्रथम सयोजक एव उन्नायक।
३ स्व श्री भीखमचन्दजी भूरा देशनोक-आचार्य श्री के भक्त, धर्म प्रेमी, सु सा शिक्षा सोसायटी के सहयोगी।
४ स्व श्री महावीरचन्दजी धाड़ीवाल–रायपुर–सघ के उत्साही, अग्रणी कार्यकर्त्ता, प्रसिद्ध वस्त्र व्यवसायी।
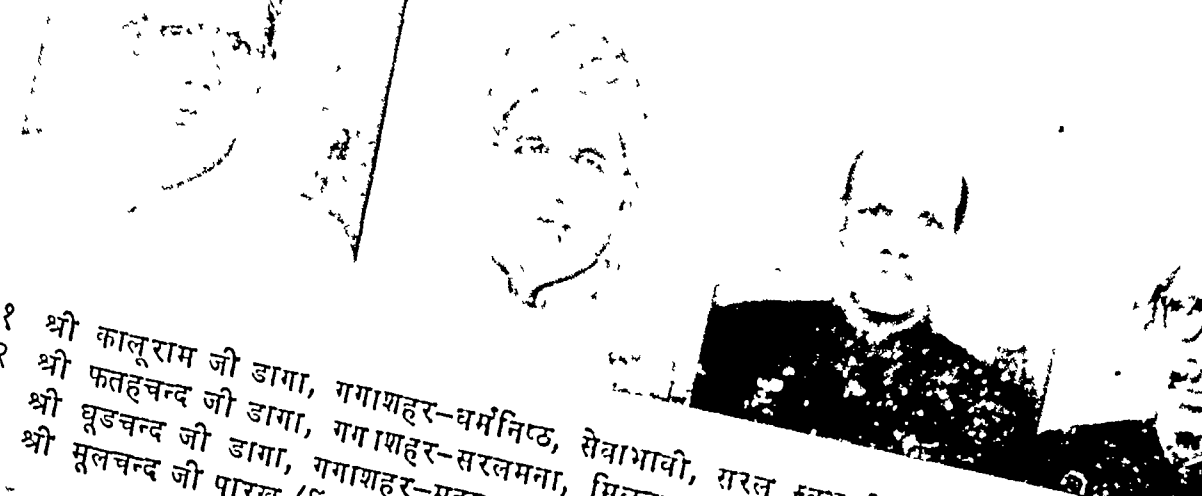
१ स्व श्री तोलारामजी भूरा, देशनोक–सुप्रसिद्ध समाजसेवी, सघनिष्ठ अग्रणी श्रद्धालु श्रावक ।
२ स्व श्री मूलचन्दजी पारख, नोखा–नोखामडी वसाने मे अनन्य सहयोग, सघनिष्ठ,श्रद्धालु श्रावक, परम सेवाभावी।
३ स्व श्री लक्ष्मीचन्दजी धाडीवाल, रायपुर-अनन्य श्रद्धालुश्रावक, धर्मनिष्ठ, उदारमना समाजसेवी ।
४ स्व श्री कुशालचन्दजी गेलडा, मद्रास–समाज सुधारक, न्यायप्रेमी, कुशल व्यवसायी, धर्मनिष्ठ, मिलनसार ।
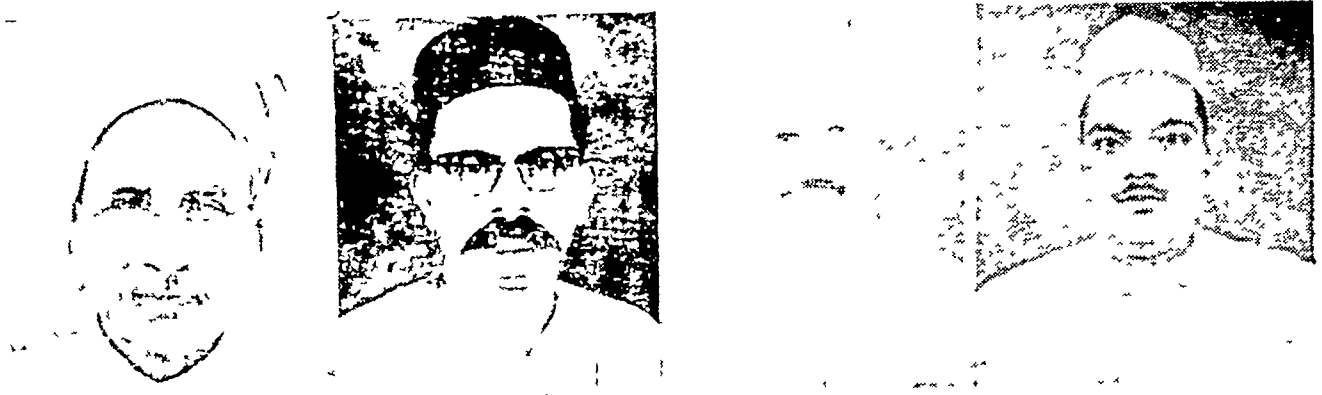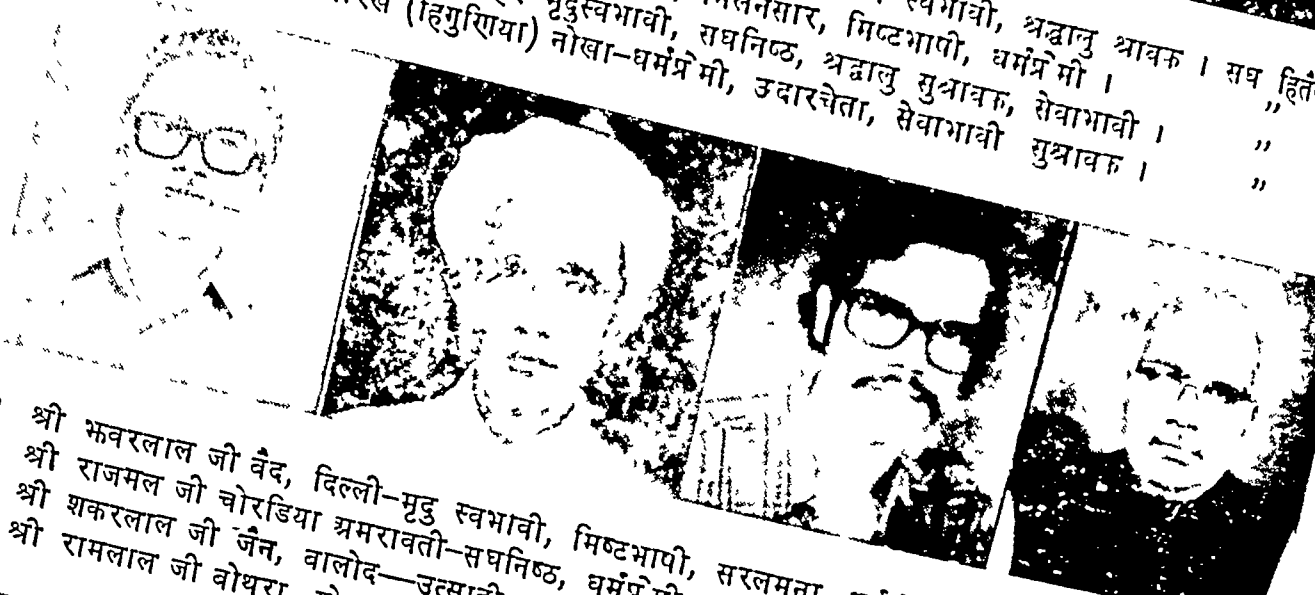
१ स्व श्री भूमरमलजी वेताला, नोखा–सादाजीवन उच्चविचार, धर्मनिष्ठ, श्री धनराजजी वेताला के पिताजी ।
२ स्व श्री पावूदानजी काकरिया, दुर्ग–सघनिष्ठ, समाजसेवी, धर्मप्रेमी ।
३ स्व श्री रखवचन्दजी डागरिया, रामपुरा–रत्न व्यवसायी, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी, सुश्रावक ।
४ स्व श्री अमरचन्दजी लोढा, व्यावर–सरल स्वभावी, प्रवल स्मरणशक्ति, साहित्यप्रेमी, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी ।
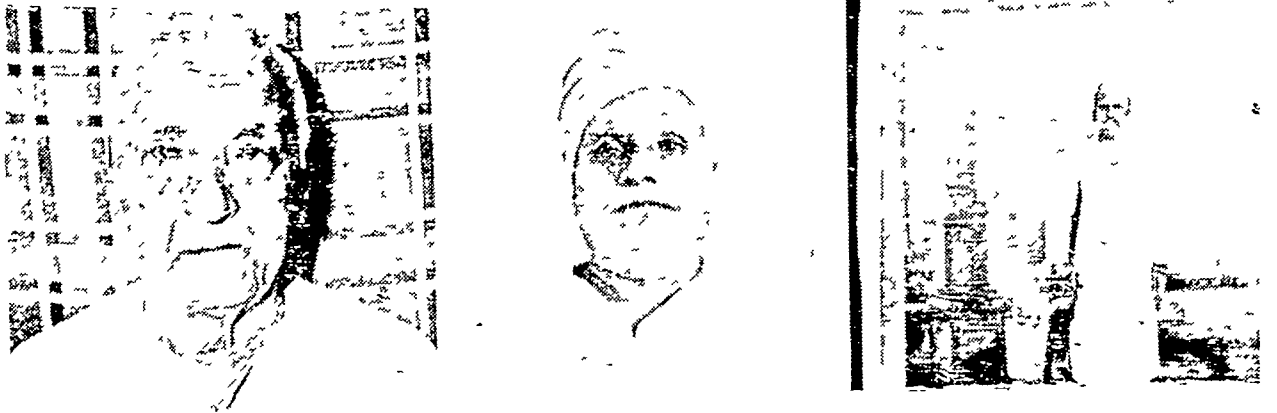
१ स्व प श्यामलालजी ओझा, वीकानेर-अथक परिश्रमी, समाजसेवी, साधु-साध्वियो के अध्यापन मे जीवनपर्यन्त रत ।
२ स्व श्री जीवनचन्दजी वैद, राजनादगाव–धर्मप्रेमी, समाजसेवी मृदुभाषी, सरलमना, सघनिष्ठ सुश्रावक ।
३ स्व श्री मोहनलालजी वैद, वीकानेर–समाजसेवी, धर्मप्रेमी स. १९९१ मे वीकानेर मे सम्पन्न श्रावक सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष ।

१ श्री कालूराम जी डागा, गगाशहर–धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, सरल स्वभावी, श्रद्धालु श्रावक । सघ हितै
२ श्री फतहचन्द जी डागा, गगाशहर–सरलमना, मिलनसार, मिष्टभाषी, धर्मप्रेमी । ,,
३ श्री धूडचन्द जी डागा, गगाशहर–मृदुस्वभावी, सघनिष्ठ, श्रद्धालु सुश्रावक, सेवाभावी । ,,
४ श्री मूलचन्द जी पारख (हिंगुणिया) नोखा–धर्मप्रेमी, उदारचेता, सेवाभावी सुश्रावक । ,,

१ श्री भवरलाल जी वैद, दिल्ली–मृदु स्वभावी, मिष्टभाषी, सरलमना, धर्मप्रेमी ।
२ श्री राजमल जी चोरडिया अमरावती–सघनिष्ठ, धर्मप्रेमी, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
३ श्री शकरलाल जी जैन, बालोद—उत्साही, सक्रिय शाखा सयोजक, धर्मनिष्ठ ।
४ श्री रामलाल जी बोथरा, गोलकगज—धर्मप्रेमी, सरल स्वभावी, शाखा सयोजक ।

श्री बालचन्द रांका, मद्रास—समता युवा संघ के सहमन्त्री, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
श्री श्रीप्रकाश जैन, ब्यावर—समता बालक मडली के उत्साही सक्रिय अध्यक्ष ।
श्री सुशील कोठारी, चिकारडा—समता बालक मण्डली के उत्साही सक्रिय सदस्य ।
ी सुजानमल जी बोरा, इन्दौर—रजत जयन्ती समारोह के स्वागताध्यक्ष, उदारचेता, धर्मनिष्ठ, उत्साही
र्यकर्त्ता, इन्दौर सघ के अध्यक्ष ।
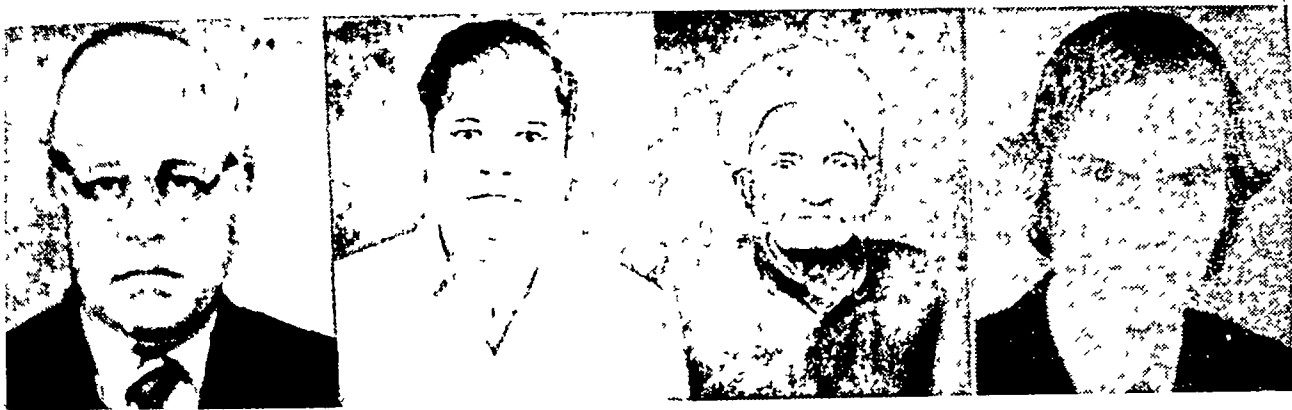
१ श्री विजयेन्द्रजी पीतलिया, रतलाम—संयोजक, धर्मपाल छात्रावास दिलीपनगर, उत्साही, सेवाभावी कार्यकर्त्ता ।
२ श्री धर्मीचन्दजी कोठारी, अजमेर—अभिकर्ता जीवन बीमा निगम, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी कार्यकर्त्ता ।
३ श्री हरकलालजी सरूपरिया, चित्तौडगढ—वयोवृद्ध श्रद्धालु, सेवाभावी, समाजसेवी, श्रावक ।
४. श्री रिखबचन्दजी जैन, दिल्ली—उत्साही युवा कार्यकर्त्ता, प्रबुद्ध चिन्तक, धर्मप्रेमी, सेवाभावी ।
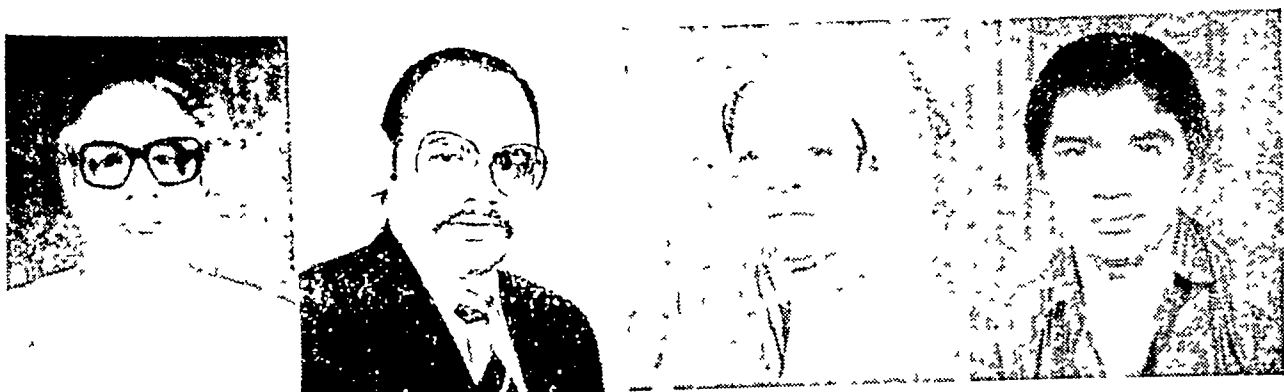
१ श्री शंकरलालजी बोथरा, दुर्ग—धर्मप्रेमी, सेवाभावी, समाजसेवी, श्रद्धालु श्रावक ।
२ श्री रतनलालजी हीरावत, दिल्ली—कुशल व्यवसायी, धर्मप्रेमी, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
३ श्री नोरतनमलजी छल्लाणी, ब्यावर—अनाज व्यवसायी, साहित्य प्रेमी, समाजसेवी कार्यकर्त्ता ।
४ श्री सायरचन्दजी कवाड, पाली—उत्साही युवा कार्यकर्त्ता, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी ।
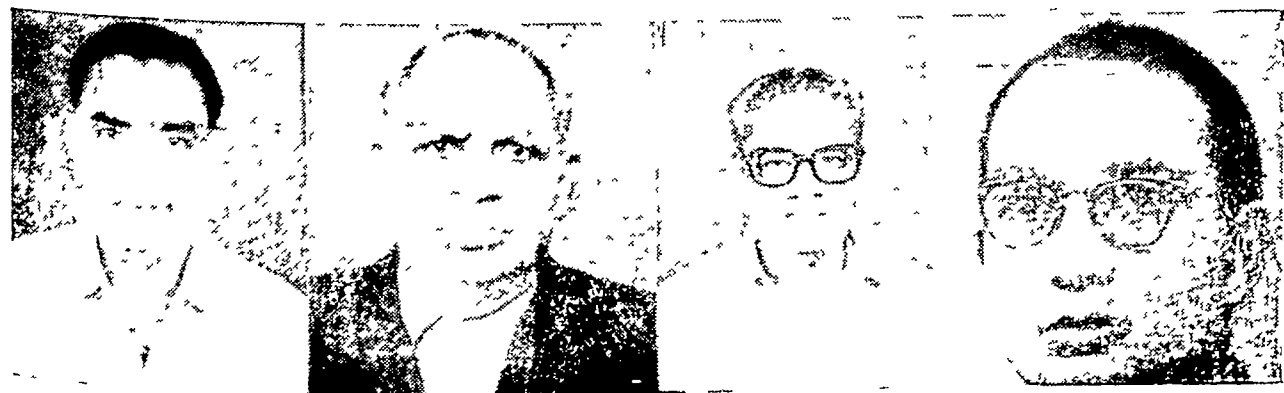
१ श्री मानसिंहजी डागरिया, जलगाव—रत्न व्यवसायी, धर्मप्रेमी, उत्साही, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
२. श्री भवरलालजी सिपानी, मद्रास—धर्मनिष्ठ, उदारचेता, सरल स्वभावी, श्रद्धालु श्रावक ।
३. श्री शान्तिलालजी चौधरी, नीमच—उत्साही, धर्मप्रेमी, समाजसेवी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
४ श्री खेमचन्दजी सेठिया, बीकानेर—प्रसिद्ध लॉयन, सेवाभावी, जागरूक कार्यकर्त्ता, टिकट संग्राहक ।
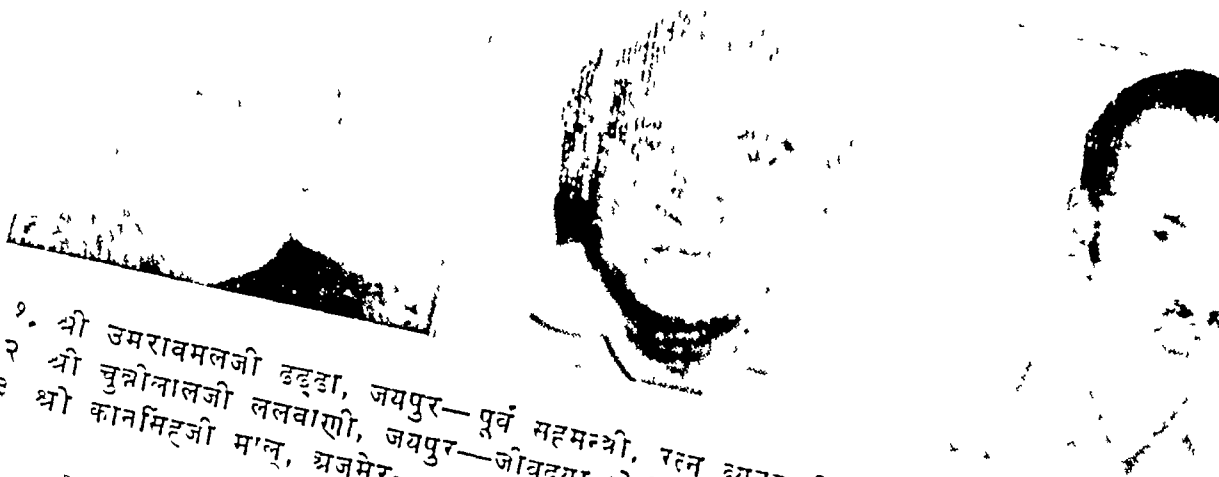
१. श्री उमरावमलजी ढड्ढा, जयपुर—पूर्व सहमन्त्री, रत्न व्यवसायी, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी श्रावक।
२ श्री चुन्नीलालजी ललवाणी, जयपुर—जीवदया प्रेमी, प्राणिमित्र, ओजस्वीवक्ता, धर्मनिष्ठ।
३ श्री कानसिंहजी माल्, अजमेर—सरल स्वभावी, मिष्टभाषी, धर्मप्रेमी, कार्यकर्त्ता।

१ श्रीमती प्रेमलता जैन अजमेर—उपाध्यक्षा म स, पूर्व सहमंत्री एव मत्री म स, धर्मनिष्ठा, सक्रिय कार्यकर्त्री।
२ श्री प्रेमराजजी चौपडा, इन्दौर—सरलमना, धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु श्रावक, सक्रिय शाखा सयोजक।
३ श्री हनुमानचन्दजी डोसी, डिब्रुगढ—धर्मप्रेमी, सरल स्वभावी, समाजसेवी कार्यकर्त्ता, शाखा सयोजक
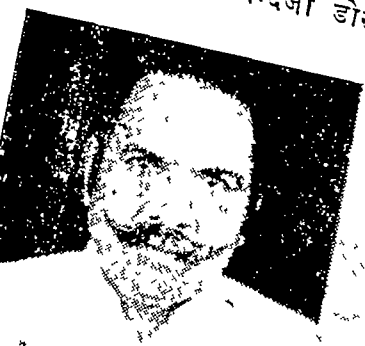
श्री रूपचन्दजी बागमार, पाटोदी—समाजसेवी, धर्मप्रेमी, श्रद्धालु श्रावक।
श्री जौहरीमलजी सुराणा, धुबडी – एडवोकेट, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी, सेवाभावी कार्यकर्त्ता।
श्री शीतलचन्दजी नलवाया, इन्दौर – रुई के व्यवसायी, धर्मप्रेमी, स्वाध्यायी, कार्यकर्त्ता।
श्री लक्ष्मणसिंहजी गलुण्डिया, बम्बई – व्यवसायी, धर्मप्रेमी, समाजसेवी, शाखा सयोजक।

शाखा संयोजक—
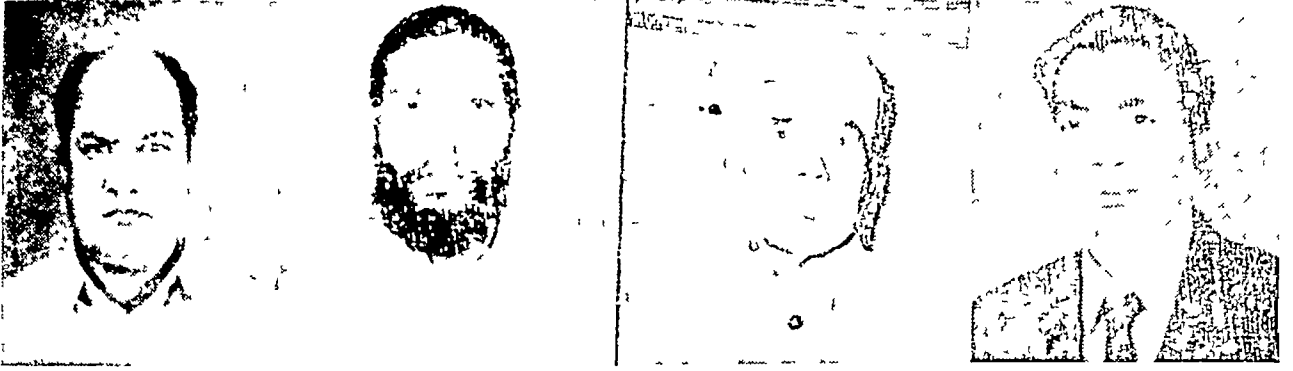
१ श्री केशरीचन्दजी गोलछा, वगाईगाव—परम उत्साही, सक्रिय, दृढ निश्चयी, धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु, कार्यकर्त्ता।
२ श्री जम्बूकुमारजी बाफना, कुनूर—सेवाभावी, धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
३ श्री सुजानमलजी मारू, बडीसादडी—धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, श्रद्धालु, स्वाध्यायी, कार्यकर्त्ता ।
४ श्री वीरेन्द्रसिंहजी लोढा, उदयपुर—चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, उदयपुर सघ मन्त्री, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।

१ श्री जीवनकुमार जैन, वैगू—सगीत प्रेमी, उत्साही, धर्मनिष्ठ, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
२ श्री मोहनलालजी बोथरा, गोहाटी—उत्साही, सघनिष्ठ, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।
३. श्री कन्हैयालालजी छीगावत, नारायणगढ—धर्मप्रेमी, व्यवसायी, श्रद्धालु श्रावक ।
४. श्री घीसुलालजी डागा, ताम्बरम्—सरलस्वभावी, मिलनसार, धर्मप्रेमी श्रावक ।
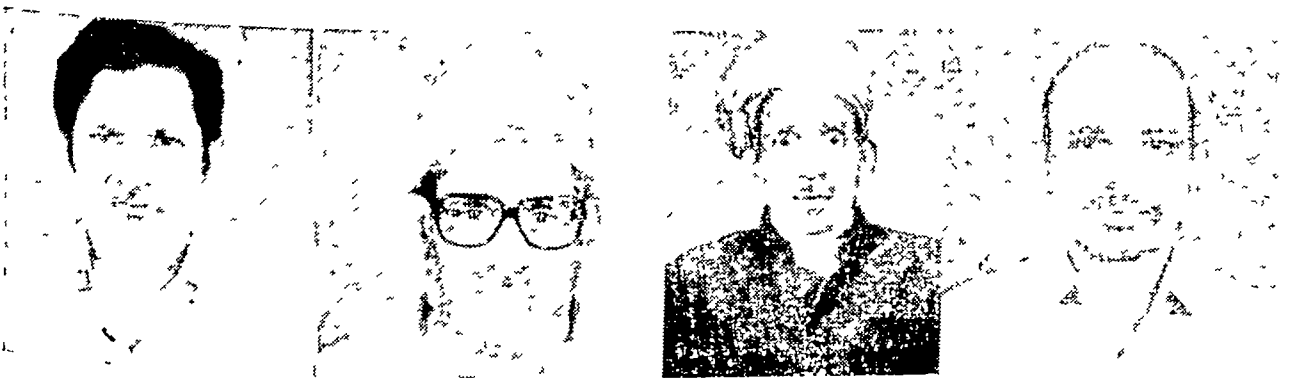
१. श्री मोहनलालजी गोलछा, हावली—उत्साही, सक्रिय, धर्मनिष्ठ कार्यकर्त्ता ।
२ श्री कन्हैयालालजी बोथरा, रतलाम—उत्साही, धर्मनिष्ठ, कर्मठ श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
३ श्री मदनलालजी सरूपरिया, भदेसर—उत्साही, कर्मठ स्वाध्यायी, श्रद्धावान कार्यकर्त्ता ।
४ श्री सुगनचन्दजी धोका, तैनमपैठ मद्रास—सरल स्वभावी, धर्मप्रेमी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
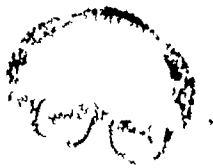
१ श्री मोतीलालजी चडालिया, कपासन—उत्साही स्वाध्यायी, सघनिष्ठ, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।
२. श्री सुन्दरलालजी सिंघवी, गंगापुर—सरल स्वभावी, धर्मप्रेमी, समाजसेवी कार्यकर्त्ता ।
३ श्री सागरमलजी चपलोत, निम्बाहेडा—वस्त्र व्यवसायी, धर्मप्रेमी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
४ श्री मनोहरलालजी जैन, पीपल्यामण्डी—उत्साही, धर्मनिष्ठ, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।

१ श्री देवीलालजी बोहरा, रुण्डेडा—स्वाध्यायी, धर्मप्रेमी, सघनिष्ठ, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
२. श्री गौतमजी पारख, राजनादगाव—उत्साही, सजग, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी कार्यकर्त्ता ।
३. श्री जीवराजजी कोचर मूथा, बेलगाव—धर्मप्रेमी, सेवाभावी, सरल स्वभावी श्रावक ।
४ श्री सम्पतलालजी सिपानी, सिलचर—उत्साही, प्रबुद्ध, धर्मनिष्ठ कार्यकर्त्ता ।

श्री उत्तमचन्दजी लोढा, ब्यावर—उत्साही, धर्मप्रेमी, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
श्री तोलारामजी मिन्नी, मद्रास—धर्मनिष्ठ, मिलनसार, मृदुस्वभावी कार्यकर्त्ता ।
श्री सौभाग्यमलजी कोटडिया, मुंगोली—शासनसेवी, धर्मप्रेमी, श्रद्धालु सुश्रावक ।
श्री मोहनलालजी चोरड़िया, मैलापुर मद्रास—उत्साही, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।

१ श्री सरदारमलजी ढढ्ढा, जयपुर—पूर्व उपाध्यक्ष, प्रसिद्ध रत्न व्यवसायी, धर्मनिष्ठ सुश्रावक ।
२ श्री कन्हैयालालजी मालू, कलकत्ता—पूर्व उपाध्यक्ष, वस्त्र व्यवसायी, धर्मप्रेमी श्रावक ।
३ श्री तोलारामजी हीरावत, दिल्ली—धर्मनिष्ठ, शासनसेवी, श्रद्धालु श्रावक ।
४ श्री फतहलालजी हिंगड, उदयपुर—प्राकृत संस्थान के मंत्री, धर्मनिष्ठ सक्रिय कार्यकर्त्ता ।

१ श्री समीरमलजी काठेड, जावरा—पूर्व सहमंत्री एवं म प्र संयोजक, उत्साही, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
२ श्री कन्हैयालालजी भूरा, कूचबिहार—धर्मनिष्ठ, शिक्षाप्रेमी, जनसेवी उत्साही, कार्यकर्त्ता ।
३ श्री शिखरचन्दजी मिन्नी, कलकत्ता—उदारचेता, सरल स्वभावी, उत्साही, धर्मप्रेमी, कर्मठ कार्यकर्त्ता
४ श्री भौरीलालजी धींग, बडीसादडी—धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु, शासनसेवी सुश्रावक ।

१ श्री भवरलालजी चौपडा, जावद—उदारचेता, शिक्षाप्रेमी, धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
२ श्री शंकरलालजी जैन, भीम—एडवोकेट, धर्मप्रेमी, साहित्यानुरागी, कार्यकर्त्ता ।
३ श्री लक्ष्मीलालजी पामेचा, बडीसादडी—धर्मनिष्ठ, कुशल व्यवसायी, श्रद्धालु श्रावक ।
४ श्री कालूरामजी नाहर, ब्यावर—श्री जैन जवाहर मित्र मण्डल के पूर्व मंत्री, धर्मप्रेमी, संघनिष्ठ ।

कार्यसमिति सदस्य—
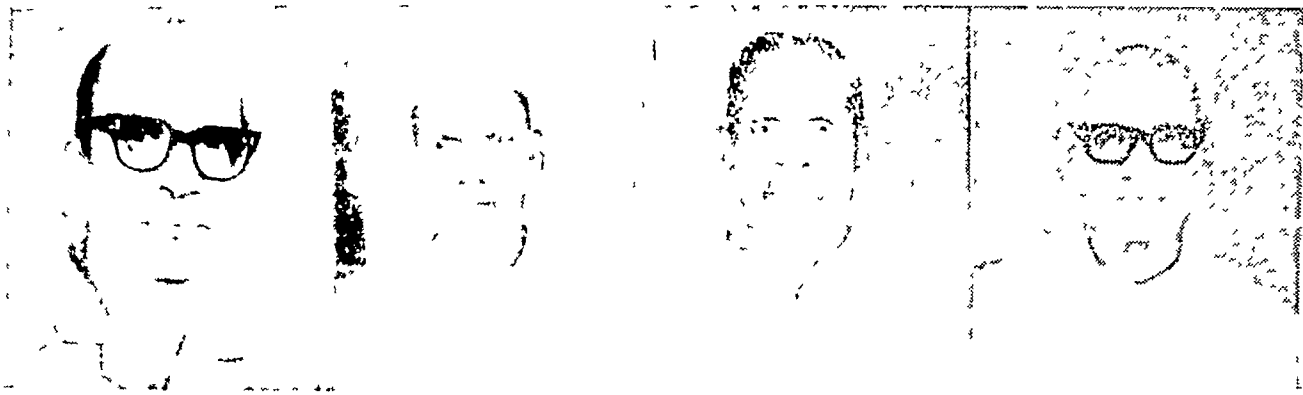
१ डा नरेन्द्र भानावत, जयपुर—प्रबुद्ध चिन्तक, सम्पादक, जैन विद्वत् परिषद के मंत्री, रीडर राज विश्व ।
२ श्री चम्पालालजी पिरोदिया, रतलाम—करुणामूर्ति, सेवाव्रती, सर्वोदयी, जनसेवी, सुश्रावक ।
३ श्री गणेशीलालजी वया, उदयपुर—समता प्रचार संघ के संयोजक, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, कर्मठ कार्यकर्त्ता ।
४ समाजसेवी मानवमुनि, इन्दौर सर्वोदयी, जीवदयाप्रेमी, जीवनदानी, सेवाव्रती, घुमक्कड,
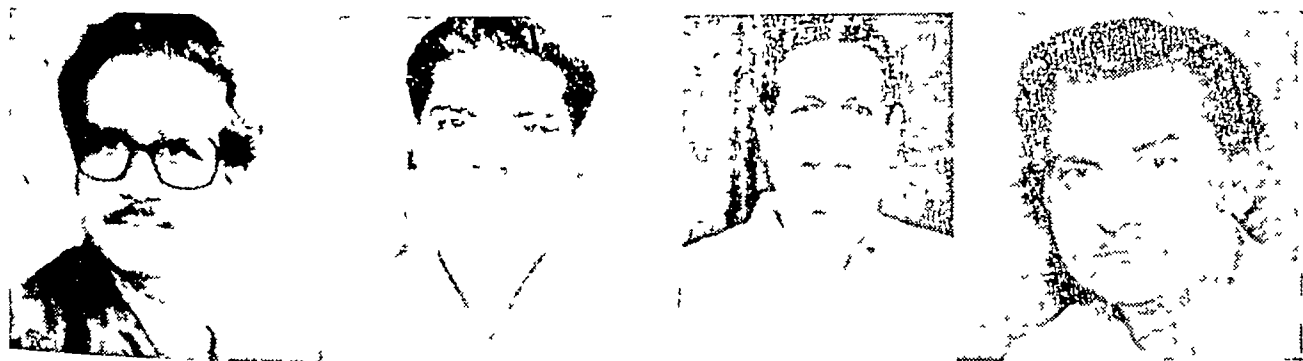
१ श्री जयचन्दलालजी सुखानी, बीकानेर—शासननिष्ठ, सेवाभावी, धर्मनिष्ठ, कर्मठ कार्यकर्त्ता ।
२ श्री मोहनलालजी श्रीश्रीमाल, ब्यावर—उत्साही, शासननिष्ठ, कर्मठ कार्यकर्त्ता, पूर्व सहमंत्री ।
३ श्री पारसमलजी दुग्गड, विल्लुपुरम्—प्रसिद्ध रत्न व्यवसायी, संघपति, शिक्षाप्रेमी, समाजसेवी ।
४ श्री पृथ्वीराजजी पारख, दुर्ग—पूर्व सहमन्त्री, थोक वस्त्र व्यवसायी, शिक्षाप्रेमी, मधुरभाषी, मिलनसार ।
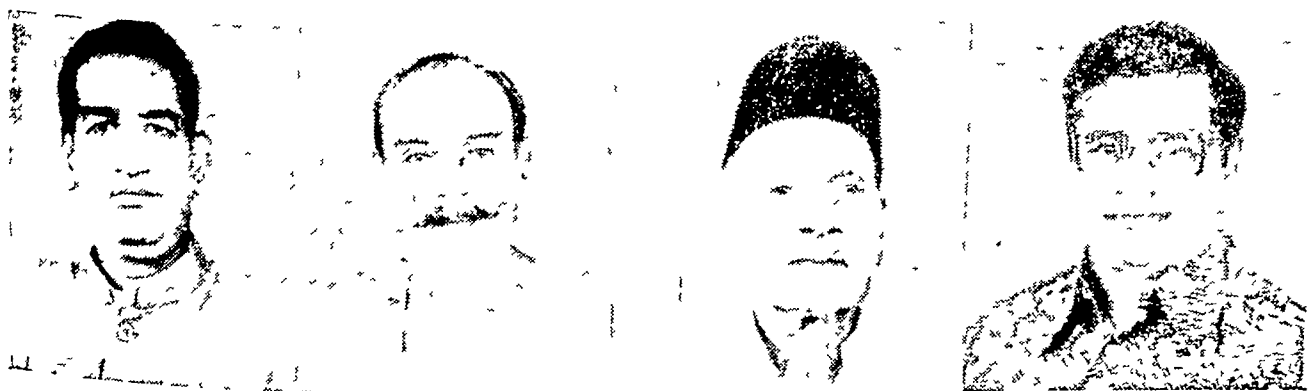
१ श्री धर्मचन्दजी पारख, नोखामण्डी—उत्साही, धर्मनिष्ठ, समाजसेवी, श्रद्धालु, कर्मठ कार्यकर्त्ता ।
२ श्री महावीरचन्दजी गेलडा, हैदराबाद—शिक्षाप्रेमी, अनेक शिक्षा संस्थानों से सम्बद्ध, सेवाभावी ।
३ श्री कन्हैयालालजी मूलावत, भीलवाडा—कर्मठ शासननिष्ठ, समाजसेवी, वरिष्ठ कार्यकर्त्ता, सर्राफ ।
४ श्री शांतिलालजी सांड, बैंगलोर—धर्मनिष्ठ, उत्साही कार्यकर्त्ता, पितृ-स्मृति में जैन सा पुरस्कार स्थापना ।

प. श्री लालचन्दजी मुणोत ब्यावर—शासन सेवा समर्पित, शास्त्रज्ञ, मृदु भाषी, वयोवृद्ध श्रावक।
२. प. श्री कन्हैयालालजी दक, उदयपुर—ओजस्वी वक्ता, साधु-साध्वियों के अध्यापन मे रत आगमज्ञ।
३ डा. प्रेमसुमन जैन, उदयपुर—जैन विद्या विभाग के अध्यक्ष, प्रबुद्ध विचारक, देश विदेश भ्रमण।
४. श्री नाथूलालजी जारोली, बीकानेर—कार्यालय सचिव; जैन शिक्षण संघ कानोड के उपाध्यक्ष।
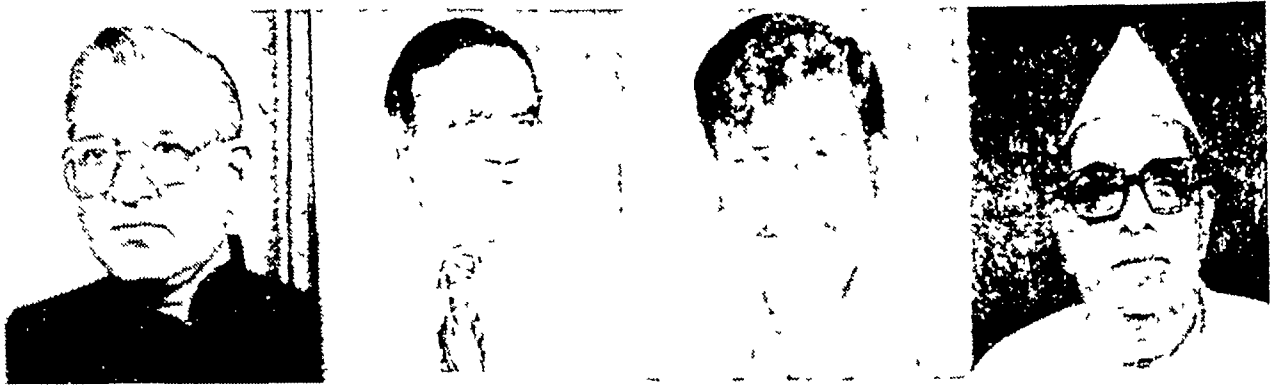
१. श्री रोशनलालजी मेहता, अहमदाबाद—तांबा, पीतल, शीशा आदि के व्यवसायी, धर्मप्रेमी, संघ निष्ठ कार्यकर्त्ता।
२ श्री समरथमलजी डागरिया, रामपुरा—रत्न व्यवसायी, भावुक कवि, प्रबुद्ध, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता।
३ श्री मनसुखलालजी कटारिया, राणावास—उत्साही युवक कार्यकर्त्ता, सेवाभावी, धर्मप्रेमी।
४. श्री मोहनराजजी बोहरा, बैंगलोर—पूर्व उपाध्यक्ष, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, श्रद्धालु श्रावक।
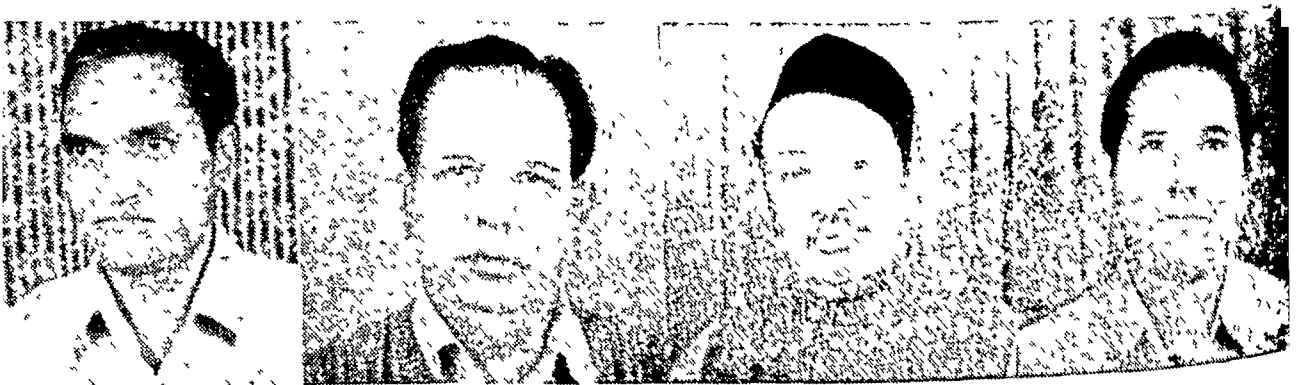
१ श्री मदनलालजी सुरपरिया, चित्तौडगढ—उषा सिलाई मशीन, पंखो के व्यवसायी, धर्मप्रेमी, सेवाभावी।
२. श्री चन्दनमलजी जैन, देवगढ मदारिया—कुशल व्यवसायी, धर्म निष्ठ, उत्साही कार्यकर्त्ता।
३. श्री नोरतनमलजी डेडिया, ब्यावर—धर्मनिष्ठ, उत्साही, सेवाभावी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता।
४. श्री मिट्ठालालजी लोढ़ा, ब्यावर—सेवाभावी, श्रद्धालु, धर्मप्रेमी, उत्साही कार्यकर्त्ता।

शाखा संयोजक—

१. श्री मूलचन्दजी सहलोत, निकुम्भ—धर्मनिष्ठ, मृदुभाषी, सेवाभावी, श्रद्धालु श्रावक ।
२ श्री भवरलालजी श्रीश्रीमाल, देवगढ—धर्मप्रेमी, श्रद्धालु, समाजसेवी श्रावक ।
३ श्री किशनलालजी काकरिया, टगला—उत्साही, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
४ श्री दौलतरामजी बाघमार, पाटौदी—धर्मप्रेमी, सेवाभावी, श्रद्धालु श्रावक ।
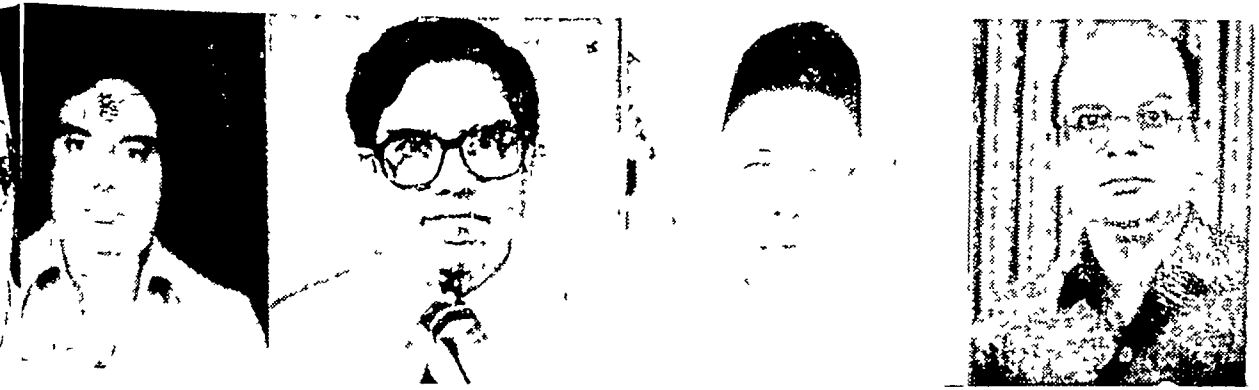
१ श्री पुखराजजी बोथरा, गौहाटी—चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
२ श्री विजयकुमारजी काठेड, अहमदनगर—चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट, मिष्टभाषी, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
३ श्री फकीरचन्दजी पामेचा, जावरा—धर्मपाल प्रवृत्ति सयोजक(क्षेत्रीय), धर्मनिष्ठ, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
४ श्री गौतमचन्दजी जगदलपुर—धर्मप्रेमी, उत्साही, सेवाभावी कार्यकर्त्ता ।

१ श्री भवरलालजी बोरूदिया, ब्यावर—हुण्डी चिट्ठी ब्रोकर, अध्यक्ष जैन जवाहर मित्र मडल, जैन मित्र मडल ।
२ श्री बाबूलालजी जैन, नगरी—सेवाभावी, धर्मनिष्ठ, मिलनसार, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
३ श्री शातिलालजी ललवाणी—साहित्यप्रेमी, धर्मनिष्ठ, उत्साही, ओजस्वी कार्यकर्त्ता ।
४. श्री महेन्द्रजी मित्री, गगाशहर—सेवाभावी, सरल स्वभावी, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।

शाखा संयोजक—
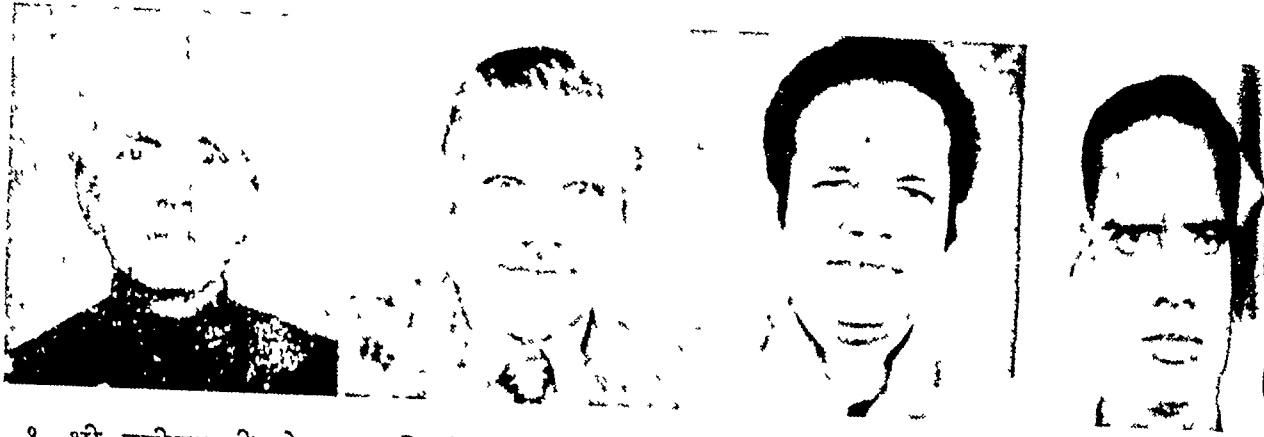
१ श्री बशीलालजी पोखरना, चित्तौड़गढ़—वस्त्र व्यवसायी, स्वाध्यायी, धर्मप्रेमी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता।
२ श्री पारसमलजी मूथा, उटकमण्ड—सेवाभावी, उत्साही, धर्मप्रेमी, कर्तव्यनिष्ठ कार्यकर्त्ता।
३ श्री अशोककुमारजी दलाल, खाचरौद—एडवोकेट, ध. प्र. क्षे. संयोजक, धर्मप्रेमी, सक्रिय कार्यकर्त्ता।
४ श्री पन्नालालजी लोढा, चिकारडा—स्पष्ट वक्ता, धर्मप्रेमी, सेवाभावी, श्रद्धालु श्रावक।

१ श्री हीरालालजी जैन, मोरवण—सेवा निवृत्त अध्यापक, समाजसेवी, स्वाध्यायी, मित भाषी।
२. श्री शांतिलालजी धींग, कानोड—राज्य सम्मानित अध्यापक, समाजसेवी, सक्रिय कार्यकर्त्ता।
३ श्री सायरचन्दजी कोटडिया, जोधपुर—व्यवसायी, उत्साही, युवा कार्यकर्त्ता, सेवाभावी।
४. श्री सोहनलालजी सेठिया, सरदारशहर—धर्मप्रेमी, सेवाभावी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता।

१ श्री छगनलालजी गन्ना, भीम—शासनसेवी, भीम संघ-अध्यक्ष, धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु श्रावक।
२ श्री अमृतलालजी दुग्गड, सोमेसर—धर्मप्रेमी, सेवाभावी, सरल स्वभावी कार्यकर्त्ता।
३ श्री मदनलालजी नन्दावत, भीडर—प्रधानाध्यापक, मृदुभाषी, सरल स्वभावी, समाजसेवी, भीडर संघ अध्यक्ष
४. श्री अशोककुमारजी सियाल, उत्साही युवा कार्यकर्त्ता, समाजसेवी धर्मनिष्ठ।
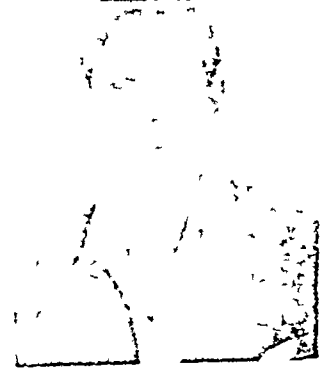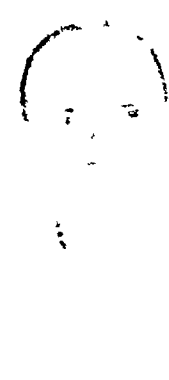
शाखा संयोजक-

श्री सुभाषजी चोपडा, भिलाईनगर–उत्साही, धर्मप्रेमी, सेवाभावी, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
श्री पन्नालालजी कोटडिया, मुटीपार–धर्मप्रेमी, सरल स्वभावी, समाजसेवी कार्यकर्त्ता ।
श्री जवरचन्दजी जैन, धमधा–सेवाभावी, शिक्षा प्रेमी, धर्मनिष्ठ, श्रद्धालु श्रावक ।
श्री सौभाग्यमलजी जैन, मनावर–सरल स्वभावी, धर्मप्रेमी, सेवाभावी कार्यकर्त्ता ।
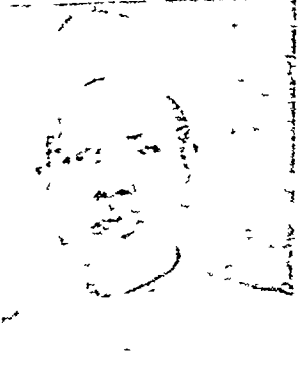
श्री सम्पतराजजी डागा, रानीबेन्नूर–धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, सरलमना, युवा कार्यकर्त्ता ।
श्री श्रेणिकराजजी श्रीमाल, विरमावल–समाजसेवी, सरल स्वभावी, धर्मनिष्ठ कार्यकर्त्ता ।
श्री प्रकाशचन्दजी सुराणा, बैतूल–शासनसेवी, दक्ष व्यवसायी, धर्मनिष्ठ कार्यकर्त्ता ।
श्री माणकचन्दजी बोरा, चिंगलपेट–सेवाभावी, समाजसेवी, धर्मप्रेमी श्रावक ।

श्री अमरचन्दजी जैन, विल्लुपुरम्–समाजसेवी, शिक्षाप्रेमी, धर्मनिष्ठ कार्यकर्त्ता ।
श्री प्रकाशचन्दजी बेनागा, बंगाईगाव–धर्मप्रेमी, सरल स्वभावी, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
श्री हुक्मीचन्दजी मधा, कोयम्बटूर–सरल स्वभावी, उत्साही, धर्मप्रेमी, श्रद्धालु श्रावक ।
श्री लालचन्दजी गुगलिया, रडावास–शासनसेवी, समाजप्रेमी, धर्मनिष्ठ श्रावक ।

१ श्री लालचन्दजी डागा, कडूर–उत्साही, सेवाभावी, समाजप्रेमी, धर्मनिष्ठ, कार्यकर्त्ता ।
२ श्री कमलचन्दजी भूरा, वासुगाव–सेवाभावी, धर्मप्रेमी, समाजसेवी, सक्रिय कार्यकर्त्ता ।
३. श्री फूसराजजी ललवाणी, वरपेटारोड–उत्साही, समाजप्रेमी, सेवाभावी, धर्मनिष्ठ श्रावक ।
४. श्री राजमलजी खटोड, कुर्ला(बम्बई)–धर्मप्रेमी, सेवाभावी, सत्रनिष्ठ कार्यकर्त्ता ।

१ श्री मूलचन्दजी पगारिया, मावली–धर्मनिष्ठ, उत्साही, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।
२ श्री कुन्दनमलजी खीवसरा, बावरा–सेवाभावी, समाजप्रेमी, श्रद्धालु सुश्रावक ।
३ श्री अशोककुमारजी भण्डारी, खिडकिया–समाजसेवी, सेवाभावी, धर्मप्रेमी, युवा कार्यकर्त्ता ।
४ श्री अमृतलालजी चौधरी, जावद–धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।

१ श्री भवरलालजी चौपडा, लोनसरा–धर्मप्रेमी, शासननिष्ठ, श्रद्धालु श्रावक ।
श्री लूणकरणजी कोटडिया, लोहावट–धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
श्री गुलाबचन्दजी गोलछा, नारायणपुर–सेवाभावी, धर्मप्रेमी, सक्रिय युवा कार्यकर्त्ता ।
श्री मोहनलालजी भटेवरा, कोटा–कार्यसमिति के सदस्य, वस्त्र व्यवसायी, धर्मनिष्ठ ।

१ श्री किशनलालजी सचेती, नोखा—वस्त्र व्यवसायी, सचिव वस्त्र व्यवसाय संघ, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।
२ श्री चम्पालालजी छल्लाणी, घुवडी—धर्मनिष्ठ, सरल स्वभावी, स्वाध्याय प्रेमी, कार्यकर्त्ता ।
३ श्री मोहनलालजी जैन, गीदम समाजसेवी, धर्मप्रेमी, सरल स्वभावी, कार्यकर्त्ता ।
४. श्री भंवरलालजी जैन, श्यामपुरा धर्मनिष्ठ, सेवाभावी, समाजप्रेमी, श्रद्धालु श्रावक ।
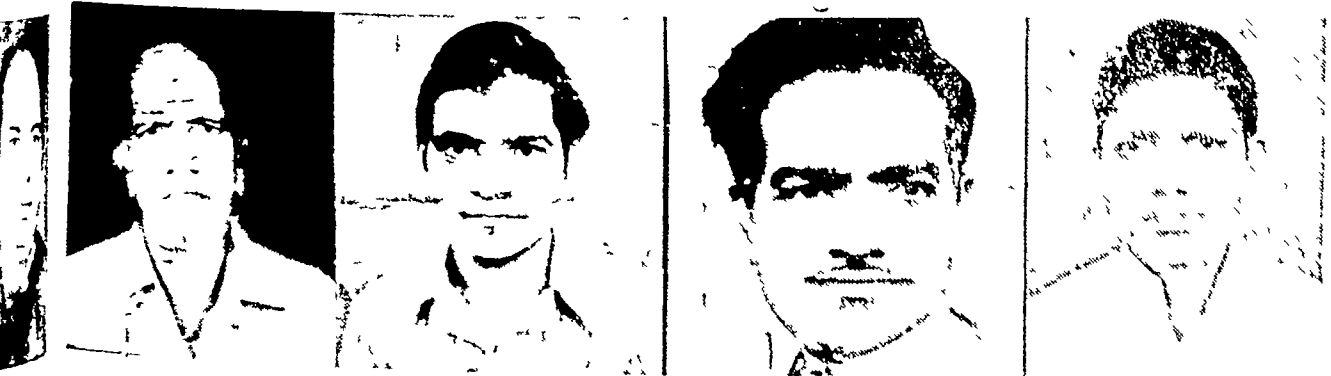
१ श्री भीखमचन्दजी चोरडिया, फलौदी – धर्मप्रेमी, समाजसेवी, शासननिष्ठ, श्रद्धालु श्रावक ।
२ श्री शातिलालजी राका, जयनगर—सरल स्वभावी, सघनिष्ठ, धर्मप्रेमी, कार्यकर्त्ता ।
३ श्री रेखचन्दजी साखला, खैरागढ – खैरागढ सघ अध्यक्ष, अभिकर्त्ता जीवन बीमा निगम, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।
४ श्री तेजमलजी भण्डारी, कजार्डा धर्मप्रेमी, सेवाभावी, स्वाध्यायी, श्रद्धालु कार्यकर्त्ता ।

१ श्री गजेन्द्रजी सूर्या, इन्दौर—अध्यक्ष समता युवा सघ, धर्मनिष्ठ, उत्साही युवा कार्यकर्त्ता ।
२ श्री मणिलालजी घोटा, रतलाम—मन्त्री समता युवा सघ, धर्मनिष्ठ, सेवाभावी युवा कार्यकर्त्ता ।
३ प्रो सतीश मेहता, बीकानेर—धर्मप्रेमी, मिलनसार, मृदु स्वभावी, उत्साही कार्यकर्त्ता ।
४. श्री धर्मचन्दजी गेलड़ा, हैदराबाद तकनीकी स्नातक, उद्योगपति, घुमक्कड़, धर्मप्रेमी कार्यकर्त्ता ।

...क समिति–

१ स्व सेठानी लक्ष्मीदेवी धाडीवाल, रायपुर—सरक्षिका (१९७३-१९७५) उपाध्यक्षा (१९६७-१९७२)।
२ स्व सेठानी आनन्दकवर पीतलिया, रतलाम—सरक्षिका (१९७३-१९७५) अध्यक्षा (१९६७-१९७२)।
३ स्व श्रीमती मोहनीदेवी मेहता, बम्बई–उपाध्यक्षा (१९८४), धर्मपरायणा, समाजसेवी, श्रद्धालु श्राविका।

१ श्रीमती रसकवर सूर्या, उज्जैन—उपाध्यक्षा १९७९–८०, धर्मपरायणा, समाजसेवी, श्रद्धालु श्राविका।
२ श्रीमती यशोदादेवी बोहरा, पीपलियाकला--सरक्षिका १९७६ से सतत, अध्यक्षा १९७३-७५ उदारमना, धर्मपरायणा
३ श्रीमती फूलकवर काकरिया, कलकत्ता—अध्यक्षा १९७६ से ७८, उदारमना, सेवाभावी, धर्मपरायणा।
४ श्रीमती सूरजदेवी चोरडिया, जयपुर—अध्यक्षा १९८२ से ८४, उपाध्यक्षा १९८१, धर्मपरायणा, सेवाभावी।
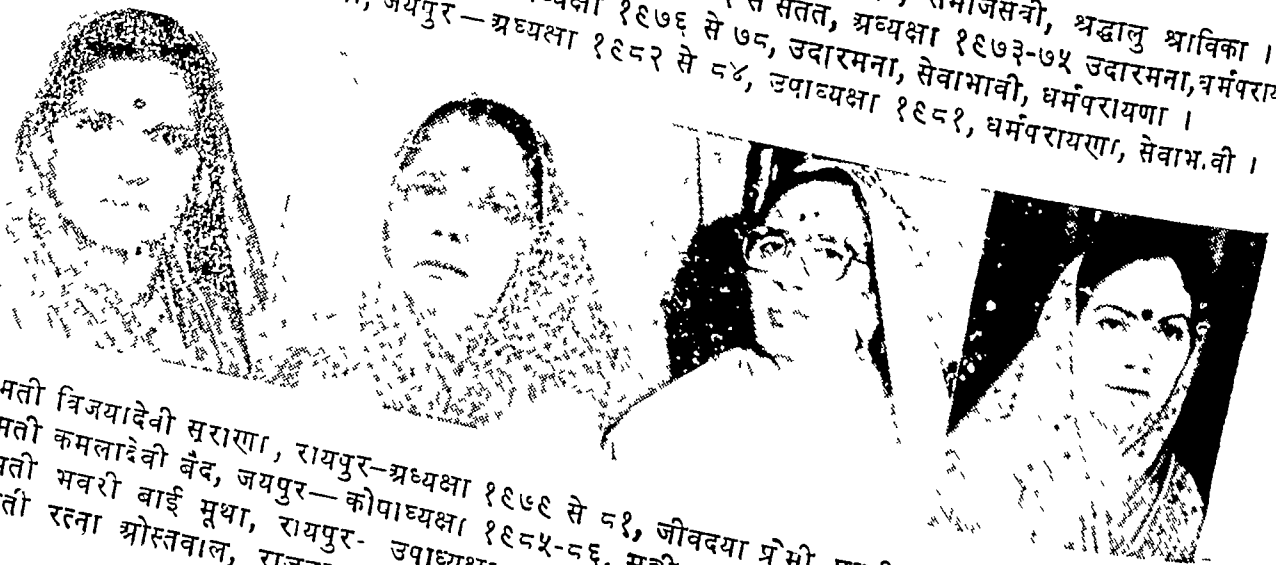
...ीमती विजयादेवी सुराणा, रायपुर–अध्यक्षा १९७९ से ८१, जीवदया प्रेमी, प्राणी वत्सला, सेवाभावी।
...ीमती कमलादेवी बैद, जयपुर—कोषाध्यक्षा १९८५-८६, मंत्री १९८७ से, उत्साही, सक्रिय कार्यकर्त्री।
...ीमती भवरी बाई मूथा, रायपुर- उपाध्यक्षा १९७६ से ७९ सरल स्वभावी, धर्मपरायणा, जीवदया प्रेमी।
...मती रतना ओस्तवाल, राजनादगाव—सहमंत्री १९८५ से ८७, उत्साही, प्रबुद्ध, ...
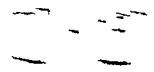
महिला समिति-

१ श्रीमती सोहनकवर मेहता, इन्दौर—उपाध्यक्षा १९७६-७७, धर्मपरायणा, सेवाभावी कार्यकर्त्री।
२ श्रीमती इन्द्रा कोठारी, अजमेर—का स सदस्या, धर्मपरायणा, सेवाभावी, कार्यकर्त्री।
३ श्रीमती कान्ता बोरा, इन्दौर—सहमन्त्री १९८१, ८५, ८६ सेवाभावी, धर्मनिष्ठ, उत्साही कार्यकर्त्री।

१. श्रीमती शान्ति रानी डागरिया, रामपुरा—कार्यसमिति सदस्या, धर्मपरायणा, सेवाभावी श्राविका।
२ श्रीमती कचनदेवी सेठिया, बीकानेर- कोषाध्यक्ष ८१, ८२, का स. स, धर्मपरायणा।
३ श्रीमती धापूदेवी डागा, गगाशहर—कार्यसमिति सदस्या, धर्मपरायण, सेवाभावी, सुश्राविका।
४ श्रीमती कचन बोरदिया, उदयपुर—कार्यसमिति सदस्या, शिक्षा प्रेमी, धर्मपरायणा, कार्यकर्त्री।

१ श्रीमती प्रेमलता पीरोदिया, रतलाम—कार्यसमिति सदस्या, धर्मनिष्ठ, उत्साही कार्यकर्त्री।
२. श्रीमती पारस बाई बट, ब्यावर—सहमत्री १९८५, ८६ धर्म परायणा, सेवाभावी कार्यकर्त्री।
३ श्रीमती चन्द्रकान्ता जैन, भीलवाडा—शाखा सयोजिका, धर्मनिष्ठ, उत्साही कार्यकर्त्री।
४. श्रीमती उमराव बाई सहलोत, निकुभ—शाखा सयोजिका, धर्मपरायणा, सेवाभावी सुश्राविका।

श्री हनुमानमलजी बोथरा
गंगाशहर (बीकानेर)
संघ समर्पित उदारदानी

श्री प्यारेलाल जी भण्डारी
८० से कार्यकारिणी सदस्य
अलीबाग निवासी
उत्साही युवा हृदयी, साहित्य प्रेमी
कुशल व्यवसायी, उदारदानी

श्री मोतीलालजी धींग
कानोड़
उदार हृदयी, समाजसेवी संघ
समर्पित, वयोवृद्ध
शाखा संयोजक
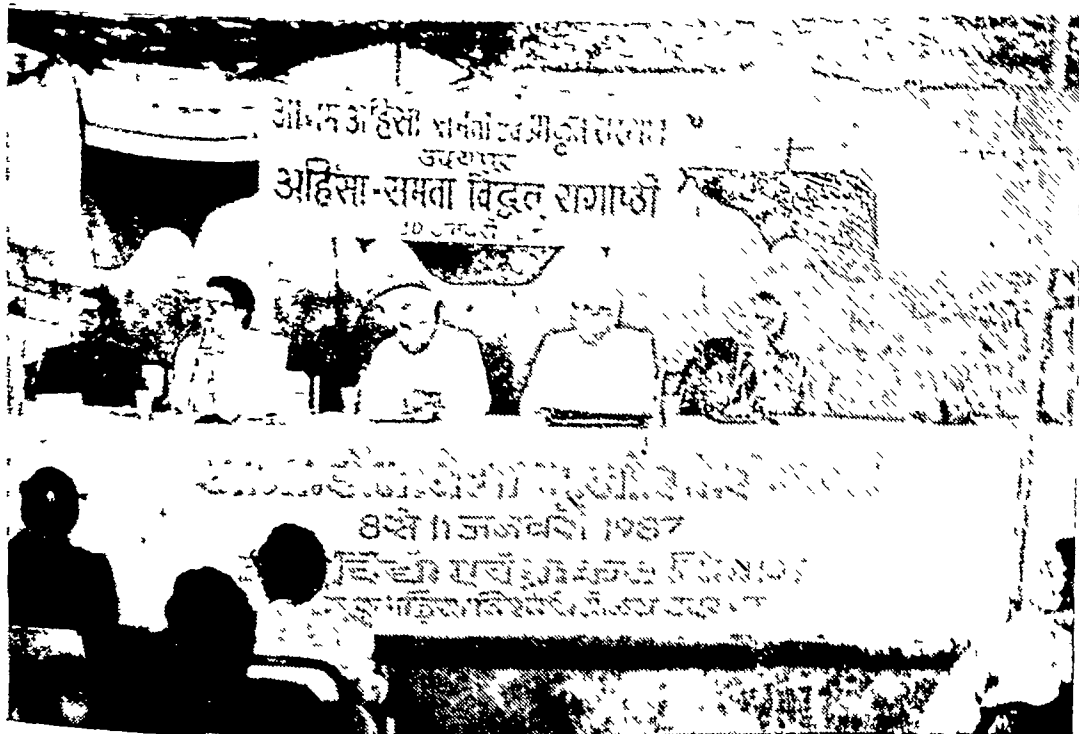
आगम-अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान उदयपुर में अहिंसा समता विद्वत् गोष्ठी को सम्बोधित करते हुए डॉ. सागरमल जैन। मंच पर संगोष्ठी अध्यक्ष डॉ. दयानन्द भार्गव एवं संस्थान अधिकारी।

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ एवं श्री अ. भा. जैन विद्वत् परिषद द्वारा आयोजित बाल संस्कार शिक्षा साहित्य संगोष्ठी अजमेर १९७९ के संभागी विद्वत्जन
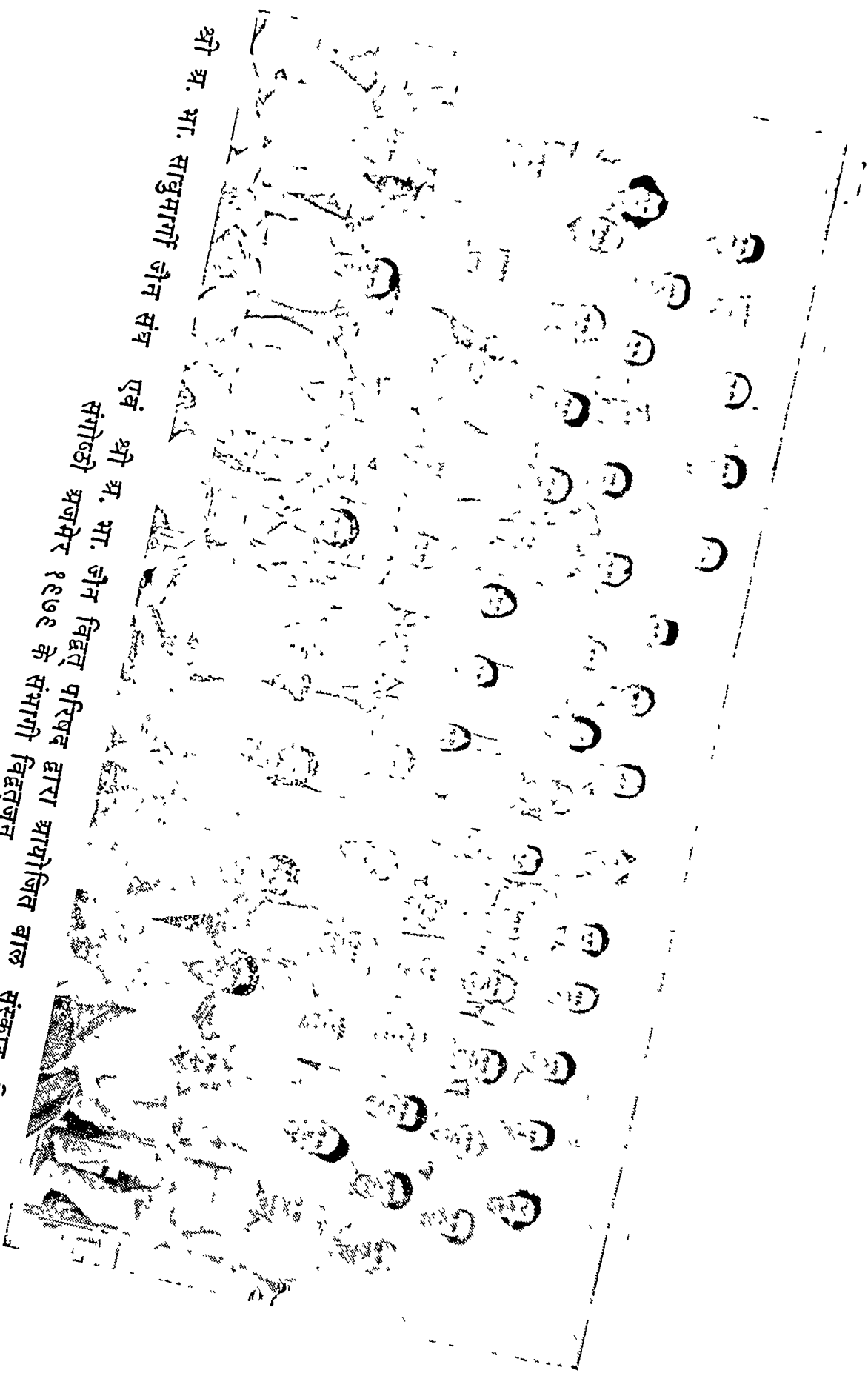
ग्राम्य अंचल का एक विरल क्षण–धर्मपाल पदयात्रा मे संघ प्रमुख सर्व श्री भवरलालजी कोठारी, सरदारमलजी काकरिया, गुमानमलजी चोरडिया आदि प्रकृति की गोद मे बसे बालको के साथ ।

संघ की लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियो मे उल्लेखनीय अभिनव प्रवृत्ति - श्रीमद् जवाहराचार्य स्मृति चल चिकित्सालय का बीजारोपण : इन्दौर मे गीता-भवन के बाबा बालमुकुन्दजी, पास मे समाजसेवी श्री मानव मुनिजी, ट्रस्टी व पद्मश्री डॉ नन्दलालजी बोरदिया आदि ।

जावरा के भव्य और विशाल धर्मपाल-सम्मेलन को संबोधित करते हुए तत्कालीन प्रवृत्ति-प्रमुख श्री समीरमलजी काठेड

जैनविद्यालय कलकत्ता में दि.१४-१-८४ को स्व. श्री प्रदीपकुमार राम-पुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार प्राप्त करते हुए श्री मिश्रीलाल जैन गुना

इन्दौर मे दिनांक २५-११-८३ को धर्मपाल सम्मेलन मे पद्मश्री डॉ. नन्दलालजी बोरदिया, मचस्थ दाए से वाएं समाजसेवी श्री मानवमुनि जी, धर्मपाल श्री गणपतराजी वोहरा श्री गुमानमल जी चोरडिया आदि
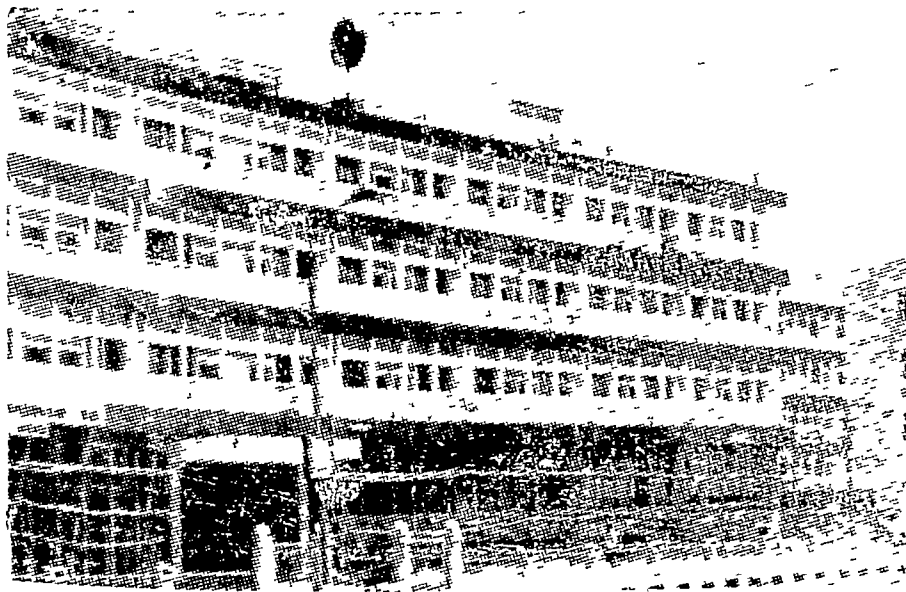
खीवराज काम्पलेक्स ४८० माऊंट रोड बिल्डिंग नं. २ के इस भव्य भवन के पहले माले मे संघ द्वारा क्रय किया गया फ्लैट ।

श्री ग्र भा साधुमार्गी जैन महिला समिति के १७वे ग्रधिवेशन मे
बोलते हुए प्रमुख ग्रतिथि श्रीमती मिथिलेश जैन
मचस्थ दाए से वाए—समिति संरक्षिका श्रीमती सी यशोदादेवी जी
बोहरा, श्रीमती सूरजदेवी जी सेठिया, ग्रध्यक्षा सौ श्रीमती सूरजदेवी जी
चोरडिया, श्रीमती शाता देवीजी मेहता व प्रेमलता जी जैन ।

महिला श्रोताग्रों की भाव तन्मयता
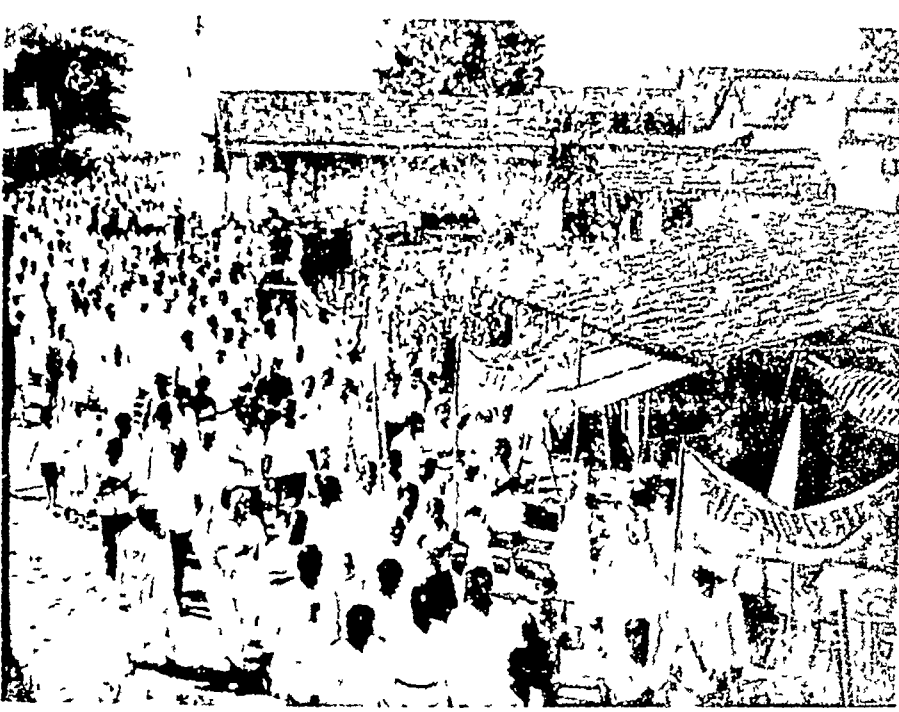
सघ की जीवन साधना, सस्कार निर्माण और 'धर्म जागरण, पद-यात्राओ के दौर की एक साक्षी. उमडता जनप्रवाह उछलता उत्साह सागर
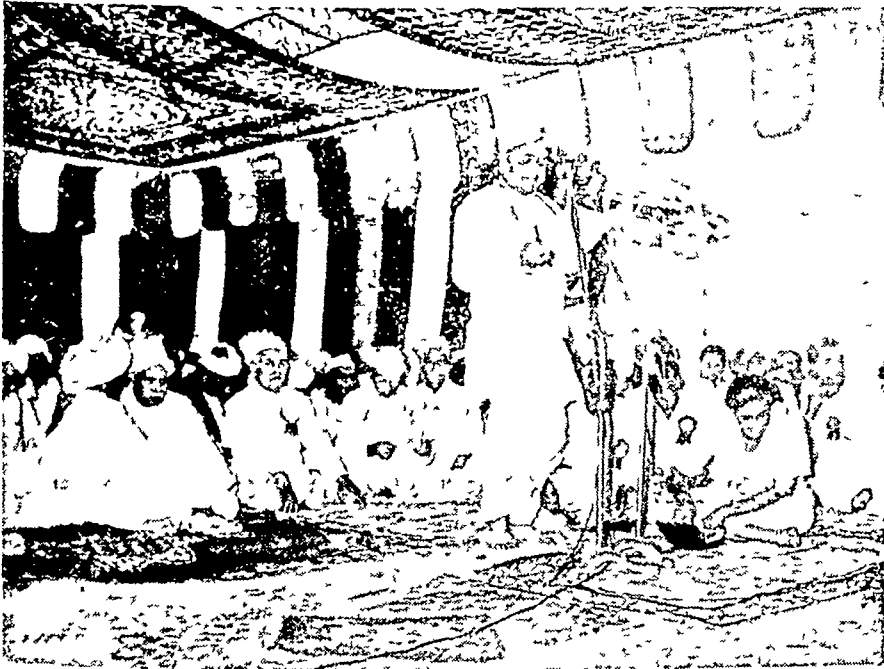
रायपुर संघ-अधिवेशन १९६६ में अध्यक्षीय अभिभाषण पढते हुए श्री गणपतराजजी बोहरा, पृष्ठ भाग मे श्री हीरालालजी नांदेचा श्री छगनमलजी बैद व संघ-प्रमुख

उदयपुर अधिवेशन मे अध्यक्षीय अभिभाषण पढते हुए श्री जुगराज जी सेठिया व संघ-प्रमुख गण

श्रोताओं की अपार जनमेदिनी संघ अधिवेशनों और कार्यक्रमो की सहज विशेषता है। श्रोताओं मे वर्तमान संघ अध्यक्ष श्री चुन्नीलालजी मेहता,तोलाराम जी डोसी आदि

श्रमणोपासक की २५ वर्ष की कालयात्रा में प्रकाशित महत्वपूर्ण लेखों का सूची-सार

[श्रमणोपासक के प्राय: प्रत्येक अंक मे परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री नानेश के विचारो का किसी न किसी रूप मे संकलन रहता है। अत: जीवन के सभी क्षेत्रो को स्पर्श करने वाले इन विचार को पृथक से शीर्षक बाध्य नही किया गया है।]

लेख शीर्षक / लेखक	वर्ष/अंक पृष्ठ
प्राचार्य सकल भूषण की साहित्य सेवा/डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल	१/१४/७०८
ाश्वत साहित्य और युग साहित्य/श्री शिवकुमार शुक्ल	१/१७/८१४
गवान महावीर और अहिंसा/श्री सौभागमल जैन, एडवोकेट	१/२१/९७७
ीप कवि रचित सुदर्शन सेठ कवित्त/श्री अगरचन्द नाहटा	१/२३/१०७५
र्वोदय बनाम सरकारी नियन्त्रण/श्री वीरेन्द्र अग्रवाल	२/२/१७०
न सन्त साहित्य/श्री अगरचन्द नाहटा	२/२/१७५
न स्तोत साहित्य/श्री प. अंबालाल प्रेमचन्द शाह	२/३/१९९
न परम्परा का विहगावलोकन/डा. इन्द्रचन्द शास्त्री	२/१०से १३ मे धारावाहिक
र्वोदय की भावना/प्रो. भागेन्दु जैन	२/१२/४९५
र्तमान युग और श्रमण धर्म की उपयोगिता/डॉ कस्तूरचन्द कासलीवाल	२/१३/५४४
ाचीन यूनानी लेखको के श्रमण/डॉ ज्योतिप्रसाद जैन	२/१५/६२२
न पत्र/आचार्य श्री रजनीश	२/२०/८०३
ारतीय गणतंत्र परम्परा/श्री मनोहरलाल दलाल	३/७/३४३
शस्तिलक चम्पू की अनुप्रेक्षा/डॉ छविनाथ त्रिपाठी	३/८-९/३८५
नि जोइन्दु कृत योगसार/डॉ. हीरालाल माहेश्वरी	३/८-९/३९१
हिंसा का मूलाधार: समत्व योग/प्रेम सुमन जैन	३/१४/५५१
हावीर की क्रांति और उसकी पृष्ठ भूमि/डॉ. नरेन्द्र भानावत	३/१९/७३५
ष्ट्र निर्माण : कुछ प्रेरक संस्मरण/श्री दुर्गा शंकर त्रिवेदी	४/१-२/१५
ुष्य का भविष्य/सेठ गोविन्द दास	४/४/११३
ष्ट्र के तीन महारोग/अखिलेश मिश्र	४/१३/४४५
ं सिद्धान्त : मूल्यात्मक व्याख्या/प्रो. सागरमल जैन	४/१५ से २०
श्वे. न्याय साहित्य: एक समीक्षा/रतनलाल संघवी	४/१७/५८९
ो जाकर इतिहासो से 'कविता'/श्री मोहनलाल चतर	४/२३/८०८
षा की गुलामी का परित्याग कीजिए/डॉ. रामचरण महेन्द्र	५/३/९१
ति वचनामृत/प. श्यामलाल ओझा	५/५/१६१
न्दी विकास मे जैन ग्रन्थो का योग/श्री वृजमोहन शर्मा	५/१४/५९३
रतीय वाङ्मय और जैन साहित्य/डॉ. गोकुलचन्द्र जैन	५/१५/६३३
ञविधि परिचय/श्री अंबालाल प्रेमचन्द शाह	५/१५-१६-१७
पति रचित राजविधि/श्री अगरचन्द नाहटा	५/१८/७६४

धर्म को सही स्वरूप मे धारण करे/श्री रणजीतसिंह कूमट	१३/११/३५
निवृत्ति और प्रवृत्ति: एक तुलनात्मक अध्ययन/डॉ. सागरमल जैन	१३/अनेक अंको में
जैननीति दर्शन की सामाजिक सार्थकता/डॉ. सागरमल जैन	१४/१९-२०
आनन्दघन रचित पद/श्री रतनलाल काठेड़	१४/१५ से अनेक अंको मे
पर्वाधिराज पर आत्म निरीक्षण/आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.	१५/३/१७
समाधिमरण/डॉ. सागरमल जैन	१५/५-६/
कम्मपयडी और उसकी चूर्णी के रचयिता/श्री अगरचन्द नाहटा	१५/१५/३६
जैन दर्शन में आकाश तत्त्व/श्री देवेन्द्रमुनि	१५/२०/१६
आगम साहित्य में उपलब्ध कथाएं और उनका स्वरूप/डॉ. कुसुम पटोरिया	१५/२३/२५
जैन धर्म मे नारी प्रतिष्ठा/डॉ. प्रेमचन्द गोस्वामी	१६/५/२०
जैन दर्शन में जीवन मूल्य/डॉ. सागरमल जैन	१६/१३ से सतत/
जैन दर्शन मे काल प्रत्यय/डॉ. ए. बी. शिवाजी	१६/१३/२०
वृत ग्रहण/उपाध्याय श्री पुष्करमुनिजी	१६/१८/२३
'ज्ञानार्णव' मे प्रतिपादित वीतराग और समता भाव/श्री अगरचन्द नाहटा	१७/२/२४
स्याद्वाद/डॉ. महावीरसिंह मुडिया	१८/१२/१७
जैन दर्शन और आधुनिक मानस/डॉ. भागचन्द जैन	१८/१३/१५
महावीर का सन्देश: अपरिग्रह/डॉ. शान्ता भानावत	१८/२३/१८
नैतिकता बनाम अनैतिकता/रिखबराज कर्णावट	१९/१/३६
रहिमन कहता पेट से क्यो न भया तूं पीठ/आचार्य श्री आनन्दऋषिजी म. सा.	१९/२/२४
जैन साहित्य मे माता का स्वरूप/डॉ. हीराबेन बोरदिया	१९/२२/१७
भगवती सूत्र: एक वैज्ञानिक अध्ययन/डॉ. महावीरसिंह मुडिया	१९/२४/१६
सामायिक एक विवेचन/उपाध्याय श्री पुष्करमुनिजी	२०/२ से ८
सम्यक् दर्शन. ज्ञान का प्रवेश द्वार/श्री सुन्दरलाल बी. मल्हारा	२१/७-९/
राष्ट्रीय चेतना के विकास मे श्रीमद् जवाहराचार्य का योगदान/श्री संजीव भानावत	२१/१५/२४
क्या राजनीति मे अहिंसा सभव है/श्री सिद्धराज ढद्ढ़ा	२१/१५/५५
शक्ति के साथ शिवत्व प्रकट हो/मुनि श्री रूपचन्द	२२/१३/२६
समता प्रचार-आत्म दर्शन/श्री प्रतापचन्द भूरा	२२/७-९/
मैं गुणो का पुजारी हू/श्री जवाहरलाल मुणोत	२२/१७/२४
अष्टाचार्य गौरव गगा/सकलित अंश	आगे तक
वैयावृत्य विचक्षण आचार्य-प्रवर/संकलित अंश	वर्ष २२-२३
जैन कवियो की दृष्टि मे होली/डॉ. पुष्पलता जैन	२३/५/३१
सामायिक: अर्थ और स्वरूप/डॉ. निजामुद्दीन	२३/११/३५
मित्ती मे सव्व भूएसु/डॉ शिवमुनि	२३/१५/३३
आचाराग के जीवन मूल्य/श्री मानमल कुदाल	२३/१५/४६

प्रस्तुति—जानकी नारायण श्रीमाली

उदार चरिताना
वसुधैव कुट्‌म्बकम् ।

विज्ञापन

विज्ञापन-सहयोग हेतु सभी प्रतिष्ठानो एवं महानुभावों के प्रति

हार्दिक आभार

जीवन काले-उजले धागे मे बुना हुआ है। इसमें मीठे घूंट पीने को मिलते हैं तो कडुए भी। दुनिया ने हर क्रान्तिकारी विचारो का विरोध किया है प्रथमतः, किन्तु अन्त मे उन्ही पर फूल बरसाए हैं। अत जो विरोध से घबराता है, आलोचना से जिसका धैर्य नष्ट हो जाता है, आस्था हिल उठती है वह कदापि सफल नही हो सकता। ससार की आलोचना हमे कर्तव्यच्युत नही करे तभी हम सद्मार्ग पर वढ सकते हैं। साधारणतः लोगो की दृष्टि स्थूल होती है। शीलर कहता है—विरोध उत्साहियो को सदैव उत्तेजित करता हे बदलता नही। विरोध सह लेना भी एक कला है। शिक्षित घोडा तोपो की आवाज से चमकता नही जब कि अशिक्षित घोडे पटाके की आवाज से ही बेकाबू हो जाते है। इसीलिए अर्हतर्षि अज्ञानियो के विरोध को सहन करने के लिए कहते है, विरोधियो को क्षमा करने के लिए कहते है, उन पर विजय प्राप्त करने को कहते है। **"सम्मं सहेज्जा खमेज्जा तितिक्खेज्जा अधियासेज्जा"**।
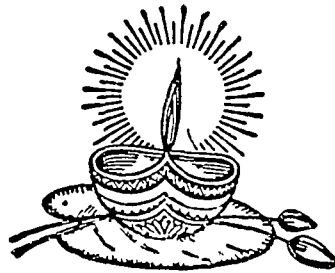
ससार चक्र का अन्त कौन करता है ? इसके उत्तरमे अम्बड अर्हतर्षि कहते है जिसने विकार पर विजय पायी है । सूक्ष्म से सूक्ष्म भूलो को भी जो बारीकी से देखता है । जिसके मन, वाणी और कर्म मे एकरूपता है, जिसने कषायो पर विजय प्राप्त की है, ब्रह्मचर्य की प्रभा से जिसका मुख आलोकित है, जिसका मन समाधि मे लीन है । तात्पर्य यह है कि जिसका अन्त करण पवित्र है वही परमात्म पद प्राप्त कर सकता है ।

साधना की भूमि न मन्दिर मे है न उपाश्रय मे । वह तो है मनुष्य के अन्त-करण मे । हम क्यो न हजारो बार मन्दिर जाए या उपाश्रय जाए, वह हमारी भव परम्परा का अन्त करने मे कुछ भी सहायक नही बन सकता यदि हमने अपने अन्त करण से कषायो को दूर नही किया हो । हमे दिखावा छोडकर आत्मा को परिशुद्ध करना है । जो उपर्युक्त कषायो से स्वय को दूर करेगे वे बहिरात्मा से हटकर अन्तरात्मा की ओर आएगे । परिणामतः अन्तरात्मा से परमात्मा की ओर कदम बढाएगे ।

अपने पर विजय पाए बिना परमपद मोक्ष की प्राप्ति नही हो सकती ।
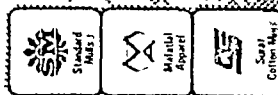
भयभीत व्यक्ति प्रव्रज्या ले सकता है किन्तु उसका कार्य उतना ही साधारण होता है जितना कि एक प्यासे व्यक्ति का पानी पीना, बुभुक्षु का भोजन करना। घर में अशान्ति हुई साधु बन गया, घर में खाने पीने का ठिकाना नहीं, साधु बन गया। किन्तु जहां भय है, कातरता है वहां सच्चा साधु नहीं बन सकता, अध्यात्म पथ पर नहीं चल सकता। संयम के लिए अन्तर्मन में वैराग्य की धारा बहनी चाहिए। उसका हृदय क्षमा, दया और करुणा से ओतप्रोत होना चाहिए। जो संसार के छोटे-छोटे शूलों से डरता है क्या वह अपमान और तिरस्कार के शूलों को सहन कर सकता है? वह वीर के पथ पर चल सकता है?

एस मग्गोत्ति वीरस्स-यह वीरों का मार्ग है, कायरों का नहीं।

कान का स्वभाव ह शब्द ग्रहण करना चाहे वे अच्छे हो या बुरे, मधुर हो या कटुक। जो शब्द आते है कान उसे ग्रहण करता है। कान बन्द कर न कोई चल सकता है न चलना ही चाहिए। किन्तु हा, उसे न मधुरता के प्रवाह मे बहना है न कटुता मे विवेक खोना। मनुष्य लाखो रुपये खोकर भी कुछ नही खोता किन्तु विवेक खोकर सब कुछ खो देता है। कान को अपना काम करने दे, आप अपना करे।

इसी भाति आख, नाक, कान, जीभ, त्वचा के विषय मे भी समझना चाहिए अर्थात् शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श मनोज्ञ हो तो उसमे रस नही लेना चाहिए, कटुक या तिक्त हो तो विवेक नही खोना चाहिए। अर्हतर्षि वर्धमान कहते है दुर्दम बनी इन्द्रिया आत्मा के लिए ससार का कारण बनती है और जब वे सम्यकतया सयमित होती ह तो निर्वाण का कारण बनती है। घोडे की लगाम या तो सवार के हाथ मे होती है या फिर घोडे के। आदमी के हाथ मे होने पर अभीष्ट स्थान मे शीघ्र पहुचा जा सकता है। और जब अपने हाथ मे नही होती तो घोडा जिधर चाहे उधर ले जाकर पटक सकता है।

मानव की अच्छाई और बुराई का पता वस्त्रों से नहीं उसके शुभ और
आचरण से परिलक्षित होता है। किन्तु हम साधारणतः बाह्य वस्त्रों को अच्छाई-
नापने का गज बना लेते हैं। अच्छे वेशधारियों को पवित्र आत्मा मानने को तैयार हो
हैं। हम भूल जाते हैं कि बुराई भी अच्छे वस्त्र पहनकर हमें धोखा दे सकती है। इ
विपरीत कभी-कभी अच्छाई भी बाहरी दुनिया से तिरस्कृत होकर बुराई के गन्दे वस्त्र प
सकती है तो क्या हम गन्दे वस्त्रों में लिपटी अच्छाई से प्रेम नहीं करेंगे? अत जो वस्
से अच्छाई-बुराई मापता है वह आंख मूंदकर चलता है।

किन्तु अनुभव की ठोकर उनकी पलकों को खोल भी सकती है। हम यह क्यों
माने कि श्वेत, पीत या गेरुआ वस्त्रधारी मात्र महात्मा है। हमें तो उन्हें परखना चाहिए
कि सफेद, पीला या गेरुआ वस्त्रों के नीचे कहीं काला दिल तो नहीं छिपा है? इसमें
जैसी हमारी भलाई है वैसी ही उनकी भी।

दीपक मे जब तक तेल और बत्ती है तब तक दीपक जलता रहेगा। हवा से बुझ जाए या बुझा दिया जाए तो भी वह अन्य प्रज्वलित दीपक के सम्पर्क मे आने से पुन जल उठता है। वह पूर्णत तभी बुझेगा जब उसमे तेल और बत्ती नही रहेगी।

उसी प्रकार निर्वाण तभी प्राप्त होता है जब कर्म का आदान और बन्ध समाप्त हो जाता है। आदान का अर्थ है ग्रहण। ग्रहण लगने पर सूर्य जिस प्रकार राहुग्रस्त हो जाता है आत्मा भी उसी प्रकार राग-द्वेष रूपी स्पन्दन के कारण कर्म परमाणुओ से ग्रस्त हो जाती है। ग्रस्त होना ही बन्धन है।

बन्धन से मुक्त होने के लिए आदान को समाप्त करना होगा। कारण जब तक आदान है तब तक बन्ध भी है। आदान समाप्त हो जाने पर बन्ध भी समाप्त हो जाएगा।

आदान समाप्त करने का नाम ही सवर है। सवर सिद्ध होने मे अपने आप निर्जरा हो जाती है।

क्रोध के दो रूप हैं एक प्रकट, दूसरा अप्रकट। पहला प्रज्वलित आग है दूसरा राख मे दबी आग। क्रोध का प्रथम रूप अपनी ज्वालाए विशेषता दिखायी देता है दूसरे रूप मे ज्वालाएं बाहर फूट कर नही निकलती किन्तु अनबुझे कोयले की तरह भीतर ही भीतर सुलगती रहती है। उदाहरणत दो व्यक्तियो मे झगड़ा हो जाने पर परस्पर बोल-चाल बन्द हो जाती पर क्रोध की ज्वाला समाप्त नही होती। हुआ इतनी ही कि बाहर की ज्वाला भीतर पहुच गयी। भीतर की यह आग बाहरी आग से भी अधिक खतरनाक है। कारण यह भीतरी आग कब विस्फोट करेगो कहा नही जा सकता। जिस भाति उष्ण युद्ध से शीत युद्ध भयावह होता है क्योकि शीतयुद्ध की पृष्ठभूमि पर ही उष्ण युद्ध की विभीषिका खडी हो जाती है।

इसीलिए अर्हन्नपि नारायण का कहना है क्रोध जब आग है तो उसे जितनी जल्दी होसके उपशमन करना चाहिए।

क्रोध के प्रारम्भ मे मूर्खता है और अन्त मे पश्चात्ताप।

जैसे धागा पिरोयी हुई सुई गिर जाने पर भी खोती नहीं है, वैसे ही ससूत्र अर्थात् शास्त्रज्ञानयुक्त जीव संसार में नष्ट नहीं होता ।

प्रार्थना का सम्बन्ध भाषा से या जिह्वा मे नही है । जिह्वा [illegible] भाषा तो शुक भी बोल लेता है । मगर वह भाषा केवल प्रदर्शन की वस्तु है । [illegible] अन्त करण मे भगवान् के प्रति उत्कृष्ट प्रीति भावना जब प्रबल हो उठती है तब स्वयमेव जिह्वा स्तवन की भाषा का उच्चारण करने लगती है । स्तवन के उस उच्चारण मे हृदय का रस मिला होता है । ऐसा स्तवन ही फलदायी होता है ।

—आचार्य जवाहर

जब आपके अन्त.करण मे कुमति उत्पन्न हो, उस समय आप परमात्मा को स्मरण करो और परमात्मा को आगे कर दो । फिर देखो किस प्रकार आपकी रक्षा होती है और आपको कैसा आनन्द आता है ।

With Best Compliments From:

High Quality Shirtings

Urmilon

FABRIC
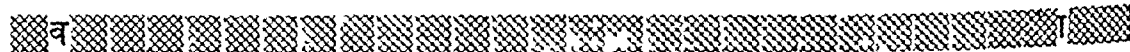
TRUE-TONE **SHIRTINGS**

URMILONE SILK MILLS

BOMBAY-3 TEL : 252173

Address:

453 E, Chikal House 2nd Floor

BOMBAY 400 002

एक आदमी संसार संबधी भोग विलासों की सामग्री प्राप्त होने पर भी रोता है और दूसरा पास में कुछ भी न होने पर भी, घास के बिछोने पर सोता हुआ भी हसता है। इसका एक मात्र कारण यही है कि पहला आदमी मर्म को नही जानता। मर्म को जानने वाला प्रत्येक परिस्थिति मे सतुष्ट और सुखी रहेगा। ससार का ताप उसकी अन्तरात्मा तक नहीं पहुच सकता।
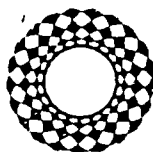
जो समस्त कर्मफलो मे श्रौर सम्पूर्ण वस्तु-धर्मो मे किसी भी प्रकार की आकांक्षा नही रखता, उसी को निरकांक्ष सम्यग्दृष्टि समझना चाहिए ।
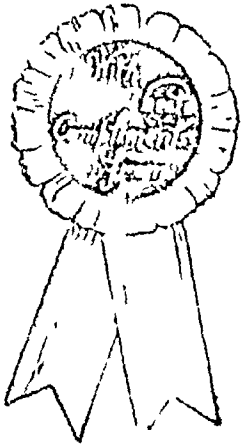
तुम किसी भी घटना के लिए दूसरो को उत्तरदायी ठहराओगे तो रागद्वेष होना अनिवार्य है, अतएव उसके लिए अपने आप उत्तरदायी बनो। इस तरीके से तुम निष्पाप बनोगे, तुम्हारा अन्तःकरण समता की सुधा से अप्लावित रहेगा।
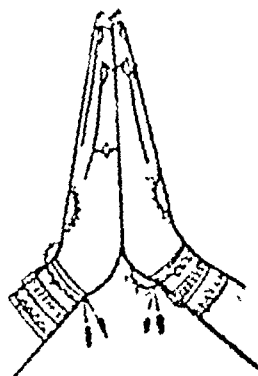
—आचार्य श्री जवाहर

यो तो अचेत अवस्था मे पड़े हुए आत्मा मे भी राग–द्वेष प्रतीत नही होते, फिर भी यह नही कहा जा सकता कि अचेत आत्मा राग-द्वेप से रहित हो गया है। जो आत्मा ज्ञान के आलोक मे राग-द्वेष को देखता है—राग-द्वेष के विपाक को जानता है और फिर उसे हेय समझकर उसका नाश करता है, वही राग-द्वेष का विजेता है। दुमुही का क्रुद्ध न होना, क्रोध को जीत लेने का प्रमाण नही है। क्रोध न करना उसके लिए स्वाभाविक है। अगर कोई सर्प ज्ञानी होकर क्रोध न करे तो कहा जायगा कि उसने क्रोध को जीत लिया है, जैसे चडकौशिक ने भगवान् के दर्शन के पश्चात् क्रोध को जीता था। जिसमे जिस वृत्ति का उदय ही नही है, वह उस वृत्ति का विजेता नही कहा जा सकता अन्यथा समस्त बालक काम-विजेता कहलायेगे।

आचार्य श्री जवाहर